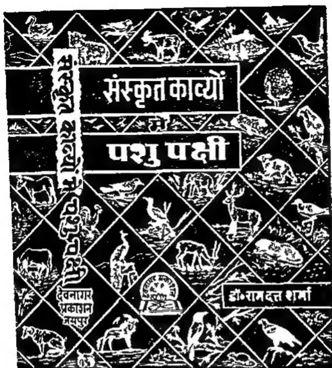


संस्कृत काव्यों
में
पशु पक्षी
डॉ॰ राम दत्त शर्मा
देवनागर
प्रकाशन
जयपुर

# संस्कृतकाव्यों
# में
# पशु पक्षी



# संस्कृत काव्यों मे पशु-पक्षी

[कालिदास एव कालिदासोत्तर काव्यों में पशु-पक्षी]

डा० रामदत्त शर्मा

एम०ए०, पी-एच०डी०

देव नागर प्रकाशन, जयपुर

☐ राजस्थान-विश्वविद्यालय की पी-एच॰ डी॰ उपाधि के लिये स्वीकृत शोध प्रबन्ध

☐ शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार द्वारा आर्थिक सहायता प्राप्त



१९७१

प्रकाशक देव नागर प्रकाशन,
चौड़ा रास्ता, जयपुर ३

आवरण आर्टिस्ट विजय नारायण शुक्ल, एव

मुद्रण जुबली ब्लाक वर्क्स, जयपुर

मूल्य ३२) रुपये मात्र

मुद्रक एलोरा प्रिण्टस,
जयपुर-३

सर्वे भवन्तु सुखिन

सर्वे सन्तु निरामया ।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु,

मा कश्चिद् दुखभाग्भवेत् ॥

# समर्पण



डॉ० श्री पुरुषोत्तम लाल भार्गव

परमादरणीय गुरुवर!

जिस महा सघन स्निग्ध वटवृक्ष की वात्सल्यमयी दीघछाया मे
ज्ञान- पीयूष का पान करता हुआ सघष के अभिक्रमण मे भी
प्रकाश किरण से पथ की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा
प्रसाद रूप म प्राप्त करता रहा-उस आशीर्वाद
के सहज भावो के प्रणेता आपके गौरवमय
व्यक्तित्व को आत्मिक श्रद्धा के साथ
अकिंचन की समपरण
सुमनाञ्जलि ।

भवता

रामदत्त.

डॉ० रामदत्त शर्मा



# लेखक-परिचय

**जन्म**

१२ अक्टूबर, १९४१, मण्डा भीमसिंह (राजस्थान)

**निवास**

दधीचि कुटीर पीरामलनगर पो० बगड (BAGAR)
जिला-झुंझुनू (राजस्थान)

**शिक्षा**

एम० ए० संस्कृत (राजस्थान) १९६५
साहित्य शास्त्री (राजस्थान) १९६५
साहित्याचार्य (राजस्थान) १९६८
साहित्य रत्न ( प्रयाग ) १९६९
पी-एच० डी० (राजस्थान) १९७०

**सम्पादन**

सम्पादक–'मरुस्काउटिंग' पत्रिका
सदस्य–सम्पादक मण्डल, "संस्कृत-सुधा"

**स्काउटिंग**

दस वर्ष से स्काउटिंग के कब-स्काउट रोवर सभी सोपानों में सेवा, भारत स्काउट, (सर्वोच्च अलंकार) सहायक रोवर स्काउट लीडर

**लेखन**

विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में अनेक रचनाओं का प्रकाशन
प्रकाशित पुस्तकें —

आपत्ति में स्वरक्षा
राजस्थान शिक्षा नियम
अनुशासनिक कार्यवाही
मरुधरा

Editor "Desert Scouting in Action"

**वर्तमान में**

राजस्थान विश्वविद्यालय में संस्कृत के वरिष्ठ अनुसंधाता

# दो शब्द

'कालिदास एव कालिदासोत्तर काव्यो में पशुपक्षी' शीर्षक यह शोध प्रबन्ध पाठको एव विद्वानो को भेंट करते हुए मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है अभी तक काव्यो में पशु पक्षियो का वर्णन एक ग्रथाकार में उपलब्ध नही था। अत मैंने प्रकृति के सानिध्य मे पशु पक्षियो के वर्णन को काव्यो में ढूढने का प्रयास किया परिणाम स्वरूप प्रस्तुत शोधप्रबन्ध तैयार किया गया जिसे राजस्थान विश्वविद्यालय द्वारा पी० एच० डी० की उपाधि के लिये स्वीकार किया गया है

अनुसधान कार्य गवेषणात्मक व विश्लेषणात्मक होने से दुरुह होता है फिर भी लगन, अध्ययन व सहयोग के सम्बल से इस पथ पर मै आगे बढ सका हूँ मेरे इस शोधकार्य मे समय-समय पर प्रत्यक्ष व परोक्ष रूपेण मुझे अनेक विद्वानो एव प्रतिष्ठानो से मार्गदर्शन व सहयोग मिला, उन सबके प्रति मैं श्रद्धावनत हू । मेरे आदरणीय गुरुवर डा० पुरुषोत्तमलाल भार्गव (अधिष्ठाता, सस्कृत सकाय तथा आचार्य एव अध्यक्ष सस्कृत विभाग राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर) की छत्रछाया व प्रेरणा ने मेरा मार्गदर्शन किया । उनके पाण्डित्यपूर्ण मार्ग निर्देशन मे ही यह शोधकार्य सम्पन्न हो सका है। मैं उनके प्रति श्रद्धावनत एव आभारी हू । आदरणीय डा० सुधीरकुमार गुप्त (प्रवाचक, राजस्थान विश्वविद्यालय) डा० फतेहसिंह (तत्कालीन—निदेशक, प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर) व मेरे अग्रज श्री श्रीकृष्णदत्त शर्मा (राजस्थान प्रशासनिक सेवा) ने अनुसधान ग्रथ को परिमार्जित करने एव आगे बढाने मे अविस्मरणीय सहयोग प्रदान किया है मैं इन सबका आभारी हू ।

मैं, विश्वम्भरा (बीकानेर) शोध-पत्रिका (उदयपुर), गुरुकुल पत्रिका (हरिद्वार), अन्वेषणा (उदयपुर), वरदा (बिसाऊ), वीणा

(इ दार) राष्ट्रदूत (जयपुर) व नवभारत टाइम्स (नई दिल्ली) के सम्पादको एव राजस्थान विश्वविद्यालय पुस्तकालय (जयपुर) प्राच्य विद्या-प्रतिष्ठान (जोधपुर) व शासकीय महाविद्यालय पुस्तकालय (टौक) के अधिकारी गण का ऋणी हू जिन्होने मुझे समय समय पर लेखो को प्रकाशित करवाने व ग्र थो का अवलोकन करने का अवसर प्रदान किया

मैं आचाय श्री उमेश शास्त्री महोदय का अत्यन्त आभारी हू, जिन्होने व्यस्तता के बावजूद इस कृति का गहन अवलोकन कर प्राक्कथन लेखन का महत्वपूरा काय सम्पादन किया

इस शोध ग्र थ की साज सज्जा व प्रकाशन मे श्री एल आर शर्मा (राज० विश्व विद्यालय), श्री ओमदत्त शर्मा (हिन्द साइकिल्स, बम्बई) श्री पदमचन्द सिंघवी एव श्री मनमोहनराज का सक्रिय योग दान रहा है इनके अतिरिक्त जिन व्यक्तियो का अत्पाधिक प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग रहा है, वे सभी धन्यवाद के पात्र है

अन्त मे मैं परमपिता परमेश्वर का आभारी हू, जिनकी कृपा से यह काय निर्विघ्न समाप्त हुआ मानव प्रमादो का पुतला है अत मानव द्वारा प्रमाद होना स्वाभाविक है यदि प्रमादवश प्रस्तुत ग्र थ मे कोई त्रुटि रह गयी हो तो विद्वदगण क्षमा करेंगे इतिशम्।

बी० १११, तिलकनगर
जयपुर—४

रामप्रसाद

# अनुक्रमणिका

# प्राक्कथन



वतमान मे सवत्र सस्कृत भापा के प्रति नानाविध भ्रानियो से परिपूण नराश्य का साम्राज्य छाया हुआ है सस्कृत के अध्येता भी इस सदभ मे उद्विग्न से दिखाई देते हैं हमारे कुछ भारतीय समालोचक इस भापा के प्रति 'मृत भापा', पडितो की भापा, अथवा सस्कारो की साधिका मात्र कहकर अ धकार फलाने का पडयन्त्र कर रहे हैं—वे इसके गरिमामय अस्तित्व एव विकास की प्रवृत्तियो से परिचय करने का प्रयास भी नहीं करते—अपितु यह कहा जाय तो उचित है कि अपनी सस्कृति एव समृद्धि के मूलोच्छेदन करने के लिये दुराग्रह के पथ पर पाव बना रहे हैं जिस महातिमिर के आवरण मे अमित नराश्य की भावना को जन्म दिया जा रहा है–वह सस्कृत ज्ञान शून्या का केवल छदम भरा कुचक्र मात्र है

आज भी इस महासक्रमण काल मे अमर-भारती के वरदपुत्र सस्कृत विशारद अपन भौतिक सुखो का परित्याग करते हुये इस भापा के वाड्मय की सुरक्षा करने मे तत्पर हैं अपितु अपने सीमित साधनो के माध्यम से सस्कृत साहित्य के सृजन मे प्रगतिशील हैं वतमान समय म केन्द्रीय प्रशासन एव प्रान्तीय शासन सहस्त्रो विद्वान् कविगण, लेखक, साहित्यकार, विश्वविद्यालय एव अनुसधानशालायें भारतीय सस्कृति की मूलाधार सस्कृत भापा के विकास जन्य सृजन के महायज्ञ मे दत्तचित्त हैं

विश्वविद्यालयों के माध्यम से सस्कृत भापा को अत्यधिक बल प्राप्त हुआ है अनेक भारतीय विश्वविद्यालयो मे सस्कृत विभाग सक्रिय हैं–जहाँ इस भापा की विविध विधाओ का शास्त्रीय एव वज्ञानिक अध्ययन अध्यापन हो रहा है विश्वविद्यालय हमारे गौरवमय स्वर्णिम अतीत को वतमान के साथ सम्पृक्त करते हुये सस्कृत भापा की विभिन्न प्रवृत्तियों मे मानवीय सवेगो की अनुभूति के साथ वेद पुराण, उपनिषद् दशन आदि को नूतन परिप्रेक्ष्य मे समाज के समक्ष प्रस्तुत करन म गतिशील हैं

'संस्कृत वाङ्मय केवल विलास का केन्द्र है शृंगार का सुमनोहर प्रमाद मात्र है'—यह कहना भी केवल भ्रांति को जन्म देना है संस्कृत साहित्य में समाज के पूर्ण दर्शन है, तत्कालीन युगबोध के साथ साथ मानवीय संवेगों का परिशीलन है एवं दिशाबोध के लिये मंगलमय पथ प्रशस्त हैं हमारे संस्कृत साहित्य को अभिनव परिवेश के साथ प्रस्तुत करने में विश्वविद्यालयों का महान् योगदान है, जो अविस्मरणीय रहेगा

राजस्थान विश्वविद्यालय में अनेक शोधकर्त्ताओं ने ऐतिहासिक राजनैतिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक विषयक आधारों पर संस्कृत साहित्य का पूर्ण अनुशीलन करते हुये मनोवैज्ञानिक एवं वैज्ञानिक स्थितियों का विश्लेषण करते हुये संस्कृत विधान का परिचय सामाजिकों के सम्मुख प्रस्तुत किया है इस प्रकार अनुसंधान के माध्यम से संस्कृत वाङ्मय को स्फूर्त चेतना प्राप्त हुई तथा भारतीय संस्कृति को जीवट मिला है संस्कृत वाङ्मय गम्भीर अतल पाथोधि है–जिसमें निमज्जित होकर युग युगों तक मोतियों का अन्वेषण करते रहो हर समय दिव्य मौक्तिक प्रदान करता रहेगा

संस्कृत साहित्यकारों ने अपने काव्यों में प्रकृति चित्रण को सर्वाधिक महत्व दिया है सूक्ष्मातिसूक्ष्म प्राकृतिक भावों को मनोवैज्ञानिकता के संदर्भ में संयोजित करते हुए चित्रात्मक दृश्य उपस्थित किये हैं

प्रकृति चित्रों में पशु पक्षियों के प्रति मानवीय संवेगों का चित्रण वैज्ञानिकता से परिपूर्ण है पशु–पक्षियों के अभाव में मानवीय जीवन असहाय-सा प्रतीत होता है संस्कृत साहित्यकारों ने मानवीय संवेदना की अभिव्यक्ति का माध्यम भी पशु–पक्षियों को ही बनाया है पशु–पक्षियों के संदर्भ में तो सामान्य जन मानस को परिचय प्राप्त है किन्तु इनके संदर्भ में वैज्ञानिक अन्वेषण एवं मानवीय दृष्टि से साहित्यिक उपस्थिति से हर कोई परिचित नहीं हो सकता

संस्कृत साहित्य में पशु–पक्षियों का क्या स्थान है ? प्रकृति चित्रण में इनका क्या महत्व है ? संस्कृतज्ञ इनकी वैज्ञानिकता के प्रति कितने सजग थे ? मानवीय सम्बन्धों के संदर्भ में इनका क्या मूल्यांकन है, कालिदास एवं कालिदासोत्तर प्रमुख कवियों ने पशु–पक्षि जगत् को किस दृष्टि से देखा है तथा प्रकृति चित्रण अथवा अपनी अनुभूतियों की इनके माध्यम से कहां तक साहित्यिक वृद्धि की है ? किस कवि की किस पशु अथवा पक्षी के प्रति अत्यधिक निष्ठा थी ? क्या इस निष्ठा का साहित्यकार की सामाजिक, भौगोलिक एवं सांस्कृतिक स्थितियों से सम्बन्ध था ? इन सभी प्रश्नों का उत्तर डा॰ रामदत्त शर्मा के प्रस्तुत शोध प्रबन्ध 'कालिदास एवं कालिदासोत्तर काव्यों में पशु-पक्षी' से प्राप्त हो

जाता है डा० शर्मा ने इस विषय का चयन कर वस्तुत अपनी मौलिक सूझ का परिचय प्रस्तुत किया है यह शोध प्रबन्ध संस्कृत वाङ मय में बिखरे हुए पशु-पक्षियो का संग्रह अथवा नाम गणना ही नहीं है अपितु पशु पक्षियो का वैज्ञानिक अध्ययन है अथवा यो कहना चाहिये कि एक प्रयोगशाला है जिसमे पशु पक्षियो के स्वभाव मूल उद्गम उनकी दैनिक चर्या उनकी आन्तो का परीक्षण आदि का सम्यक् अध्ययन किया गया है मानव जगत् के साथ उनके सम्बन्धो का अध्ययन मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उनका परिशीलन, साहित्यकारों की अनुभूतियो के साथ अभिव्यक्तिकरण आदि का पूर्ण परिचय एव विशिष्ट ज्ञान हमें इस ग्रन्थ के माध्यम से सुलभ हो जाता है संस्कृत-साहित्य म पशु पक्षियो का वर्णन तो प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध होते हैं किन्तु किसी एक ग्रन्थ के माध्यम से हम पशु पक्षि जगत् का सम्पूर्ण अध्ययन अथवा परिचय प्राप्त नहीं कर पाते इस शोध प्रबन्ध के माध्यम म हमें इस जगत् का सम्पूर्ण परिचय मिल जाता है—यह संस्कृत वाङ्मय की श्रीवृद्धि में एक सफल कड़ी है

लेखक ने कालिदास एव कालिदासोत्तर काव्यों' तक ही अपने शोध प्रबन्ध को सीमित रखा है यद्यपि सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य म प्रकृति चित्रणो के साथ पशु-पक्षियो के विविध दृश्य उपस्थित होते हैं किन्तु समग्र साहित्य के साथ लेकर चलने से विषय अत्यन्त विस्तृत होने की सम्भावना थी—साथ ही पिष्ट पेषण की आशका भी बन सकती थी इस दृष्टि से लेखक ने महाकवि कालिदास अश्वघोष, भारवि दण्डी माघ बाणभट्ट, श्रीहर्ष सुबन्धु आदि प्रमुख संस्कृत साहित्यकारो का चयन कर इनके वाङ मय म पशु पक्षियो का वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया है ये सभी कवि संस्कृत साहित्य के प्रतिनिधि कवि हैं तथा समस्त संस्कृत वाङ्मय के आधिकारिक व्यक्तित्व हैं

यह शोध प्रबन्ध ५ अध्यायो मे विभक्त है लेखक का मूल प्रतिपाद्य 'काव्य म पशु पक्षी ' है अत सर्वप्रथम लेखक ने 'काव्य' शब्द का सम्यक् विश्लेषण किया है प्राचीन एव अर्वाचीन मनीषियो की काव्य-मान्यतायें प्रस्तुत करते हुये डा० शर्मा ने आचार्य मम्मट के काव्य लक्षण की प्रशंसा करते हुये लिखा है—
' मम्मट के काव्य लक्षण को उत्तम स्वीकारने मे कोई बाधा प्रतीत नहीं होती "
वस्तुत आचार्य मम्मट की काव्य परिभाषा अलकारवादी होते हुए भी अत्यधिक सुलझी हुयी है इस लक्षण मे कुछ परिवर्तन करने हुये अनेक आचार्यो ने अपने अपने पृथक पृथक मत प्रस्तुत किये हैं कुछ ने मम्मट का खण्डन किया है और कुछ ने मण्डन आचार्य जगन्नाथ का काव्य लक्षण- 'रमणीयार्थ प्रतिपादक शब्द काव्यम्' संस्कृत काव्य-समीक्षकों का अन्तिम अभिमत है—जो आचार्य

मम्मट से परोक्ष रूप से किसी सीमा तक सम्पृक्त है। लेखक ने काव्य प्रमाण के विवरण के साथ ही कवियों के काल निर्धारण पर भी प्राचीन भारतीय एवं पाश्चात्य समीक्षकों एवं इतिहासविदों के अभिमत प्रस्तुत करते हुए अपना मत निर्धारित किया है। डा० शर्मा ने महाकवि कालिदास का समय प्रथम शताब्दी सिद्ध किया है। इस मत की पुष्टि के लिए श्री के० एस० रामास्वामी, श्री बनर्जी व श्री बलदेव उपाध्याय प्रभृति विद्वानों के अभिमत प्रस्तुत किये हैं। अश्वघोष कालिदास के अनुवर्ती कवि थे न कि पूर्ववर्ती डा० शर्मा ने यह भी सिद्ध किया है कि अश्वघोष कालिदास से पूर्ण प्रभावित थे तथा उनके साहित्य पर कालिदास की स्पष्ट छाप पड़ी है। इस सन्दर्भ में डा० शर्मा ने अपना तर्क प्रस्तुत करते हुये लिखा है— अश्वघोष एवं कालिदास के एवं उनके द्वारा कालिदास का अनुकरण सम्भव है। चीनी सूचियों में अश्वघोष कनिष्क कालीन एक धार्मिक विचारक माने गये हैं जो 78 ई० में हुये हैं अतः यह स्पष्ट है कि अश्वघोष कालिदास से पूर्व प्रथम शताब्दी में हुये हैं।

यद्यपि यह विषय विवादास्पद ही है हम सर्वसम्मत रूप से यह नहीं कह सकते हैं कि अश्वघोष पूर्ववर्ती थे अथवा कालिदास, क्योंकि विद्वानों के विभिन्न मत उपलब्ध होते हैं इस प्रकार लेखक ने कालिदासोत्तर कवियों के तर्कों की शृंखला के साथ अपनी मान्यतायें प्रस्तुत की हैं।

पशु-पक्षी के सन्दर्भ में प्रकृति चित्रण पर विचार करना भी अनिवार्य है, क्योंकि प्रकृति चित्रण के साथ ही पशु-पक्षी वर्णन काव्यों में सम्बद्ध है। मानव प्रकृति के साथ सनातन रूप से सम्पृक्त है और भावनाओं का अभिसार केन्द्र प्रकृति को ही स्वीकारता आया है। सुख दुःख की समस्त अनुभूतियों की अभिव्यक्ति का माध्यम प्रकृति ही रही है एवं मानवीय संवेगों में जीवट या उत्पीड़न प्रदान करने वाली शक्तिमय प्रकृति ही मूलाधार है। मानव का प्रकृति से विलग हो जाना असांसारिकता एवं कुण्ठाओं का श्रीगणेश है। प्रकृति वह रहस्यमयी नियति वधू है जिसके लास्य में विश्व का मधुमय हास्य है जिसके कटाक्षों में विभ्रममय विलास है जिसके अधर चषक में अविरल मदिर-पीयूष छलकता रहता है जिसके नयनों में राग द्वेष, उद्भव व विनाश, सृजन तथा प्रलय का वातावरण प्रतिपल नृत्य करता रहता है। मानव का निराशा से आपूरित मन प्रकृति की गोद में 'आशा' के स्वप्न देखने लगता है शृंगारपूर्ण चंचल चंचरीक की तरह उन्मत्त होकर समद गुञ्जन करने लगता है मानव संवेदनशील प्राणी है, वह अपनी भावनाओं को प्रकृति के साथ सम्पृक्त कर अनिर्वचनीय आनन्द में आत्मविभोर हो जाता है अतः प्रकृति मानवीय समस्त भावों की केन्द्र भूमि, अनुभावों की प्रेरक एवं संचारी

भावों की सम्प्रेषिका है। प्रकृति के सदर्भ मे डा० शर्मा ने कहा है—"प्रकृति मानव की प्रारम्भिक सहचरी रही है जब से मानव ने इस भूपटल पर जन्म लिया है तभी से वह प्रकृति के साहचर्य मे आया है वह सूर्य चन्द्रादि से प्रकाशित हुआ है, वृक्षों ने उसे छाया प्रदान की है, भूमि ने उसे अन्न दिया है, झरनों ने उसे शीतल जल प्रदान किया है एव नीरधि ने उसे रत्न प्रदान किये हैं अत मानव व प्रकृति का निरन्तर सयोग रहा है"

"इस प्रकार मानव प्रकृति का साहचर्य प्राचीन साहचर्य है, जिसकी अविरल धारा आज तक प्रवाहित हो रही है इस साहचर्य एव सौन्दर्य प्रदर्शन ने मानव को काव्यों म भी प्रकृति वर्णन करने की एक प्रेरणा दी हैं इस प्रेरणा से प्रेरित होकर ही मानव ने काव्यो में पशु-पक्षी, जीवजन्तु व फल-फूलों के सुन्दर वर्णनों को उपस्थित किया है

लेखक ने अपने उपजीव्य विषय की प्रस्तावना को विस्तृत रूप से समझाते हुये गवेषणा का श्रीगणेश किया है वस्तुत यह सत्य भी है कि साहचर्य एव सौन्दर्य प्रदर्शन ने ही कवियो को प्रकृति चित्रण करने की क्षमता दी है कवि अपने काव्य म अभिव्यक्ति के लिय प्रतीक एव रूपक योजना म लिये प्रकृति का चिर ऋणी रहा है उपमाना की स्पर्धा म कवि न प्राकृतिक सौन्दय का प्रतिबिम्ब सभी के समक्ष रख दिया है साहचर्य एव सौन्दर्य प्रदर्शन तो प्रकृति चित्रण के मूलाधार है ही, किन्तु प्रतीक योजना एव उपमानों की स्पर्धा ने भी प्रकृति चित्रण के लिय महत्वपूर्ण प्रेरणा दी है आज भी प्रतीक योजना नित नये उपमानो के सम्वयन मे प्रतिस्पर्धी है मानव जिस वातावरण म जीता है उसका चित्रण सहज रूप से उसकी अभिव्यक्ति मे झलक पडता है

सस्कृत-साहित्य का सृजन वैभवमय वेला मे हुआ है, अत उसके काव्यों में प्रकृति का मनोरम चित्रण ही प्राय उपलब्ध होता है सस्कृत-साहित्य की एक यह भी विशेषता रही है कि कवि दृष्टि सदा—"सत्य शिव सुन्दरम् की परिपोषक रही है यही कारण है कि सस्कृत वाङ्मय के प्रकृति चित्रण म विरूपता का नितान्ताभाव है प्रकृति चित्रण म पशु-पक्षियों का जो वर्णन हुआ है वह रमणीयता की ही सहज परिणति है

काव्यों म पशु पक्षी वर्णन के सन्दर्भ मे लेखक ने हेतु-त्रय प्रमाण प्रस्तुत किये हैं—

१ मानव व पशु-पक्षिया का निरन्तर सयोग
२ प्राचीन समय मे मानव का पशु-पक्षियों के प्रति प्रेमाधिक्य
३ कवियों की पैनी अवलोकन शक्ति

✓ मानव का प्रारम्भ से ही सामाजिक अथवा आत्मिक सम्बन्धो के रूप में पशु पक्षियो के साथ सम्बन्ध बना रहा है घर का वातावरण या समराङ्गण

पाना अथवा प्रासेट स्थलों पर पशु जगत् का किसी न किसी रूप में सहयोग बना रहा है इसी प्रकार पक्षियों के पालन एवं उनके माध्यम से सन्देश प्रेषण के हमें कई उदाहरण सुलभ होते हैं इन भोले भाले पशु-पक्षियों का गूंगा मन मानव का सहज विश्वास पाकर अपने विश्वास को सम्पृक्त कर लेता है

पशु पक्षियों के शोध-सदर्भ में लेखक ने दो मत अभिव्यक्त किये हैं —

१ साहित्यिक दृष्टि

२ वज्ञानिक दृष्टि

साहित्यिक एवं वज्ञानिक दृष्टि का अन्तर स्पष्ट करते हुये डा० शर्मा ने कहा है "सौंदय का भावात्मक विश्लेषण करने वाला विचारक साहित्यकार एवं किसी वस्तु का विश्लेषणात्मक विवेचन करने वाला विचारक वज्ञानिक कहा जाता है वज्ञानिक वह विचारक है जो पशु या पक्षी का वाङ्मय प्रदर्शित करता है एवं सत्य की खोज मे तत्पर रहता है वह आकृति गुण स्वभाव, योग क्रिया, विश्लेषण व विभाजन के आधार पर सत्या वेषण के लिये लालायित रहता है" डा० शर्मा ने इस सदभ में उदाहरण देते हुए स्पष्ट किया है —

'यदि कवि को किसी पुष्प का वर्णन करने को कहा जाय तो उसे कलि में नारी का रूप दिखलाई देगा एक प्रफुल्लित पुष्प को देखकर उसका मन रोमांच कर उठगा तो पददलित पुष्प को देखकर वह कराहने लगेगा और उसकी सहानुभूति में लेखिनी चल पडेगी काव्यकार मात्र सत्य का उपासक नहीं होता है साहित्यकार को हाथी की सूड में नारी की जांघ के दशन होते हैं परन्तु वैज्ञानिक को न तो कलि में नारी के दशन ही होते हैं एवं न पुष्प को देखकर रोमांचित ही होता है अत वज्ञानिक हर वस्तु को सत्यता की कसोटी पर कसता है, उसे कोरी कल्पना अपेक्षित नहीं'

लेखक के कहने का तात्पय यह है कि वह वज्ञानिकता के माध्यम से पशु पक्षियों के शोध-विश्लेषण की ओर अग्रसर है पशु पक्षियों में मूल उद्भव प्रजनन क्रिया आकृति प्रकृति आदि भी जानकारी प्रस्तुत करना चाहता है इस प्रकार हम देखते हैं कि लेखक वज्ञानिक स्वरूपावस्थिति को सिद्ध करने के लिये प्रतिपल प्रयत्नशील रहा है वह कल्पना को यथाथ की कसौटी पर उतारते हुये परीक्षण करना चाहता है संस्कृत वाङ्मय में कवियों ने पशु पक्षियों की कल्पना में कोई सी भूलें की है इसकी पकड भी लेखक की कलम ने की है लेखक का मत तथ्य है कि काव्यकारों ने जितने पशुओं का वर्णन किया है उनके रूप रंग आहार विहार एवं आकार-प्रकार में कोई मतभेद नहीं है और यदि है तो उसका भेद स्पष्ट सा है कल्पनात्मक भ्रान्तियों के सदभ में शोध प्रबंध का उदाहरण इस प्रकार है —

"बाणभट्ट ने कादम्बरी में गज की पूछ की तुलना करते हुये लिखा है–"
"महाकरविभारविप्रलम्ब बालपल्लव स्पृष्ट भूतल" (कादम्बरी पृ० ३८७ चौखम्बा) यहा गज की समता पेड़ की लटकती हुई उस शाखा से की है जो पृथ्वी को छूती है, परन्तु हाथी की पूछ इतनी छोटी होती है कि वह पृथ्वीतल को कदापि नहीं छू सकती है, अत ऐसे विद्वान् द्वारा ऐसी भूल किया जाना वास्तव में विस्मयकारक है इसी प्रकार घोड़ों की लार से अस्तबल का गीला हो जाना एव मिट्टी का शांत हो जाना, हस का क्षीर-नीर विवेकी होना, चक्रवाक का नैशविरही होना, चातक द्वारा केवल वर्षा जल पीना एव गिद्ध का मानववत व्यवहार करना यह सब कल्पनायें इतनी परे हैं कि उनको स्वीकार करना सम्भव नहीं"

लेखक ने काव्यकारों की कल्पना म यथाथ दृष्टिकोण स तथ्यो का अन्वेषण किया है जिसका वैज्ञानिक महत्त्व है क्या कविगण वस्तुत अनुभव शून्य थे, ऐसी मान्यता स्थापित करना दुव्यवहार सिद्ध होगा गज की लटकती हुई पूछ के सदभ मे शाखा की उपमा देते हुये भूतल-का स्पश कराना अमगत सा अवश्य प्रतीत होता है किन्तु कल्पना जगत् म क्षम्य है घोडो की लार स अस्तबल का गीला हो जाना राजकुल म हजारों की सख्या मे अश्वो की बहुतायत सिद्ध करना है हस का नीर क्षीर-विवेकी होना चक्रवाक का नैश विरही होना आदि परम्परागत जन श्रुतियाँ हैं इन जन श्रुतियो का निश्चित ही कोई आधार रहा होगा साथ ही अथ प्राप्ति के लिये अभिधा से हटकर अन्य शब्द शक्तियों के माध्यम से अथ के धरातल का स्पश करना चाहिये इस सदभ म लखक ने अनक पाश्चात्य पशु-पक्षी विज्ञान के सफल लेखको के मत देते हुए काव्यकारो की भूलें स्पष्ट की हैं यह स्वय लेखक को भी मानना होगा कि उनके द्वारा किसी प्रयोग शाला की स्थापना करना सभव नही था अपितु अद्यतन उपलब्ध वैज्ञानिक अवलब्धा, अभिमता एव व्यक्तिगत निरीक्षणो के आधार पर वैज्ञानिकता के धरातल पर यथाथ को स्पष्ट किया है यहाँ हम यह कह सकते हैं कि कवियों ने यदा-कदा अतिशयोक्ति जन्य प्रयोग कर लिये हैं जो वैज्ञानिक धरातल पर अपना यथार्थवादी दृष्टिकोण रखने म अक्षरश असमथ हैं हमे वैज्ञानिकता को भी साहित्यिक दृष्टि से पृथक करत समय कुछ महत्त्वपूण सूत्रों पर विचार करना आवश्यक होगा क्या विज्ञान का साहित्य से कोई सम्बन्ध ही नहीं है ? क्या साहित्य व विज्ञान एक नदी के दो किनारे हैं, जिनका समन्वय होना असभव है इस सन्दभ म इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि दोनों धारायें एक ही सतह पर बहती हुयी सत्यान्वेषण के लिये कटिबद्ध है किंतु माध्यम भिन्न-भिन्न हैं सृजनात्मक साहित्य सत्य के अधिक निकट है—वह परोक्ष मे बठा हुआ भविष्यद्

रेखाओं को उभार देता है, वह मानसिक संवेगों में जन्म लेने वाले हर सत्य को उद्घाटित करता हुआ अपने शब्दों में पिरोकर धर देता है इस प्रकार हम देखते हैं कि बिना प्रयोगशाला के ही साहित्यकार अपनी सूझ रूपी दूरबीन से कल्पना की परख नली में अनेक अनुभूतियों को जन्म देता हुआ सत्य के सन्निकट रहता है उसकी सम्प्रेषण शक्ति इतनी तीव्र होती है कि वह यथार्थ की स्थिति का सहज ही थाह पा लेता है विज्ञान भी इसी थाह अथवा रहस्य की प्राप्ति के लिए सतत यत्नशील है—वह मान्यताओं एवं कल्पनाओं का त्याग करता हुआ यथार्थ स्थिति के उद्घाटन के लिये संघर्षशील रहता है यदि कविगण कल्पनायें इस वैज्ञानिक धरातल के स्पर्श करने में यत्रतत्र पहुंच पाने में असमर्थ हों, तो हम उसे काव्यकारों की भूल या अज्ञान का परिचायक नहीं कह सकते अपितु संवेगों की गतिशीलता में प्रवाहजन्य अभिव्यक्तिकरण के कारण अतिशयोक्ति सिद्ध हो सकती है और ये वैज्ञानिक दृष्टि में भूलें कही जा सकती है

लेखक ने सूकर के सन्दर्भ में लिखा है — 'एक बात अवश्य है कि कतिपय पशु पक्षियों का वर्णन करते समय काव्यकारों ने भी उनके साथ पक्षपात किया है सूकर को सभी ने गंदा एवं भद्दा पशु माना है जबकि वह सबसे साफ पशु है खर को घृणा की दृष्टि से देखा है तो उल्लू को बुद्धिहीन माना है परन्तु ये सब वर्णन पक्षपात के कारण हैं'

संस्कृत-साहित्य में सूकर को 'वराह' से अभिसंज्ञित किया गया है दशावतार में सूकर को भी अवतार माना गया है—यथा—

> यस्यालीयत शल्कसीम्नि जलधि पृष्ठे जगन्मण्डलम्,
> दंष्ट्रायां धरणि नखे दितिसुताधीशः पदे रोदसी
> क्रोधे क्षत्रगणः शरे दशमुखः पाणौ प्रलम्बासुरो
> ध्याने विश्वमसावधार्मिक कुलं कस्मै चिदस्मै नमः ॥

पौराणिक उपाख्यानों में सूकर को विशिष्ट महत्व दिया है वैदिक वाङ्‌मय में भी सूकर के अनेक वर्णन उपलब्ध होते हैं, किन्तु लौकिक संस्कृत में सूकर के वर्णनों में जो उसे गन्दा एवं भद्दा कहा गया है—उसे हम पक्षपात अवश्य कह सकते हैं किन्तु इस पक्षपात के पीछे साहित्यकार की 'सत्य शिव सुन्दरम' की मंत्रणा है यह सर्वविदित है कि सूकर गन्दगी में रहने वाला एवं विष्ठादि का भक्षण करने वाला पशु है

भारतीय संस्कृति का चिरपोषक सौंदर्य एवं सद्‌वृत्ति का उपासक साहित्यकार इस सामाजिक घृणा को कैसे अस्वीकार कर सकता है ? साहित्य समाज की सत्याभिव्यक्ति है, समाज का प्रतिबिम्ब है दर्पण है सामाजिक सत्य एवं मिथ्या से वह सदा सम्पृक्त रहता है यहां यह विचारना भी अनिवार्य है कि सांस्कृतिक

महत्त्व भी साहित्यकार को अभिव्यक्तिकरण के लिए प्रेरित करता है योरोपीय संस्कृति मे शूकर का पालना उसकी अभिवृद्धि के लिए एक स्पर्धा है — उसका व्यवसायिक महत्त्व, है पुनरपि वह उनकी संस्कृति का एक अंग बन चुका है उनके समाज का एक स्तम्भ बन चुका है, अत उनके साहित्य में इसका वर्णन सुन्दरतम किया जा सकता है हमारे संस्कृत काव्यकारो ने भी यथा सम्भव वर्णन करते हुए इसके क्रिया कलापो का उल्लेख किया है महाकवि कालिदास ने अपने अभिज्ञान शाकुन्तलम् नाटक के द्वितीयांक मे आरण्यक पशुओ के संदर्भ में 'गाहन्ता महिषा निपान सलिल ' इत्यादि श्लोक में सूकर की कितनी मनोरम अभिव्यक्ति की है

इसी प्रकार गदर्भ एव उलूक की स्थिति है उनके स्वभावो का यथा स्थिति चित्रण किया गया है लेखक का यह कहना सत्य है कि इनके साथ पक्षपात हुआ है अन्य पशु पक्षियो की तुलना मे इनका वर्णन अत्यधिक कम मिलता है किन्तु इनके चित्रण के पीछे कोई दुराग्रह हो—ऐसी बात नही है क्योकि जो समाज के द्वारा परिहार्य हो, उसे साहित्यकार अपनी कलम के माध्यम से अपरिहार्य नही कह सकता हमारा धार्मिक दृष्टिकोण हमारे समाज व साहित्य से सदा सम्पृक्त रहता है—यह देखना आवश्यक है पाश्चात्य दृष्टिकोण से हम विचार करें तो यह भी सत्य है कि इनके साथ घृणास्पद व्यवहार किया गया है—लेखक सम्भवत इसी विचारधारा से सहमत रहा होगा

लेखक का संस्कृत काव्यकारों के दोष अथवा भूलो की समीक्षा करना ही-उद्देश्य नही रहा है, उसने काव्यकारो की मौलिक सूझ-बूझ की, जो वज्ञानिक सत्य हैं, भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुये कहा है —

'काव्यकारों ने वास्तव मे ऐसे वर्णन किये हैं जो वज्ञानिक सत्य है इसका सबसे सुन्दर प्रमाण है-हाथी की जीभ का उल्टा होना-जो वैज्ञानिक सत्य है एव बाणभट्ट ने इसका उल्लेख किया है वानर का चपल होना, शुक द्वारा फलों का निरन्तर काट-काट कर डालना हाथियों व शूकरों का पंक्तिबद्ध होकर चलना इत्यादि ऐसे वर्णन हैं जिनका बड़ा ही सही सही वर्णन काव्यकारों ने किया है "

' काव्यकारों की वशम्पायन शुक, कुम्भोदार-सिंह एव कालिन्दी सारिका की कल्पना बहुत ही सुन्दर बन पड़ी है कवियों ने पशु-पक्षियों केजो स्वाभाविक वर्णन किये हैं वे शायद ही किसी विश्व साहित्य में मिलें '

हमारे संस्कृत काव्यकारो ने पशु-पक्षियो का जो वर्णन भावात्मक स्थितियों के सन्दर्भ में किया गया है उनमे साहित्यिक सौन्दर्य के साथ-साथ वज्ञानिक सत्य भी स्पष्ट झलकता है महाकवि कालिदास ने मेघदूत काव्य मे बलाका पंक्ति का सहज चित्रण किया है जो यथार्थ स्थिति मे स्पष्ट सत्य है—

मन्द मन्द नुदति पवनश्चानुकूलो यथात्वां,
वामश्चायं नदति मधुरं चातकस्ते सगन्ध ।
गर्भाधानक्षणपरिचयान्नूनमाबद्धमाला
सेविष्यन्ते नयनसुभगं भवन्तं खे बलाका ॥

गजयूथ की कण्डूकता का ध्यान भी कवियों को सदा रहा है —

"कपोलकण्डूः करिभिर्विनेतुं विघट्टिताना सरलद्रुमाणाम्।
यत्र सुतक्षीरतयाप्रसूतः सानूनिगन्धः सुरभी करोति ॥"

पशु पक्षियों की स्वाभाविक आदतों का जितना सूक्ष्म अध्ययन संस्कृत कवियों ने किया है सम्भवत विश्व के किसी अन्य साहित्य में उपलब्ध हो—ऐसी सम्भावना नही की जा सकती है मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से यदि देखा जाये तो निस्सदेह हम यह कह सकते हैं कि संस्कृत कवियो की सूक्ष्म दृष्टि ने पशु-पक्षियों के मानस से मानवीकरण का सम्बन्ध सूत्र सयोजित करते हुये उनकी भावनाओं को सहज रूप से उभारा है। संस्कृत वाङ्मय में प्राय सभी पशु पक्षियो के वर्णन समुपलब्ध हैं—ये मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर सजीवता के साथ पाठकों के समक्ष आये हैं। मृग के मानस पटल पर उभरे सवेगों की परिणीति का इतना सहज एव सजीव चित्र सम्भवत ही किसी अन्य भाषा के साहित्य मे सुलभ हो। महाकवि कालिदास ने भयत्रस्त मृग की सत्रासस्थिति का नैसर्गिक चित्रण कितना रमणीय किया है —

ग्रीवाभङ्गाभिरामं मुहुरनुपतति स्यन्दने बद्धदृष्टिः,
पश्चार्द्धेन प्रविष्टः शरपतनभयाद् भूयसा पूर्वकायम्
दर्भैरर्द्धावलीढैः श्रमविवृतमुखभ्रंशिभि कीर्णवर्त्मा
पश्योदग्रप्लुतत्वाद्वियति बहुतरं स्तोकमुर्व्यां प्रयाति ।

आश्रम मे रहने वाले शुक की सहज स्थिति के दर्शन स्वत हो जाते हैं —

'नीवाराः शुकगर्भकोटरमुखभ्रष्टास्तरूणामधः ।

शाकुन्तलम् १।१४

चातक के जल ग्रहण की स्थिति भी नैसर्गिक रूप से कमनीयता के साथ प्रस्तुत की गई है —

"अम्भोबिन्दुग्रहणचतुरांश्चातकान्वीक्षमाणा ॥'

मेघ० १।२३

डा० शर्मा ने पशु पक्षियों के सदर्भ मे उनकी वनानिक स्थितियों का सर्वाधिक सुलझे हुए ढग के साथ प्रस्तुतीकरण किया है। भारतीय पशु पक्षियों को विश्व के पशु पक्षियों के साथ आकृतिमूलक एव प्रकृतिजनित दृष्टि से उनकी

प्रकृति एवं प्रवृत्तियों का सूक्ष्मतम विश्लेषण किया है। पशु-पक्षी सामाजिक दृष्टि से कितने उपयोगी हैं ? इस सदर्भ में सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक, ऐतिहासिक, भौगोलिक तथा व्यवसायिक दृष्टि से गहन अध्ययन किया गया है

गज की भोयजन्य क्या स्थिति है ? इस सदर्भ में लेखक ने शार्दूल से बहुत सुन्दर पद्य प्रस्तुत किया है —

तीव्राघातप्रतिहततरुस्कन्धलग्नैकदंत ,

बाढ़ःकूल्द वर्ततिवलया सग सजात पाश ।।

कालिदास ने 'वप्रक्रीडा' के सदर्भ में कहा है जैसे —

'वप्रक्रीडापरिणितगज प्रेक्षणीय ददश ।'

इस वप्रक्रीडा को लेखक ने बहुत अच्छी तरह समझाते हुए कहा है — वप्रक्रीडा । गज की सामान्य आदतों में से है यह नदियों के तट गिरा देता है यह पवत एव कन्दराओं पर सिर पटकता है "

इस प्रकार गजमद, प्रजनन गज का चिंघाडना, गज नियन्त्रण आदि सभी स्थितियो पर विशद विवेचन किया गया है—जो वस्तुतः लेखक की तीव्र एव गहन जिज्ञासा वृत्ति का परिचायक है लेखक ने व्याख्या के आधार पर यह सिद्ध किया है कि गीर्वाण-वाङ्मय में गज का सर्वाधिक वर्णन सुलभ है—जिसका मूलहेतु राज्याश्रय रहा होगा इसी प्रकार आरण्यक पशुओं के वर्णन भी सम्प्राप्य है। गण्डक का वर्णन देवगिरा-वाङ्मय में उपलब्ध है, वह अन्यत्र सम्भवतया ही मिल सके खर अत उपेक्षित पशु के सदर्भ में डा० शर्मा का कहना है — सम्पूर्ण सस्कृत साहित्य में खर का गौण स्थान रहा है यह मेरुदण्डीय उप जगत् के अन्तर्गत अश्व परिवार का सदस्य है अमेलक अश्व, धेनु, श्वान आदि सभी पशुओं की मूल उत्पत्ति, आकृति विज्ञान, जाति वर्गीकरण, क्रिया-कलाप आहार-विहार, काम-केलि एव उनकी सामाजिक महत्ता एव उपयोगिता आदि सभी वैज्ञानिक रीति के साथ प्रस्तुत किये गये हैं, जो लेखक के विशद् ज्ञान के सूचक हैं

मृग के भेदोपभेद का वैज्ञानिक वर्गीकरण सस्कृत साहित्य से अन्वेषित कर यह सिद्ध कर दिया है कि हमारे सुरभारती-समुपासक कितने अनुभवी थे— जो केवल कल्पना में नहीं जीते थे, अपितु सहज अनुभूतियों के माध्यम से अभि-व्यक्तिकरण किया करते थे। गज के पश्चात् मृग का सर्वाधिक वर्णन प्राप्त होता है पशुओं की तरह पक्षियों का भी वैज्ञानिक उपलब्धियों के साथ वर्गीकरण एव विवरण प्रस्तुत किया गया है हारीत एव कुररी के सदर्भ में लेखक ने अपनी गवेषणात्मक दृष्टि से यह सिद्ध किया है कि हारीत कपोत उपवर्ग का पक्षी तथा

पुररी अथवा उरग का पक्षी है। इनकी स्वाभाविक वृत्तियों का परीक्षण करते हुए अमर भारती भंडार के पक्षी विज्ञान की महत्ता को गौरव के साथ प्रतिपादित किया है इस शोध प्रबन्ध में लेखक की महान् भूमिका यह रही है कि प्रत्येक पशु-पक्षी के सन्दर्भ में महत्वपूर्ण आधुनिक रीति से तालिकायें संयुक्त की हैं-जिनके माध्यम से यह स्वतः स्पष्ट हो जाता है कि अमुक पशु अथवा पक्षी का कितने बार उल्लेख हुआ है तथा किस कवि ने किस काव्य में पशु अथवा पक्षी को कितना महत्व दिया है। यह सामग्री आज तक कहीं भी उपलब्ध नहीं है और न यह ही जानकारी उपलब्ध है कि किस कवि ने किन किन पशु-पक्षियों का विवरण किया है।

यह शोध प्रबन्ध वस्तुतः संस्कृत वाङ्मय के लिए महत्वपूर्ण गवेषणात्मक उपलब्धि है इस ग्रन्थ के माध्यम से श्री शर्मा ने समालोचकों की भ्रांतियों को चुनौती देते हुए यह सिद्ध कर दिया है कि संस्कृत के विद्वान् केवल रूढ़िग्रस्त नहीं हैं और वर्तमान में वैज्ञानिक-स्पर्धा में भी पीछे नहीं हैं, अपितु वैज्ञानिक स्थितियों को भी पूर्ण रूप से स्पष्ट करने में सक्षम हैं साथ ही संस्कृत समाज के अन्य विवेकशील व्यक्तियों के लिए प्रेरणात्मक पथ अभिप्रेरित किया है, जो वस्तुतः अनुकरणीय एवं गौरव के साथ अभिनन्दनीय है श्री शर्मा ने अपनी मौलिक सूझ, गवेषणा की रीति एवं सुलझे हुए तर्कों के माध्यम से पशु-पक्षियों की प्रकृतिका विशद् चित्रण चित्रित किया है यह ग्रन्थ केवल संकलन मात्र नहीं है, अपितु पशु पक्षी विज्ञान एवं संस्कृत-कवियों के योगदान से सम्बन्धित विशद् विवेचना एवं कुतूहलमय जिज्ञासावृत्ति से आपूरित है संस्कृत साहित्य की शोध-परम्परा में यह प्रथम प्रबन्ध है जो अपने आप में विषय से सम्बन्धित सकल विज्ञान से परिपूर्ण है इस प्रबन्ध की शैली सजीव एवं सुबोध है केवल पांडित्य प्रदर्शन की लालसा अथवा दुरुहता से मुक्त है

मेरी मान्यता है कि विद्वान् लेखक का यह शोध प्रबन्ध अनायास ही संस्कृत एवं अन्य विद्वानों के मध्य समादरणीय व अभिनन्दनीय होगा मैं लेखक को संस्कृत वाङ्मय में महान् योगदान प्रस्तुत करने के लिये हार्दिक बधाई देता हुआ आशा करता हूं कि वे इसी प्रकार अविरल गति से साहित्य सेवा करते हुए सारस्वत-यश प्राप्त करेंगे

—आचार्य उमेश शास्त्री
आचार्य
चमड़िया-संस्कृत-कालेज,
फतेहपुर (सीकर)
राजस्थान

# सम्मतियाँ व उद्गार

पद्मभूषण आचार्य डा० विश्वबन्धु
आदरी-सचालक
विश्वेश्वरानद-वैदिकशोध सस्थान
होशिआरपुर (पजाब)

प्रिय डा० शर्मा,

२४-२ ७१

आपका अमूल्य शोध प्रबन्ध छप रहा है इस पर हमारे सचालक-महोदय आचार्य विश्वबन्धु जी न अपनी हार्दिक प्रसन्नता अभिव्यक्त करने का मुझे निर्देश दिया है शुभकामनाओं सहित

भवदीय
ह० इ० वे० शर्मा, क्यूरेटर

डा० प्रभुलाल भटनागर,
उपकुलपति

विश्वविद्यालय,
जयपुर
दिनांक १७ फरवरी ७१

प्रिय डा० शर्मा साहिब

आपका पत्र दिनाक १ २ १९७१ का उपकुलपति जी को प्राप्त हुआ, तदर्थ धन्यवाद वे अपनी शुभकामनायें प्रेषित करते हैं और आपके प्रयास की सफलता की आकाक्षा करते हैं

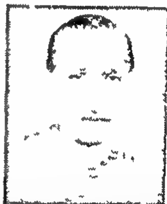
भवदीय–
ह० एम० पी० जैन
उपकुलपति के निजी सचिव



'I have carefully examined the thesis of Dr Shri Ram Dutt Sharma entitled "Birds and Beasts in Kalidasa and post-Kalidasa Kavyas" and it gives me pleasure to record my high appreciation of the work

Dr Sharma's thesis is an original and useful contribution to an important aspect of Sanskrit Kavyas

*–Dr P L Bhargava,*
Professor and Head of the Deptt
Department of Sanskrit
University of Rajasthan
JAIPUR–4



'विगत कुछ वर्षों से महाकवि कालिदास के विषय में विश्वविद्यालयों और उनके बाहर बहुत काय हुआ है जैसे-जैसे राष्ट्रकवि कालिदास के प्रति श्रद्धा बढ़ी उनकी रचनाओं का मूल्य अनेक दृष्टिकोणों से आंका गया इस शृंखला में डा० रामदत्त शर्मा का ग्रंथ 'संस्कृत काव्यों में पशु-पक्षी' आवश्यक महत्व रखता है डा० रामदत्त जी ने अत्यन्त परिश्रम से संस्कृत के विशाल महाकाव्यों का अध्ययन किया है इस दिशा में नवीन वैज्ञानिक अध्ययन के उपयोग ने ग्रंथ का मूल्य और अधिक बढ़ा दिया है जहां तक मेरी जानकारी है संस्कृत साहित्य समीक्षा में यह प्रयास नया तुलनात्मक और अधिक उपयोगी है मेरा विश्वास है कि डा० शर्मा के ग्रंथ से न केवल साहित्य के विद्यार्थियों, अपितु प्राचीन इतिहास एवं संस्कृति के छात्रों को भी लाभ होगा

–डा० प्रभुदयालु अग्निहोत्री
संचालक हिन्दी ग्रंथ अकादमी, मध्यप्रदेश
भोपाल–३

डा० रामदत्त विरचित 'संस्कृत काव्यों में पशु पक्षी' नामक शोध-प्रबन्ध उत्तम है, इसका विषय नवीन है और प्रतिपादन शैली सचित्र एवं प्रभावक है ग्रन्थ के वर्णन मार्मिक हैं और साथ ही प्रामाणिक भी मैं कामना करता हूं कि संस्कृत-जगत् में डा० रामदत्त के इस अमूल्य एवं मौलिक ग्रन्थ का स्वागत होगा।

—डा० सूर्यकान्त,
भूतपूर्व संस्कृत विभागाध्यक्ष
विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र



डा० रामदत्त शर्मा की शोधकृति संस्कृत काव्यों में पशु पक्षी' में संस्कृत साहित्य में वर्णित पशु-पक्षियों के सम्बन्ध में सूक्ष्म विवेचन उपलब्ध होता है कवियों ने पशु पक्षियों की जिन स्वाभाविक क्रियाओं का उपनिबन्धन किया है उन्हें शोधकर्ता ने पहचाना है और उनके वैशिष्ट्य को प्रामाणिक विधाओं में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है साहित्यिक चित्रण को विज्ञान की आधार शिला पर प्रतिष्ठापित करके सत्परीक्षण किया है अतः यह कहा जा सकता है कि शोधकार ने पशु पक्षियों को प्राचीन तथा नवीन दृष्टिबिन्दुओं से देखा है

शोधकृति पांच अध्यायों में विभक्त है विषय की सीमा और विस्तार के प्रति जागरूक लेखक ने अभिप्रेत परिप्रेक्ष्यों में चिन्तन-मनन किया है और प्रकृति-चित्रण के परिवेश में पशु-पक्षियों की कमनीयता का आकलन किया है मानव और प्रकृति का अविच्छिन्न सम्बन्ध चिरकाल से कवियों के दर्शन परीक्षण सामुन्मीलन का विषय रहा है मानव की विभिन्न व्यापार परम्पराओं की भूमिका की निर्मिति में पशु पक्षियों का योगदान स्पष्ट है शोधकर्ता ने इस सन्दर्भ में भी सूक्ष्म गवेषणा प्रस्तुत की है उपसंहार में डा० शर्मा ने पशु-पक्षियों के महत्त्व पर प्रकाश डाला है

डा० शर्मा का शोध-कार्य प्रशंसनीय है एवं शोधकृति उपादेय है

—डा० अमरनाथ पाण्डेय
अध्यक्ष संस्कृत विभाग
काशी विद्यापीठ वाराणसी

डा० रामानन्द शर्मा के शोध-प्रबन्ध 'संस्कृत काव्यों में पशु-पक्षी' के कुछ अंश मैंने ध्यान से पढ़े हैं भारतीय काव्य प्रकृति के निरूपण से भरा है आदि काव्य वाल्मीकि रामायण की उत्पत्ति की प्रेरणा 'क्रौञ्चवध' में सन्निहित है पशु-पक्षियों का मूल स्थान भारत है संस्कृत का शायद ही कोई कवि हो जिसने इन का वर्णन न किया हो इस साहित्य, समालोचना एवं दर्शन तीनों के लिये ही इनमें नीर क्षीर विवेक और आत्मा व योग्य के कारण, समान रूप से प्रेरणात्मक रहा है

डा० शर्मा के शोध-ग्रन्थ में कालिदास तथा परवर्ती कवियों द्वारा पशु-पक्षियों के वर्णन का विश्लेषणात्मक एवं तुलनात्मक अध्ययन है मुझे विश्वास है कि उनके ग्रन्थ का स्वागत होगा

—डा० रामचन्द्र द्विवेदी
आचार्य एवं अध्यक्ष
संस्कृत विभाग, विश्वविद्यालय
उदयपुर

●

"पशु-पक्षी मुझे प्रिय हैं संस्कृत साहित्य में उनका स्थान उन्नत है आपने उन पर जो कार्य किया है, वह रमणीय है प्रकाशन पर बधाई!

—डा० रामजी उपाध्याय
प्रोफेसर तथा अध्यक्ष संस्कृत विभाग
विश्वविद्यालय सागर (म०प्र०)

●

आप अपने पी-एच० डी० के शोध प्रबन्ध को प्रकाशित कर रहे हैं, यह जानकर प्रसन्नता हुयी इस शोध प्रबन्ध के कई अंश समय-समय पर 'गुरुकुल-पत्रिका' में प्रकाशित होते रहे हैं आपका यह ग्रन्थ भारी परिश्रम तथा योग्यता का सूचक है स्तुत्य है, अभिनन्दनीय है

—भगवद्दत्त वेदालङ्कार
सम्पादक, "गुरुकुल पत्रिका"
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

डा० रामदत्त ने सस्कृत-साहित्य का अवगाहन कर कालिदास की रचनाओ मे पशु-पक्षियो का जो गहरा और मनोरञ्जक अध्ययन किया है, वह सस्कृत साहित्य के प्रेमियो के लिये एक अच्छा सदर्भ कोष सिद्ध होगा

–डा० प्रभाकर माचवे नई दिल्ली

●

प्रकृति वर्णन के अन्तर्गत पशु-पक्षियो का स्थान होने के कारण काव्य मे ये अपरिहार्य तत्व हैं आपका कार्य अपने ढग का निराला है इससे महत्वपूर्ण तथ्य सामने आते हैं

–डा० ब्रह्मानद शर्मा
सस्कृत विभागाध्यक्ष,
गवर्नमेंट कालेज, अजमेर (राज०)

●



मैंने राजस्थान के सृजनशील शोधकर्त्ता डा० रामदत्त शर्मा का शोध ग्रथ सस्कृत काव्यो मे पशु पक्षी का पूर्ण अवलोकन किया इस शोध ग्रथ मे विद्वान् लेखक श्री शर्मा ने काव्य-जगत् मे प्रकृति चित्रण की उपादेयता को सिद्ध करते हुए "पशु पक्षियो पर वैज्ञानिक एव साहित्यिक विधाओं के सदर्भ मे पूर्ण रूपेण अन्वेषण कर सस्कृत वाङ्मय मे एक अभिनव दिशा बोध को जन्म दिया है—जो वस्तुत श्लाघ्य है यह शोध-ग्रथ वस्तुत भारतीय साहित्य के गौरव का प्रतीक है

–रामजीलाल शास्त्री
महामत्री
राजस्थान-सस्कृत समद्,
जयपुर

डा० शर्मा का यह प्रबन्ध सस्कृत साहित्य का पशु पक्षी विषयक प्रथम ग्र थ है '

नवभारत टाइम्स (१४ ३ ७०)
नई दिल्ली

•   •   •

"डा० शर्मा का यह प्रबन्ध सस्कृत साहित्य को एक नई देन है "

राष्ट्रदूत (१६ १ ७०) जयपुर

•   •   •

वास्तव मे यह ग्र थ सस्कृत-साहित्य को एक अमूल्य देन है "

जयगुरुदेव (११ ३ ७०) जयपुर

•   •   •

"ग्र थ केवल तथ्यो का सग्रह मात्र ही नहीं, अपितु अत्यन्त मौलिक एव सस्कृत-साहित्य शोध-परम्परा का पशु-पक्षी विषयक उत्तम ग्र थहै "

चिट्ठी (६ २ ७०) नवलगढ (राज०)



# संकेतिका

| | | |
|---|---|---|
| १ | अमर० | अमरकोष |
| २ | अ० वे० | अथर्ववेद |
| ३ | अ० ब्रा० | अद्भुत ब्राह्मण |
| ४ | अ० का० | अरण्यकाण्ड |
| ५ | अ० पु० | अग्निपुराण |
| ६ | अर० | अरण्यकाण्ड |
| ७ | आदि० | आदिपर्व |
| ८ | ऐ० ब्रा० | ऐतरेय ब्राह्मण |
| ९ | ऋ० | ऋग्वेद संहिता |
| १० | ऋतु० | ऋतुसंहार |
| ११ | का० के० पद्यो० | कालिदास के पद्यों |
| १२ | का० सं० | काठक संहिता |
| १३ | किरात० | किरातार्जुनीयम् |
| १४ | कुमार० | कुमारसम्भवम् |
| १५ | तै० सं० | तैत्तिरीय संहिता |
| १६ | द० च० | दशकुमार चरित |
| १७ | ना० शा० | नाट्यशास्त्र |
| १८ | बु० च० | बुद्धचरित |
| १९ | भा० | भास |
| २० | भा० का० अ० | भारविकाव्य में अर्थान्तरन्यास |
| २१ | भीष्म० | भीष्मपर्व |
| २२ | महा० | महाभारत |
| २३ | मै० सं० | मैत्रायणी संहिता |
| २४ | मालविका० | मालविकाग्निमित्र |
| २५ | मेघ० | मेघदूत |
| २६ | यु० | युद्धकाण्ड (वाल्मीकि-रामायण) |
| २७ | रघु० | रघुवंश |
| २८ | विक्रम० | विक्रमोर्वशीयम् |
| २९ | वन० | वनपर्व (महाभारत) |

३० वा० रा० — वाल्मीकि रामायण
३१ वा० सं० — वाजसनेयी संहिता
३२ वै० को० — वैजयन्ती कोष
३३ वै० मा० — वैदिक माइथोलोजी
३४ श० ब्रा० — शतपथ ब्राह्मण
३५ शाकु० — शाकुन्तलम्
३६ शिशु० — शिशुपालवधम्
३७ सं० सा० इ० — संस्कृत-साहित्य का इतिहास
३८ सा० सं० — सामवेद संहिता
३९ सौ० न० — सौन्दरनन्दम्
४० ह० च० — हर्षचरितम्
४१ हि० वि० को० — हिन्दी-विश्व-कोश

English—

४२ व० इ० — Vedic Index
४३ इन० ब्रि० — Encyclopaedia Britannica
४४ इन० चेम्बर० — Encyclopaedia Chambers
४५ इन० वर्ड० — World Book Encyclopaedia
४६ सं० इ० डि० — Sanskrit English-Dictionary
४७ इ० सं० डि० — English Sanskrit-Dictionary
४८ द० स० ए० — The Story of Animal Life
४९ ए० किंग० — Animal Kingdom
५० पा० हैण्ड — Pioneer Hand Book of Indian Birds
५१ ब० ऑ० सौ० — Birds of Saurashtra
५२ दि० इ० बर्ड्स — The Book of Indian Birds
५३ द० ब० ट्रा० को० — The Birds of Travancore & Cochin
५४ का०हि०प०प०प० — Kalidasa his Period, Personality & Poetry

• • •

# काव्य एव काव्यकार

# १ काव्य एवं काव्यकार

## काव्य क्या है ?

काव्य क्या है ? यह एक बड़ा ही विवादास्पद एवं समस्यापूर्ण प्रश्न है, जिस पर विभिन्न विद्वानों ने अपनी लेखनी चलाई है अतः काव्य के बारे में अब कुछ कहना पिष्टपेषणमात्र सा लगता है किन्तु फिर भी काव्यों के विषय में विचार करते समय काव्य की परिभाषा पर विचार करना यहां औचित्यपूर्ण होगा अतः उसी को कहते हैं

काव्य' शब्द का अर्थ कवि की रचना है अर्थात् कवि द्वारा जो कार्य किया जावे उसे काव्य कहते हैं[1] अतः कवि जिस किसी विषय का चमत्कारी सामाजिकों का हृदयहारी वर्णन जिन शब्दों में करता है वे शब्द ही काव्य हैं

काव्य की चर्चा करते समय 'कवि' के लक्षण पर विचार करना भी यहां आवश्यक है 'कवि' शब्द साहित्य में एक प्राचीन शब्द है जिसे विद्वानों ने 'कवृवर्णे एवं कुङ' धातुओं से व्युत्पन्न किया है[2] शब्दकल्पद्रुम व अमरकोष में सर्वज्ञ एवं सम्पूर्ण विषयों के वर्णन करने वाले को कवि कहा है[3] कवि शब्द का अर्थ इतना व्यापक होने के कारण इसे प्रारम्भ से ही बड़ा उच्च स्थान प्राप्त हो गया था शुक्ल-यजुर्वेद में कवि शब्द का प्रयोग

---

1 'कमनीय काव्यम्'—ध्वन्यालोक (लोचन), कवयतीति कवि तस्य कर्म काव्यम्'— एकावली (विद्याधर), कवेरिदं कार्यभावो वा'—

मेदिनीकोश

2 'कविशब्दस्य कववर्णे इत्यस्य धातोः काव्य कर्मणो रूपम्'

—काव्यमीमांसा

3 'कवते सर्वं जानाति सर्वं वर्णयतीति कवि '–शब्दकल्पद्रुम

'कवते श्लोकान ग्रथते वर्णयति वा कवि '—इत्यमर ।

मिलता है [4] वाद में श्रीमदभागवत् रामायण व महाभारत में तो कवि शब्द का प्रयोग अनेक स्थलों पर दृष्टिगत होने लगा [5] वाल्मीकि रामायण के प्रणेता आदि-कवि' एवं काव्य 'आदि काव्य' कहा जाने लगा [6] महाभारत के प्रणेता ने 'कृत मदं भगवन् काव्यं परमपूजितम्'–वाक्य कहकर कवि एवं काव्य की चर्चा की है [7] वेदव्यास जी ने कवि को उच्च स्थान देते हुए लिखा है कि काव्यरूपी अपार विश्व में कवि ही प्रजापति है एवं उसे यह विश्व जिस रूप में रुचिकर लगता है वह उसी प्रकार परिवर्तित हो जाता है [8] अतः 'कवि' शब्द प्रतिभा सम्पन्न विशिष्ट असाधारण रचना करने वाले विद्वान् के अर्थ में लिया गया है

काव्य एवं कवि के सामान्य लक्षण पर विचार करने के पश्चात अब हम विभिन्न विचारकों द्वारा दिये गये काव्य-लक्षण पर विचार करेंगे काव्य लक्षणकारों में निम्नलिखित आचार्य प्रमुख हैं —

१ भरत २ वेदव्यास (अग्निपुराणकार) ३ भामह ४ दण्डी ५ वामन ६ रुद्रट ७ आनन्दवर्धन ८ कुन्तक ९ भोज १० मम्मट ११ हेमचन्द्राचार्य १२ विद्यानाथ १३ वाग्भट्ट प्रथम १४ वाग्भट्ट द्वितीय १५ जयदेव १६ विश्वनाथ १७ गोविन्द ठक्कुर एवं १८ पण्डितराज जगन्नाथ

१ नाट्य शास्त्र के प्रणेता भरत—काव्य का लक्षण प्रस्तुत करने वालों में महामुनि भरत का प्रथम स्थान है नाट्य शास्त्र के १६वें अध्याय के ११८वें श्लोक में महामुनि ने काव्य की सात विशेषताओं पर प्रकाश डाला है [9]

---

4 'कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूः । —यजुर्वेद 40/8

5 'तेन ब्रह्म हृदाय आदि कवये' भागवत 1/1/1

6 महाभारत० 1/61

7 'इत्यार्षे आदिकाव्ये —वा० रा० (प्रत्येक सर्गान्त में) ।

8 अपारे काव्य संसारे कविरेव प्रजापति ।
यथास्मै रोचते विश्वं तथेदं परिवर्तते ॥
—अग्निपुराण 339/10

9 मृदुललितपदाढ्यं गूढ़ शब्दार्थहीनं,
जनपदसुखबोधं युक्तिमन्नृत्ययोग्यम् ।

वह उत्तम काव्य है —

१ जो कोमल व मनोहर पदों से युक्त हो

२ गूढ शब्द एव गूढार्थ से हीन हो

३ सामान्य लोगों के समझने योग्य हो

४ युक्ति-युक्त हो

५ नृत्य म उपयोग करने योग्य हो

६ अनेक रसों का स्रोत हो एव

■ सन्धियों व सन्धान सहित हो

महामुनि भरत के इस काव्य लक्षण म प्रथम व द्वितीय विशेषणों में शब्द व अर्थ का ग्रहण है प्रथम तीन विशेषताओं म माधुर्यादि गुणों का समावेश है छठे विशेषण म रस, चतुर्थ म सम्भवत अलङ्कारादि एव पञ्चम व सप्तम विशेषताओं म नाटक इत्यादि का ग्रहण है अत उक्त लक्षण म शब्दार्थ गुण, रस, अलङ्कार व नाटकादि का ग्रहण हैं

२ अग्निपुराणकार वेदव्यास—वेदव्यासजी न काव्य की परिभाषा देते हुये विषय का सुन्दर ढग से प्रतिपादन करने वाले सुव्यवस्थित पद समूहात्मक वाक्य को जो दोष रहित गुण सहित एव अलकार युक्त हो काव्य कहा है [10] इस प्रकार व्यासजी ने अर्थ, गुण एव अलङ्कारों की काव्य म उपस्थिति तो बतलाई ही है साथ ही दोषों साहित्य की भी चर्चा उन्होंने की है

३ भामह —भामह ने उस रचना को काव्य कहा है जो शब्द व अर्थ से युक्त हो अर्थात् उनके मत म शब्द और अर्थ दोनों ही काव्य हैं [11]

---

बहुकृतरसमार्ग सन्धिसन्धानयुक्तम्
स भवति शुभकाव्य नाटकप्रेक्षकाणाम् ॥

ना० शा० 16/118

10 'सक्षेपाद्वाक्यमिष्टार्थ व्यवच्छिन्नापदावली ।
काव्य स्फुरदलङ्कार गुणवद्दोषवर्जितम् ॥

—अ० पु० प० 337/6-7

11 'शब्दार्थौ सहितौ काव्यम्'—काव्यालङ्कार 1/16

४ दण्डी—काव्यादर्श के प्रणेता दण्डी ने मनोरम अर्थ से विभूषित अर्थ को काव्य का शरीर माना है[12] काव्यादर्श में दण्डी ने गुण व अलङ्कार युक्त शब्दार्थ को ही काव्य माना है वे काव्य में अल्प मात्र भी दोष स्वीकार नहीं करते[13]

५ वामन—वामन दण्डी के उत्तरवर्ती काव्य शास्त्रकार माने गये हैं उन्होंने काव्य को अलङ्कार के योग से ही उपादेय कहा है[14] उनके अनुसार सौन्दर्य के आधायक तत्त्व का नाम ही अलङ्कार है[15] वे दोषों से रहित गुण व अलङ्कारों से सुसज्जित काव्य को सौन्दर्य का कारण मानते हैं[16] इस प्रकार वामन ने शब्द गुण एवं अलङ्कार युक्त शब्दार्थ समूह को काव्य कहा है वामन ने ही आगे चलकर रीतिरात्मा काव्यस्य कहकर रीति को काव्य का शरीर माना है[17] इस प्रकार रीति की चर्चा यहां पूर्ववर्ती आचार्यों की अपेक्षा वैशिष्ट्य रखती है

६ रुद्रट—वामन का अनुकरण करते हुये रुद्रट ने 'ननु शब्दार्थौ काव्यम्' लिखकर मान्यता दी है[18] अतः वे भी दोष रहित और अलङ्कार युक्त शब्दार्थ को काव्य कहते हैं उन्होंने काव्य में रस की स्थिति को परमावश्यक माना है[19]

७ आनन्दवर्धन—ध्वनिमार्ग के प्रवर्तक आनन्दवर्धन ने ध्वनि को काव्य की आत्मा स्वीकार किया है[20] यद्यपि आनन्दवर्धन ने काव्य

---

12 'शरीरं तावदिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली।' —काव्यादर्श॰ 1/10

13 'तदल्पमपि नोपेक्ष्यं काव्ये दुष्टं कथंचन स्याद्वपुः सुन्दरमपि।' —वही॰ 1/7

14 'काव्यं ग्राह्यमलङ्कारात्'—काव्यालङ्कार सूत्र।

15 'सौन्दर्यमलङ्कारः।' —वही॰ 1/1/2

16 'स दोषगुणालङ्कारहानादानाभ्याम्।' —वही॰ 1/1/3

17 अधि॰ 1/2/6

18 काव्यालङ्कार 2/1

19 तस्मात्तत्कर्तव्यं यत्नेन महीयसा रसैर्युक्तम्। —काव्यालं॰ 12/2 पृ॰ 150

20 'काव्यस्यात्मा ध्वनिरिति।' —ध्वन्यालोक 1/1

लक्षण का विस्तृत उल्लेख नही किया है किन्तु उन्होने भी शब्दार्थ युगल को ही काव्य स्वीकार किया है[21]

८ कुन्तक —ध्वन्यालोक के पश्चात् 'वक्रोक्तिजीवितम' के प्रणेता कुन्तक ने शब्द एव अर्थ दोनो को 'काव्य' स्वीकार किया है एव भामहादि का अनुकरण किया है,[22] परन्तु कुन्तक ने उक्ति वचित्र्यवाले शब्द एव अर्थ को ही काव्य माना है[23] अत उनके मत मे उक्ति वचित्र्य का स्थान प्रमुख है उक्ति वचित्र्य से रहित शब्दार्थ मात्र काव्य नही कहा जा सकता

९ भोज —धाराधिपति भोज ने काव्य का कोई स्पष्ट लक्षण प्रस्तुत नही किया है किन्तु व दोपरहित, गुणयुक्त, अलकृत एव रसात्मक काव्य को स्वीकार करते हैं, जिसका उल्लेख उन्होंने कवि की कीर्ति पर प्रकाश डालते हुए किया है उनके अनुसार वह कवि जो निर्दोष गुणयुक्त, अलकृत एव रसपूर्ण रचना का निर्माण करता है कीर्ति को प्राप्त होता है[24]

१० मम्मट —काव्य प्रकाश के प्रणेता मम्मटाचार्य ने पूर्ववर्ती काव्यकारो के लक्षणो को ध्यान म रखत हुये एक ऐसी परिभाषा प्रस्तुत की है जिसमे सभी काव्य लक्षणो का समावेश सा प्रतीत होता है उन्होने दोष रहित, गुण एव अलकार युक्त एव कहीं स्फुट अलङ्कार न भी हो ऐसे शब्दार्थ का काव्य माना है मम्मट काव्य म अलङ्कार की अनुपस्थिति म भी काव्यत्व स्वीकारते हैं अलङ्कार के विषय मे उनका मत है कि अलङ्कारो का काव्य म उपस्थित होना आवश्यक है किन्तु किसी स्थल पर स्पष्टालकार की अनुपस्थिति से भी काव्यत्व म कमी नही आती[25]

---

21 'शब्दार्थ शरीरं तावत काव्यम् ।'—यथोपरि० पृ 5

22 'न शब्दस्यव रमणीयताविशिष्टस्य केवलस्य काव्यत्व नाप्यर्थस्येति ।
—वक्रोक्ति जीवितम् पृ० 24 ।

25 'शब्दार्थौ सहितौ वक्रकवि व्यापारशालिनि
बन्धे व्यवस्थितो काव्य तद्विदाह्लादकारिणी 1 वक्रोक्ति जीवितम् 1/7

24 'निर्दोष गुणवत्काव्यमलङ्कारैरलङ्कृतम् ।
रसान्वित कवि कुर्व कीर्ति प्रीति च विन्दति । सरस्वती कण्ठाभरण 1/2

25 'तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृती पुन क्वापि ।'
—काव्यप्रकाश सूत्र 1/1

११ हेमचन्द्राचार्य —आचार्य हेमचन्द्र ने काव्यानुशासन के प्रथमोद्याय में दोष रहित गुणयुक्त अलङ्कारसहित शब्द एवं अर्थ को काव्य कहा है।[26] अतः हेमचन्द्राचार्य ने भी युगल का स्वीकार किया है

१२ विद्यानाथ —प्रतापरुद्र यशोभूषण के प्रणेता विद्यानाथ ने भी हेमचन्द्राचार्य के काव्य लक्षण से साम्य रखने वाला काव्य लक्षण देते हुये गुण एवं अलङ्कार सहित एवं दोषरहित शब्दार्थ को काव्य कहा है।[27]

१३ वाग्भट्ट प्रथम —प्रथम वाग्भट्ट ने उस शब्दार्थ को, जो गुण एवं अलङ्कार से भूषित और रीति एवं रस से युक्त हो काव्य कहा है।[28] इस प्रकार वाग्भट्ट ऐसे आचार्य हैं जिन्होंने मम्मट एवं वामन के काव्य लक्षण को ही एक परिवर्तित रूप से हमारे सम्मुख रखा है

१४ वाग्भट्ट द्वितीय —आचार्य वाग्भट्ट द्वितीय का लक्षण मम्मट का अनुसरण मात्र प्रतीत होता है उनके मत से दोषरहित गुणयुक्त एवं प्राय अलङ्कार युक्त शब्दार्थ युगल ही काव्य है।[29] उन्होंने मम्मट की भाँति 'प्राय सालङ्कारौ' कहकर आवश्यक तो माना है परन्तु परमावश्यक नहीं माना है।[30]

१५ जयदेव —चन्द्रालोक के प्रणेता जयदेव ने—

निर्दोषा लक्षणवती सरीतिगुणभूषिता ।
सालङ्कार रसानेकवृत्तिवाक्काव्य नामभाक् ॥

—कहकर काव्य में सभी विषयों का समावेश कर दिया है क्योंकि

---

26 'अदोषौ सगुणौ सालङ्कारौ च शब्दार्थौ काव्य

—काव्यानुशासन 1/6

27 गुणालङ्कार सहितौ शब्दार्थौ दोषवर्जितौ काव्यम् ।'

—प्रतापरुद्र यशोभूषणे

28 साधुशब्दार्थ सन्दर्भ गुणालङ्कार भूषितम् ।
स्फुटरीतिरसोपेत काव्य कुर्वीत कीर्तये ।।

—वाग्भटालंकार 1/2

29 'शब्दार्थौ निर्दोषौ सगुणौ प्राय सालंकारौ काव्यम्

—काव्यानुशासने

30 चन्द्रालोके 1/7

उन्होने 'वृत्ति' को माना है

१६ विश्वनाथ —साहित्य दर्पण के प्रणेता आचार्य विश्वनाथ काव्य शास्त्र के प्रमुख आचार्यों मे से एक हैं आचार्य विश्वनाथ ने पूर्ववर्ती काव्यलक्षणकारो के मतो का सम्यक् अध्ययन कर काव्य की एक सक्षिप्त परिभाषा दी है उन्होंने केवल रसभाव आदि असलक्ष्य क्रम व्यंग्यार्थों की उपस्थिति को काव्य म आवश्यक माना है अलङ्कारो को उन्होंने स्वरूपाधायक न मानते हुये केवल उत्कर्ष के कारण माना है विश्वनाथ रसात्मक वाक्य को काव्य मानते है[31] उनका यह लक्षण शुद्धोदनि की 'काव्यरसादिमद् वाक्यम्' कारिका पर निर्भर करती है[32] उस कारिका मे 'रसादि' मे अलङ्कारादि का ग्रहण किया गया है किन्तु विश्वनाथ केवल रसात्मक वाक्य को ही काव्य मानते है उनके रस मे 'रस्यते इति रस' इस व्युत्पत्ति के अनुसार रूप शब्द का जो आस्वादित हो, इस यौगिक अर्थ के अनुसार भाव एव भावाभास का भी ग्रहण हो जाता है

१७ गोविन्द ठक्कुर —गोविन्द ठक्कुर सूत्रकार नही उन्होने तो मम्मट के काव्य प्रकाश की टीका लिखते हुये स्पष्ट किया है कि यद्यपि मम्मट ने सही एव स्पष्ट अलङ्कार रहित शब्दार्थ युगल को काव्य स्वीकार किया है किन्तु उनकी यह मान्यता समुचित नहीं कही जा सकती कारण कि रस एव अलङ्कार ही काव्य म चमत्कार के कारण होते हैं। अत इन दन दोनो की अनुपस्थिति म चमत्कार कम आ सकेगा ? यदि चमत्कार का अभाव होगा तो हम उसे काव्य कैसे कहेंगे कारण कि चमत्कार ही काव्याधार है अतएव हमे यह स्वीकार करना ही होगा कि सरस स्थल मे भले ही स्पष्ट अलङ्कार न हो किन्तु अस्पष्ट अलङ्कार की उपस्थिति आवश्यक है[33]

१८ पण्डितराज जगन्नाथ - काव्य शास्त्र के प्रमुख प्रणेता पण्डितराज जगन्नाथ ने अत्यन्त सुन्दर एव तार्किक ढग से काव्य के लक्षण पर विचार किया है उन्होने सभी प्राचीन विचारको के मत पर दृष्टिपात करने के अनन्तर रमणीय अर्थ के प्रतिपादक शब्द को काव्य स्वीकार किया है पण्डितराज को शब्द व अर्थ दोनो को काव्य कहा जाना स्वीकार्य नही और न ही काव्य के लक्षण म दोषराहित्य गुण व अलङ्कारादि का प्रयोग

---

31 वाक्य रसात्मक काव्यम्—सा० दर्पण 1/3

32 अलकार शेखर

33 देखिये—रस गगाधर भूमिका (चौखम्भा 1955)

किया जाना ही व रमणीयता का सम्पूर्ण मूलकारण कथम रस को नहीं मान्त एव वाच्य, सम्य एव व्यग्य इन तीनों अर्थों का काव्यगौण्य का समुचित कारण स्वीकार करते है "³⁴ कुछ भी हो फिर भी जगन्नाथ का का य लक्षण काव्य जगत् मे अपना विशिष्ट स्थान रखता है

पण्डितराज काव्य शास्त्र परम्परा क अन्तिम आचाय माने गये है उनके बाद का य लक्षण के विषय म कोई महत्वपूर्ण बात नही कही गयी

इस प्रकार हमने विभिन्न सम्प्रदायो के आचार्यों क का य ल णा पर एक विचार किया अब हमारे सम्मुख प्रमुख प्रश्न यह आता है कि इन सब काव्य लक्षणों म स कौन सा लक्षण तात्त्विक एव सवमान्य है अन इसी पर विचार करेंगे

ऊपर किये गये विवेचन म हमने देखा कि काव्य का ल क्षण समय समय पर परिवर्तित एव परिवर्धित होता रहा है विषय विन्य की आलो चना तो भामह के समय से ही होती रही है किन्तु काव्य लक्षण क विषय म आलोचन प्रस्तुत करने वाला म वामन का प्रथम स्थान रहा है वामन के पूववर्ती भामहादि द्वारा किये गये काव्य लक्षण म श दों का प्रयोग किया गया है उसे वामन ने लाक्षणिक प्रयोग बताया है एव शब्दाथ को का य का शरीर बतलाकर 'रीति को का य की आत्मा कहा है इस प्रकार वामन न भामहादि (जो काव्य म अलङ्कार की प्रधानता द रहे थे) के मतो को गौण मानकर रीति को प्रधान माना है किन्तु वामन का यह मत भी मट्ट आलोचना का शिकार हुआ है का यप्रकाशकार मम्मट न जो अपने ग्र थ के अष्टमोल्लास म गुणो व रीतियो की चर्चा की है इस प्रसग म व कहते हैं कि वामन न काव्य सौ दय मे उत्पादक धम गुणो एव इसके अभिवधक धम अलङ्कारो को स्वीकार किया है परन्तु वामन का यह कथन युक्ति सगत नही वे इसके लिए दो विकल्प रखत हैं —

(i) क्या समस्त ग्र थो से का य व्यवहार हो सकता है ?

(ii) क्या कतिपय गुणो से ही का य व्यवहार सम्भव है ?

इन विकल्पा पर विचार करते हुय व कहते हैं कि यदि प्रथमपक्ष के अनुसार समस्त गुणा की उपस्थिति से ही का य व्यवहार होता है तो समस्त गुणो से रहित गौडी एव पाञ्चाली रीति का य की आत्मा कैसी

---

34 रमणीयाथ प्रतिपादकशब्द काव्यम्–यथोपरि–प्रथमानन

मानी जा सकती है यदि द्वितीय पक्ष अर्थात कतिपय गुणो के होने से भी काव्य व्यवहार हो सकता है तो फिर रसविहीन काव्य लक्षण रहित काव्य को ओज इत्यादि कतिपय गुणो के होने से ही काव्य व्यवहार होने लगेगा जो स्वीकार्य नही अत वामन का रीति को काव्य की आत्मा कहना उचित नही[35] वामन के पश्चात् ध्वनिकारो ने ध्वन्यालोक के प्रारम्भ म ही काव्य के लक्षण के विषय म अपने पूववर्ती आचार्यो के विभिन्न मतो पर विचार करके और उस पर विस्तार के साथ आलोचनात्मक विवेचन करके व्यग्याथ या ध्वन्याथ को काव्य की आत्मा कहा है, परन्तु पुस्तक वक्रोक्ति जीवित म ध्वनि का स्थान विशेष करने का प्रयास किया है किन्तु वे ऐसा करने म सफल नही हो पाये हैं

तदनन्तर काव्यप्रकाश का काव्य लक्षण आलोचना का विषय बना चन्द्रालोक मे जयदेव ने मम्मट के 'अनलकृती पर 'जो विद्वान् अलङ्काररहीन शब्दाथ को काव्य स्वीकार करते हैं वे आग को भी गर्मी रहित क्यो नही मानते,[36] कहकर बडा मजाक उडाया है परन्तु यहाँ जयदेव स्वय गलती कर गये हैं मम्मट ने वृत्ति मे स्वय 'अस्फुट अलकार लिख दिया है काव्य म सवत्र स्फुटालङ्कार की स्थिति तो कोई भी सिद्ध नही कर सकता अत जयदेव की आलोचना प्रलाप मात्र है

जयदेव के बाद साहित्यदपण मे विश्वनाथ ने काव्य प्रकाशकार के काव्य लक्षण के प्रत्यक पद में दोष निकालने का प्रयास किया है उनके तक इस प्रकार हैं—(1) 'अदोषो पर आलोचना करते हुये विश्वनाथ ने कहा है यदि दोषरहित शब्दाथ को काव्य माना जायेगा तो काव्य का सवथा दोष रहित होना तो अत्यन्त दुलभ है

(२) 'शब्दार्थो' व 'सगुणो' दोनो एक दूसरे के विशेषण है अत ऐसे शब्द एव अथ जो गुणयुक्त हो, काव्य कहे जा सकते हैं आचाय विश्वनाथ कहते हैं कि गुण रस म रहते हैं शब्द एव अथ मे नही अतएव

35 देखिये—काव्यप्रकाश प० 385

36 'अङ्गीकरोति य काव्य शब्दार्थावनलकृती
असौ न मन्यते कस्मादनुष्णमनलकृती —चन्द्रालोक १/८

मम्मट का यह लक्षण निर्दोष नहीं उनको 'सगुणौ' के स्थान पर 'सरसौ' का प्रयोग करना चाहिये था

(३) अनलङ्कृति' के विषय में विश्वनाथ कहते हैं कि जब मम्मट अलङ्कारों को आभूषणों की भांति बाह्यशोभाधायक मानते हैं फिर 'अनलङ्कृती' कहकर उन्होंने काव्य में अलङ्कारों का समावेश किया है, वह उचित नहीं

वास्तव में विश्वनाथ ने बाल की खाल निकालने का प्रयास किया है इन सभी समस्याओं के उत्तर मम्मट ने इस प्रकार दिये हैं—

(१) यह सत्य है कि सर्वथा निर्दुष्ट काव्य नहीं हो सकता मम्मट ने "यक्कारोह्यमेव इत्यादि जो उत्तम काव्य का उदाहरण दिया है उसे भी आनन्दवर्धन ने उत्तम काव्य ध्वनि का उदाहरण स्वीकार किया है अतएव इसमें काव्यत्व का अभाव स्वीकार नहीं किया जा सकता अत ऐसे काव्यों में काव्यप्रकाशोक्त लक्षण को अदोषौ के प्रयोग द्वारा व्याप्ति होने के कारण इस लक्षण में अव्याप्ति दोष है काव्यप्रकाश में "यक्कारोह्यमेव इस पद्य को अविमृष्ट विधेयांश दोष कहा गया है यहाँ वाक्यगत दोष बताया गया है न कि व्यंग्यार्थ में क्योंकि व्यंग्यार्थ के चमत्कार में किसी प्रकार की बाधा नहीं है अत इस पद्य में वाक्यगत दोष होते हुये भी व्यंग्यार्थ का वैचित्र्य होने के कारण मम्मटाचार्य के लक्षण में अव्याप्ति नहीं है अत विश्वनाथ का आरोप निर्मूल है, निराधार है

(२) विश्वनाथ के दूसरे आक्षेप के उत्तर में कहा गया है कि यहाँ शब्दार्थौ का जो प्रयोग किया गया है उसके द्वारा वाच्य, लक्ष्य एवं व्यंग्य तीनों प्रकार के अर्थों का ग्रहण किया गया है जब व्यंग्यार्थ द्वारा रस का ग्रहण हो जाता है तो फिर सरसौ के प्रयोग की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती अतएव आचार्य विश्वनाथ का द्वितीय तर्क भी स्वीकार्य नहीं दूसरे यदि 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' विश्वनाथ के इस काव्य लक्षण पर ही विचार करें तो यहाँ बहुव्रीहि समास हो सकता है एवं बहुव्रीहि में अन्य पद प्रधान होता है अत 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' में अन्यपद वाक्य प्रधान है अत लक्षण का अर्थ हुआ— रस है आत्मा जिसकी ऐसा वाक्य काव्य है किन्तु वाक्य भी तो शब्द विशेष है अतएव आचार्यजी भी शब्द विशेष को काव्य कहते हैं वास्तव में शब्द तो आकाश का गुण है उसका चानस्वरूप रस के साथ कोई सम्बन्ध नहीं यदि इस उत्तर में यह कहा जाय कि शब्द में रस की स्थिति नहीं तो फिर वाक्य को रसात्मक किस प्रकार कहा जा सकता है और वह अस्तित्व रहित वस्तु उसकी आत्मा कैसे हो सकती है यदि शब्द के साथ रस का परम्परागत सम्बन्ध मानें तो फिर मम्मट

के 'शब्दार्थों' पर छींटाकसी करना उचित नहीं अतः विश्वनाथ स्वयं के शब्दों में ही भटक गये हैं

(3) 'अनलङ्कृती' के विषय में साहित्यदर्पणकार मम्मट के कथन को समझ ही नहीं पाये हैं मम्मट ने ही नहीं अपितु प्रायः सभी साहित्याचार्यों ने अलङ्कार से युक्त रचना को काव्य स्वीकार किया है स्वयं विश्वनाथ ने अलङ्कारों को काव्य माना है एवं साहित्य दर्पण के दशम परिच्छेद में अलङ्कारों का निरूपण किया है अतः विश्वनाथ मम्मट के काव्य लक्षण को दोषी ठहराने में सर्वथा असफल रहे हैं इस विवेचन से यह स्पष्ट है कि विश्वनाथ का काव्य लक्षण भी सर्वथा निर्दुष्ट नहीं है

रसगंगाधर के प्रणेता आचार्य जगन्नाथ मम्मट के उत्तरवर्ती साहित्याचार्य हैं उनके मत में लोक व्यवहार के प्रमाणों द्वारा केवल शब्द विशेष का ही काव्य होना सिद्ध होता है क्योंकि लोक व्यवहार में 'काव्य से अर्थ समझा जाता है।' 'काव्य सुना तो सही पर अर्थ समझ में नहीं आया' इत्यादि वाक्यों का प्रयोग होता है इस तथ्य के आधार पर उन्होंने मम्मट की आलोचना की है कि उन्होंने (मम्मट) ग्रन्थ में किस प्रकार काव्यत्व माना है अर्थात् उन्होंने 'शब्दार्थों' कैसे कहा है

पण्डितराज जगन्नाथ द्वारा दिये गये इस आक्षेप का खण्डन नागेशभट्ट (रस गंगाधर के टीकाकार) ने संक्षिप्त में करते हुए कहा है कि लोक व्यवहार में 'काव्य पढ़ा' काव्य सुना इत्यादि कहा जाता है उसी प्रकार 'काव्य समझा' इस प्रकार भी लोक व्यवहार में कहा जाता है 'समझना केवल अर्थ का ही होता है न कि शब्द का अतः केवल शब्द को काव्य नहीं कहकर 'शब्दार्थ' को ही काव्य कहा जाता है, इसके अतिरिक्त आचार्य जगन्नाथ एक आक्षेप और करते हैं कि मम्मट ने काव्य लक्षण में गुण व अलंकार का ग्रहण क्यों किया ? किन्तु आगे चलकर रसगंगाधर ने इस बात को निर्बल समझते हुए काव्य एवं रस के धर्मों का नाम, गुण एवं काव्य के शोभाधायक का नाम अलङ्कार माना जाय तो उसका प्रयोग काव्य लक्षण में किया जा सकता है[37] इस प्रकार हमने देखा कि विभिन्न साहित्याचार्यों ने शब्द, अर्थ, गुण अलंकार, रस ध्वनि वक्रोक्ति एवं रीति से युक्त कवि की रचना को जो कि दोषों से पूर्णतः या अंशतः मुक्त हो, काव्य कहा है

---

37 काव्यजीवितं चमत्कारित्वं चावशिष्टमेव।
गुणत्वालङ्कारत्वादेरननुगमाच्च।—

—रस गंगाधरे प्रथमानने

इन सभी साहित्याचार्यों की अन्य साहित्याचार्यों ने आलोचना की है एवं अपने मत को सर्वोपरि सिद्ध करने का प्रयास किया है परन्तु ऊपर किये विवेचन से यह स्पष्ट हो गया है कि मम्मटाचार्य का काव्य लक्षण इन सभी काव्य लक्षणों की साम्यावस्था है एवं आलोचना के क्षेत्र में सफलता की ओर बढ़ता प्रतीत होता है सभी काव्य लक्षणकारों के मत का प्रतिपादन करने के पश्चात् विभिन्न आलोचनाकारों ने मम्मट के काव्य लक्षण को अधिक सार्थक उचित एवं तार्किक कहा है सेठ कन्हैया लाल पोद्दार द्वारा लिखित संस्कृत साहित्य का इतिहास नामक ग्रन्थ के द्वितीय भाग में—'इस विवेचन द्वारा स्पष्ट है कि काव्य प्रकाशोक्त काव्य लक्षण ही आलोचना की कसौटी पर उत्तीर्ण होकर निर्दोष प्रमाणित हो सकता है'—इस वाक्य में मम्मट के काव्य लक्षण को उचित माना है[38]

काव्य प्रकाश के प्रसिद्ध व्याख्याकार आचार्य विश्वेश्वर सिद्धान्त शिरोमणि ने प्रथम उल्लास में मम्मट के काव्य लक्षण के विषय में— इस प्रकार थोड़े शब्दों में भावगाम्भीर्य के द्वारा मम्मट ने अपने काव्य लक्षण को अत्यन्त सुन्दर एवं उपादेय बना दिया है —कहकर मम्मट के काव्य लक्षण को ही उपादेय कहा है[39] काव्यप्रकाश की भूमिका में भामह का शब्दार्थों सहितौ काव्यं वाला लक्षण और अलङ्कृत और अधिक परिमार्जित होकर तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृती पुनः क्वापि के रूप में काव्य प्रकाश में भी मौजूद है गत १२०० वर्षों में किये गये काव्य लक्षणों का सार मम्मट ने अपने इस काव्य लक्षण के भीतर समाविष्ट कर दिया है—कहकर विश्वेश्वर ने मुक्तकंठ से मम्मट के काव्य लक्षण की प्रशंसा की है[40]

अतः मम्मट के काव्य लक्षण को उत्तम स्वीकार करने में कोई बाधा प्रतीत नहीं होती

## काव्य के भेद

काव्य के लक्षण के समान काव्य के भेद का प्रश्न भी विवादास्पद है। विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने स्वार्थानुसार काव्य के भेदों को प्रस्तुत किया है। काव्य शास्त्र के विद्वानों ने काव्य को अनेक प्रकार से विभाजित किया है। मम्मट

---

38 संस्कृत साहित्य का इतिहास सेठ भाग 2 पृ० 51
39 काव्यप्रकाश–विश्वेश्वर पृ० 28
40 यथोपरि पृ० 73 भूमिका

ने काव्य के मुख्य तीन भेद माने हैं —[41]

(i) ध्वनि-काव्य या उत्तम काव्य।

(ii) गुणीभूत व्यंग्य या मध्यम काव्य।

(iii) चित्र काव्य या अधम काव्य।

ध्वनि सम्प्रदाय के विचारकों ने इन तीन भेदों में से प्रथम अर्थात् ध्वनि काव्य के पुनः तीन भेद किये हैं वे हैं —

(i) रस ध्वनि (ii) अलंकार ध्वनि (iii) वस्तु ध्वनि

अन्य विचारकों ने काव्य के अन्य कई प्रकार के भेदों का उल्लेख किया है जिनका यहां वर्णन करना संभव नहीं।

सामान्य रूप से काव्य को तीन प्रकार का माना गया है —

1 उपजीव्य काव्य 2 श्रव्य काव्य 3 दृश्य काव्य

(i) उपजीव्य काव्य —संस्कृत-साहित्य के वे काव्य जिनसे स्फूर्ति तथा प्रेरणा लेकर अवान्तरकालीन कविगण ने अपने काव्यों को सजाया है ऐसे काव्यों को हम व्यापक प्रभाव सम्पन्न होने के हेतु 'उपजीव्य काव्य' के नाम से पुकार सकते हैं।'[42] संस्कृत साहित्य में–रामायण, महाभारत एवं श्रीमद्भागवत उपजीव्य काव्य हैं।

(ii) श्रव्यकाव्य - श्रव्यकाव्य वह काव्य है जिसके सुनने से आनन्द की अनुभूति होती है।[43] उदाहरणार्थ—रघुवंश बुद्धचरित कादम्बरी इत्यादि।

(iii) दृश्य काव्य —जिसको देखने से मानव के मन के भाव जागृत हों एवं आनन्दानुभूति हो ऐसे काव्य को दृश्य काव्य की संज्ञा दी गई है।[44] उदाहरणार्थ—अभिज्ञान शाकुन्तलम्।

उपजीव्य काव्य के भेदों का उल्लेख नहीं मिलता है। श्रव्य एवं दृश्य काव्यों के भेदोपभेदों का वर्णन अनेक विचारकों ने किया है। श्रव्यकाव्य के प्रमुख तीन

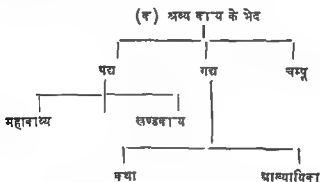
41 काव्य प्रकाश आ वि पृ० 28–33

42 स सा इ बलदेव पृ० 64

43 श्रव्यं श्रोतव्यमात्रम्।' सा द 6/3/3

44 'दृश्यं तत्राभिनेयं तद्रूपारोपात् रूपकम्। —6/1

भेद हैं—पद्य, गद्य एवं चम्पू। पद्य काव्य के दो उपभेद हैं—महाकाव्य एवं खण्ड काव्य। गद्य काव्य भी दो प्रकार का होता है—कथा एवं आख्यायिका। चम्पू काव्य के किसी उपभेद का उल्लेख नहीं है। दृश्य काव्य के दश भेद साहित्य दर्पण में दिये गये हैं।[45] प्रस्तुत प्रसंग में हमारा संबंध श्रव्य काव्य एवं दृश्य काव्य के एक भेद-नाटक से है। अतः यहां हम श्रव्य काव्य के भेदों पर संक्षिप्त विचार कर नाटक की परिभाषा मात्र पर विचार करेंगे। दृश्य काव्य के प्रकरणादि भेदों का उल्लेख हम यहां नहीं करेंगे।




(ख) पद्य काव्य—छन्दों में लिखी गई रचना पद्य काव्य कहलाती है।[46] उदाहरणार्थ—रघुवंश मेघदूतादि।

पद्य काव्य के प्रमुख दो भेद होते हैं—प्रथम महाकाव्य व द्वितीय-खण्ड काव्य।

(1) महाकाव्य—महाकाव्य की परिभाषा देते हुए दण्डी एवं विश्वनाथ ने एक विस्तृत रूप रेखा प्रस्तुत की है। महाकाव्य की परिभाषा देते हुये दण्डी लिखते हैं कि—महाकाव्य में सर्ग होने चाहियें।

उसके प्रारम्भ में आशी नमस्कार व वस्तु निर्देशक वाक्य हो। उसकी कथा इतिहास से ली गयी हो या कोई अन्य उदात्त कथा हो। महाकाव्य का फल चतुर्वर्ग प्राप्ति होना चाहिये। उसका नायक चतुर एवं उदात्त हो। महाकाव्य में नगर, जलाशय पर्वत ऋतु, सूर्य एवं चन्द्र के उदय उपवन विहार, जलक्रीडा, मधुपान रतोत्सव, विप्रलम्भ विवाह एवं युद्ध विषयक कार्यों के वर्णन होने चाहिये। यह

45 सा० द० 6/1-312
46 'छन्दोबद्धपदं पद्यम्।' यथोपरि० 6/314

अलंकार युक्त हो एव विस्तृत हो रस एव भावो का भी समावेश हो महाकाव्य के सर्ग न ज्यादा बडे हो न ही छोटे यह लोकरंजन करने मे समर्थ हो एव विभिन्न प्रकार के वृत्तान्तो से युक्त हो वह काव्य स्थायी रहता है[47] साहित्य दर्पकार ने भी महाकाव्य को करीब करीब ऐसी ही परिभाषा विस्तृत रूप मे प्रस्तुत की है[48] यहा उस परिभाषा का विस्तृत वर्णन करना पिष्टपेषण मात्र होगा अत यहा हम उसका वर्णन नहीं करेंगे हा एक बात अवश्य है कि दण्डी ने महाकाव्य की परिभाषा मे रस व भावो की चर्चा मात्र की है परन्तु महाकाव्य म शृंगार, वीर या शान्त इन तीनो म से एक रस की प्रधानता होनी चाहिये ऐसा विश्वनाथ का मत है अन्य बातें प्राय दण्डीवत ही हैं[49]

महाकाव्य के उदाहरण हैं—

रघुवश शिशुपालवध—नषधीयचरित इत्यादि।

(ii) **खण्ड काव्य** —खण्ड काव्य पद्य काव्य का दूसरा भेद है इसमे विषयो का सन्निवेश महाकाव्य के समान ही होता है किंतु महाकाव्य के सभी लक्षण यहा एक साथ उपलब्ध नही होते[50] यह महाकाव्य की भांति विशाल न

---

47 'सर्गबन्धो महाकाव्यमुच्यते तस्य लक्षणम्।
आशीर्नमस्क्रिया वस्तु निर्देशो वापि तन्मुखम्॥
इतिहास-कथोद्भूतमितरद्वा सदाश्रयम्।
चतुर्वर्गफलोपेत चतुरोदात्तनायकम्॥
नगरार्णवशैलर्तु चन्द्रार्कोदयवर्णन।
उद्यान सलिल क्रीडा मधुपान रतोत्सव॥
विप्रलम्भर्विवाहैश्च कुमारोदयवर्णन।
मन्त्रदूतप्रयाणाजिनायकाभ्युदयरपि॥
अलंकृतमसंक्षिप्त रसभावनिरन्तरम्।
सर्गैरनतिविस्तीर्णं श्रव्यवृत्त सुसन्धिभि।
सर्वत्र भिन्न वृत्तान्त तरुपेत लोकरंजकम्।
काव्यकल्पान्तर स्थायि जायते सदल कृति॥'

—काव्यादर्श 1/14–19

48 सा० द० 6/315–324

49 शृंगारवीरशान्तानामेकोऽङ्गी रस इष्यते।' यथोपरि० 6/317

50 'खण्डकाव्य भवेत्काव्यस्यैक देशानुसारि च।' यथोपरि० 6/329

होकर जीवन के किसी एक पक्ष से सम्बन्धित होता है[50] इसम धम, नीति व श्रृ गारादि का वणन होता है परन्तु वणन विस्तृत नही होत उदाहरणाथ—ऋतुसहार मेघदूतादि

(ब) गद्यकाव्य —गद्य काव्य श्रव्य काव्य का द्वितीय भेद हैं इसे गद्यमय काव्य भी कहा जाता है गद्यकाव्य के प्रमुख चार भेद हैं—[51]

(१) मुक्तक–असमस्त पदो से रचा जान वाला गद्य मुक्तक कहा जाता है

(२) वृत्तगन्धि—जिस गद्य मे वृत्तो के अ श इधर उधर से प्रतीत हो उस वृत्तगन्धि गद्य कहते है

(३) उत्कलिकाप्राय—यह वह गद्य है जो लम्बे लम्बे समासो से पूण हो

(४) चूर्णक—जिस गद्य मे छोटे-छोटे समस्त पदो का उपनिबन्ध हुआ हो चूणक गद्य कहा गया है

गद्यकाव्य के दो अवान्तर भेदो का भी उल्लेख मिलता है ये दो हैं—

(1) कथा (11) आख्यायिका

(1) कथा—सरस इतिवृत्त की रचना वाला, यदा कदा आर्या, वक्त्र और अपवक्त्र छदो से युक्त, आरम्भ में नमस्कारात्मक मगलाचरण एव खलनिन्दा और सज्जनप्रशसा से युक्त गद्य काव्य कथा' नाम से कहा जाता है उदाहरणाथ–कादम्बरी[52]

(11) आख्यायिका—गद्य काव्य का द्वितीय अवान्तर भेद है–आख्यायिका। आख्यायिका म प्राय कथा की ही विशेषताओ का समावेश होता है परतु इसमे कवि के वश का अनुकीतन एव अन्य कवियो की चर्चा भी होती है साथ ही यत्र तत्र पद्यमूर्तियो का भी समावेश रखा गया है उदाहरणाथ—हर्षचरित[53]

(ख) दृश्यकाव्य

दृश्यकाव्य वह काव्य है जिसे 'अभिनय' द्वारा प्रदर्शित किया जाता है

---

51 वृत्तगन्धोज्झित गद्य मुक्तक वृत्तगन्धि च ।
भवेदुत्कलिका प्राय चूणक च चतुर्विधम् ।।
—यशोधरि० 6/330

52 यशोधरि० 6/332-33

53 यशोधरि० 6/334-35

इसे रूपक' भी कहते हैं[54] अभिनय आंगिक, वाचिक, आहार्य एवं सात्विक भेद से चार प्रकार का बतलाया गया है

रूपक के दश भेद हैं—[55]

| | | | |
|---|---|---|---|
| १ | नाटक | ६ | डिम |
| २ | प्रकरण | ७ | ईहामृग |
| ३ | भाण | ८ | अंक |
| ४ | व्यायोग | ९ | वीथी एवं |
| ५ | समवकार | १० | प्रहसन |

यद्यपि यहां हमें दृश्यकाव्य के दशों भेदों का संक्षिप्त परिचय देना चाहिये किन्तु हमारे प्रबन्ध का सम्बन्ध केवल रूपक के प्रथम भेद—नाटक—से है अत उसी का विवरण करेंगे

नाटक—नाटक की शरीर-रचना किसी प्रख्यात वृत्त से की जानी चाहिये एवं इसमें पांच संधियों का समावेश होना चाहिये उन चरितों के उदात्त गुणों का उपनिबन्धन होना चाहिये नाटक में सुख व दुःखमय जीवन का उद्भव होना चाहिये नाटक में कम से कम ५ एवं अधिक से अधिक १० अंक होने चाहिये इसका नायक कोई प्रख्यात राजवंशी या राजर्षि हो नायक धीर, उदात्त व प्रतापी होना चाहिये वह नायक दिव्य, अदिव्य या दिव्यादिव्य में से किसी एक गुण से युक्त होना चाहिये नाटक में वीर या शृंगार में से एक रस अंगी होना चाहिये एवं दूसरे रस प्रधान रस के अंगी होने चाहिये इसका अन्त विस्मयोत्पादक होना चाहिये इसमें उन चार-पांच प्रधान पुरुषों का चरित्र वर्णित होना चाहिये एवं यदि इसकी रचना गोपुच्छ के अग्रभाग के समान हो तो अच्छी लगती है [56] नाटक के उदाहरण हैं—

अभिज्ञानशाकुन्तलम् उत्तर रामचरितम् इत्यादि

---

54 'दृश्य तत्राभिनेयं तद्रूपारोपात्तु रूपकम् । यथोपरि० 6/1

55 नाटकमथ प्रकरणं भाणव्यायोगसमवकारडिमा ।
ईहामृगाङ्कवीथ्य प्रहसनमिति रूपकाणि दश ॥

—यथोपरि० 6/3

56 नाटकं ख्यातवृत्तं स्यात् पञ्चसन्धिसमन्वितम् ।
विलासर्द्ध्यादिगुणवद्युक्तं नानाविभूतिभि ॥

इस प्रकार यहां हमने कतिपय मुख्य काव्य प्रकारों का उल्लेख किया इसके पश्चात् हम प्रमुख काव्यकारों पर विचार करेंगे

## प्रमुख काव्यकार

संस्कृत साहित्य एक विशाल साहित्य है इसमें न जाने कितने अमूल्य काव्य हैं और कितने प्रतिभाशाली काव्यकार प्रस्तुत प्रबन्ध में हमने संस्कृत-साहित्य के प्रमुख काव्यकारों में से कतिपय का चयन किया है उनमें से कुछ पद्य कवि हैं एवं अन्य गद्य कवि इस लेख में हम प्रमुख काव्यकारों के समय एवं उनकी कृतियां पर एक विचार करेंगे

पद्य-कवि—१ कालिदास २ अश्वघोष ३ भारवि ४ माघ ५ श्रीहर्ष
गद्य-कवि—१ सुबन्धु २ बाणभट्ट ३ दण्डी

# पद्य-कवि

## (१) कालिदास

महाकवि कालिदास संस्कृत साहित्य के प्रमुख काव्यकार हैं कालिदास के व्यक्तित्व व कृतित्व पर बहुत कुछ लिखा जा चुका है, लिखा जा रहा है एवं लिखा जाता रहेगा वास्तव में महाकवि के विषय में जितना भी अधिक लिखा जाये कम हैं प्रस्तुत प्रबन्ध में हमारा सम्बन्ध पशु पक्षियों से है अतः हमें यहाँ कालिदास के प्रकृति-चित्रण पर विचार करना चाहिये किन्तु इस अध्याय में हम कालिदास के समय व कृतियों पर ही विचार करेंगे प्रकृति-चित्रण की चर्चा हम द्वितीय अध्याय में करेंगे

---

सुखदु खसमुद्भूति नानारसनिरन्तरम ।
पञ्चादिका दशपरास्तत्रांका परिकीर्तिता ॥
प्रख्यातवंशो राजर्षिर्धीरोदात्त प्रतापवान ।
दिव्योऽथ दिव्यादिव्यो व गुणवन्नायको मत ॥
एक एव भवेदगी शृंगारो वीर एव वा ।
अंगमन्ये रसा सर्वे कार्यो निर्वहणेऽद्भुत ॥
चत्वार पञ्च वा मुख्या कार्यव्यापृतपुरुषा ।
गोपुच्छाग्रसमाग्र तु बन्धन तस्य कीर्तितम् ॥
—यथोपरि० 7–11

## समय

कवि-कुल-दीपक कालिदास का समय संस्कृत साहित्य की प्रमुख समस्याओं में से एक है वास्तव में कवि-कालिदास के ग्रंथों का जितना प्रचार एवं प्रसार है उतना शायद ही किसी भारतीय कवि के ग्रंथों का हो किंतु महाकवि के समय के विषय में जितनी भ्रांतियों एवं असमानताएँ हैं शायद ही किसी कवि के विषय में हों इन समस्याओं पर विचारकों ने सम्यक् विचार किया है एवं अपने मत का प्रतिपादन किया है यहां हम इन विचारों पर एक दृष्टि डालते हुए किसी परिणाम पर पहुँचने का प्रयास करेंगे

कालिदास का समय बड़ा ही अनिश्चित है इस अनिश्चितता के प्रमुख तीन कारण हैं प्रथम तो यह कि महाकवि ने अपने विषय में कहीं भी कुछ भी नहीं लिखा है द्वितीय यह कि कालिदास के नाम से अनेक किंवदन्तियाँ प्रचलित हो गयी हैं एवं तृतीय यह है कि महाकवि कालिदास के अतिरिक्त भी कालिदास के नाम से अनेक ग्रंथ मिलते हैं, अतः एक से अधिक कालिदास भी हो सकते हैं

समस्या होते हुए भी विश्व के अनेकानेक विचारकों ने अपने विवेक एवं महाकवि की कृतियों के सहारे महाकवि के समय का निरूपण किया है महाकवि की तिथि से सम्बन्धित तीन मत विशेष रूप में प्रचलित हैं —

(१) छठी शताब्दी वाला मत
(२) गुप्तकालीन मत, एवं
(३) प्रथम शताब्दी वाला मत

### छठी शताब्दी वाला मत

छठी शताब्दी में कालिदास को मानने वाले विचारक हैं —डा० फर्गुसन, डा० हार्नली, डा० मेक्डोनल व म म श्री हरप्रसाद शास्त्री इन विचारकों के द्वारा कालिदास को छठी शताब्दी में मानने के प्रमुख तर्क इस प्रकार हैं —

(१) कालीदास मालवराज यशोधर्मन् के समकालीन थे यशोधर्मन् ने छठी शताब्दी में हूणों पर विजय प्राप्त की थी एवं उक्त अवसर पर एक नया संवत् ६०० वर्ष पूर्व से अर्थात् ५८ ई पू से स्थापित किया था[57]

(२) ६ ४ के एहोल के शिलालेखों में कालिदास का उल्लेख है एवं महाकवि बाण ने कालिदास की प्रशंसा की है[58]

---

57 स सा इ बलदेव पृ० 163।
58 'निर्गतासु भवाकस्य कालिदास सूक्तिषु।
प्रीतिमधुरसाद्रासु मञ्जरीष्विव जायते ॥

( ) कालिदास भारवि के अनन्तर छठी सदी म विद्यमान थे[59]

(४) *कालिदास लकाधिपति कुमारगुप्त के समय यही विद्यमान थे[60]*

किन्तु अ य विद्वान् इन तथ्यो को अस्वीकार करते हुए इस मत का खण्डन करते हैं उनके तक इस प्रकार हैं—

(१) राजा यशोधमन् ने हूणो को पराजित करने पर भी 'शकारि [शका का शत्रु] कहना उचित प्रतीत नही होता दूसरे विक्रम सवत् यशोधमन् द्वारा चलाया गया सवत् नही अपितु मालव सवत् के नाम से पूव प्रचलित है[61]

(२) *एहोल के शिलालेखो म कालिदास का उल्लेख यह बात प्रमाणित* नही करता कि वे उसी समय विद्यमान थे यदि हो ते तो वे महाकवि कालिदास से कोई भिन्न व्यक्ति रह होंगे बाण द्वारा प्रशसा किया जाना भी कालिदास को छठी शता दी मे सिद्ध नहीं कर सकता सभवत बाण ने कवि की कृतियो का अवलोकन कर ही अपना मत प्रस्तुत किया हो वसे भी कवि की प्रतिभा की प्रसिद्धि म ३–४ शताब्दियो का समय लग सकता है अत यह विचार भी *निरापद नही*

(३) कालिदास भारवि के अन तर छठी शताब्दी म विद्यमान थे, यह मत भी तार्किक प्रमाणो के अभाव म स्वीकाय नही[62] आधुनिक युग म इस मत को प्राय अस्वीकार ही कर दिया गया है

## चतुथ शताब्दी वाला मत

चतुथ शता दी को स्वीकार करने वालो की सख्या काफी है एव विभिन्न विचारको ने अपनी अपनी विचार शक्ति म इसे सिद्ध करने का प्रयास भी किया है इस मत के प्रमुख विचारक हैं—डा कीथ डॉ जेकोबी, प्रो० पाठक, डॉ० भण्डारकर एव श्री मजूमदार इन विचारकों के कतिपय विचार इस प्रकार है—

(१) कीथ महोदय का कहना है कि महाकवि कालिदास ग्रीक शब्दो से परिचित थ जसा कि उनके 'जामित्र के प्रयोग से सिद्ध होता है[63] दूसरे उनकी प्राकृत निश्चित रूप स अश्वघोष व भास की प्राकृत के बाद की है अत उनके

---

59 स सा इ बलदेव पृ 163

60 का हि प प प पृ 41, स सा इ म गस पृ 97

61 स सा इ बलदेव पृ० 164

62 यथापरि पृ 164

63 तिथौ च जामित्र गुणान्वितायाम् ।—कुमार 7/1

मत मे कालिदास का समय ४७२ ई से पूव है, और समवत उससे भी पहले है, जिसस ४०० ई क लगभग उन्हें रखना पूणतया न्याय सगत प्रतीत होता है[64]

(२) डा कीथ के समान डा जेकोबी भी 'जामित्र शब्द' को ग्रीक शब्द मानत है[65]

(३) पूना के प्रोफेसर के बी पाठक की सम्मति म कालिदास स्कन्दगुप्त 'विक्रमादित्य' के समकालीन थे[66]

(४) बलदेव उपाध्याय ने इतिहास व श्रीयुत् मजुमदार ने कतिपय प्रमाणो के आधार पर कालिदास को कुमारगुप्त व स्कन्दगुप्त दोनो के समकालीन स्वीकार किया है[67]

परन्तु इन बातो मे भी कतिपय कमियां अन्य विद्वानो ने निकाली हैं वे कालिदास को गुप्तकालीन मानने वालो के मतो को इस प्रकार अस्वीकार करते हैं —

(१) डा कीथ व जेकोबी के मत मे कालिदास ने 'जामित्र शब्द' को ग्रीक से लिया माना है एव इसका ग्रहण ३५० ई के पूर्व नही माना है उनका यह मत भी पूर्णत तार्किक एव स्पष्ट नही प्रतीत होता इस प्रकार का कोई तर्क नही कि जिसके आधार पर भारतीय ज्योतिष को ग्रीक ज्योतिष पर आधारित माना जावे भारतीयों को ग्रहो के प्रभाव का ज्ञान ग्रीक लोगो से पूर्व का है अत डा कीथ व जेकोबी का मत यह सिद्ध नही कर सकता कि कालिदास गुप्तकालीन थे[68]

(२) श्री पाठक कालिदास को स्कन्दगुप्त का समयकालीन मानते हैं वे कश्मीरी टीकाकार वल्लभदेव के निम्नलिखित श्लोक को प्रमाणिक पाठ मानते हैं —

विनीताध्वश्रमास्तस्य सिन्धुतीरविचेष्टनै ।
दुधुवुर्वाजिन स्कन्धाल्लग्नकुङ्कुमकेसरान् ॥

इस पद्य म जो 'सिंधु' शब्द आया है, श्री वल्लभदेव ने उसे 'वक्षु' शब्द

---

64 भा सा इ मगल पृ 100
65 का हि पे प प पृ 44
66 मेघदूत भूमिका-पाठक पृ 191
67 स सा इ बलदेव पृ 164
68 का हि पे प प पृ 46 ।

माना है जिसका मूल रूप श्री पाठक के मत म 'प्रावसस' है इस प्राधार पर व रघु के हूणो वाले युद्ध को प्रावसस के किनारे मानते हुये स्कन्धगुप्त से सम्बन्धित करते हैं। परन्तु सिंधु को वंक्षु व वक्षु को प्रावसस मानना कौन से भाषा वैज्ञानिक ढग से सिद्ध होता है स्पष्ट नही अत हम यह मत स्वीकार नही कर सकते

(३) डा भडारकर व प० शर्मा ने चन्द्रगुप्त द्वितीय के समय म रखने का जो प्रयास किया है वह पाश्चात्य परम्परा पर प्राधारित है उनके मत म चन्द्रगुप्त द्वितीय का काल गुप्तयुग का स्वर्णयुग था एव कालिदास द्वारा वर्णित शाति का काल चन्द्रगुप्त द्वितीय के काल से साम्य रखता है अत कालिदास जैसे प्रतिभाशाली कवि उसी काल से सम्बन्धित होने चाहिये परन्तु यह मत पूर्णत निराधार व तर्कहीन है पाश्चात्य विद्वानो ने जब भी भारत या किसी अन्य स्थान के बारे म लिखा है तो सब प्रथम उन्होने देश के उत्तम समय को देखा है एव फिर जितनी अच्छी घटनायें अच्छे लोग या प्रसिद्ध कवि हुए हैं उनको उसी काल से सम्बन्धित करने का प्रयास किया है उनके मत से गुप्तकाल का सबसे सुन्दर काल चन्द्रगुप्त द्वितीय का काल था अत कालिदास जैसे महाकवि को उस काल से परे कैसे माना जा सकता है परन्तु यह धारणा तार्किक व युक्तियुक्त नही हो सकती यह तो किसी बात की कल्पना कर उसे अनायास सिद्ध करने का प्रयास मात्र कहा जा सकता है

(४) श्रीमजूमदार समुद्रगुप्त के युद्ध को रघु से सम्बन्धित करते हैं एव कालिदास को उस काल का बतलाते हैं इनके मत मे भी पुष्ट प्रमाणो का पुट नही, अत इस कैसे स्वीकार किया जा सकता है [69]

अत कालिदास का काल चतुर्थ शताब्दी (गुप्तकाल) भी निरापद नही कहा जा सकता

## प्रथम शताब्दी वाला मत

कालिदास को प्रथम शताब्दी म मानने वालो म श्री बलदेव उपाध्याय श्री के एस रामास्वामी व श्री बनर्जी इत्यादि का नाम प्रमुख रूप से लिया जाता है कालिदास के प्रथम शताब्दी मे होने के निम्नलिखित प्रमाण मिलते हैं—

(१) एतिहासिक अनुसधान से हम ई पू प्रथम शताब्दी मे शको को परास्त करने वाले विद्वान् एव महान् दानी उज्जयिनी के राजा विक्रमादित्य के अस्तित्व

---

69 स सा इ पृ० 164

का नाम होता है हाल की गाथा सप्तशती मे भी उक्त राजा का वणन मिलता है[70] रघुवश के तृतीय सग म भी अवन्तिनाथ का नाम आया है गव उष्णतेज शब्द भी सूय एव विक्रम का वाचक प्रतीत होता है[71] इसी सग म 'कुमद्वती भाव' कहा गया है[72] जहाँ भानु शब्द विक्रमादित्य का वाचक हो सकता है श्री बनर्जी के मत मे भानुमती विक्रम की पत्नी का नाम प्रतीत होता है इस प्रकार यह प्रतीत होता है कि महाकवि कालिदास उज्जन के नृपति विक्रमादित्य के आश्रय में द्वितीय शताब्दी ई पू स अधिक बाद नहीं रहे[73] इसी नृप ने 'मालव सवद्' चलाया था इस राजा द्वारा विजयी होने पर भृत्यो को लाखो रुपया का दान दिया गया था एसा उल्लेख मिलता है श्री मेरुतुगाचाय विरचित पट्टावली, प्रबन्धकोष एव शत्रुजय माहात्म्य म भी लिखा है कि उज्जयिनी के नरेश गदभिल्ल के पुत्र विक्रमादित्य ने शका से उज्जयिनी का राज्य लौटा लिया था इन प्रमाणो के आधार पर महाकवि कालिदास का विक्रमादित्य के राज्य म होना प्रमाणित होता है

(२) अश्वघोष का समय प्राय सुनिश्चित-सा है वे कुशाण नरेश कनिष्क के समय म विद्यमान थे अत उनका समय ई सन् प्रथम शताब्दी का उत्तराद्ध माना गया है कालिदास व अश्वघोष के काव्यो म कथानक, शली, अलकार का साम्य मिलता है एव कालिदास का प्रभाव अश्वघोष पर स्पष्ट है रघुवश व बुद्धचरित के कतिपय श्लोको म भी साम्य है कतिपय विद्वानों का मत है[74] कि कालिदास अश्वघोष के ऋणी है एव उन्होने जो साम्य प्रदर्शित किया है वह अश्वघोष के पूववर्ती होने के ही कारण है, किन्तु यह बात बिल्कुल विपरीत है इसके उत्तर म यही कहा जावेगा कि अश्वघोष एक दार्शनिक थे एव उनके द्वारा कालिदास का अनुकरण करना सम्भव है चीनी सूचियो मे अश्वघोष कनिष्क कालीन एक धार्मिक विचारक मान गय हैं जो ७८ ई म हुए हैं अत यह स्पष्ट है कि कालिदास अश्वघोष से पूव प्रथम शताब्दी म हुए हैं[75]

---

70 गाथा सप्तशती 5/64
71 रघुवश 3/32
72 यथोपरि 3/33
73 का हि प प प पृ० 79
74 विक्रमादित्य (आग्ल) पाण्डे
75 का हि प प प पृ० 79

(३) इसी प्रकार अभिज्ञान शाकु तलम् मे कतिपय विवरण कालिदास को द्वितीय शतक विक्रम पूव यानी विक्रम सवत् के प्रथम शतक म सिद्ध करने मे सहायक हैं महाकवि कालिदास बौद्धधम से प्रभावित युग के कवि थे जब हिन्दू देवताग्रो के विषय मे श्रद्धाहीन विचारो का बाहुल्य था कालिदास ने अभिज्ञान शाकुन्तल की नान्दी म भगवान शिव की आठमूर्तियों का वरान प्रस्तुत किया है [76] इसी प्रसग मे प्रत्यक्षाभि ' शब्द से कवि ने तत्कालीन देवता विषयक अविश्वास को दूर करने का प्रयास किया है शाकुन्तलम् के छठे सग मे कवि ने यनो को ब्राह्मणो का आवश्यक कम बतलाया है [77] परन्तु बौद्धविचारक तो यज्ञ को हिंसापरक होने से उचित नही मानते अत कालिदास का समय वह समय था जब बौद्धधम के प्रति लोगो की श्रद्धा क्षीरण होन लगी थी एव ब्राह्मरण वशो की परम्परा पनपने लगी थी यह काल शु ग नरेशो के कुछ ही पीछे अर्थात् विक्रम सवद् के प्रथम शतक म होना चाहिये [78]

(४) अभिज्ञानशाकुन्तल के छठे अक म मत्री राजा को सूचित करता है कि धनमित्र नामक वश्य का देहान्त हो गया है एव उसके कोई पुत्र नही है अत उसकी सपत्ति को राज्य मे मिला लिया जाय किंतु राजा कहते हैं कि उसकी विधवा गर्भवती है अत उसकी सम्पत्ति का अधिकारी उसका होने वाला बालक होगा ऐसा उल्लेख किया गया है मनु आपस्तम्ब बौधायन एव वशिष्ठ के मत म विधवा को उत्तराधिकारी स्वीकार किया है गौतम व बृहस्पति ने विधवा को सगोत्र सपिण्डक के साथ बटवारा का अधिकारी माना है अत इस नाटक का निर्माण मनु, आपस्तम्ब व बोधायन के बाद एव नारद, गौतम कात्यायनादि से पूव का है बृहस्पति का समय ई पू प्रथम शताब्दी माना गया है अत कालिदास उनसे पूव के हैं [79]

(५) कालिदास क काव्यों म पाणिनि व्याकरण के विरुद्ध श्रवक के स्थान पर 'प्रियवद' गच्छन्ती के स्थान पर गच्छन्तीव प्रमाद एव मन्द मन्द व 'मन्दमन्द' के प्रयोग मिलते हैं [80] अत कालिदास के समय तक पाणिनि क प्रयोग अधिक

---

76 शाकु० 1/1

77 यथोपरि 6/1

78 स सा इ बलदेव

79 का हि प प प पृ 75

80 विक्रम । मेघ 1/41

प्रचलित एव परिमार्जित नही हो पाये थे कारण कि किसी भी बात को प्रचलित होने मे २०० से ४०० वर्ष तक का समय तो लगता ही है पाणिनि का समय ५ वी शताब्दी ईसा पूर्व था अत कालिदास को दूसरी शताब्दी ई० पू० या प्रथम शताब्दी ई० पू० मानने मे आपत्ति नही होनी चाहिये

(६) कालिदास के रघुवश काव्य के छठे सर्ग मे 'अवन्तिनाथ' के वर्णन के प्रसग म विक्रमादित्य विरुद्ध का सकेत मिलता है जो कथा सरित्सागर की कथा के अनुसार शिवभक्त, दानी एव मालव सवत् के सस्थापक थे कालिदास के ग्रन्थों म यह स्पष्ट है कि वे शैव थे अत एक शैव कवि का शैव राजा के आश्रित होना अधिक युक्ति युक्त प्रतीत होता है अपितु वैष्णव परंपरावलम्बी गुप्त नरेश के अत कालिदास प्रथम शताब्दी ई० पू० म ही रहे है

(७) मालविकाग्निमित्र नाटक के आरम्भ मे महाकवि कालिदास ने भास, सौमिल्लिक व कविपुत्र इत्यादि प्रसिद्ध कवियो के नामो का उल्लेख किया है किन्तु वहा अश्वघोष का नाम नही लिया है यदि अश्वघोष कालिदास स पूर्ववर्ती कवि होते, तो कालिदास उनका उल्लेख प्रसिद्ध कवियो के सदर्भ में अवश्यमेव करते अत स्पष्ट है कि अश्वघोष कालिदासोत्तर काव्यकार हैं

कालिदास का काल इन पुष्ट प्रमाणों की उपस्थिति मे प्रथम शताब्दी स्वीकार करना तार्किक न्यायिक एव उचित है सस्कृत साहित्य के इतिहास विषयक ग्रन्थो में इस विषय में बहुत कुछ लिखा गया है अत उसका पिष्टपेषण मात्र करना यहा प्रासगिक नही प्रतीत होता अत इतना ही कह कर हम कालिदास के कृतित्व पर विचार करेंगे

"कालिदास के काव्यो के विषय म भी विचारक एक मत नही कतिपय विद्वान् महाकवि कालिदास एव नाटककार-कालिदास को अलग अलग व्यक्ति मानते हैं किन्तु यदि हम कालिदास के काव्य एव नाटको का सम्यक् अवलोकन करें, तो यह भ्रान्ति दूर हो सकती है कतिपय विचार इस प्रकार हैं —

(१) दोनो (काव्यो व नाटको) मे कालिदास शिव के उपासक हैं शाकुन्तलम् व कुमारसम्भव म शिव पूजा को महत्व दिया गया है।[81]

---

81 कनकवलयभ्रशरिक्त प्रकोष्ठ —मेघ 1/2,
'कनकवलय भ्रस्त मया प्रतिसार्यते । शाकु 5/11

(३) इसी प्रकार अभिज्ञान शाकुन्तलम् के कतिपय विवरण कालिदास को द्वितीय शतक विक्रम पूर्व मानने विक्रम संवत् के प्रथम शतक में सिद्ध करने में सहायक हैं महाकवि कालिदास बौद्धधर्म से प्रभावित युग के कवि थे जब हिन्दू देवताओं के विषय में श्रद्धाहीन विचारों का बाहुल्य था कालिदास ने अभिज्ञान-शाकुन्तल की नान्दी में भगवान शिव की आठमूर्तियों का वर्णन प्रस्तुत किया है [76] इसी प्रसंग में प्रत्यक्षाभि शब्द से कवि ने तत्कालीन देवता विषयक अविश्वास को दूर करने का प्रयास किया है शाकुन्तलम् के छठे सर्ग में कवि ने यज्ञों को ब्राह्मणों का आवश्यक कर्म बतलाया है [77] परन्तु बौद्धविचारक तो यज्ञ को हिंसापरक होने से उचित नहीं मानते अतः कालिदास का समय वह समय था जब बौद्धधर्म के प्रति लोगों की श्रद्धा क्षीण होने लगी थी एवं ब्राह्मण वंशों की परम्परा पनपने लगी थी यह काल शुंग नरेशों के कुछ ही पीछे अर्थात् विक्रम संवत् के प्रथम शतक में होना चाहिये [78]

(४) अभिज्ञानशाकुन्तल के छठे अंक में मंत्री राजा को सूचित करता है कि धनमित्र नामक वैश्य का देहान्त हो गया है एवं उसके कोई पुत्र नहीं है अतः उसकी संपत्ति को राज्य में मिला लिया जाय किंतु राजा कहते हैं कि उसकी विधवा गर्भवती है अतः उसकी सम्पत्ति का अधिकारी उसका होने वाला बालक होगा ऐसा उल्लेख किया गया है मनु आपस्तम्ब बौधायन एवं वशिष्ठ के मत में विधवा को उत्तराधिकारी स्वीकार किया है गौतम व बृहस्पति ने विधवा को सगोत्र सपिण्डक के साथ बटवारा का अधिकारी माना है अतः इस नाटक का निर्माण मनु, आपस्तम्ब व बोधायन के बाद एवं नारद, गौतम कात्यायनादि से पूर्व का है बृहस्पति का समय ई पू प्रथम शताब्दी माना गया है अतः कालिदास उनसे पूर्व के हैं [79]

(५) कालिदास के काव्यों में पाणिनि व्याकरण के विरुद्ध प्रयवक के स्थान पर 'प्रियवद' गन्धर्ज्ञी के स्थान पर गन्धज्ञातीव प्रसाद एवं मन्द मन्द व मन्मन्द के प्रयोग मिलते हैं [80] अतः कालिदास के समय तक पाणिनि के प्रयोग अधिक

---

76 शाकु० 1/1
77 यथोपरि 6/1
78 स सा इ बलदेव
79 का हि प प प पृ 75
80 विक्रम । मेघ 1/41

प्रचलित एवं परिमार्जित नहीं हो पाये थे कारण कि किसी भी बात को प्रचलित होने में २०० से ४०० वर्ष तक का समय तो लगता ही है पाणिनि का समय ५ वी शताब्दी ईसा पूर्व था अतः कालिदास को दूसरी शताब्दी ई० पू० या प्रथम शताब्दी ई० पू० मानने मे आपत्ति नही होनी चाहिये

(६) कालिदास के रघुवंश काव्य के छठे सर्ग म 'अवन्तिनाथ' के वर्णन के प्रसंग में विक्रमादित्य विरुद्ध का सकेत मिलता है जो कथा सरित्सागर की कथा के अनुसार शिवभक्त, दानी एवं मालव संवत् के संस्थापक थे कालिदास के ग्रन्थो मे यह स्पष्ट है कि वे शैव थे अतः एक शैव कवि का शैव राजा के आश्रित होना अधिक युक्ति युक्त प्रतीत होता है अपितु वैष्णव परंपरावलम्बी गुप्त नरेश के अतः कालिदास प्रथम शताब्दी ई० पू० में ही रहे है

(७) मालविकाग्निमित्र नाटक के आरंभ मे महाकवि कालिदास ने भास, सौमिल्लिक व कविपुत्र इत्यादि प्रसिद्ध कवियों के नामों का उल्लेख किया है किन्तु वहा अश्वघोष का नाम नही दिया है यदि अश्वघोष कालिदास से पूर्ववर्ती कवि होते, तो कालिदास उनका उल्लेख प्रसिद्ध कवियों के सदर्भ में अवश्यमेव करते अत स्पष्ट है कि अश्वघोष कालिदासोत्तर काव्यकार हैं

कालिदास का काल इन पुष्ट प्रमाणों की उपस्थिति मे प्रथम शताब्दी स्वीकार करना तार्किक न्यायिक एवं उचित है संस्कृत साहित्य के इतिहास विषयक ग्रन्थो मे इस विषय मे बहुत कुछ लिखा गया है अतः उसका पिष्टपेषण मात्र करना यहा प्रासंगिक नही प्रतीत होता अतः इतना ही कह कर हम कालिदास के कृतित्व पर विचार करेंगे

कालिदास के काव्यो के विषय मे भी विचारक एवं मत नही कतिपय विद्वान् महाकवि कालिदास एवं नाटककार कालिदास को अलग अलग व्यक्ति मानते हैं किन्तु यदि हम कालिदास के काव्य एवं नाटकों का सम्यक अवलोकन करें, तो यह भ्रांति दूर हो सकती है कतिपय विचार इस प्रकार हैं —

(१) दोनों (काव्यों व नाटकों) मे कालिदास शिव के उपासक हैं शाकुन्तलम् व कुमारसम्भव मे शिव पूजा को महत्व दिया गया है।[81]

---

81 कनकवलयभ्रंशरिक्त प्रकोष्ठ —मेघ 1/2,
'कनकवलय भ्रस्त मया प्रतिसार्यते । शाकु 5/11

(२) सृष्टि होने पर ब्रह्मा सर्जने की बात मेघदूत व शाकु० नाटक में समान है
(३) दोनों में उपमाओं के प्रयोग समान है [82]

इन प्रमाणों के आधार पर काव्यकार व नाटककार कालिदास दो व्यक्ति नहीं एक ही है जिन्हें हम महाकवि कालिदास कह सकते हैं जिनकी प्रमाणित रचनाएँ निम्नलिखित हैं —

१ रघुवंशम् २ कुमारसम्भवम् ३ मेघदूतम् ४ ऋतुसंहारम् ५ अभिज्ञान शाकुन्तलम् ६ मालविकाग्निमित्रम् ७ विक्रमोर्वशीयम्

## २ अश्वघोष

कालिदासोत्तर काव्यधारा में अश्वघोष का प्रमुख स्थान रहा है

समय—(i) अश्वघोष का समय प्रायः सुनिश्चित सा है अश्वघोष को महाराज कनिष्क का समकालीन माना जाता है यद्यपि कनिष्क का समय भी सुनिश्चित नहीं तथापि कनिष्क को सभी विचारक द्वितीय शताब्दी के द्वितीय चरण से पूर्व ही मानते रहे हैं डा० जास्टन के मत में अश्वघोष का प्रादुर्भाव ५० ई० पू० और १०० ई० के मध्य का है [83]

(ii) ह्वेनसांग (६४५ ई०) व इत्सिंग (६७३ ई०) ने अश्वघोष तथा उनके काव्य बुद्धचरित के कनिष्क युग का उल्लेख किया है बुद्धचरित का चीनी अनुवाद ४१४ व ४२१ ई० के मध्य माना गया है बौद्ध परम्परा अश्वघोष को कनिष्क का समकालीन अर्थात् ७८ ई० में मानती है इस विषय में एक बात अवश्य है कि अश्वघोष अपने सूत्रालंकार में कनिष्क को भूतकाल में वर्णित करते हैं परन्तु इसके दो उत्तर सम्भाव्य हैं प्रथम तो यह कि अश्वघोष से पूर्व कनिष्क का देहावसान हो गया हो या फिर ये भाग प्रक्षिप्त हों जिनमें उन्होंने कनिष्क का भूतकाल में वर्णन किया है [84]

(iii) कनिष्क कालीन कवि मातृचेट पर अश्वघोष का प्रबल प्रभाव रहा है अतएव अश्वघोष को तत्कालीन मानने में कोई ऐतिहासिक विप्रतिपत्ति प्रतीत होती [85]

---

82 'या सृष्टिः स्रष्टुराद्या'—अभि शाकु 1/1
'सृष्टिराद्येव धातु —मेघ 2/22
83 बु० च० भूमिका–सूर्यनारायण चौधरी
84 स० सा० इ० स क गुप्त पृ० 13 ॥
85 स० सा० इ० बलदेव पृ० 194

(iv) कनिष्क कालीन एक शिलालेख मे 'अश्वघोषराज' का नाम आया है जिसे अनेक विचारको ने बुद्धचरित के रचयिता अश्वघोष ही माना है [86]

उपयु क्त पुष्ट प्रमाणो की उपस्थिति म अश्वघोष का ईसा की प्रथम शताब्दी में रखने मे कोई आपत्ति नही है

**अश्वघोष की कृतिया**—यो तो अश्वघोष के नाम स कुल मिलाकर सात ग्र थ मिलत हैं कि तु का०य परम्परा म उनके दो ही ग्र थ आते हैं —

(१) बुद्धचरित (महाकाव्य)

(२) सौ दरन द (महाका य)

## ३ भारवि

कालिदासोत्तर का यकारा म महाकवि भारवि का प्रमुख स्थान रहा है भारवि अश्वघोष के बा द के काव्यकार हैं

**भारवि का समय**—भारवि के सम्ब ध म भी कोई प्रामाणिक जानकारी स्पष्ट रूप म नही मिलती परन्तु कतिपय बातें एसी हैं जिनके आधार पर भारवि का समय ज्ञात करने मे विचारक सफल हो सक हैं एव प्राय एक ही निष्कष पर भी पहुँचे हैं

(i) सातवी शताब्दी के काव्यकार बाणभट्ट ने अपन ग्र थो मे प्रसिद्ध कवियो के प्रति श्रद्धाञ्जलि समर्पित की है उन्होंने व्यास कालिदासादि को मुख्य माना है किन्तु भारवि का नाम नही लिया है अत स्पष्ट है कि बाण भारवि स परिचित नही थे या उसके पूववर्ती थे या यो कह कि भारवि की उक्त समय प्रतिष्ठा नही थी तो उचित होगा [87]

(ii) ऐहोल नामक शिलालख जो कि दक्षिणी भारत म प्राप्त हुआ है कालिदास व भारवि के नाम से युक्त हैं इस शिलालेख मे रविकीर्ति के आश्रयदाता पुलकेशिन् द्वितीय के राज्यकाल का उल्लेख है जिसका राज्यकाल ६४२ ई के आसपास था अत यह स्पष्ट होता है कि भारवि उक्त समय से पूव कही रहे होंगे अत भारवि छठी शता दी के पूव म रहे होंगे [88]

(iii) महाकवि भारवि के काव्य किरातार्जुनीय का उल्लेख दक्षिण भारत

---

86 स० सा० इ०, स० क० गुप्त पृ० 1 अ

87 भा का अ पृ 4

88 वही पृ 5, स सा इ गुप्त 67 अ, स सा इ बलदेव पृ 212

के किसी पृथ्वीकोंगणि नामक राजा के दानपत्र में मिलता है प्रस्तुत दानपत्र मान्यपुर नामक शहर में ६९८ शक संवत् में लिखा गया है इस लेख में पृथ्वीकोंगणि नामक राजा की वंशावलि दी गयी है तथा इसी वंशावलि में अविनीत नामक राजा के दुर्विनीत पुत्र का वर्णन किया गया है जिसने किरातार्जुनीय के पन्द्रह सर्गों की व्याख्या लिखी थी इसी दुर्विनीत की सात पीढ़ियों के पश्चात् राजा पृथ्वीकोंगणि हुआ था दानपत्र का समय ७७६ ई० माना गया है अत यदि एक पीढ़ी के लिए कम से कम २५ साल का समय माना जाये तो दुर्विनीत का काल ६०१, ई० में माना है अत इस आधार पर भारवि का समय ६०० ई० सिद्ध होता है[89]

(iv) भारवि का उल्लेख पाणिनीय अष्टाध्यायी के टीकाकार था जयादित्य वामन ने अपनी काशिकावृत्ति में किया है प्रो० ए बी कीथ इस वृत्ति का लेखन चीनी यात्री इत्सिंग से पूर्व का मानते हैं[90] इत्सिंग ६७२ ई में भारत आया था अत भारवि का काल इससे पूर्व का यानी छठी शताब्दी का पूर्व भाग होना चाहिये

(v) आचार्य दण्डी विरचित अवन्तिसुन्दरीकथा सार एवं 'अवन्ति सुन्दरी कथा' नामक ग्रंथों में भारवि को दण्डी का दादा माना गया है दण्डी काल विभिन्न विद्वानों ने छठी शताब्दी माना है[91] अत भारवि को छठी शताब्दी के प्रारम्भ में मानना उचित है सार्थक है

(vi) भारवि के काव्य किरातार्जुनीय का स्पष्ट अनुकरण माघ के शिशुपालवध में मिलता है जिनका काल ७ वी शताब्दी माना गया है[92] अत भारवी माघ से पहले के हैं यानी भारवि छठी शताब्दी में रहे होंगे

(vii) आचार्य वामन ने जिनका समय ८वीं शताब्दी है किरातार्जुनीय के आठवें सर्ग के २७ वें श्लोक को अर्थान्तरन्यास के उदाहरण के रूप में लिया है अत उस समय तक भारवि एक प्रसिद्ध कवि हो गये थे कवि की प्रतिमा के प्रसिद्ध होने में कम से कम २०० वर्ष का समय लगता है अत भारवि को छठी

---

89 भा का अ पृ 6

90 स सा इ मगल पृ 509

91 स सा इ वेबर पृ 232, स सा इ मेक्डोनल पृ 434

92 स सा इ भगत पृ० 152, स सा इ बलदेव पृ 212, महाकवि माघ डा गो हो ओझा, स सा इ डे, पृ० 188

शताब्दी मे माना जा सकता है

इन प्रमाणो के अतिरिक्त जकोबी,[93] कीथ,[94] मेक्डोनल,[95] प० बलदेव उपाध्याय,[96] डा० सुधीरकुमार गुप्त,[97] डा० उमेश प्रसाद रस्तोगी[98] इत्यादि विचारको ने भी भारवि का समय छठी शताब्दी के अन्तर्गत ही माना है

भारवि के काव्य —भारवि ने केवल एक ही काव्य लिखा है

(४) माघ

कालिदासोत्तर काव्यो म माघ का स्थान अश्वघोष व भारवि के बाद आता है यद्यपि कतिपय विद्वानो ने माघ को भारवि से पूर्ववर्ती सिद्ध करने का प्रयास किया है परन्तु उनके विचार आधारहीन एव अस्पष्टता के कारण विशेष महत्व नही पा सके है

माघ का समय —विभिन्न महाकवि माघ को अपने-अपने तर्कों के आधार पर ५ वी शताब्दी से १२ वी शताब्दी के मध्य रखते हैं परन्तु अधिकतर पाश्चात्य एव भारतीय विचारक माघ को सातवी शताब्दी मे भारवि के बाद माघ का समय स्वीकार करते हैं उनमे से प्रमुख हैं—

डा० भोलाशकर व्यास,[99] डा० कीथ[100] प० बलदेव उपाध्याय,[101] म म डा० गौरीशकर हीराचन्द ओझा,[102] प० सीताराम जयराम जोशी,[103] श्री एस के डे,[104] श्री हसराज अग्रवाल[105] श्री भूपनारायण दीक्षित[106]

---

93 स० सा० इ० मगल पृ 133
94 यथोपरि
95 हि स लि—मेक्डोनल पृ 277
96 स सा इ बलदेव पृ 212
97 स सा इ स क गुप्त पृ 68 म
98 भा का अ रस्तोगी पृ 7
99 सस्कृत कविदर्शन
100 स सा इ कीथ (मगल) पृ 152
101 स सा इ बलदेव पृ 233
102 महाकवि माघ
103 स सा इ
104 स सा इ डे पृ 188
105 स साहित्येतिहास पृ
106 माघ-काव्य-भूमिका

व डा सुधीरकुमार गुप्त 107

इससे पूर्व कि सातवी शताब्दी म माघ के समय निरूपण पर विचार करें यह आवश्यक हो जाता है कि अन्य लोगो का क्या मत है अत प्रथम उसी पर विचार करते हैं

श्रीयुत सरयूप्रसाद मिश्र ने 'संस्कृत कवियो का समय निरूपण नामक बगला पुस्तक मे माघ को भारवि से पहले का (५८४ ई०) का मानते हैं उनका यह मत एक उत्कीर्ण लेख के आधार पर है

श्री याकोबी ने वीयेना ओरियन्टल जनरल (त्रमासिक पत्रिका) के द्वितीय भाग के द्वितीय-खण्ड मे माघ को छठी शताब्दी के मध्य मे माना है 108

माघ को आठवी शताब्दी मे मानने वाला मे प० तारानाथ, श्री एस एस भडारे, प० दुर्जरामजी विद्यासागर, प्रो० के बी पाठक व श्री चन्द्रशेखर पाण्डे का नाम मुख्य है 109

म म श्री दुर्गाप्रसाद श्री रामावतार शर्मा श्री एम एम डफ डा मैक्डानल डा वेबर ने माघ का समय नवी शताब्दी माना है एव श्री प रमेशचन्द्र दत्त ने उनको १२ वी शताब्दी मे रखा है।110

यहा विस्तारभय से इन सभी विद्वानो के मतो पर विस्तृत विवेचना करना सम्भव नही परन्तु समष्टि रूप मे उन सबके तर्कों का खण्डन सातवी शताब्दी में माघ को स्वीकार करने वाले विद्वानो के प्रमाणो मे आ जाता है अत सातवी शताब्दी विषयक तर्कों को यहा स क्षिप्त रूप मे प्रस्तुत करेंगे —

(i) माघ ने लिखा है कि व सुप्रभदेव के पौत्र एव दत्तक सर्वाश्रय के पुत्र थे। माघ के पितामह एक राजा के मन्त्री थे जिनका नाम हस्तलिखित ग्रन्थो मे वमलाख्य व वमलात मिलता है एक अभिलेख मिलता है जिसम ६२५ ई० के किसी वमलात नामक राजा का उल्लेख है अत माघ का समय सातवी शताब्दी सिद्ध होता है

(ii) सोमदेव जिनका समय ८५६ ई० माना गया है अपने ग्रन्थ 'यशस्तिल

---

107 स सा इ गुप्त प 83 अ

108 महाकवि माघ जो क कृ पृ 93

109 यथोपरि पृ 94

110 महाकवि माघ जी क कृ पृ 95

तिलक चम्पू' मे माघ का उल्लेख किया है अत माघ उनसे पूव के यानी सातवीं शताब्दी के कवि हैं

(iii) आनन्दवधन (८५६ ई०) ने ध्वन्यालोक मे शिशुपालवधम के दो श्लोको (३/५३,५/५६) को उदधृत किया है अत माघ को उनसे पूव सातवी शताब्दी में मानने म कोई आपत्ति नही होनी चाहिये

(iv) माघ न भारवि का स्पष्ट अनुकरण किया है एव वे भट्टि व कुमार दास के भी बाद के हैं भट्टि के 'मुमुहुमु ह' को उन्होंने विमु मुहुमु मुहुगतमतका' कहकर एक पक्ति आगे बढाया है अत माघ का ७वी शताब्दी मे माना जा सकता है

(v) माघ ने द्वितीय सग के ११२वें श्लोक म 'न्यास' का उल्लेख किया है डा० कीथ के विचार मे यह न्यास जिनेन्द्रबुद्धि की रचना है इनका समय ७०० ई है। अत माघ का समय भी उनसे अधिक दूर नहीं हो सकता

(vi) कन्नड भाषा के कविराज माग नामक ग्र थ मे भी माघ का नाम मिलता है जिसकी रचना सुप्रसिद्ध दक्षिणदेशीय नृप अमोघवष (८१४ ई०) के समय किसी नृपतु ग नामक कवि ने की थी अत माघ का समय ७वी शताब्दी ही सिद्ध होता है।

इन पुष्ट प्रमाणो की उपस्थिति म महाकवि माघ का समय सातवी शताब्दी ही उचित जान पडता है

माघ के काव्य—'शिशुपालवधम' (महाकाव्य) श्रीमाघ की एक मात्र कृति है

## ५ श्री हष

माघ के पश्चात् श्री हष का सस्कृत साहित्यारण्य में विशिष्ट महत्त्व है

समय—श्री हष के समय के विषय मे भी विचारक एक मत नही उनके समय से सम्बन्धित कतिपय विचार इस प्रकार हैं —

(१) श्री हष ने नषधीय चरितम् में प्रत्येक सग के अ त मे यह निर्देश किया है कि वे श्री हीर व मामल्लदेवी के पुत्र हैं एव उन्होंने कान्यकुब्जेश्वर मे सम्मान प्राप्त किया है

(२) प्रब धकोष मे राजशेखर ने श्री हष को जयच द्र का आश्रित कहा है जयच द्र का समय ११६८-९४ ई० माना गया है जयचन्द्र के पिता का नाम

विजयचन्द्र था नेमधीयचरित मे पञ्चम सग के अंतिम श्लोक म विजय प्रशस्ति इन्ही विजयचन्द्र की प्रशसा प्रतीत होती है अत श्री हष का समय १२वी शताब्दी होना चाहिये [111]

(३) डा० फिटज ने सरस्वती कण्ठाभरण म नवध के कतिपय पदयो की उपस्थिति बतलायी है एव श्री हष का समय ११वी शताब्दी का पूर्वाद्ध माना है परन्तु सरस्वतीकण्ठाभरण की उपलब्ध प्रतिया की श्लोक सूची म से कोई भी श्लोक श्री हषकृत नही है अत डा० फिटज का मत निस्सार है [112]

(४) श्री काशीनाथ त्र्यबक तलग महोदय का मत है कि श्री हष का समय ९वी या १०वी शताब्दी होना चाहिये क्योकि ११वी शताब्दी मे वाचस्पति मिश्र ने श्री हष के खण्डनखण्डखाद्य के खण्डन म 'खण्डनोद्धार' लिखा है। परन्तु अन्य विचारको का मत है कि–वाचस्पति मिश्र अनेक हुय हैं एव खण्डनोद्धार का लेखक कोई अर्वाचीन लेखक है। अत श्री तलग का मत अधिक तार्किक नही।

(५) श्री एफ० एस० ग्राउस महोदय का कहना है कि यदि राजशेखर के कथन को स्वीकार कर लिया जावे तो श्री हष पृथ्वीराजरासो के रचयिता श्रीचन्द्र के समकालीन थे श्रीचन्द्र के द्वारा प्रशसित होना इस बात का कतई प्रमाण नही है कि श्री हष उनके समय के थे हो सकता है चन्द्रकवि श्री हष के काव्य से प्रभावित हुय हो एव उन्होने उनके काव्य को आदर दिया हो अतएव यह मत कोरी कल्पना है

(६) इन विचारको के अतिरिक्त डा जी बूलर श्री हष को ११६४ ११६७ ई० के मध्य, श्री एफ एस ग्राउस ९वी–१०वी शताब्दी, श्री आर डी सेन १० वी–११वी शताब्दी, श्री पुरनाया ११वी शताब्दी व श्री चाण्डुपण्डित १२वी शताब्दी म स्वीकार करते हैं

अत पुष्ट प्रमाणो के अभाव म श्री हष का समय ९वी से १२वी शताब्दी के मध्य माना जाना ही उचित है वस अधिकतर विद्वान इन्हे ११वी या १२वी शताब्दी मे ही मानते हैं [113]

श्री हष के काव्य—श्री हष के नाम मे लगभग 8 कृतियो की सूची मिलती है किन्तु उन सबमे एक ही महाकाव्य है —नषधीय चरितम

---

111 नषध० 5/138

112 स सा० इ० गुप्त पृ० 97 म

113 स० सा० इ० कीथ (मगल) पृ० 172 हि० स० सि० मेक० पृ० 78, स० सा० इ०, स० क० गुप्त पृ० 98 म।

# गद्य कवि

संस्कृत साहित्य मे गद्य कवियो की कमी रही है गद्य-साहित्य के प्रमुख काव्यकार हैं-सुबन्धु बाण व दण्डी इन तीनो कवियों के समय के विषय मे विचारक एक मत नहीं हैं कतिपय विद्वान, जिनमें बलदेव उपाध्याय प्रमुख हैं, सुबन्धु, बाण व दण्डी के क्रम को मानते हैं किन्तु डा० कीथ, प० पाण्डेय डा० शान्तिकुमार व नाथूराम व्यास दण्डी सुबन्धु व बाण इस प्रकार के क्रम को महत्त्व देते हैं तो श्री वी० वरदाचार्य ने बाण, दण्डी व सुबन्धु के क्रम को अपनाया है अत गद्य कवियो के समय के विषय में विद्वान् एक मत नही परन्तु पुष्ट प्रमाणो की उपस्थिति मे सुबन्धु, बाण व दण्डी वाला क्रम ही अधिक उचित प्रतीत होता है कवियों के पौर्वापर्य को जानने से पूर्व उनका समय निरूपण करना आवश्यक है, अत उसी को कहते हैं—

## १ सुबन्धु

सुबन्धु का समय—सुबन्धु निश्चित रूप से बाण से पूर्ववर्ती कवि हैं इस विषय मे निम्नलिखित बातें ध्यान देने योग्य हैं —

(i) कविराज (१२०० ई०) ने अपने महाकाव्य मे सुबन्धु, बाण व स्वय को वक्रोक्ति म कुशल बतलाया है सम्भवत कविराज ने स्थितिकाल के अनुसार ही सुबन्धु का नाम सर्वप्रथम एव स्वय का नाम, बाद मे लिया है अत सुबन्धु बाण से पूर्व के सिद्ध होते है[114]

(ii) वाक्पतिराज न अपने प्राकृत-काव्य मे भास कालिदास और हरिचन्द के साथ सुबन्धु का नाम रक्खा है किन्तु बाण का नही अत सुबन्धु बाण से पूर्व के हैं[115]

(iii) सुबन्धु ने एक युवती का वर्णन इस प्रकार किया है—"न्यायस्थितिमिव उद्योतकरस्वरूपा बौद्धसगतिमिव अलकारभूषिताम" यहा न्यायवार्तिक के प्रणेता उद्योतकर का स्पष्ट उल्लेख है इसी सदर्भ मे आगे आने वाले उल्लेख को कीथ ने बौद्ध नैयायिक धर्मकीर्ति का माना है धर्मकीर्ति का समय निश्चित सा

---

114 सुबन्धुर्बाणभट्टश्च कविराज इति त्रय ।
वक्रोक्तिमार्गनिपुणाश्चतुर्थो न विद्यते ॥

—राघवपाण्डवीयम् 1/41

115 गौडवहो 800

ही है ग्रत सुब-धु को सातवी शताब्दी के द्वितीय पाद म माना जा सकता है डा० कीथ का कहना है कि बाण व सुब-धु समकालीन रहे हा पर सुब-धु की रचना बाण की कृतियो से पूव सम्मान प्राप्त कर चुकी थी ग्रत सुब-धु को बाण पूव मानना उचित है 116

(IV) प० बलदेव उपाध्याय का कहना है कि उद्योतकर का समय छठी शताब्दी का उत्तराद्ध एव सातवी शता-दी का आरम्भ रहा है बाण से पूववर्ती होने के कारण सुब-धु का समय ६०० ई0 के ग्रासपास होना चाहिय 117

(V) वासवदत्ता की कथा विक्रमादित्य के बीते हुये काल स सम्बन्धित है परन्तु विक्रमादित्य के -यक्तित्व का निणय भी स्पष्ट नही है ग्रत सुब-धु को ६ठी शताब्दी के उत्तराद्ध या ७वी रा० ई० के पूर्वाद्ध म रखना ही युक्तियुक्त है 118

इन सभी प्रमाणो की उपस्थिति मे सुब-धु का समय ६ठी श० ई० का पूर्वाद्ध या ७वी श० ई० का ग्रारम्भ ही मानना चाहिये

सुब-धु का काव्य—सुब-धु का एक मात्र का-य है —वासवदत्ता (कथा)

## २ बाणभट्ट

बाणभट्ट दण्डी स पूववर्ती एव सुब-धु स उत्तरवर्ती काव्यकार माने गय हैं

बाणभट्ट का समय—बाण के समय के विषय म विचारक सामा-यत एकमत हैं

(I) बाण ने ग्रपनी कृति हषचरित के प्रारम्भ म ग्रपन -श का विस्तृत वणन किया है एव स्वय को महाराजा हषवधन के ग्राश्रय म बतलाया है हप का राज्य ६०६ ई० से ६४५ ई० तक रहा है ग्रत बाण का समय सातवी शता-दी म ही होना चाहिये

(II) वामन ने ग्रपने काव्यालकार-सूत्र म कादम्बरी के एक लम्ब समास-पूण भाग को उदधृत किया है वामन का समय ७७९-८१३ ई० म रहा है इसीप्रकार रुय्यक (११५०) के का-यालकार सवस्व', क्षेमेन्द्र की वृहत्कथामजरी (१०-७ ई०) रुद्रट के काव्यालकार की नेमिसाधु कृत टीका (१०६९ ई०) भोज

116 स सा इ कीथ (मगल) प० 365
117 स सा इ बलदेव पृ० 376
118 स सा इ गुप्त पृ० 143ग

के सरस्वतीकण्ठाभरण (१००० ई०), धनजय के दशरूपक (१००० ई०) एव आनन्दवधन के ध्वन्यालोक (८४० ई०) म बाण व उनकी कृतियो के उल्लेख मिलते हैं[119] अत बाण इन सबके समय म प्रसिद्धि को प्राप्त हो चुके थे अत इनको सातवी शताब्दी मे मानना उचित है

(iii) चीनी यात्री ह्वेनसाग ने राजा हर्ष की बौद्ध धम विषयक भावनाओ का वणन किया है जिनसे बाणभट्ट अच्छी तरह परिचित थे अत बाण का समय सातवी शताब्दी के पूर्वार्ध मे मानन मे कोई आपत्ति नही होनी चाहिये

इन प्रमाणो के आधार पर बाणभट्ट का समय सुबन्धु के कुछ बाद सप्तम शतक मे मानना तार्किक एव उचित है

बाण के काव्य बाण के नाम से अनेक कृतियो का उल्लेख मिलता है किंतु काव्यरूप मे उनकी दो ही रचनायें है—

(१) हर्षचरितम (आख्यायिका)
(२) कादम्बरी (कथा)

## ३ दण्डी

दण्डी सुबन्धु एव बाण के उत्तरकालीन कवि रहे हैं —

दण्डी का समय—दण्डी का समय विचारको ने सातवी शताब्दी का उत्तर भाग माना है इस विषयक प्रमाण इस प्रकार हैं —

(i) दण्डी को बाण के पश्चात् मानने का सबसे बडा कारण यह है कि बाण ने दण्डी का कही उल्लेख नही किया है परन्तु दण्डी ने अवन्तिसुन्दरी कथा म बाण की प्रशसा की है अत दण्डी को बाण के पश्चात् यानी सातवी शताब्दी के उत्तराद्ध मे मानना चाहिये डॉ० कीथ का यादश को भामह (७०० ई०) से पूव का मानते हैं। अत दण्डी भामह से पहले के है[120]

(ii) प० बलदेव उपाध्याय का कहना है कि हर्षवधन (६०६–48 ई०) के सभापण्डित होने से बाणभट्ट का समय ६३०–६४० ई तक मानना उचित प्रतीत होता है तथा बाण के पश्चाद्वर्ती होने के कारण दण्डी का समय ६५० ई

119 शुकनासोपदेश पृ० 6
120 स सा इ कीथ (मगल) पृ० 352

के बाद मानना उचित जान पड़ता है 121

(iii) डा० कीथ व डॉ० शान्तिकुमार नानराम व्यास का कहना है कि दण्डी की शैली सुबोध एव सरस है जबकि बाण व सुबन्धु की शैली दुरूह एव कठिन अत दण्डी बाण व सुबन्धु के पूर्ववर्ती रहे होंगे क्योंकि गद्य धीरे धीरे समासबहुल तथा क्लिष्ट होता गया है अत दण्डी का समय ६०० ई० के लगभग मानना युक्तियुक्त है परन्तु डा कीथ का यह तर्क कि पहले गद्य सुबोध था एव बाद में क्लिष्ट हो गया पुष्ट प्रमाणों के अभाव में उचित नहीं जान पड़ता दूसरी बात यह है कि सदा एक परम्परा में बाद परिवर्तन आता रहता है अत दण्डी ने बाण व सुबन्धु की क्लिष्ट नीति का बहिष्कार कर सरल व सुबोध शैली को अपनाया हो अत केवल शैली के आधार पर दण्डी को पूर्ववर्ती मानना उचित नहीं जान पड़ता।

अत सिद्ध है कि दण्डी का समय सातवीं शताब्दी का उत्तरार्ध रहा है

दण्डी के काव्य— दण्डी की दो रचनायें बतलाई गयी हैं किन्तु दशकुमार चरितम ही उनकी प्रामाणिक काव्य रचना है

— —

121 स सा इ बलदेव पृ० 376

# काव्यो मे प्रकृति-चित्रण

# २ | काव्यों में प्रकृति-चित्रण

प्रथम अध्याय में हमने काव्य एवं काव्यकारों पर विस्तृत विचार किया। प्रस्तुत अध्याय में हम काव्यों में प्रकृति चित्रण की उपस्थिति पर विचार करेंगे।

प्रकृति मानव की प्रारम्भिक सहचरी रही है। जब से मानव ने इस भूपटल पर जन्म लिया है तभी से वह प्रकृति के साहचय में आया है। वह सूर्य, चन्द्रादि से प्रकाशित हुआ है, वृक्षों ने उसे छाया प्रदान की है, भूमि ने उसे अन्न दिया है, झरनों ने उसे शीतल जल प्रदान किया है एवं नीरधि ने उसे रत्न दिए हैं। अतः मानव एवं प्रकृति का निरन्तर संयोग रहा है।

इसी सुन्दर प्रकृति ने उसे यदाकदा झंझावात, उपल वर्षा, व तिमिर से भयभीत एवं अस्थिर किया है और इन सबके कारण उसने परमेश्वर का सहारा लेकर भय व कम्पन से छुटकारा पाने का प्रयास किया है। यही कारण है कि जगत के आदि ग्रन्थों से ही हमें इन्द्र, सूर्य, वरुण, चन्द्र, वायु एवं पृथ्वी विषयक गुणगान मिलते हैं। ऋग्वेद के ही एक मन्त्र में इन्द्र द्वारा पर्वतों को अचल करने, कम्पित पृथ्वी को सुस्थिर करने व गगन मण्डल को संभालने का सुन्दर वर्णन मिलता है।[22]

यः पृथिवीं व्यथमानामदृंह
यः पर्वतान्प्रकुपिताँ अरम्णात्
यो अन्तरिक्षं विममे वरीयो
यो द्यामस्तभ्नात्स जनास इन्द्रः ॥

देवत्व की स्थापना के पश्चात् मानव ने अपने देव को सौन्दर्यशाली, सर्वशक्तिमान् व सर्वज्ञ कहा। इस प्रकार उसने अपने देवों को सुन्दर अश्वों के रथों पर आसीन एवं नयनाभिराम वस्त्राभूषणों से सुसज्जित माना और प्रकृति के प्रति

---

22 ऋक्० २/१२/२

अपना अनुराग प्रदर्शित किया इस प्रकार मानव व प्रकृति का साहचर्य एक पुराना साहचर्य है जिसकी अविरल धारा आजतक प्रवाहित होती रही है इस साहचर्य एव सौन्दर्यप्रदशन न मानव को काव्यो मे भी प्रकृति वणन करने की एक प्रेरणा दी है इस प्ररणा से प्रेरित होकर ही मानव न काव्यो म पशु-पक्षी जीव जन्तु व फल फूलो के सुन्दर वणनो को उपस्थित किया

सस्कृत साहित्य के प्राचीनतम काव्यो म प्रकृति चित्रण के अनेक स्थल मिलते हैं प्रस्तुत प्रबन्ध मे हमारा सम्बन्ध सस्कृत-काव्यों से है किन्तु वीरकाव्यो के प्रकृति-चित्रण पर भी हम सक्षिप्त विचार करेंगे, ताकि प्रकृति चित्रण की प्रारम्भिक भावना से परिचित हो सकें एव नवीन दिशा को अपना सकें

यो तो सस्कृत-साहित्य की प्राचीनतम कृति ऋग्वेद है किन्तु काव्य परम्परा मे आदिकवि की रचना वाल्मीकि-रामायण को ही आदि काव्य स्वीकार किया गया है। रामायण एक ऐसा ग्रन्थ है जिसमे प्रकृति वणन के अनेकानेक स्थल हैं अरण्यकाण्ड मे सीताहरण से सतप्त पवत श्रेणियो द्वारा शिखर रूपी भुजाओ को उत्तिष्ठ कर प्रपात के बहाने अश्रु बहाकर रोने का उल्लेख महाकवि का एक अत्यन्त सुन्दर प्रकृति-वणन का उदाहरण है जिसमे सजीव प्रकृति का अभिराम वणन है[123] रामायण म अरण्यकाड किष्किन्धा काण्ड तथा सुन्दर काण्ड का विस्तार वन भूमि मे हुआ है इस कारण रामायण के कवि को वन्यप्रकृति को उपस्थित करने का अवसर मिला है [124] लका प्रवश क समय हनुमान की दृष्टि उसके अभिराम उपवनो पर जाती है रावण की वह स्वणमयी लका अनेक उपवनो से युक्त है जिसमे सरल कर्णिकार और खजूर के वृक्ष पुष्पित हैं असन कोविदार, करवरि इत्यादि के पौधे पुष्पित होकर झुक रह है वहाँ अनेक सरोवरो मे हस कारण्डव इत्यादि पक्षी कलरव कर रहे हैं, ऐसे वणन उपलब्ध होते हैं[125] इसी प्रसग म अशोकवाटिका का सुन्दर वणन किया गया है 'अशोक वाटिका मे कोकिल कूक रहे थे, एव भ्रमर गुजार कर रहे थे, वहाँ हनुमान् ने रत्नमयी, स्वणमयी एव मणिमयी भूमियो को दखा वापियो क चारो ओर विशाल वृक्ष लगे थे और छोटी-छोटी सरितायें कलरव कर रही थी —इत्यादि वणन अशोक वाटिका के प्रकृति-वणन को प्रस्तुत करने मे सहायक हुये हैं महाकवि वाल्मीकि

123 जल प्रपातस्त्रमुखा शृ गरुच्छित बाहव ।
सीतायां ह्रियमाणाया विक्रोशन्तीव पवता ॥
वा रा अर 52।36

124 प्रकृति और काव्य पृ 337

125 वाल्मीकि रामायण 5।2।9 12

ने अपने ग्रन्थ मे चित्रकूट[126] दण्डकारण्य[127] पञ्चवटी[128] पम्पामार्ग[129] व किष्किन्धा मार्ग[130] के जो विस्तृत वर्णन किये हैं वे प्रकृति-चित्रण से परिपूर्ण हैं एवं कवि के प्रकृति-चित्रण प्रेम के परिचायक हैं

वनो के अतिरिक्त महाकवि ने आश्रमो के भी सुन्दर वर्णन प्रस्तुत किये हैं अगस्त्याश्रम का यह वर्णन कितना सुन्दर है जिसमे पुष्पो की उपस्थिति, पक्षियो के कलरव, सरोवरो के स्वच्छ जल व पुष्पित कमलो का वर्णन किया गया है—[131]

स्थालीप्रायवनोद्देशे पिप्पलीवन शोभिते ।
बहु पुष्पफले रम्ये नानाविहग नादिते ॥
पद्मिनो विविधस्तत्र प्रसन्न सलिलाशया ।
हंसकारण्डवाकीर्णाश्चक्रवाकोपशोभिता ॥

इसके अतिरिक्त वशिष्ठाश्रम,[132]राम की कुटी,[133]दण्डकारण्यवनाश्रम[134] एव सीता विहीन आश्रम के वर्णनों के प्रकृति-वर्णन की छटा दर्शनीय है सीता विहीन आश्रम के वर्णन मे कवि ने किस सुन्दर ढग से मानवीय सवेदना से आविर्भूत प्रकृति का चित्रण किया है, अन्यत्र दुर्लभ है—

ददर्श पर्णशाला च सीतया रहिता तदा ।
श्रिया विरहिता ध्वस्ता हेमन्ते पद्मिनीमिव ॥
रुदन्तीमिव वृक्षैश्च म्लान पुष्पमृगद्विजम् ।
श्रिया विहीन विध्वस्त सत्यक्त वनदेवत ॥

वन प्रदेशो के अतिरिक्त पर्वतीय प्रदेशो मे ऋष्यमूक, महेन्द्र, मैनाक, अरिष्ट, सरिताओ मे मन्दाकिनी व गोदावरी, सरोवरों मे पम्पासर एव सागर के विभिन्न वर्णन महाकवि वाल्मीकि के प्रकृति-चित्रण के प्रमुख विषय रहे हैं[135]

---

126 वा रा 2/55/9,30 32,34
127 यथोपरि 3/8/13/4–15
128 यथोपरि 13/11–22
129 यथोपरि 68/6–10
130 यथोपरि 4/3/5–11
131 यथोपरि 3/11/38 39
132 यथोपरि 1/51/22–25
133 यथोपरि 2/99/5–7,19 20
134 यथोपरि 3/1–7
135 देखिये प्रकृति और काव्य पृ 348

इन सबके अतिरिक्त प्रकृति–चित्रण म काल एव ऋतु वणन का प्रमुख स्थान रहा है आदिकवि के आदिकाव्य म सायकाल रात्रि, चन्द्रोदय, बसन्त वर्षा, शरद, एव हेमन्त के अनेकानेक प्रकृति–चित्रण यत्र–तत्र विद्यमान हैं [136] चन्द्रोदय का एक सुन्दर उदाहरण देखिय—

> "तत कुमुदषण्डाभि निमल निमलोदय ।
> प्रजगाय नभश्चडो हसो नीलमिवोदकम् ।।

(कुमुद पुष्पो की भाति निमल चन्द्रमा निमल गगन म कुछ ऊपर चढकर वसे ही शोभित हुआ जसे नीले जलवाली भील म हस शोभित होता है )[137]

इसी प्रकार वर्षाऋतु का वणन करते हुए कवि लिखते हैं—

> मेघाभिकाषा परिसपतन्तो समोदितापाति जलाकपक्ति ।
> वातावधूता वरपौण्डरीकी लम्बेवमाला रुचिराम्बरस्य ।।
> बालेन्द्रगोपान्तरचित्रितेन विभाति भूमिनव शाद्वलेन ।
> गात्रानुपृक्तन शुकप्रभेण नारीवलाक्षोचितकम्बलन ।।

(गर्भाधान की कामना से बादलो के मध्य म विचरण करने वाली बलाकाओ की श्रेणी, पवननिर्मित गगन की धवल कमल की माला के तुल्य सुशोभित हुयी मध्य–मध्य म छोटी–छोटी वीरबहूटियो से पूण हरी घास की सुषमा ऐसी प्रतीत होती जान पडती है, जसे किसी युवती ने कढाई की हुयी साडी पहन ली हो )

इस वणन मे कितनी स्वाभाविकता कितनी सुन्दरता एव कितनी कल्पना भरी पडी है वास्तव मे वाल्मीकि प्रकृति–चित्रण के सिद्ध हस्त कवि हैं

प्रकृति चित्रण के एक प्रकार उद्दीपन को इस श्लोक म कितने सुन्दर ढग से महाकवि ने प्रस्तुत किया है —

> श्यामा चन्द्रमुखी स्मृत्वा प्रियापद्मनिभेक्षणाम् ।
> पश्य सानुश्रृ चित्रेशु स्मृत्वा सहिता मृगान् ।।
> या पुनमृ गशावाक्ष्या वदक्ष्या वदक्ष्या विरहीकृताम् ।
> व्यथयन्तीव मे चित सचरन्तस्ततस्तन ।।

(देखा, इन विचित्र पवतशिखरो पर मृग मृगियो के साथ विहार कर रहे हैं ये मुझे श्यामा, चन्द्रवदनी एव कमलनयनी प्रिया की याद दिलाते हैं ये मृगशावक नयनी जानकी के विरह म मुझे व्याकुल करते हैं इनका यत्र तत्र भ्रमण भी

---

136 यथोपरि ॥ 357–366

137 वाल्मीकि रामायण 5/17/1

मुझे व्यथित कर रहा है ) 138

इस प्रकार आदिकाव्य वाल्मीकि रामायण म प्रकृति-चित्रण के सभी प्रकारो का सम्यक समावेश देखन को मिलता है एव इसमे बाद के काव्यो म भी प्रकृति चित्रण का समावेश हो गया है

महाकाव्य दूसरा प्रमुख काव्य माना गया है यद्यपि महाभारत की कथा म प्रकृति-वणन के कम अवसर आये हैं किन्तु वहाँ उद्दीपन की भावना व्यापक रूप से विद्यमान है एक उदाहरण देखिये 'कही पर फूले हुए कनेर के फूलो के सामने दिखाई पडत थे वही पर फूले हुय कुरबक के वृक्ष कामदेव के बाणो के समान कामियो के हृदय मे वेदना उत्पन्न कर रहे थे 139

प्रस्तुत प्रकृति के रूप म अजु न क मन मे स्वाभाविक रति भावना को उददीप्त करन की स्थिति लक्षित होती है परन्तु इस प्रकार के स्थल महाभारत म विरलतम हैं।

वीरकाव्यो म प्रकृति चित्रण पर विचार करने के पश्चात अब हम प्रसगानुसार कालिदास एव कालिदासोत्तर काव्यो म प्रकृति चित्रण पर विचार करेंगे

## १ महाकवि-कालिदास

विश्व के विस्तृत साहित्य में महाकवि कालिदास को बाह्य जगत का सव श्रेष्ठ काव्यकार स्वीकार किया गया है कालिदास-कृत प्रकृति-वणन केवल सस्कृत-साहित्य मे ही नही अपितु विश्व-साहित्य मे अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं महाकवि ने देश, काल, वनोपवन, पवन, सरित सागर आश्रम व ऋतुवणन इत्यादि अनकानेक क्षेत्रो मे प्रकृति-वणन प्रस्तुत किये हैं अत कालिदास प्रकृति के सच्चे एव अद्वितीय उपासक हैं

महाकवि ने रघु की दिग्विजय140 व इन्दुमति स्वयवर के प्रसगो मे देशगत प्राकृतिक विशेषताओ का सुन्दर वणन किया है अवन्ती का यह वणन कितना स्वाभाविक एव मनोहारी है —

> अनेन यूना सह पार्थिवेन रम्भोरु कच्चिन्मनसो रुचिस्ते ।
> सिप्रातरगानिलकम्पितासु विहर्तु मुद्यानपरम्परासु ॥

(कदली के स्तम्भ के समान जघाओ वाली इन्दुमती ! क्या तुम अवन्ती के

---

138 यथोपरि 4/102,103

139 प्रकृति और काव्य प 283

140 रघु 4/34,35,44 46 51 55,56,57,59,67,69–72 75 81

उन उपवनो मे विहार करने की कामना करनी हो जिनम अहर्निश सिप्रा नदी का शीतल वायु प्रवाहित होता रहता है 141)

इसी प्रकार मेघदूत म कवि न अनेकानेक प्रदेशो का उल्लेख किया है 'जिनम-रामगिरि 142 , दशाण,143 उज्जयिनी,144 नन्दन145 एव अलकापुरी146 के वणन मनोहर है, अभिराम हैं उज्जयिनी का यह वणन प्रकृति-चित्रण का एक चूडा उदाहरण है जिसमे कहा गया है कि उज्जयिनी क बाजारो म मघ को कही तो कोटि कोटि मुक्ताओ से निर्मित मालाय देखने को मिलेगी जिनके मध्य में विशाल रत्न जडे होगे, अयत्र करोडा शख एव सीपिया दिखलायी देंगी एव कही और श्यामवण घास के समान देदीप्यमान नीलम विछे मिलेंगे उन सबको देखकर ऐसा प्रतीत होगा मानो रत्नाकर के सभी रत्नो को लाकर वहा एकत्रित कर दिये हो एव रत्नाकर (समुद्र) केवल जल से पूण रह गया हो147

हारांस्तारांस्तरलगुटिका कोटिश शखशुक्ती
शष्पश्यामा मरकतमणीनु मयूखप्ररोहान ।
दृष्ट्वा यस्या विपणिरचितान्विद्रुमाणां च भगाम्
सलक्ष्यन्ते सलिलनिधयस्तोयमात्रावशेषा ॥

वन एव उपवन वणन मे कालिदास ने अयोध्या के ध्वस्त उपवन 148 नन्दन-वन149 यक्ष का उपवन 150 प्रमदवन,151 का सुदर प्राकृतिक वणन प्रस्तुत किया है

महाकवि न सर सरिता एव सागर के मनोहर वणन किये है जिनमे पचाप सर पम्पासर ध्वस्त अयोध्या बावली नन्दनवन बावली इत्यादि सरोवरो कावेरी सिंधु लौहित्य नमदा, सरयू, आकाशगगा यमुना, गगा वत्रवती, निर्वि ध्या

141 यथोपरि 6/35
142 मेघ 1/1
143 यथोपरि 25
144 यथोपरि 35
145 यथोपरि 54
146 यथोपरि 67
147 यथोपरि 1/34
148 रघु 16/19
149 यथोपरि
150 यथोपरि 13/13
151 मेघ 2/16-18

शिप्रा, गम्भीरा, इत्यादि सरिताओं एवं समुद्र का एक वर्णन जिसमें, लंका से लौटते समय राम द्वारा सीता को सागर दिखलाने का वर्णन है, प्रमुख हैं[152]

सर, सागरादि के अतिरिक्त कालिदास को पर्वत वर्णनों में भी पर्याप्त रुचि है। उन्होंने रामगिरी, आम्रकूट, विन्ध्याचल नीच देवगिरि, हिमालय, कैलास मलय, गन्दमादन सुमेरु माल्यवान एवं चित्रकूट पर्वतों का रमणीय वर्णन प्रस्तुत कर प्रकृति चित्रण की एक अनुपम भेंट पाठकों को प्रदान की है[153] हिमालय वर्णन से प्रभावित होकर पं० करुणापति त्रिपाठी ने तो यहां तक कह दिया है कि- "कुमार सम्भव तो प्रकृतिनटी के ललित लास्य की रमणीय रंगशाला है प्रथम सर्ग का हिमालय वर्णन संस्कृत साहित्य में क्या समस्त विश्व साहित्य में एक देदीप्यमान रत्न है"[154] त्रिपाठीजी का यह कथन वास्तव में सत्य है हिमालय वर्णन की एक झलक दर्शनीय है—[155]

> 'यश्चाप्सरो विभ्रममण्डनानां सम्पादयित्रीं शिखरैर्बिभर्ति।
> बलाहकच्छेदविभक्तरागामकालसन्ध्यामिव धातुमत्ताम्॥
> कपोलकण्डूः करिभिर्विनेतुं विघट्टितानां सरलद्रुमाणाम्।
> यत्र स्रुतक्षीरतया प्रसूतः सानूनि गन्धः सुरभीकरोति॥
> भागीरथीनिर्झरसीकराणां वोढा मुहुः कम्पितदेवदारुः।
> यद्वायुरन्विष्टमृगैः किरातैरासेव्यते भिन्नशिखण्डिबर्हः॥

प्रकृति-चित्रण में आश्रम वर्णन का अपना स्थान है अतः कालिदास ने अपने काव्यों एवं नाटकों में आश्रमों का सम्यक् वर्णन किया है रघुवंश में वशिष्ट के आश्रम का अत्यन्त स्वाभाविक वर्णन मिलता है—

> 'वनान्तरादुपावृत्तैः समित्कुशफलाहरैः।
> पूर्यमाणमदृश्याग्निप्रत्युद्यातैस्तपस्विभिः॥
> आकीर्णमृषिपत्नीनामुटजद्वाररोधिभिः।
> अपत्यैरिव नीवारभागधेयोचितैर्मृगैः॥
> सेकान्ते मुनिकन्याभिस्तत्क्षणोज्झितवृक्षकम्।
> विश्वासाय विहङ्गानामालवालाम्बुपायिनाम्॥

---

152 शाकु 6 गद्य, विक्रम 2 गद्य 4–7, मालविका 3/9 16 17

153 मेघ 1/2 12 18-20 27, 2/17/,18 1/56-63 कुमार 1/1,3 6 7,9–13,15 16 9/39 41–44 24/20–29 रघु 13/26–28

154 कालिदास ग्रन्थावली पृ 51 (समीक्षा-निबन्ध)

155 कुमार 1/4 9,15

अभ्युत्थिताग्निपिशुनरतिथीनाश्रमोन्मुखान् ।
पुनान पवनोद्धूतैधु मराहुतिर्गाधभि ॥156

अभिज्ञानशाकुन्तलम् के प्रारम्भिक अको का तो सम्पूण वातावरण ही आश्रम जीवन की भावना से युक्त है चतुथ अक म महाकवि ने आश्रम म प्रकृति एव जीवन की आत्मीयता का एक सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया है 157 अत कालिदास का आश्रम वणन अद्वितीय है दशरथ की मृगया का जो सजीव एव गतिशील वणन रघुवश म मिलता है वह अन्यत्र दुलभ है 158

कालस्थिति वणन का प्रकृति चित्रण मे प्रमुख स्थान रहा है। कालिदास ने प्रात काल159 का वणन सन्ध्याकाल160 का वणन एव चन्द्रोदय161का स्वाभाविक शब्दचित्र वणन प्रस्तुत किया है। चन्द्रोदय वणन का यह उदाहरण कितना सजीव, कितना रमणीय एव कितना भव्य है—

पश्य पक्वफलिनीफलत्विषा बिम्बलाञ्छितवियत्सरोम्भसा ।
विप्रकृष्ट विवर हिमाशुना चक्रवाक मिथुन विडम्ब्यते ।।'

ऋतुवणन मे तो महाकवि सिद्ध हस्त हैं अपनी रचना ऋतु सहार मे तो उन्होने छ ऋतुओ का विस्तृत वणन किया ही है इसके अतिरिक्त भी रघुवश के सोलहवें सग म ग्रीष्म वणन,162 चौथे-सग मे शरद् वणन163एव छठे सग म वसन्त वणन 164 कुमारसम्भव के तृतीय सग म वसन्तवणन165 व मेघदूत के प्रारम्भ म वर्षा ऋतु के जो वणन किय हैं, वे साहित्यजगत् के अत्यन्त कलापूण एव चित्रात्मक वणन है मेघदूत का यह वणन कितना अभिराम है— 166

---

156 रघु 49–51,53
157 शाकु I गद्य, 4/4,8,9,13
158 रघु 9/53–56 58 60–68
159 रघु 5/66–68
160 कुमार 8/29,30 32,35
161 कुमार 8/61
162 रघु 16/46 47,52 53
163 रघु 4/14 16,18 20–24
164 रघु 6/1–3 5 16,19,20 22,23–28
165 कुमार 3/24,25,28,31
166 मेघ 1/10

म द म द नुदति पवनश्चानुकूलो यथात्वा
वामश्चाय नदति मधुर चातकस्ते सग ध
गर्भाधानक्षणपरिचया नूनमाबद्धमाला
सेविष्यन्ते नयनसुभग खे भवन्त बलाका ॥'

और रघुवश का यह वसन्तवणन भी किसी प्रकार कम नही —167

'प्रमदयन मधुग घसनाथया किसलयाधरसगतया मन ।
कुसुमसभृतया नवमल्लिका स्मितरुचा तरुचारुविलासिनी ॥'

इस प्रकार महाकवि कालिदास का प्रकृति वणन महत्वपूण एव अत्यन्त रमणीय है जिसे स्वाभाविक, सजीव, एव अ य कहें, तो अतिशयोक्ति न होगी

## २ अश्वघोष

महाकवि कालिदास के उत्तरवर्ती का यो के का यकारो मे महाकवि अश्वघोष का प्रमुख स्थान रहा है। अश्वघोष एक दाशनिक कवि थे अत प्रकृति का सीधा सादा वणन करना उनके लिय सभव नही था उन्होने जितने भी प्रकृति वणन किए हैं उनम उद्दीपन के रूप मिलत हैं बुद्धचरित के चतुथ सग म सासारिक भोग विलासो का वणन किया गया है जिससे कुमार का मन मोहित हो सके इस प्रसग मे उन्होंने प्रकृति का सहारा लेकर मानव जीवन की काम प्रेरणाओ को वर्णित करत हुये लिखा है —168

फुल्ल कुरवक पश्य नियु क्तालक्तकप्रभम् ।
यो नखप्रभया स्त्रीणा निर्भत्सित इवानत ॥

(निचोडे हुय महावर क समान कातियुक्त कुसुमित कुरवक को देखिये जो अगनाओ की नख काति से तिरस्कृत होकर नत हो गया है) और भी—

काचित्पद्मवनादेत्य सपद्मापद्मलोचना ।
पद्मवक्त्रस्य पारवस्य पद्मश्रीरिकस्तस्थुर्षा ॥

(कोई कमलाक्षी कमल वन से कमल के साथ आकर उस कमल मुख के पास स्थित हुयी )169

बुद्धचरित के चतुथ सग मे आम एव तिलक के आलिगन को रति क्रीडा का प्रतीक स्वीकार किया गया है।170

---

167 रघु 9/42
168 बु च 4/47
169 तथव 4/36
170 तथव तथैव

इन वणनो के प्रतिरिक्त तपोवन वणन के प्रसग मे कतिपय प्रकृति वणन निकाले जा सकते है उदाहरण के लिए—

'विप्राश्च गत्वा बहिरिध्महेतो प्रात समित्पुष्प पवित्रहस्ता ।
तप प्रधाना कृत बुद्धयोऽपि त द्रष्टुमीयुनमठानभीयु ॥

वास्तव मे बुद्धचरित के रचयिता महाकवि अश्वघोष को प्राकृतिक वणन म विशिष्ट रुचि नही है क्योकि व एक दाशनिक कवि है एव उनका मूल विषय दशन के विभिन्न पहलुओ से पूण है

## ३ भारवि

कालिदासोत्तर काव्यकारो म अश्वघोषापरा त महाकवि भारवि का विशिष्ट स्थान है। भारवि ने अपने काव्य मे पर्वत, वन, जलक्रीडा व ऋतुवणन किये हैं जिनमे प्रकृति नटी क विभिन्न नृत्य दखने को मिलते हैं। हिमालय का वणन करत हुये भारवि लिखते हैं कि इसमे रत्नो स शून्य एक भी शिखर नही था, लताओ से हीन कोई भी उपत्यका नही थी पकजो से रहित कोई भी सरिता नही थी एव पुष्पो से अनाच्छादित कोई भी वृक्ष न था —

'रहित रत्नचयान्न शिलोच्चयानलताभवना न दरीभुव ।
विपुलिनाम्बुरुहा न सरिद्वधूरकुसुमान्दधत न महीरुह ॥[171]

भारवि का यह प्रकृति-चित्रण कितना सुदर है, कितना अभिराम है। भारवि ने अपने का य म हिमालय के माग का वणन करते समय वनो का भी वणन किया है स ध्या का वणन करते समय कवि न लिखा है—सूय की कु कुम ताम्र किरण अट्टालो के गव क्षो म प्रवेश करती हुयी युवतियो को जान पडती थी कि पतियो द्वारा भेजी हुई दूतिया है और इसलिए सायकाल के शृ गार क लिए शीघ्रता कर देती थी [172]

का तदूत्य इव कु कुमताम्रा सायम डलमभित्वरयन्त्य
सादर ददृशिरेवनिताभि सौधजालपतिता रविभास ।

इस वणन मे प्रकृति का जितना सुन्दर कल्पनायुक्त चित्र है वह अन्यत्र दुलभ है। भारवि ऋतु-वणन म भी किसी स कम नही उन्होंने अनेक प्रसगो म ऋतु-वणन किया है [173] वर्षा का एक वणन दखिये —

---

171 किरात 5/10
172 वही 9/6
173 वही 4/3-6, 16, 19 21-223, 526 29, 31, 62

मुकुलिनमतिशय्य बन्धुजीव घृनजल विन्दुमु शाद्वलस्थलीपु
अनिरनवपुप सुरद्र गापा विकचपलाशचयश्रिय ममीयु ॥

(वीर–वहूटिया जिनके शरीर माटे नाजे हो गये थे नीहर कणो से आच्छान्ति हरे–हरे तिनको वाली भूमि पर बन्धूक पुष्प के मुकुल की कान्ति को तिरस्कृत कर प्रफुल्ल पलाश पुष्प की शोभा को प्राप्त हुई )

इन वणनों से स्पष्ट है कि भारवि को प्रकृति–चित्रण म रुचि थी उन्हने उस रुचि को अपन काव्य म प्रदर्शित किया

४ माघ

भारवि के उत्तरवर्ती काव्यकार माघ को भी प्रकृति चित्रण मे रुचि है, उन्हाने अपनी एक मात्र कृति शिशुपालवध मे क्रमश सागर, पवत, सन्ध्या, चन्द्रोदय, प्रभात एव ऋतुआ का वणन किया है

द्वारिका प्रस्थान के प्रसग मे माघ न सागर का सक्षिप्त वणन किया है 174 'पवतो के वणन म रुविकृत रवतक पवन का वणन अत्यन्त सुन्दर है 170

'उस पवत पर रज्जु क समान पडी हुई, उदय होते हुए सूय एव अस्त होते हुए चन्द्रमा की किरणा से जान पडता है माना विशाल गज के गले मे दो घण्टे झूल रहे हा

माघ का यह वणन सुन्दर एव सजीव है। इसी वणन से प्रभावित हा विचारको ने उसे 'घण्टामाघ' की उपाधि म विभूपित किया है। माघ ने क्रीडा विलास प्रसग म सन्ध्या का भी वणन किया है।176 महाकवि माघ ने चन्द्रोदय को सुन्दर ढग मे प्रस्तुत करत हुए लिखा है —177

उपजीवति स्म मनन दधान परियुग्धता वणिगिवोद्गपते ।
घनवीयिवीथिमवीणयतो निधिरम्भसामुपचयाय कला ॥

(नीरधि रूपी वश्य के सदृश सुन्दरता को धारण करत हुए मेघमाग रूपी आपण म उतरे हुय नक्षत्र स्वामी की कलाआ को अपनी उन्नति के जल की वृद्धि के लिये सेवन करने लगा अथात् चन्द्रकलाआ का पान कर सागर का जल उसी प्रकार बढ गया जिस प्रकार बाजार मे आये हुये व्यापार की कला को न जानने

174 शिशु 3/70, 73, 75, 77–81
175 यथोपरि 4/29
176 यथोपरि 9/13, 5, 6, 8, 10, 12–17,
177 यथोपरि 32

वाले किसी व्यापारी के धन को कपट पूर्वक लेकर किसी चतुर वश्य की सम्पत्ति बढ जाती है )

चन्द्रोदय की भांति प्रभात का वर्णन भी महाकवि माघ की एक नवीन कल्पना है 178

महाकवि कालिदास की भांति महाकवि माघ को भी ऋतुवर्णन अत्यन्त प्रिय है उन्होने वसन्त, वर्षा, शरद व हेमन्त का वर्णन किया है।179 कवि का वसन्त वर्णन अत्यन्त सुन्दर है 180

नवपलाशपलाशवन पुर स्फुट परागपरागतपङ्कजम् ।
मृदुलतान्तलतान्तमलोकयत सुरभिसुरभिसुमनोभर ॥

(भगवान कृष्ण ने नवपल्लवयुक्त पलाश वन वाले प्रफुल्लित तथा मकरन्द से से भरे हुये कमलो वाले, कोमल एव गर्मी मे कुछ म्लान पुष्पो वाले तथा पुष्पो से सुरभित वसन्त ऋतु को देखा )

महाकवि माघ एव महाकवि कालिदास के वर्णनो म हम एक अन्तर देखने को मिलता है कि कालिदास ने विलास क्रीडाओ के सन्दर्भ म भी और सीधे साद भी ऋतु वर्णन किया है किन्तु माघ ने सामान्यत विलासादि के प्रसग मे ही ऋतु वर्णन किया है

## ५ श्रीहर्ष

माघ के पश्चात् प्रमुख काव्यकारो मे श्रीहर्ष का विशिष्ट स्थान है उनकी कृति नषधीयचरितम एक विशाल ग्रन्थ है एव अनेकानेक प्रसगो से युक्त है श्रीहर्ष ने अपने काव्य म देश काल और ऋतुओ का मनोहारी वर्णन प्रस्तुत किया है

दमयन्ती-स्वयवर के प्रसग मे अनक राजाओ और उनके राज्यो के वर्णन उनके काव्यो म दर्शनीय है जिनमे पुष्कर द्वीप शाकद्वीप क्रौच देश शल्मल द्वीप प्लक्षद्वीप जम्बूद्वीप व अवन्ती क वर्णन प्रमुख है 171

इन वर्णन मे पुष्करद्वीप मे वट वृक्षो की उपस्थिति, शाकद्वीप म शाक वृक्षो की उपस्थिति, क्रौचदेश म हसो की मधुर ध्वनि शाल्मलद्वीप म शाल्मली वृक्षो की उपस्थिति प्लक्ष द्वीप पाकड वृक्षो की उपस्थिति एव जम्बूद्वीप म जम्बू वृक्षो के बाहुल्य का उल्लेख प्रकृति नटी क विभिन्न नृत्यो को हमारे सम्मुख प्रस्तुत

---

178 यथोपरि 11/21

179 यथोपरि 612–5, 7 21 27 30

180 यथोपरि 612

181 नषध० 11/29, 30 38, 41, 43, 50, 58, 62, 69, 70, 74, 77, 84–86

करता है। अवन्ती का वर्णन करते हुए कवि ने लिखा है कि अवन्ती में शिप्रा नदी दमयन्ती की सखी होगी। उस नदी के तटों पर तपस्वी एवं विप्रजन निवास करते हैं। यह नदी क्रीडा के समय तरंग रूपी करों से दमयन्ती का आलिंगन करेगी। उसका कमल के तुल्य मुख निरन्तर हास्य में रमणीय रहता है।[182]

महाकवि श्रीहर्ष ने नैषधीय चरितम् के प्रथम सर्ग में उद्यान का वर्णन करते हुये उसे भ्रमरों के गुञ्जन, केतकी के पुष्प एवं चम्पे की कली से युक्त कहा है। कवि ने नागकेशर व पाटल के फूलों व अगस्त्य और अशोक के वृक्षों का भी सुन्दर वर्णन किया है।[183]

नल द्वारा देखे गये सरोवर का वर्णन करते हुए कवि लिखते हैं कि—वह सरोवर ऐसा प्रतीत होता था मानो बहुत समय से पुराने रत्नों की सम्पत्ति का मन्थन के भय से लेकर समुद्र उस वन में छिप कर रहता हो।[184] इस सरोवर को कवि ने कमलों व चक्रवाकों से युक्त भी बतलाया है।[185]

प्रातःकाल का यह वर्णन कितना स्वाभाविक सजीव एवं काल्पनिक है[186]

"व्रजति कुमुदे दृष्ट्वा मोहम् दृशोरपिपावके
भवति च नले दुरम् तारपतौ च हतौजसि।
लघु रघुपतेर्जाया मायामयीमिव रायणि
स्तिमरधिकुरग्राह रात्रिं हिनस्ति गभस्तिराट ॥"

(सूर्य अन्धकार रूपी बाल पकड़ कर रात्रि का शीघ्र नाश करता है। यह देखकर कुमुद सकोच को प्राप्त हो जाते हैं, महाराज आपके नयन खुल गये हैं एवं मयंक का तेज मलीन हो गया है। जैसे—रामचन्द्र की मायामयी भार्या सीता का मेघनाद ने बाल पकड़कर मारा तब कुमुद वानर को मोह हो गया था, नल वानर ने आँखें बंद करली थी, एवं सुग्रीव बलहीन हो गया था।)

महाकवि श्रीहर्ष ने अपने ग्रन्थ के अन्तिम सर्ग में सायंकाल का वर्णन नल दमयन्ती के आलम्बन से करवाया है। इस प्रसंग में पश्चिम दिशा का रागवर्ण से युक्त बताया है। सूर्य को सोने का टुकड़ा व तारों को कौड़िया बतलाते हुए सन्ध्या का वर्णन किया है। सूर्य की अनुपस्थिति में लोगों के नेत्रहीन होने व अन्धकार के

182 यथोपरि 11/89
183 यथोपरि 1/78,79,81-84,86,87,92-96,101
184 यथोपरि 1/107
185 यथोपरि 1/109 111,113-116
186 यथोपरि 19/8

द्या जाने का वणन कवि कल्पना की अनुपम भट है[187]

कवि का चन्द्रोदय वणन भी अत्यन्त सुदर बन पडा है सायकाल मे सूय की अनुपस्थिति को स्वण मुद्रा के अभाव रूप मे एवं चन्द्रोदय को रजत मुद्रा की उपस्थिति मानते हुये सायकाल को धूत कहा है—[188]

> आदत्तदीप्त मणिमम्बरस्य दत्वा यदस्य खलु सायधूत ।
> रम्य तुषारद्युति कूटहेम तत्पाण्डु जात रजत मयेन ।।

यद्यपि श्रीहष के वणनो म चित्रमयता का अभाव दृष्टिगोचर होता है किन्तु उनके वणनो म कल्पना की जो उडानें है वे कवि की प्रतिभा की परिचायक हैं

इस प्रकार हमने पद्य काव्यकारो के काव्यो म प्रकृति चित्रण पर एक विचार किया अब हम गद्य काव्यकारो द्वारा प्रस्तुत प्रकृति वणन पर विचार करेंगे

## गद्य—काव्यकार

### १ सुबन्धु

गद्यकारो म सुब धु का प्रथम स्थान रहा है सुबन्धु की कृति वासवदत्ता एक एसी रचना है जिसम प्रकृति क सभी उपमानो का यत्र-तत्र सर्वत्र वर्णन किया गया है क्या देश क्या वन क्या नदी क्या काल और क्या ऋतु कोई भी विषय एसा नही जिसका अल्पाधिक वर्णन कवि न न किया हो

कवि ने कुसुमपुर नामक नगर का विस्तृत वणन प्रस्तुत किया है वे लिखते हैं कि उस नगर क प्रासाद उत्तम सुधा प्रमृत से शुभ्रवण सुधाशिलाओ से मनोहर मन्दपर्वत के शिखरो क समान, कलई के लेप स शुभ्र वण हैं मदमत्त हाथियो स युत हस्ति-यूथ क समान सुन्दर वरामदो से अलकृत हैं, गवाक्षो से मनोहर हैं[189]

सममानदी क धारा और उपवनो की उपस्थिति को भी कवि ने प्रस्तुत किया है[190] वासवदत्ता म समुद्रवणन नदीवणन (शिप्रा व तमसा) व पर्वत—वणन (विन्ध्याचल) पर्याप्त रूप स विद्यमान हैं जो कवि क प्रकृति प्रेम का परिचय देत है[191]

---

187 यथोपरि 22/34
188 यथोपरि 22/50
189 वासवदत्ता पृ 85
190 वही पृ 96
191 वही पृ 17,73 96,17 63,

सुबन्धु ने प्रात काल का बड़ा ही मनोहारी वर्णन करते हुये लिखा है —

'पश्चिमाचलोपधान सुखनिषण्णशिरसो राजतताटङ्कचक्रइव, श्यामश्यामाया, शेषमधुभाजि चषक इव विभावरीवध्वा ।'

(उस समय वह (चन्द्रमा) अस्ताचलरूपी तकिये पर सिर रखकर लेटी हुयी रात्रिरूपी युवती के रजत निर्मित ताटंक के समान सुशोभित हो रहा था एवं रात्रिरूपी कामिनी के पीने से शेष बचे हुये मधु परिपूर्ण पात्र-सा प्रतीत हो रहा है )

प्रात काल के वर्णन के समान कवि ने सन्ध्या, रात्रि एवं चन्द्रोदय के भी विस्तृत वर्णन किये हैं 192 सुबन्धु ऋतुवर्णन मे भी किसी से कम नही उन्होने वर्षा वसन्त व शरद का वर्णन किया है 193 वर्षाऋतु के वर्णन की एक झलक दर्शनीय है[194] —

'एकदा कतिपयमासपगमे काकली गायन इव समृद्धनिम्नगानद सन्ध्यासमय इव नर्तितनीलकण्ठ, कुमारमयूर इव समारूढशरजन्मा, महातपस्वीव प्रशमितरज प्रसर तापस इव धृतजलदकरक, प्रलयकाल-इव दर्शितानेकरविविभ्रम, निरुप द्रवकाननोद्देश इव घनात्मेवितसारग, रवतीकरपल्लव इव 'हलिधतिकर, लकेश्वर इव स मेघनाद विन्ध्य इव घनश्याम युवनितम्ब इव पीनपयोधर समाजगाम वर्षासमय ।"

(कतिपय समय व्यतीत हो जाने पर एक समय वर्षाकाल उपस्थित हुआ, जिसमे श्रेष्ठ एवं गम्भीर गान के प्रवर्तक काकलीगायन की भांति सरितायें तथा नद जल से पूर्ण थे जिसमे रुद्र के नृत्य से युक्त सायंकाल के समान मयूर नृत्य कर रहे थे कार्तिकेय से अधिष्ठित कुमार के वाहनभूत मोर के सदृश सरकण्डा बहुतायत के साथ उगे हुये थे जिसका रजो गुण शान्त हो गया है ऐसे तपस्वी के समान जिसमे धूल दबी हुयी थी जलप्रद कमण्डलु धारण करने वाले सन्यासी के सदृश जिसने जलद एवं ओले धारण किये हुये थे अनेक सूर्यों की चमक प्रदर्शित करने वाले प्रलयकाल के समान जिस समय अनेक नौकायें घूम रही थी, जिसमे हरिण मस्त होकर भ्रमण कर रहे थे, ऐसे शांत-वन प्रदेश के समान जिसने नीरदा द्वारा चातकगणो को मस्त बना दिया था बलराम को सन्तुष्ट करने वाले रवती के हाथ के समान जो किसानो का धय दे रहा था अपने आत्मज मेघनाद सहित

192 वासव दत्ता पृ 150-153,173,175,

993 वही पृ 245,249 110

194 वही पृ 245

इन्द्रायुध के समान जिस समय मेघ गरजा करते रहे थे जो विन्ध्याचल की भाँति श्यामवर्ण का हो गया था और पानवाली युवतियों के सदृश जिसमें विमान जनम उपस्थित हो रहे थे।)

इस प्रकार सुबन्धु के वर्णनों में मनोरंजक प्रकृति के उपमानों का बाहुल्य है जो उनके प्रकृति प्रेम को प्रदर्शित करता है।

२ बाणभट्ट

संस्कृत-साहित्य के विशाल सागर में बाणभट्ट का अपना स्थान है। वे प्रकृति के ही कवि तथा सब कलाओं एवं विद्याओं के सच्चे पारखी हैं। बाणभट्ट की दोनों कृतियाँ हर्षचरित एवं कादम्बरी, मनमोहक प्राकृतिक चित्रों से युक्त हैं। बाण ने प्रकृति के सूक्ष्म से सूक्ष्म रूप को पाठकों के सम्मुख रखने का सफल प्रयास किया है। यहाँ इन सब वर्णनों का प्रस्तुत करना तो कठिन है, किन्तु उनमें से कतिपय का संक्षिप्त वर्णन मात्र प्रस्तुत करने का प्रयास करेंगे।

बाणभट्ट ने हर्षचरित में श्रीकण्ठ देश का विस्तृत वर्णन किया है[195] विन्ध्य के मार्ग का वर्णन ग्राम्य प्रकृति का अनुपम वर्णन है। वे लिखते हैं—

अथ प्रविशन्नेव दूरादेव दह्यमानपल्लिकबुसविसरविसारिभावस्मना वनपाण्य बीजधानीनां धूमेन धूसरिमाणमादधानं, प्रकाश्यमानवटवीप्रायग्रामतया कुटुम्बभरणाकुलैः कुद्दालप्रायैः कृषिभिः कृषीवलैरबलवद्भिरुच्चभागभाषितेन भज्यमानभूरिशालिखलतरु खण्डलकमलपाशकाशस्तबकापिल कालायसमिव कृष्णमृत्तिका कठिनम्।'

(प्रवेश करते ही दूर से ही उन्होंने जंगली लोगों से युक्त वनग्राम देखा। जंगली धानों के खलिहानों की जलते हुए साठी के घास की अग्नियों के धुएं से वन प्रदेश धुमैले हो रहे थे। वनग्राम के चारों ओर जंगल के सिवा और कुछ भी न था। इसलिये कृषक अपना भरण पोषण करने के लिये व्याकुल रहते थे एवं उसी चिन्ता में कृश होकर जोर जोर से आवाज करते हुए केवल कुदारी से खोद कर परती जमीन तोड़ते और मेन के टुकड़े निकाल लेते। खेत छोटे-छोटे और कहीं-कहीं पर थे। भूमि काश से भरी हुई थी। काली मिट्टी लोहे की तरह कड़ी थी) इत्यादि, इत्यादि[196]

वनों के वर्णनों में सबसे सुन्दर सबसे अभिराम वर्णन है—बाणकृत विन्ध्याटवी वर्णन। वे लिखते हैं—

---

195 ह० च० पृ० 159

196 वही० पृ० 406

'अस्ति पूर्वापर–जलनिधि वेलावनलग्ना मध्यदेशालंकारभूता मेखलेव भुव, वन–करिकुल–मदजल–सेक सर्वाद्धितैरतिविकचधवलकुसुमनिकरभत्युन्चतया तारा गणमिव (शिखर) देशपग्नमुदभि पादपैरुपशोभिता, मदकल कुररकुलदश्यमान मरिचपल्लवो, करिकलभकरमृदिततमालकिसलयामोदिनी पुष्पवत्यापि पवित्रा विन्ध्याटवी नाम।

(जलनिधि के पूर्वी तट से पश्चिमी किनारे तक लगी हुई मध्य प्रदेश की शाति बनाने वाली विन्ध्याटवी नाम के वनो की एक पट्टी फैली हुई है वह पृथ्वी की करधनी के सदृश प्रतीत होती है वह माना जगली हाथियो के मज्जल से ही सीच कर बढ़ाये गये अनेक प्रकार के वृक्षो से सुशोभित थी, जिनके शिखरो पर खिले हुए धवल-पुष्पो के समूह ऊचाई के कारण तारो के समान प्रतीत होते थे कही कही मनोहर बलाकाओ के मन्न समुदाय मिच के पल्लव कुतर–कुतर कर खा रहे थे कही हाथियो के बच्चो की सूडा से मसले गए तमाल के पत्तो से मधुर सुगध निकलती थी ) इत्यादि इत्यादि [197]

विन्ध्याटवी के अतिरिक्त बाण ने जीर्णशाल्मली, शुक-निवास वन व शून्या-टवी का विस्तृत वणन किया है [198]

हर्षचरित मे विन्ध्य वन का वणन वास्तव म सुन्दर बन पड़ा है कवि लिखते हैं [199]

'अथ क्रमेण गच्छत एव तस्य अनवकोशित कुड्मलितकर्णिकारा, प्रचुरचम्पका स्फीतफलग्रह फलभरभरित मेक्ष नीलदलनलदनारिकेलिनिकरा, हरिकेसर सरल परिकरा, प्रचूरपूगफला, चटका सचायमाण–चाचाटचाटकैरक्रियमाणचाटव, सहचरी चारणचतुरचकोरचक्रव इत्यादय।'

(विन्ध्याटवी के माग म हरे न फले फूले अनेक वृक्षो का अवलोकन किया चम्पक फला से लद गए थे सावले पत्तो वाले सल्लकी एव नारियल के वृक्ष समु-दायो म खडे थे नागकेसर और सरल चारो ओर छाए हुए थे हींग हवा से हिल रहे थे सुपारी के फल खूब लगे थे गौरया चू चू करते हुए अपने बच्चों को उडाना सिखा रही थी चकोर अपनी प्रिया को चुग्गा दे रहा था ) इत्यादि

बाण ने पवतो के वणन भी किये हैं, किन्तु पवत–वणन बाण का अधिक

---

197 कादम्बरी० पृ० 55

198 वही० पृ० 71, 74 633

199 हर्ष चरित प० 418

प्रिय या मुन्य विषय नही रहा उन्होने अनेक प्रसगा मे हिमालय व विन्ध्य पवन का वणन किया है कलास पवत के वणन की एक छटा दशनीय है—

शिखर सुत शिला जतु रसपिच्छिलोपलेन, टकनहय खुर खण्डित हरिताल क्षोद पाशुलेन, श्रालुनलरोत्खातविल विप्रकीर्णकाचन चूर्णेन, वनमानुषमिथुना ध्यासिततटगुहामुखेन, ग धपाषाण-परिमलामोदिना, वेत्रलताभतानप्रढवेणुना कलासतलेन, कचिदध्वान गत्वा तस्यव कलासशिखरिण पूर्वोत्तरे दिग्भागे जलभारा लस जलधरव्यूहमिव बहुल पक्षलपादपखण्डमिव पु जीकृत मत्यायत तरुखण्ड ददर्श। इत्यादय।

(शिखर से गिरत शिलाजीत के रस स उनकी शिलाए चिकनी हो गई हैं पाषाण-विदारक प्रस्त्र के सदृश कठिन अश्वो के टापो स बिन्गीण हरिताल के रेणु से वह मलिन हो गयी है मूषको के नखो से खोदे बिलो के अन्दर वहा सुवण रज विक्षिप्त है पवत-गुफाओ के द्वार म बहुसख्यक वन-मानुष के जोड रहत हैं सुगन्धि-पाषाण का सौरभ भाता है और ब।सो की वला के प्रतान म बास उग हैं वहा पु जीकृत वृक्षो का मण्डप देखा)[200]

सर-सरिता वणन भी कवि ने किये हैं जिनम पम्पासर, अच्छोद सरोवर व प्राकाशगगा के वणन प्रमुख है पम्पासर का एक वणन देखिये—

'अगस्त्याश्रमस्यनातिदूरे जलनिधि पान-कुपित-वरुणोत्साहितेन अगस्त्य भत्सरात्तदाश्रमसमीपवत्यपरा इव वेधसा महाजलनिधिरुत्पादित सारसित समद सारसम, अम्बुरुह-मधुपान मत्त कलहसकामिनी कृत कोलाहलम अनेक जलचर पतगशत-सचलन चलित वाचालवीचिमालाम, अनिलोल्लासित कल्लोल शिशिर शाकरारब्ध दुरदिनम अगाधमनन्तम प्रतिमम अपा निधान पम्पोभिधान पद्मसर इत्यादय।

(उस अगस्त्याश्रम क करीब ही दूर तक अथाह विस्तृत, अद्वितीय एव जल का सागर सा पम्पा नामक कमलपूर्ण एक तडाग था वह ऐसा लग रहा था मानो सागर का सम्पूर्ण जल पी लेने वाले अगस्त्य को जलाने के लिए क्रुद्ध वरुणदेव से प्रेरित ब्रह्मा न उनके आश्रमो के करीब एक अन्य महान् समुद्र ही उत्पन्न कर दिया हो, उसमे कही मतवाले सारस ध्वनि करत थ अन्यत्र कमलो के रस का पान कर मदमस्त हसनियां कोलाहल करती थी, कही सकडो की सख्या मे अनेक जलपक्षियो के साथ साथ तरन म चवल लहरो स कलकल हुआ करती थी) इत्यादि

---

200 कादम्बरी प० 370

बाण आश्रम वर्णन में भी पीछे नहीं रहे उनके द्वारा किये गये आश्रम वर्णनों में जाबाल्याश्रम अगस्त्याश्रम बौद्धाश्रम के वर्णन प्रमुख हैं[201] इन आश्रमों के वर्णनों में कवि ने वन पर्वत, फल फूल सरसरिता मृग-सिंह, गज इत्यादि के जो वर्णन प्रसंगानुसार किये हैं, वे अन्यत्र अत्यन्त विरल हैं अगस्त्याश्रम का एक वर्णन देखिये —

'चिरशू येऽद्यापि यत्र शाखानिलीन निभृत पाण्डु-कपोत पंक्त्यो लग्नतापसाग्नि होत्र धूमराजय इव लक्ष्यन्ते तरव । बलिकर्म कुसुमान्युदधरन्त्या सीताया करतला दिव सक्रान्तो यत्र राग स्फुरति लताकिसलयेषु । यत्र च पीतोदगोदृशजलनिधि जल-मिव मुनिना निखिलमाश्रमोपान्तवर्तिषु विभक्त महाह्रदेषु । यत्र च दशरथ सुत-निशित-शर निकर निपात निहत रजनीचर बल बहल रुधिरसिक्तमूलम् द्यापि तदरागाविद्ध निगतपलाशमिवाभाति नव किसलयमरण्यम ।'

(मुनियों के द्वारा बसा न होने के कारण उस बीहड़ में शाखाओं पर विद्यमान धवल-कपोतों की पंक्तियाँ से वृक्ष ऐसे लग रहे थे जैसे अद्यपर्यन्त भी उनमें उन तपस्वियों के अग्निहोत्रों से उठे हुए धुएँ की रेखाएँ लगी हुई हों, जहाँ वेलों की नवीन से नवीन कोमल कोंपलों से निकलती हुई लालिमा ऐसी लगती थी मानो अर्चनकुसुमों के चयन काल में लगी हुई जानकी के करतल की लाली ही आज भी फूट फूट कर बिखर रही हो, जहाँ आश्रम के निकटवर्ती सरोवरों में बाँट दिया हो ) इत्यादि [202]

इन वर्णनों के अतिरिक्त शबरमृगया, आखेट वर्णन एवं अशुभ उत्पातों के वर्णन भी प्रकृति की विभिन्न क्रियाओं पर प्रकाश डालते हैं[203]

काल परिवर्तन एवं ऋतु वर्णन में भी बाण भट्ट किसी से पीछे नहीं रहे हैं उनके काव्यों में मध्याह्न सन्ध्या अन्धकार रात्रि चन्द्रोदय प्रातःकाल के वर्णन अनेक स्थानों पर प्रसंगानुसार फैले पड़े हैं[204] ऋतुवर्णन के प्रसंगों में ग्रीष्म, पवन प्रवेश दावानल प्रकोप वर्षा, शरद् वसन्त के वर्णन कवि ने अनेक स्थलों पर किये हैं[205] महाकवि बाण के ये सभी वर्णन अन्य कवियों की भाँति ही हैं, उनमें कोई वैशिष्ट्य देखने को नहीं मिलता, अतः इन वर्णनों का यहाँ विस्तृत उल्लेख करना पिष्टपेषण मात्र तो होगा ही साथ ही उबाने वाला भी

201 कादम्बरी पृ० 67–68
202 कादम्बरी पृ० 65
203 वही० पृ० 85, 86 ह० च० पृ० 281
204 वही० पृ० 81, 149 297 517, 586
205 वही० पृ० 414

होगा, अत इनका विस्तृत वर्णन न करते हुये दण्डी के प्रकृति चित्रण पर एक दृष्टि डालेंगे

## ३ दण्डी

गद्य कवि दण्डी का काव्य दशकुमारचरित्र राजनैतिक प्रपञ्चों का काव्य है अत हम इसमे मुक्त रूप से प्रकृति-वर्णन की उपस्थिति की आशा नही कर सकते, परन्तु फिर भी दण्डी के इस काव्य म कतिपय स्थल एस है जिनम प्रकृति चित्रण की झलक देखी जा सकती है

महाकवि ने पुष्पपुरी का वर्णन किया है [206] ऋतुवर्णन म वसन्त ऋतु का वर्णन अभिराम बन पड़ा है वसन्त का यह वर्णन कितना स्वाभाविक एव सजीव है—

'अथ मीनकेतनसेनानायकेन मलयगिरिमहीरुह-निरन्तरावाप्ति भुजगम भुक्तावशिष्टेनेव सूक्ष्मतरेण धनहरिचन्दनपरिमलभरेणेव मन्दगतिना दक्षिणानिलेन वियोगिहृदयस्य म मथानलमुज्ज्वलयन्, सहकारकिसलयमकरन्दा स्वादन रक्तकण्ठना मधुकरकल कण्ठाना काकलीकलकलेन दिवक्ष वाचालयन्, मानिनीमानसोत्कलिकामुपनयन माकन्दसिन्दुवारक्तशोककिंशुकतिलकेपु कलिकामुपपादयन्, मदनमहोत्सवाय रसिक मनांसि समुल्लासय, वसन्त समय समाजगाम ।'

(तदनन्तर वस तकाल उपस्थित हुआ जिसका सेनाध्यक्ष स्वय कामदेव था मलयपर्वत पर लगे चन्दन वृक्षो पर निवास करने वाले सर्पों के पान से बची हुयी और चन्दन की सुगन्धि स मिश्रित मन्द मन्द बहती हुयी दक्षिणानिल के द्वारा वसन्त ने वियोगियो के हृदय म कामाग्नि उद्दीप्त कर दी । आम्र मजरी के मकरन्द का आस्वादन करने स रक्तकण्ठ वाले पिक की मीठी बोली और भ्रमरो की गुंजार के द्वारा मदन ने दसो दिशाओ को मुखरित कर दिया । मान करने वाली कामिनियो की लालसा को बढा दिया आम्र निगुण्डी रक्त, अशोक पलाश एव तिलक इन वृक्षो म नयी नयी कोपलें उत्पन्न करदी एव मदन महोत्सव मनाने के लिये रसिको के हृदय मे एक विशिष्ट प्रकार का उल्लास भर दिया ) [207]

इस प्रकार न्यूनाधिक रूप से प्राचीन समय स ही काव्यो मे प्रकृति वर्णन की अविरल धारा प्रवाहित होती रही है भले उसका रूप कुछ और रहा हो हा, इतना अवश्य है कि आजकल प्रकृति वर्णन के अनेक प्रकारो व सम्प्रदायो का

---

206 दशकुमार चरित पृ० 4
207 वही० पृ० 97–99

प्रचलन है किंतु वास्तव म उनका मूल संस्कृत के प्राचीन काव्य ही रह हैं इसे अस्वीकार नही किया जा सकना

## काव्यों में पशु-पक्षी वर्णन की उपस्थिति क्यों ?

जब हम विचार करत हैं कि काव्या म पशु पक्षियो के वरणन क्यो उपलब्ध होत हैं ता हमार सम्मुख निम्नलिखित मुख्य कारण उपस्थित होते हैं —

(i) मानव एव पशु पक्षियो का निरन्तर सयोग

(ii) प्राचीन समय म मानव का पशु पक्षिया के प्रति प्रेमाधिक्य

(iii) कवियो की पनी अवलोकन शक्ति

मानव व पशु पक्षिया का सदा सन्ग का साथ रहा है और यदि यो कहे कि पशु पक्षी मानव के पूव भूपटल पर विद्यमान रहे हैं, तो अतिशयोक्ति न होगी वज्ञानिक तो मानव का वदर की सतान स्वीकार कर चुका है अत मानव अर्वाचीन है, पशु या पक्षी प्राचीन अब प्रश्न यह उठता है कि मानव ने पशु पक्षी का सयोग कब प्राप्त किया तो इस प्रश्न का सीधा सादा उत्तर यही होगा कि जब मानव ने भूपटल पर आगमन किया तभी से उसे पशु पक्षियो का साहचय प्राप्त हो गया अत सिद्ध है कि मानव व पशु पक्षियो का चोली-दामन का साथ रहा है मानव का पशु पक्षियो के साथ यह सयोग निरन्तर बढता गया और मानव उनक नजदीक स नजदीक रहने लगा मानव क्योकि बुद्धिमान् जीव था उसने पशु पक्षी को अपने वश मे किया एव उन्हे पालतू बनाया मानव एव पशु-पक्षी के इस सयोग की कहानी मानवता की प्रारम्भिक कहानी है ज्यो ज्यो मानव की बुद्धि का विकास हुआ उसम सोचने समझने की शक्ति आयी एव उसने अपन विचारो का व्यक्त करना सीखा, तभी से पशु-पक्षी के वरणन का बीजारोपण हो गया था। मानव के विचार अधिक विकसित हुये, उसने लिखना-पढना सीखा एव अपने विचारो को लेखन के माध्यम से दूसरो तक पहुँचाने की कला मे प्रवीणता प्राप्त की इस प्रकार हजारो वर्षों की अविरल तपस्या के पश्चात् मानव एक बुद्धिजीवीयुग का सदस्य बना एव इसी बुद्धिमत्ता के कारण उसने काव्यो म पशु-पक्षियों का वरणन किया है कर रहा है एव भविष्य म भी करता रहेगा अत सिद्ध होता है कि काव्या म पशु-पक्षी वणन की उपस्थिति का एक प्रमुख कारण है—'मानव व पशु-पक्षी का निरतर सयोग'

सयोग से गुणो का आदान प्रदान होता है। कहा भी तो है —

'सत्सगति कथय किं न करोति पु साम्' ।

अत जब मानव का पशु पक्षिया के साथ सपक हुआ तो उनके पारस्परिक सबध बढे और मानव पशु-पक्षियो से एव पशु पक्षी मानव से प्रेम करने लग

यह प्रम आगे चलकर इतना बढ गया कि वे एक दूसरे के सुख-दुःख का भली भाति समभने लगे एव उनके हृदय म सहानुभूति व प्रेम की भावना उपस्थित हुयी अत काव्यो मे पशु पक्षी वणन की उपस्थिति का द्वितीय कारण बना — पशु पक्षियो के प्रति मानव का प्रेमाधिक्य "

किन्तु केवल सम्पक एव प्रम मात्र से हम किसी वस्तु का सम्यक ज्ञान नही हो सकता किसी वस्तु का वास्तविक एव सूक्ष्म ज्ञान प्राप्त करने के लिये उसका अवलोकन आवश्यक है अत काव्यो म पशु पक्षी वणन की उपस्थिति का तृतीय कारण हुआ —'सूक्ष्म अवलोकन

मानव का पशु पक्षियो के साथ निरन्तर सयोग एव प्रेमाधिक्य के अनकानेक उदाहरण प्रारम्भिक ग्रथो से ही उपलब्ध होते रहे हैं विश्व साहित्य की प्राचीनतम कृति ऋग्वेद मे अनेक पशु-पक्षियो के वणन उपलब्ध होते हैं वदिक-साहित्य म निम्नलिखित पशु पक्षियो के नाम मिलते हैं —अश्व (अश्व), अज (बकरा) अश्व इभ उष्ट्र ऋक्ष एडक (कालामृग), एणी, कपि, कुक्कुर, खग खर गज, गदभ गवय छाग, जाहक (बिल्ली), तरक्षु, दुखराह द्वीपिन्, धूम्र, नग, पुरुषमृग, पुरुषहस्तिन्, पृषत मकर, मार्कस रासभ रुरु, वारण वृक शश शुक्लदत, श्वान, सिंह सूकर शृगाल हय हरिण व हस्तिन् [208] पशुओ की भाति अनक पक्षियो के नाम भी वदिक साहित्य म मिलते हैं वे इस प्रकार हैं —उलूक कपिजल, कपोत कलविंक किकिदीवि, कुक्कुट, कुटरु, कुपीतक इक्ष्वाकु क्रौंच, गृध्र, द्रविड (कठफोडवा) दूवाक्ष, पिक बलाका महासुपण, लाव सारि श्येन, हस व मयूर [209] इन नामो की उपस्थिति इस बात का प्रमाण है कि प्रारम्भिक समय स ही मानव व पशु पक्षी का सयोग रहा है इस सयोग का फल पशु पक्षियो के प्रति मानव का प्रमाधिक्य है

वदिक साहित्योपरान्त वीर काव्य साहित्य के आदि काव्य वाल्मीकि रामायण की रचना तो कवि के हृदय मे क्रौंच पक्षी के प्रति सहानुभूति के कारण ही हुयी है एक बार वाल्मीकि वन मे विचरण कर रहे थे, उसी समय एक निषाद ने पुरुष क्रौंच को मार डाला उसे खून मे लथपथ देखकर उसकी भार्या ने करुण क्रन्दन किया इस प्रकार निषाद के हाथों स विनिष्ट क्रौंच को देखकर धर्मात्मा वाल्मीकि का ऋषि हृदय करुणा स भर गया और उन्होने इस अधम के प्रति कहा—'हे निषाद ! तुमने काममोहित जोडे मे से एक को मारा है अत शाश्वत

208 व० इ० भा० 2 पृ० 571

209 यथोपरि पृ० 573

युगो तक तुम प्रतिष्ठा प्राप्त नही कर सकोगे शापोदन के पश्चात् ऋषि के मन मे विचार आया कि एक पक्षी के लिये शोकात होकर उन्होने यह क्या कर डाला? स्नानापरान्त उन्होने शाप सम्बन्धी श्लोक पर पुन पुन विचार किया। तदनन्तर वाल्मीकि आश्रम म ब्रह्माजी आये तब ऋषि ने मन म सोचा कि उस निषाद की बुद्धि ने वैरभाव ग्रहण कर लिया था इसी कारण तो उसने उस प्रियवाणी एव मनोहर पक्षी का अकारण वध किया इस प्रकार मन ही मन वे मुनि अत्यन्त व्याकुल हुये तब ब्रह्माजी न मुनि से कहा—हे मुनि! तुम्हारा वह वाक्य श्लोक ही था अब इस विषय मे आपको अधिक विचार नही करते हुये भगवान राम के चरित्र का गान करना चाहिये[210] इस प्रकार वाल्मीकि रामायण की रचना का प्रमुख कारण पक्षी–प्रेम रहा है अत सिद्ध है कि प्राचीन समय मे मानव को पशु–पक्षियो के प्रति प्रेम रहा है इस वर्णन से यह भी प्रमाणित होता है कि कवि की अवलोकन शक्ति अत्यन्त तीव्र होती है, तभी तो महामुनि वाल्मीकि ने क्रौंच रुदन का इतना कारुणिक वर्णन प्रस्तुत किया वाल्मीकि रामायण में क्रौंच के अतिरिक्त अनेक स्थल ऐसे हैं जिनमे मानव व पशु–पक्षी के प्रेम के प्रमाण मिलते हैं उन सबका वर्णन करना तो यहा सम्भव नहा किन्तु उनम से कतिपय इस प्रकार हैं—

(I) ऋक्ष एव वानरो की उत्पत्ति (II) गीधराज के दर्शन (III) जटायु का दाहसंस्कार (IV) सुग्रीव से मित्रता (V) राम के वन गमन पर अश्व का दु खी होना एव (VI) राम व श्वान का वार्तालाप[211]

इन सभी वर्णनो स पशु–पक्षी के प्रति अनुराग के स्पष्ट दर्शन होते हैं आदि कवि की अवलोकन शक्ति भी अत्यन्त तीव्र थी, तभी तो उनके काव्य म निम्नलिखित पशु–पक्षियो से सम्बन्धित प्रकरण मिलते हैं—उष्ट्र ऋक्ष खर, गज गवय, धेनु गोलाङ्गूल, चमर, विडाल, महिष, मृग मेष, रुरु वानर वृषभ व्याघ्र, शश, शृगाल, श्वान, सिंह, उलूक कक, कीर, क्रौंच, गध्र, चक्रवाक, पुस्कोकिल, मयूर, वायस, एव सारस[212]

वाल्मीकि रामायण की भाति महाभारत म भी अनेकानेक पशु–पक्षियो के वर्णन मिलते हैं महाभारत की कथा म सीधे रूप मे पशु–पक्षियों का अधिक वर्णन नहीं किन्तु वहा विभिन्न प्रसगो मे समय समय पर अनेक पशु पक्षियो का नामोल्लेख किया गया है वन पर्व मे कामाख्य वन के प्रसग मे व द्रोण पर्व, कर्ण-पर्व, शल्य-पर्व

---

210 वा० रा०, बा० 2 20–32

211 पयोपरि 17/1–37, 3/67 68, 4/5 2/59/1, 15,6/2/1–3

212 वाल्मीकि रामायण कोश–वर्मा परिशिष्ट 1

मे युद्ध के विभिन्न प्रसगो मे अनेक पशु–पक्षियो के उल्लेख मिलते हैं अश्वमेध पव तो अश्व से सम्बन्धित है ही इसके अतिरिक्त महाभारत म निम्नलिखित पशु–पक्षियो से सम्बन्धित प्रसग मिलते हैं गज, अश्व, धेनु मृग, सिंह, व्याघ्र श्वान, सूकर, मार्जार मयूर, हस, चक्रवाक, कोकिल गृध गरुड, कपोत, कुररी शुक, उलूक, सारिका, काक व बक इस प्रकार भगवान् वेदव्यास भी पशु–पक्षियो के वर्णन मे रुचि रखते थे

यहा प्राचीन काव्यो म पशु–पक्षी के उदाहरणो पर हमने विचार किया पशु–पक्षियो के सामीप्य व प्रेमाधिक्य के अनेक वर्णन सस्कृत काव्यो म विद्यमान हैं। उन सबका विस्तृत वर्णन हम अध्याय व ४ म करेंगे

## साहित्यिक एव वैज्ञानिक दृष्टि मे अन्तर

विश्व मे अनेक प्रकार के विद्वान है उनमे साहित्यकार एव वैज्ञानिक दो प्रमुख हैं सौन्दय का भावात्मक विश्लेषण करने वाला विचारक साहित्यकार एव किसी वस्तु का तथ्यात्मक विश्लेषण करने वाला विचारक वैज्ञानिक कहा जाता है

पशु पक्षियो के वर्णन मे साहित्यकार एव वैज्ञानिक दोनो ने अपना सहयोग दिया है और इसी कारण हमे दो प्रकार की दिशायें मिलती है —

१ वैज्ञानिक दृष्टि

२ साहित्यिक दृष्टि

इस अध्याय म हम इन दोनो दिशाओ पर कतिपय विचार करेंगे ताकि पशु पक्षियो के वर्णन के वास्तविक महत्व पर कुछ विचार कर सकें

वैज्ञानिक वह विचारक है जो पशु या पक्षी का बाह्यरूप प्रदर्शित करता है एव सत्य की खोज मे तत्पर रहता है वह आकृति, गुण स्वभाव, योग, क्रिया, विश्लेषण, व विभाजन के आधार पर सत्य को पाने का प्रयास करता है। उदाहरण क लिये यदि उसे गज का वर्णन प्रस्तुत करना है तो वह कुछ इस प्रकार लिखेगा गज मेरुदण्डीय उप जगत के मेरु पृष्ठीय विभाग के, स्तनप्राणी श्रेणी के गज उपवग के गज परिवार के गज वश क गज जाति का प्राणी है। गज उन प्राणियो मे है जो अब भी जगलो मे बहुतायत से मिलते है गज भारत, मलाया, वर्मा व चीन में पाया जाता है। गज ८–१० फीट ऊचा होता है इसका रग कलछौंह सिलेटी होता है। हाथी की उम्र भी वष तक होती है मादा सितम्बर–नवम्बर के मध्य बच्चा देती है इत्यादि इत्यादि

अत वैज्ञानिक का वर्णन वास्तविक होता है, तथ्यो पर आधारित एव विश्लेषणात्मक होता है

दूसरी ओर साहित्यकार सौन्दय के वशीभूत होकर वस्तु का भावात्मक वणन प्रस्तुत करता है साहित्यकार सत्य का भावो के साथ तदात्म्य स्थापन करता है वह प्रकृति के किसी भी भाग को निर्जीव नही मानता यदि कवि को किसी पुष्प का वणन करने को कहा जाय, तो उसे कली म नारी का रूप दिखलायी देगा एक प्रफुल्लित पुष्प को देखकर उसका मन रोमांच कर उठेगा, तो पददलित पुष्प को देखकर कराहने लगेगा और उसकी सहानुभूति म उसकी लेखनी चल पडेगी इस प्रकार काव्यकार नग्न सत्य का उपासक नही होता

साहित्यकार को हाथी की सू ड म नारी की जाघ के दशन होते हैं अश्व के खुरो से निकलने वाली धूल भगवान् भास्कर के चरण से निकली गगा की धारा प्रतीत होती है, तो मृग के टेढे सीगो मे नदी की वक्रता उसे कामिनी की चाल म हस की गति एव ध्वनि मे पायल व करधनी की झकार निकलती प्रतीत होती है और कबूतर की हु कार म 'घु' सना

पर तु वनानिक को न तो कली म नारी के दशन ही होते हैं एव न पुष्प को देखकर वह रोमांचित ही होता है वह तो पुष्प को तोड कर उसकी प खुडिया, प खुडिया, नली पराग–केसर, मधु व रस, को अलग अलग निकाल कर उनका विश्लेषण करता है कि उनम कौन–कौन से पदाथ के कौन कौन से तत्व विद्यमान हैं

अत वनानिक हर वस्तु को सत्यता की कसौटी पर कसता है उसे कोरी कल्पना अपेक्षित नही कि तु साहित्यकार सत्यता क साथ-साथ भावात्मक विचारो को भी स्थान देता है वह कल्पना की ऊ ची उडान भरता है यहा तक कि यदा कदा वह सत्यता से परे हटकर भी केवल भावो म बह जाता है

इस प्रकार हमने पशु–पक्षी के प्रति मानव के प्रेमाधिक्य व काव्य मे प्रकृति चित्रण पर कुछ विचार किया अगले दो अध्यायो मे हम पशु-पक्षियो का वज्ञानिक एव काव्यात्मक वणन प्रस्तुत करेंगे

# पशु–जगत
## (Animal–Kingdom)

# ३ | गज
## THE ELEPHANT

धर्मारण्य प्रविशति गज स्य दनालोकभोत
—शाकुन्तलम् ।

सम्पूर्ण-सस्कृत साहित्य मे वर्णित पशु–वर्ग में गज का प्रमुख स्थान रहा है वदिक-काल से लेकर काव्यो तक गज के वर्णन की अविरल धारा प्रवाहित होती रही है वदिक साहित्य मे इभ [1], गज [2], नाग [3], वारण,[4] शुक्ल दन्त,[5] व हस्तिन्[6] शब्दो का प्रयोग गज के अर्थ से अनेकधा हुआ है रामायण व महाभारत म गज को हस्तिन्[7] व नाग शब्दो से कहा गया है अमरकोष[8] मे गज के लिए दन्ती दन्तावल, हस्तिन्, द्विरद, द्वि अनेकप, मतगज, गज, नाग कु जर, वारण करिन, इभ, स्तम्बेरम, पद्मी, यूथनाथ व यूथप शब्दो का उल्लेख है [9]

वैज्ञानिक गज को मेरुदण्डीय–उप जगत् के अन्तगत स्तनपोषी प्राणी श्रेणी मे गज–उपवग के गज-परिवार का सदस्य मानते हैं [10] गज ससार के विभिन्न भागो म पाया जाने वाला पशु है यह मुख्यत भारत, वर्मा लका, मलाया एव अफ्रीका मे पाया जाता है यह प्रमय घास–युक्त घाटियो मे रहने वाला पशु है

भारत म हिमालय की घाटियो, मध्यप्रदेश के वनो, मसूर व आसाम मे   २

---

1 ऋक० 1/84/17, त०स 1/2/14/1
2 अ ब्रा 1/39
3 श ब्रा 11/2/7/12
4 ऋक० 8/33/8, 10/40/4
5 ए ब्रा 8/23/3
6 ऋक० 1/64/7
7 हस्ति हस्ते बिभृ दितान् वा० रा० अर० 11/77
8 'बल नाग सहस्रस्या–ययोपरि 38/1
9 दन्ती दन्तावलो हस्ती द्विरदोऽनेकधो द्विप ।
मतगजो गजो नाग कु जरो वारण करी ॥
इभ स्तम्बेरम पद्मी यूथनाथस्तु यूथप इत्यमर (क्षत्रवर्ग)
10 जीव जगत पृ 631

अतिरिक्त गज दक्षिण भारत की घाटियां और सुन्दरवन में भी देखा गया है किन्तु आजकल गज का अभाव स्पष्ट देखने में आता है धीरे-धीरे गज कम होते चले जा रहे है इसका पालन बडा कठिन होता चला जा रहा है

आज के इस वैज्ञानिक-युग में गज का मानव के कार्य-कलापो मे विशेष स्थान नही रहा है फिर भी अजायबघरो व प्रसिद्ध राजघरानो में गज अब भी उपलब्ध होते है किन्तु वे विरल हैं रामायण के अरण्यकाण्ड में ऐरावत की उत्पत्ति पर विचार करते हुए उसे इरावती नाम की कन्या से उत्पन्न माना गया है [11] गज का रंग सामान्यत कलछोंह सिलेटी होता है इसका चर्म मटियाले रंग का होता है एवं सूक्ष्म बालो से ढका रहता है

हर दिशा का एक गज माना गया है इसी कारण संस्कृत-साहित्य मे "दिग्गज शब्द का अनेक बार उल्लेख है ऐरावत पुण्डरीक वामन कुमुद, अंजन पुष्पदंत सार्वभौम एवं सुप्रतीक ये आठ दिग्गज माने गये हैं, जो आठो दिशाओ को रोके हुए हैं [12] गज समूह में रहने वाला जीव है विश्व के विशालकाय जीवो में गज का प्रमुख स्थान है यह भूतल के शक्तिशाली पशुओ में से है इसका शरीर मोटी चर्म से ढका होता है जो इसे सर्दी से बचाती है गज सर्दी से सर्वदा अपनी रक्षा करता है इसकी आखो पर पाच इंच तक लम्बे बाल होते है इसकी पूंछ एक लम्बी रस्सी के समान होती है हाथी के कान विशाल होते है हिन्दी कवियो ने हाथी के कान की सूप से तुलना की है गज का मस्तिष्क छोटा होता है गज के १२ दांत काम मे आते हैं पूरे जीवन में इसके २४ दांत आते हैं जिनमें पहले दांत दूध के होते हैं

हाथी के दो दांत बाहर की ओर निकले होते हैं इनकी अधिकतम लम्बाई ८ फीट होती है सामान्यत हाथी की ऊंचाई ९ फीट से १० फीट तक होती है हथिनी की ऊंचाई ८ फीट ही होती है [13] अफ्रीका के गज भारतीय गजो से अधिक ऊंचे

---

11 ततस्त्विरावती नाम जज्ञे भद्रमदासुताम ।
तस्या स्त्वैरावत पुत्रो लोकनाथ महागज ।

—वा० रा० अर० 14/24–25

12 ऐरावत पुण्डरीको वामन कुमुदोऽजन ।
पुष्पदन्त सार्वभौम सुप्रतीकश्च दिग्गजा ।

—इत्यमर (स्वर्ग वर्ग)

13 ए० विश्व० प० 629

होते हैं गज की जीभ उल्टी होती है हाथी की आखें आकार मे छोटी होती है एव इसकी नेत्र ज्योति कमजोर होती है गज की श्रवण शक्ति अत्यन्त तीव्र होती है इसकी घ्राणशक्ति भी कम तीव्र नही होती है[14] गज के पैर लम्बे एव गोल होते हैं

गज एक समझदार जीव है वह अपने शत्रु एव मित्र को अच्छी तरह से पहचानता है वह अपने मित्रो का एक आदर्श मित्र है एव शत्रु का सबसे बडा शत्रु यह अपने सवार को वृक्ष की शाखाओ से बचाकर चलता है गज की चाल ६ से ८ मील प्रति घटा होती है गज सदा सीधे रास्ते पर चलता है अफ्रीका के अनेक पक्के मार्ग गजो के चलने के मार्गों के आधार पर बनाये गये हैं गज के शयन का ढग विचित्र होता है शयन–काल मे यह एक स्तम्भ की तरह निश्चल खडा रहता है इसके शयन का समय सामान्यत दिन में ११ से ३ बजे तक एव रात्रि म १० से ३ बजे तक है

गज एक शाकाहारी जीव है यह पेडो की पत्तिया फल केले मक्का सभी अनाज एव पके धान का मुट्ठा खाना पसद करता है। गज को दिन भर म १५० पौंड घास व ५० गैलन पानी चाहिये गज एक कामी पशु है वह रति क्रीडा के लिए हथिनी को किसी एकान्त स्थान म ले जाता है हथिनी के कामज्वर का कोई निश्चित समय नही होता है हथिनी वय मे किसी भी मास म गर्भवती हो सकती है गर्भधारण की अवधि लगभग २१ मास होती है[15] इक्कीस मास म बच्चा परिपक्व हो जाता है गज हथिनी के प्रति अपनी सूड से प्यार प्रदर्शित करता है हथिनी एक बार म एक ही गज–शावक को जन्म देती है
गज का बच्चा जन्म के समय छोटे–छोटे काले बालो से घिरा रहता है[16] इस समय उसका वजन करीब २०० पौंड या एक क्विण्टल एव ऊँचाई ३ से ४ फीट के बीच होती है यह १४ साल मे जवान होता है

गज का पालन एक कठिन कार्य है पालने से पूर्व यह पूर्णत भयकर एव जगली होता है इसको पकडने के लिए एक गड्ढा बनाया जाता है जिसे घास–फूस से इस प्रकार ढक दिया जाता है कि वह हाथी को आसानी से दिखलाई न दें जब *हाथी वन वन मे जाता है तो अचानक गड्ढे म गिर जाता है इसके* पश्चात उसे आज्ञाकारी बनाने के लिए अनेक यातनायें दी जाती है धीरे–धीरे गज की आदतो म

---

14 द० स० ए० भाग–2 पृष्ठ 32/ ए० किंग पृ० 629

15 यथोपरि०

16 ए० किंग पृष्ठ 629

परिवर्तन आ जाता है और वह अत्यन्त सीधा व पालतू बन जाता है जिस खड्डे में उन्हें पकड़ा जाता है उसे 'पेडा' कहते हैं इसका व्यास २० फीट से ५० फीट तक होता है गज को पकड़ने का एक और भी तरीका है चतुर एवं अनुभवी महावत पालतू हथिनियों पर सवार होकर वन में जाते हैं एवं हथिनियों को गज के पास छोड़ देते हैं हथिनी के सम्पर्क से गज को रात-दिन जागृत रखा जाता है एवं बाद में गज को हथिनी पर विश्वास हो जाता है और ज्योंही वह सोता है, उसे साँकलों से जकड़ दिया जाता है गज के बच्चे को पकड़ना आसान होता है, अत उसे बचपन ही में हथिनी से बचाकर पकड़ा जाता है पालतू हाथी राजसी सवारी का एक उत्तम साधन है राष्ट्रीय त्यौहारों पर हाथियों को सजाकर जुलूस में ले जाया जाता है आसाम के वनों में हाथी लठ्ठे ढोता है एवं गाड़ी खींचता है इस प्रकार मानव-कल्याण में गज का महत्त्वपूर्ण स्थान है मृत्यु के पश्चात् उसके दाँतों से चूड़ियाँ कंघे, एवं आभूषण बनाये जाते हैं

## संस्कृत काव्यों में गज

संस्कृत-काव्यों में गज का सर्वदा प्रमुख स्थान रहा है सभी काव्यकारों ने गज का विभिन्न रूपों में वर्णन किया है अब हम गज की काव्यगत विशेषताओं का विस्तृत विवेचन करेंगे संस्कृत काव्यों में गज को इभ 17 करी, 18 करीन्द्र 19 कुञ्जर 20 गजपति 21 गजेन्द्र 22 द्विप 23 द्विपेन्द्र 24 दन्तिन, 25 द्विरद 26 मातंग 27 नाग 28 वारण, 29 विषाणिन् 30 व

---

17 किरात॰ 6/11
18 रघु॰ 3/57
19 कुमार॰ 14/14
20 कु॰ स॰ 211
21 किरात 7/31
22 किरात॰ 7/37
23 रघु॰ 2/37
24 रघु॰ 3/32
25 रघु॰ 1/71
26 कुमार॰ 8/64
27 शिशु॰ 6/50
28 रघु॰ 4/23
29 किरात॰ 8/22
30 किरात॰ 15/16

हस्तिन्[31] नामों से सम्बोधित किया है राज-भवनों के दरवाजों पर हाथी महल कि रक्षा के लिए रखे जाते थे[32] महात्माओं व आश्रमों में भी हाथी निवास करते थे[33] आश्रमों में राजकुमारों को गज से सम्बन्धित विद्याओं का ज्ञान करवाया जाता था राजकुमार चन्द्रापीड ने भी गज के बारे में शिक्षा प्राप्त की थी[34] इतना ही नहीं हाथियों का प्राचीन समय में धन माना जाता था एवं इनकी वृद्धि की कामना की जाती थी[35]

संस्कृत-साहित्य के विभिन्न कवियों के वर्णनों में यह ज्ञात होता है कि प्राचीन समय विभिन्न हाथियों को उनके गुण या कर्मानुसार नाम दिये जाते थे।

ऐरावत गज विशेष—ऐरावत इन्द्र का हाथी माना गया है ऐरावत का रंग श्वेत है एवं वह अन्य हाथियों से अधिक बलशाली माना गया है चार दांत होते हैं। इसकी उत्पत्ति समुद्र-मन्थन के समय हुई थी और यह इन्द्र को दे दिया गया था इसी कारण इसे इन्द्रवाहन कहते हैं [illegible] इन्द्र-वाहन समुद्र तथा धव एरावत लिखकर ऐरावत के समुद्र से उत्पन्न होने की पुष्टि की है रघुवंश महाकाव्य में दिलीप को ऐरावत कहा है[36] इस प्रकार ऐरावत गजों में गजेन्द्र है बुद्ध चरित में भी श्वेत हाथी का उल्लेख किया है जो सम्भवत ऐरावत का ही निर्देश करता है[37] वासवदत्ता में भी ऐरावत का वर्णन मिलता है[38] यहां ऐरावत का जल से सम्पर्क बताया गया है कादम्बरी में ऐरावत के समान बलशाली गज गन्धमादन[39] हर्षचरित में [illegible][40] तथा गजपुर्वीय शास्त्र में गम्भीरवेदी गजों का उल्लेख किया गया है हाथी मदन से मस्त हुए

---

31 कुमार० 8/64

32 'कपिलवस्तु हयगजस्मौघसकुलम्। सौ० न० 3/1

33 मातंग कुलाध्यासितमपिपवित्रम्। कादम्बरी पृ० । 125

34 हस्तिशिक्षायाम्। दन्तव्यापारे। कादम्बरी पृ० 232

35 'गजाश्वभिगे वृद्धिम बु० च० 211

36 विद्युतेरावताविव। रघु० 1/36

37 सित दर्दश द्विपराजमेकम। बु० च० 1/4
मातंग श्वेता। यथोपरि 13/2

38 ऐरावतकपोलकषणकम्पिततटगतहरिचन्दनसपर्दमानमणुभिर्कतम्पिसा।
वासवदत्ता पृ० 94

39 शन शनग धमादन करिण द्रष्टुमयासीत्। कादम्बरी पृ० 604

40 भद्र। श्रूयते दर्पशात ह० च० पृ० 110

जाने रक्त निकल जाने तथा मांस बाहर हो जाने पर भी अपने को नहीं सम्भालता, उसे 'गम्भीरवेदी' गज कहा गया है अन्य लोगों के मत में गम्भीरवेदी गज वह है, जो चिर परिचित शिक्षा को भी बहुत विलम्ब से ग्रहण करता है ये दोनों ही गुण एक गज में हो सकते हैं अतः दोनों ही मतों में सार्थकता है प्रथम मत के अनुसार शारीरिक वेदना को सहन करना बतलाया गया है एवं दूसरे मत में मानसिक शक्ति की अल्पता पर विचार किया गया है यदि साथ व्यवहार के आधार पर इन दोनों बातों पर चिन्तन करें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि गज में प्राय बुद्धिमान जीव लड़ाकू नहीं होते एवं लड़ाकू जीव विशेष बुद्धिमान नहीं होते अतः इन दोनों मतों में सत्यता की झलक है दशकुमार चरित में क्रोध में आकर राजा ने गज को कीट कहा है [41] करीब करीब इसी बात की पुष्टि हर्षचरित में की गई है।[42] गज समुदाय में रहने वाला जीव है पालतू गजों के अतिरिक्त यह प्राय समुदाय में ही मिलता है [43]

गज के क्रिया-कलाप—गज एक समझदार जीव है गज अनुशासनशील व आज्ञाकारी होता है वह एक समझदार विद्यार्थी की तरह आज्ञा का पालन करता है [44] यह सदा कतार में चलता है यह उसकी स्वाभाविक क्रिया है हाथी समयानुसार सुख व दुःख को प्रकट करता है दुःखी हाथी बेचैन सा होकर अपने खाद्य तक को तज देता है [45] विक्रमोवशीयम् में कालिदास ने हथिनी के विरही हाथी का सुन्दर वर्णन किया है [46] क्रोध आने पर हाथी समझदारी को तज देता है और अपने प्रतिबिम्ब को जल में देखकर उसे मारने के लिए सक्रोध दौड़ता है एवं खूँटे को उखाड़ देता है [47] सोये हुए गज को प्रातः हथिनी जगाती है यह एक

41 अपसरतु द्विप कीट०ध । द० च० पृ० 310

42 करिकीटेषु । ह० च प० 93

43 यावद्वयगाहन्त न दन्तिनाम । शिशु० 2/8/58

44 गजश्चाधीतसद्विदयरछात्र तुल्यो मतानम । कु० च० 21/66

45 क्षिप्त पुरो न जगृहे मुहुस्तु काण्डम
नापेक्षतेस्म निकटोपगता करेणुम
सस्मार वारणपति परिमीलिताक्षम
इच्छा विहारवनवास महोत्सवानाम । शिशु० 5/50

46 गजपतिगहने दु खित अर्मति क्षामितवदन । विक्रम० 4/64
विचरति गजाधिपतिरावतनामा । यथोपरि 4/56

47 आस्मानमेव जलधे प्रतिबिम्बतागमूर्भोमहत्यभिमुखापतित निरीक्ष्य । क्रोधा दधावदपयोरभिह तुम यनागभियुक्त इव युक्त महो महेम । शिशु० 5/32
नलगिरि स्तम्भमुत्पादम । मेघ० प० 35

बुद्धिमान जीव ही कर सकता है [48] गज जोधावस्था म पेडो को तोड डालता है, इसका वणन शाकुन्तम म बडा सुदर किया गया है [49]

गज का आहार—गज वृक्षो की पत्तियो को खाता है हाथी वृक्षा को बहुत तोडता है इसके मुख्य दो कारण हैं-प्रथम तो यह कि वृक्षो की कोमल पत्तियाँ इसका मुख्य खाद्य है द्वितीय जोधावस्था म यह वृक्षा को तोडता है शरीर को खुजलाने मे भी वृक्ष टूट जाते हैं वृक्ष तोडने का वणन काव्यो म बहुत बढा चढा कर किया गया है [50] ऐरावत के द्वारा कमलो को क्षत विक्षत करन का वणन भी मिलता है [51] हाथी के बच्चे वडे चचल होन हैं वे खाने के साथ-साथ वक्षो को हिला भी देते हैं [52] तराई के भागो मे चन्दन के वृक्षो का बाहुल्य होना है अत हाथियो का प्रहार इन पर भी होता है [53] वृक्षो के तोडे जाने से माग अवरुद्ध हो जाते हैं एव वृक्षो के तोडे जान से सिहो की नीद मे खलल पडती है [54] इस प्रकार गज शाकाहारी प्राणी है गज सूँड से खीचकर पानी पीता है वह पहने सूँड मे पानी भर लेता है एव बाद म सूँड को मुँह म डालकर पानी को वापस छोडता है

गज की वप्रक्रीडा —वप्रक्रीडा गज की सामान्य आदतो म से है यह नदियो

---

48 करिणी-कादम्बकप्रशोध्यमान । कादम्बरी प० 79
प्रजविनागजेन । ह० च० पृ० 151

49 तीव्राघातप्रतिहततरुस्कन्धलग्नैकदन्त
पादाकृष्टव्रततिवलयासगसजातपाश । शाकु० 1/31

50 वक्षात गज भग्नाप्रसी । बु० च० 24/4, 'वनाकान्त क्रीडद्द्विरदमथितोर्वीरु-हरवे -शिशु० 5/69, भग्नद्रुमारचक्रुरितस्ततो शिशु० 12/41, 'तरोगजेरा गण्डे कषता विधूनिते । शिशु० 12/54

51 ऐरावत दशन-मुपलखण्डित-कुमुदषण्डम काद० प० 374
'समर समितोगजयूथलुलितकमलिनी-परिमल-काद० प० 83

52 इभ-कलभ-कोल्लूनवल्लववेल्लित-सवली-वलेय । काद० पृ० 384
'करिकलभ-विमुच लोलताम । ह० च० पृ० 134

53 कपोलकाष करिणामहास्पाहितशयाममस्तश्च दना । किरात० 8/12
'परिस्राष्टभग्नरिचन्दन ।-वासवदत्ता प० 64

54 गजपतिपातितपरिहारवक्रीकृतमार्गया । कादम्बरी प० 633
नवतरु भगध्वनिक्षि हरिनिद्रातस्कर करिण । ह० च० पृ० 307

के तट को गिरा देता हैं [55] कालिदास के काव्या म गज की वप्रक्रीडा पर विशेष विचार किया गया है [56] यह पवत एव कन्दराम्रो पर भी सिर पटकता है [57]

गज व उसका स्नान—गज को पानी से अत्यन्त प्रेम है [58] वह अपनी सूड मे पानी भरकर स्नान करता है [59] अच्छोद सरोवर म गज के स्नान का वणन करते हुए कहा गया है कि गज वहाँ कमलनाला को तोडता है [60] पानी म हाथी काफी समय तक पडा रहता है [61] कभी कभी तो यह पता लगाना कठिन हो जाता है कि पानी मे भौर हाथी के मद से आकर्षित होकर मण्डरा रहे हैं या कमलो की सुगन्ध से आकर्षित होकर [62] गज को पानी स इतना अधिक लगाव है कि वह महावत की परवाह न कर जल मे प्रवेश कर जाता है [63] हाथी एक तराक पशु है ऋतु सहार मे गज का वर्षा का वाहन बताया गया है, जिससे गज का जल स प्रेम होना प्रदर्शित होता है [64] कादम्बरी म गज की सूड से निकले पानी का क्षीर सागर के

---

55 वधती क्षती परिणतद्विरदकिरात० 6/7
करिभिक्षते सभवतसिभेस्समस्तते । किरात 5/7
चामीर तप्ताडनरणितरवने रवति सुरस्व तीरोघासि स्थिरमरावत । ह० च० प० २५

56 इभ–कलभ–कोलून–पल्लवेद्विधत लवलीवलय । काद० प० 384
वप्रक्रीडामृग्मवतत्तटेषु । रघु० 5/44
वप्रक्रीडापरिणतगज प्रेक्षणीय ददश । मेघ० प० 2

57 करिकलभ विमुच्य लोलताम । ह० च० प० 134
वनद्विप–दशन–दलित–काद० प० 361
क्रोटकुक्षविगिरिकु जकु जरवहत्कुम्भ—वासवदत्ता प० 80

58 स सम्पपरिभोगेण गजदान सुगन्धिता ।
कावेरी सरिता पत्यु शकनीयमिवाकरोत ।। रघु० 4/45

59 वनकरिकुलशीकरासार सिच्यमानतनव । ह० च० प० 302

60 क्वचिद्गज भजन–जजरितजर मृणालदण्डम कादम्बरी प० 374

61 करिमकरकरसकुलम। वासवदत्ता प० 234

62 जलदकाल सरसीवगन्धपरिसभ्रमरमालानुमीयमान जलमूलमग्नमुमुद पुण्डरीका । वासवदत्ता प० 95

63 तत्पूवमसन्दगस द्विपाधिपा क्षण सहला परितो जगाहिरे । शिशु० 12/72

64 ससीकराम्भोधरकुञ्जतडित्पताको शनिशब्दमदत ।
समागतो राजवदुद्धतद्युतिर्घनागम कामिजन प्रिय ।। ऋतु० 211

जल के समान शुभ्रवर्ण बताया है [65] किन्तु यह बात सर्वदा सत्य नहीं क्योंकि कई बार उसकी सूंड में कीचड़ भी होता है [66] गज के बच्चे भी पानी को बहुत चाहते हैं उनका पानी से बाहर निकाला जाने पर भी वे पानी में बारबार प्रवेश कर जाते हैं [67] गज सूंड में प्राप्त जल से धरती की प्यास बुझाने का उल्लेख भी ग्रंथों में यत्र-तत्र प्राप्त होता है [68] गज नदियों में उथल पुथल मचाकर जल का मन्थन करता है व सूंड में पानी भरकर पेड़ों पर फुहार छोड़ता है [69] हाथी स्नान के बाद कीचड़ में लोटता है एवं फिर जल में प्रवेश कर जाता है [70]

गजमद —गज के मद के विषय में संस्कृत काव्यकारों ने अनेक बातें कही हैं गज के शरीर के अनेक भागों से मद का निकलना बताया गया है शिशुपालवध में मद का सात स्थानों क्रमशः सूंड कपोलद्वय, शिश्न, गुप्त, एवं नेत्रद्वय से निकलने का वर्णन किया गया है [71] जबकि हर्षचरित में सूंड व कपोल से मद-स्रवण बताया गया है [72] मद हाथी में शक्ति का द्योतक है मद की उपस्थिति में गज अहंकारी हो जाता है जिस गज के मस्तक से अधिक मद निकलता, है उस गज को उत्तम माना जाता है एवं वह अन्य गजों का नायकत्व करता है [73] मुख्यतः मद का क्षरण कपोलों से भी

---

65 वर्तितां दिशि-दिशि करविवरविनिसृत क्षरदभि क्षीरोदवेदधवल शीकरासारै —कादम्बरी प० 357

66 हरितपासभिरामान स स्नात इव वारण । सौ० न० 15/14

67 कलभ करिण्या सलुवधतो, बहुपङ्कादिभाप्रवीतसात् जलवर्पविशेन ता पुन सरिता ग्राहवती तितीर्षति सौ० न० 8/12

68 करेणु शीकरजहोरेण स्तेज शम यशो—शिशु० 19/36
तृषित इव पिबन करिकरजलानि—कादम्बरी पृ० 351

69 पङ्क करापाहृत शैवलाशु वासमुद्गमामुदयन्प्रिया । शिशु० 17/59
'मत्तभागमण्डलकरमुक्तशीकरच्छटा इव वासवदत्ता पृ० 168
अम्बुपूर्णपुष्करपुप्रवनीकरिभिरापूर्यमाण-विटपालबालव म —कादम्बरी
विसपतागजशीकरनिकरेण—कादम्बरी पृ० 121

70 पङ्कभारोहतुकटिपूयेषु—यथोपरि पृ० 564

71 मदाम्भसा परिगलितेन सप्तधा गजा । शिशु० 17/68

72 दिग्गजेभ्य प्रकुपितानां विप्रसुताना करिणा मद हर्ष च० पृ० 7
करि पुमदविकारा —कादम्बरी
'उद्दामहार्त्तिनि —यथोपरि पृ० 3

73 गन्धेन जेतु प्रमुखागतस्य प्रतिद्विपस्येयमतगजोघ । किरात० 17/17

होना है [74] क्रोध की अवस्था मे मद का क्षरण तीव्र हो जाता है [75] क्रोध की अवस्था म गज हिलकर काय नही कर सकता ऐसे अवसरों पर वह वृक्षो को तोडता है या नदी को ढाहने लगता है [76] मद क्षरण के म य तीर लग जाने स खून मिश्रित मद लाल रग का प्रतीत होने लगता है, मानो क्रोध से मद ही लाल हो गया हो [77] गज म मद की उपस्थिति उसके युवा होने का प्रतीक माना गया है [78] यौवन मे मद स गज मे अहकार आ जाना है एव वह अकुश की भी परवाह नही करता भले ही उसे उससे शारीरिक क्षति हो रही हो [79] वह अन्य गज के मद की गध को पाकर अधिक मद बहाता है एव युद्ध म उसका मद अधिक मात्रा म बहता है [80] महाकवि कालिदास ने रघु की तुलना गज से करते हुए उन्हे मदी हाथी बताया है [81]

कादम्बरी म गज व मानव दोनों के मिश्रित रूप गणपति के गण्डस्थल स भी मद क्षरण का वणन किया है [82] वर्षा ऋतु मे कामदेव व हाथी दोनो के मद मे आधिक्य हो जाता है महाकवि बाण ने हाथी को कामदेव मानते हुये यह बताने का सफल प्रयास किया है कि हाथी एक कामी पशु है [83] गज के मदक्षरण से उसके कपोलो पर मद जल जमा होना रहना है एव उसके कपोल काले पड जाते

---

74 दानछेव करिकपोलेषु । वासवदत्ता पृ० 104

75 सेप्रोपि सानुतलमाकलनाय यत्रा नीतेन बन्यकरिदानकृताधिवास नागाजि केतलमवाजिगजेनशायी नायस्यगधमपिमत भृश सह ने ।
—शिशु० 5/42

76 नागमनीनमथवा क्रियतेमवाघे । —शिशु० 5/44

77 नागराजस्य जज्ञे दानस्याहो लोहितस्येवधारा । शि० 18/12

78 मदविकारमधमालगे—कादम्बरी उ० पृ० 580

79 प्रयास्त सुरसरिदोघहृदयर्मा सम्प्राप्तु वनगजदानगधिरोध ।
मूर्धान निहितशिताकरा विधुन्वन यशार न किरणया तकारलाग ।।
— किरात० 7/32

80 प्रायारभनसति तृष्यनापितेन द्रुतीरनिहित निवततलोचनेन । मम्पृक्त वन-करिणामदाम्बु सेकनी ये न हिममपिवारिवालोन किरात 7/34
' ववर्षे विवसहान युगमाध्य निषणिभि । शिशु० 12/46

81 कटप्रभेदेन करीपार्थिव —रघु० 3/37

82 अवगाहावनीण—गणपति—गण्डस्थल—गलित—प्रस्रवणसिक्तम ।
—कादम्बरी पृ० 379

83 मदाग भोमकरध्वज कुजरस्य । यथोपरि प० 379

है [84] उनके कपोलो पर कीचड सा जमा हो जाता है जिस पर धूल व भौरे जमा हो जाते हैं [85] घाडो की टापो से पिसे हुए लौंग के बीज हाथी के मद जल के कारण कपाल पर चिपक जाते हैं हाथी का मद प्रत्यन्त उत्कट होता है एक हाथी के मद की गध पाकर प्रन्य हाथी को क्रोध प्राता है वह और भी प्रधिक मद बहाता है [86] यदि मद का पानी से सम्पर्क हो जाता है तो वह जल मद की गध से युक्त हो जाता है [87]

महाकवि बाण ने लक्ष्मी निन्दा करते हुए कहा है कि लक्ष्मी सेना मे हाथियों से सम्पर्क मे प्राती है और हाथियो के मद से मस्त होकर वह एक स्थान पर स्थिर नही रह सकती [88] इस प्रकार का विचार श्रीहर्ष के नषध म भी मिलता है भील जाति एक जगली जाति है एव गजमद ही उसके लिए सुगन्धित लेप है जबकि सभ्य समाज इस मद को पसद नहीं करता एव इससे दूर भागता है [89] गज के मद

---

84 मदसतिश्यातिगण्डलेखा । किरात० 16/2
'मदजलम चाकतगण्डकाभे मुचकुन्दकाण्डकघ्यमानानि शकरकरिकरटविकट कण्डूगिता । वासवदत्ता । पृ० 232

85 गण्डस्थलाधमगल-मदोदक । शिशु० 12/64
'प्रतिनिवह इव चुम्बन मदलेखाम—कादम्बरी पृ० 352
इभभण्ड डिण्डिमाना मधुलिहा—यथोपरि पृ० 80
मदजलमलिनेन द्वितीयनेव मणाचाभरेण कपोलतलदोलाम मानेन मधु करकुलेनालह क्रियमाणेन । यथोपरि पृ० 266
'प्रतिवहलमद जाल शवलकरतटकटितनिभतित मधुकर कनकर विरतिरति करम । वासव० पृ० 243
'प्रयोपरिष्टादभ्रमरभमङ्गि प्रावसूचितान्त सलिलप्रवेश —रघु० 5/43
स सज्जुवक्षुण्णनामेलामुत्पतिष्णव रघु० 5/43
तुल्यगन्धिषु मुत्तेभकटेषु फलरेणव यथोपरि 4/47

86 प्रसवे ० रघु० 4/23
रघु० 5/47

87 स सन्य० रघु० 4/45
तस्यास्तिवते माघ० पृ० 21

88 प्रानन० नषध । 13/3
विविध गन्ध० कादम्बरी पृ० 323

89 वनगज० कादम्बरी पृ० 99

कल्पना मात्र है गज के मद के अधिक बहने मात्र को प्रकट करने के लिए कवि ने यह सब लिखा है [90] युद्ध में जाते वाले हाथियों में मद से धूल गीली हो जाती है एवं कीचड उत्पन्न करती है इससे एक प्रकार की गन्दगी उत्पन्न हो जाती है [91]

प्रजनन —गज एक कामी पशु है पशुओं में रीछ के बाद काम क्रीडा में इसका प्रथम स्थान है महाकवि कालीदास ने अग्निवर्ण का हाथी एवं उसकी स्त्रियों को हथिनी कहकर इनकी कामक्रीडा का वर्णन प्रस्तुत किया है इससे यह ज्ञात होता है कि गज व राजा दोनों ही सामान्यत अधिक कामुक होते हैं [92] कामी गज जब हथिनी को देख लेता है तो वह महावत की परवाह नहीं करता [93] गज की काम क्रीडा जल में भी होती है जिसे जलकेलि कहा जाता है कामी हाथी हथिनी के साथ किसी एकान्त स्थान का चयन करता है एवं अपने समूह को छोडकर एकान्त में रति-क्रीडा करता है हथिनी के वियोग में गज रोता हुआ विछोह की आग में जलता हुआ एवं आँसू बहाता हुआ बताया गया है [94]

गज नियन्त्रण —गज पर नियन्त्रण करना एक सरल काम नहीं है अत मानव ने इस पर नियन्त्रण करने के लिए अकुश नामक लोहे के उपकरण का निर्माण लिखा है कि विशाल हाथियों का मद इतना अधिक बहता है कि उस मद के गिरने से नदी में पानी की मात्रा बढ जाती है और नदी में बाढ आ जाती है परन्तु यह कवि की की मात्रा का सभी कवियों ने बढा चढाकर वर्णन किया है महाकवि कालिदास ने

---

90 कुमार० 14/43

91 गिरि च० कादम्बरी पृ० 368
तमालपल्लव० किरात० 7/38
करिकपोला० कादम्बरी पृ० 73
मदपयासि—कादम्बरी पृ० 350
'तस्य द्विपाना० रघु० । 16/ 0

92 रघु० 19/11
यथोपरि 16/68

93 अन्वेतुकामो० शिशु० 12/16

94 अधिकक दुनमानस कानेन भ्रमति गजेन्द्र विक्रम० 4/28
'करिणीविरहसतापित ० यथोपरि 4/43
'प्रियतमदर्शन लालसो गजवरो विस्मितमानहा' यथो० 4/19
'हरोत्सारित० यथोपरि 1/23

किया अनुभवी महावत अंकुश के प्रहार गजा पर नियंत्रण करते हैं[95] हाथी को लोह व सीकड़ों में निश्चल करने का उल्लेख भी मिलता है[96] हाथी को विशाल वृक्षों से बांध दिया जाता है[97] अनेक बार अंकुश के द्वारा भी गज वश में नहीं आता भले ही उसके मस्तक से मद के साथ साथ रक्त भी बहने लगे इससे यह सिद्ध होता है कि बलवान् बलात्कार से भी वश में नहीं होता[98] अंकुश के पुराने हो जाने पर गज उससे अधिक प्रभावित नहीं होता, ऐसी अवस्था में उसे नवीन तीक्ष्ण अंकुश से आगे बढ़ने से रोका जाता है[99] महाकवि अश्वघोष ने वचनरूपी अंकुश का वर्णन किया है किन्तु वह मनुष्य को रोकने में समर्थ है गज को रोकने में नहीं[100] इस प्रकार अंकुश से गज पर नियंत्रण किया जाता है जैसा कि हम पहले बता चुके हैं कि गज की दृष्टि कमजोर व आँखें शरीर की तुलना में छोटी होती हैं लोक में कहा जाता है कि आँख छोटी होने से हाथी को मनुष्य का आकार वस्तुतः बड़ा लगता है और इस कारण वह मनुष्य से डरता है लोक में यह भी प्रसिद्ध है कि गज के मस्तक पर किया गया अंकुश का घाव तुरन्त वापस भर जाता है। अनुभव के आधार पर केवल यही कहा जा सकता है कि घाव तुरन्त नहीं पर कम समय में ठीक हो जाता है।

गज का बोलना—गज का बोलना 'चिंघाड़ना' कहलाता है हाथी सामान्यतः दो अवस्थाओं में चिंघाड़ता है वे अवस्थायें हैं—प्रसन्नता एवं क्रोध सेना के हाथी बहुधा चिंघाड़ते हैं[101] हाथी के बच्चे अधिक चंचल होने के कारण अधिक चिंघाड़ते हैं[102] जलकेलि के समय गज चिंघाड़ते हैं[103] गज के चिंघाड़न

---

95 वाहयन्त गज भूतास्च बलीयांसोऽपि दुर्बलैः।
अंकुशाश्लिष्ट मूर्धानस्ताडिता पादपार्ष्णिभिः ॥ कु० च० 14/24

96 तनुरायति शालिनी महावेगज मंकुशमिनिश्चल चकार। शिशु० 20/51

97 एकान विशाल शिरसो हरिचन्दनेमूनागान व बन्धु। शिशु० 5/45

98 शिशु० 5/41

99 निश्चल दधतान्यमंकुशम।
मूर्धानिमूर्ध्वायतदन्तमण्डलं ध्रुवमंसेधि द्विरदो निषादिना। शिशु० 12/12

100 निर्वतितस्तद् घनांकुशेन दर्पान्वितो नाग इवांकुशेन। सौ० न० 17/64

101 बहिलेर्दन्तिनां बु० च० 28/4
ववहिरे गज घतयो। शिशु० 17/31
महागजाना मुहुरिस्तु गर्जित। कुमार० 14/42

102 इह मुहुमुहित ० शिशु० 4/60

103 सलीलमुक्षिप्त० ह० च० पृ० 219

को कवियों ने क्रमश मेघ व गर्जना वज्रपात व रण व दुन्दुभि की ध्वनि के समान बताया है गज का चिंघाड़ना वज्र से भी भयानक कहा गया है[104] कष्ट में हाथी का चीत्कार दुःख विस्तारक होता है ऐसी दशा में गज सूंड को ऊपर उठा कर रोता है[105] परन्तु गज अपना दुःख प्रकट करने के लिए चिंघाड़ता है गज की मृत्यु पर हथिनी अथवा हस्तिनी चीत्कार करती है[106] तब गज दूसरे गज को देखकर भी चिंघाड़ता है तब विनाश को प्रदर्शित करता है युद्ध में शरीर का अंग कट जाने पर गज भयंकर चीत्कार करता है पागल हो जाने पर भी हाथी चिंघाड़ता हुआ इधर उधर दौड़ता रहता है

उत्सवों में गज —उत्सवों में गज एक आवश्यक अंग माना जाता था राजश्री के विवाहोत्सव पर गज धन के रूप में दिये गये थे[107] गज राजा महाराजाओं के द्वार पर खड़े रहते थे बड़े-बड़े उत्सवों पर हाथियों को एकत्रित किया जाता था विवाहोत्सव पर दूल्हा गज की सवारी करता है गज पर नगाड़े भेरी आदि का वादन होता है एवं बरात उसके पीछे-पीछे चलती है वर्तमान में भी स्वतन्त्रता दिवस या अन्य राष्ट्रीय दिवसों पर गज को सजाया जाता है सजाने से पूर्व घास के लम्बे गुच्छों से गज की पीठ को साफ किया जाता है एवं उस पर कमाये हुए चमड़े की खोल डाल दी जाती है[108] हाथियों पर घंटे लटका दिये जाते हैं जिनकी टंकार कटु होती है[109] हाथियों को गैरिक पंक से सजाया जाता है व कानों में शंख व चमर लटकाये जाते हैं विवाहोत्सवों पर गज को स्वर्णाभूषणों से सुशोभित किया जाता

---

104 गभीरमेघ० किरात० 7/39
'वारिधरधीरवारण वनि हृष्टकूजितकला कपालिन । शिशु० 13/5
निर्घातघात० कादम्बरी पृ० 348
गजेन्द्रगजानारथमण्डल० शिशु० 12/15
'गजस्यतिरोधितम । प्रलयान्ते करालस्य कालस्येव भयानकम ।।
बु० च० 21/45

105 सत्रस्त यूथनमुक्ता० कादम्बरी पृ० 85

106 पीड्यमान० ह० च० पृ० 364

107 निहर घूर्णमिला वियोगिनीनामनुगतकलभोश्च० कादम्बरी पृ० 86
'योग्यमातगतुरे तरगितांगनम । ह० च० पृ० 243

108 घासधूलकप्रहार प्रमृष्ट० ह० च० पृ० 363

109 करिघटाघटमानघटाटाकार क्रियमाणकण ज्वरे—ह० च० पृ० 364
आगच्छतो नूचि गजस्य घटयो—शिशु० 12/34
महाचमू स्यन्दनो० कुमार० 14/26

है 110 गज पर चित्रकारी का उल्लेख भी मिलता है हाथी को धपधपान से उसका चम कटा पड जाता है एव उस पर चित्रकारी करती जाती है 111 गज की सूड पर ग्र कित बुन्दियो से भोजपत्र की बुदकिया का साम्य बताया गया है 112 भगवान शकर द्वारा पहना गया गज चम ह्मो के जोडा से चित्रित था 113 गज की पवत से तुलना करते हुए गज पर चित्रकारी का उल्लेख महाकवि कालिदास ने कुमारसम्भव म किया है 14 ग्राभूपणयुक्त हाथियो के ग्राभूपण शाम के समय उतार लिये जाते है 115

गज एव उत्तम सवारी—मानव एव विकसित मस्तिष्क का प्राणी है इसी कारण विशालकाय गज भी उसकी सवारी का साधन बन गया है एव छोटा बच्चा भी हाथी की सवारी करने म समथ हो सकता है 116 गज एक शाही सवारी है गज पर बैठने के लिए लकडी का बना हौदा रखा जाता है जिसमे बैठने की व्यवस्था होती है । कुमारसम्भव म ब्रह्मचारी पावती के सम्मुख शकर की निंदा करता है एव उनके वाहन बल को निकृष्ट बताकर हाथी की प्रशसा करता है 117 शकर की ग्रग-वानी करने के लिये पवतराज हिमालय गज पर सवार होकर ग्राये थे 118 बडे-बडे राज महाराजाग्रो के यहा ग्रनेक हाथी होते थ एव गज उनकी सवश्रेष्ठ सवारी माना जाता था 119 हथिनी की सवारी का भी उल्लेख मिलता है 120 हाथी से

---

110 शृगारपरिकपकाणधसप्रहाय । ह० च० पृ० 348
बहुलमीधूल० कादम्बरी पृ० 355
करिकर्णावतसम्पटसम्पादनाय । ह० च०
'चामीकरकरमय सर्वोपरकरणाना बालना । यथोपरि पृ० 348

111 सुरद्विपास्फालन० । रघु० 3/55

112 न्यस्ताक्षरायातुरसेन० कुमार० 1/7

113 उपान्तभागेषु च रोचनाको गजाजिनस्येव दुकूलभाव कुमार० 7/32

114 भक्तिभिबहु विधाभि० । कुमार० 8/69

115 अपनीयमान-कण शख-चामर नक्षत्रमाला मण्डनेषु । कादम्बरी पृ० 300

116 स राजशोऽप्यामधिहस्ति । रघु० 18/39

117 यदृया वारणराजहायया । कुमार० 5/70

118 तमृद्धि० कुमार० । 7/52

119 रथवाजिगजारूढा । बु० च० 16/49
'नागपृष्ठयमो । बु० च० 10/39
वाहन च मवेदय० । बु० च० 19/51
'सरगजे०—किरात० 7/2

120 गजवधु समारूढे । ह० च० पृ० 3C7

उतरने का उल्लेख भी किया गया है [121] कामदेव भी गज पर चढ़कर आता है [122] गज को देवराज इन्द्र व कुबेर की सवारी भी माना गया है आजकल गज की सवारी विशेष अवसरों पर प्राप्त होती है पर्वतीय स्थानों में लोग गज की सवारी करते हैं। राजस्थान में गनगौर व तीज के मेलों में गज की सवारी की जाती है यह पशु विशालकाय होने से अपने आपको जीवित रखने में सफल नहीं हो रहा है अतः गज दिनों दिन कम देखने को मिलता है दूसरे इस भौतिक युग में गज की सवारी विशेष महत्व नहीं रखती क्योंकि अब तो सस्ते व तीव्रगामी अन्य साधन उपलब्ध होने लगे हैं

गज सेनाङ्ग के रूप में —सेना के चार मुख्य अंग होते हैं जिनमें गज का प्रमुख स्थान है [123] सेना में गज के जाने का कवियों ने पुनः पुनः उल्लेख किया है सेना में काम आने वाले गज अधिक ऊंचे व बलवान होने चाहिये सेना में हजारों की संख्या में गज जाते थे [124] गजों के साथ साथ हथिनियां भी युद्ध में जाती थीं [125] सेना के हाथियों को तम्बू में रखा जाता है ताकि वे स्वस्थ एवं सुखी रहें एवं सेना में

---

करिणी निशाकर इव० ह० च० प० 249

'करेणुकामारुह्य । कादम्बरी पृ० 343

121 अवगाहतोय० सौ० न० 5/1

122 अनङ्गवारणशिरो-नक्षत्रमालायमानेन ।—कादम्बरी पृ० 32

123 हरायरथपत्तीनां । बु० च० 28/8
 बहु गज तुरग०—कादम्बरी पृ० 302
 भिन्न पदाति० वासवदत्ता पृ० 31
 तुरगकरणी०—कादम्बरी उ० पृ० 567
 तिष्ठन्तु सव एव राजान । ह० च० पृ० 324

124 तस्योत्सृष्ट० रघु० 4/76
 अनवरतमहत्सरस्या कलि । ह० च० पृ० 405
 नागबल – नवप० 10/8
 'करिघटा सहस्र सकुसम—कादम्बरी उ० पृ० 346
 करर प्रतिकरी नरो—शिशु० 19/36
 निघन०—शिशु० 19/34
 उद्दामदानाद्विपवरत्व द्विन । कुमार० 4 41

125 करिणी समागमम । शिशु० 13/17

महत्वपूर्ण कार्य कर सके 125-A सेना में जाने वाले मस्त हाथी भयंकर चीत्कार करते हैं एवं लोग उनको अपने आप मार्ग देते रहते हैं क्योंकि वे बली हैं एवं बली से सब घबराते हैं 126 सेना में महावत गज को चलाते हैं 127 उस समय हाथियों को नियंत्रित करने के लिये वे अनेक आवाजें करते हैं 128 सेना के गज भड़ककर दौड़ते हैं तो सेना में भगदड़ मच जाती है एवं लोग अपने आपको बचाने के लिए इधर-उधर पनाह लेते हैं 129 युद्ध में गज हिंसा करने को तैयार रहता है यहां तक कि वह अपनी परछाई से ही भिड़ जाता है क्योंकि क्रोध में उसकी बुद्धि काम नहीं करती 130 सेना में जाने वाले हाथियों पर बड़ी-बड़ी तोपें लाद कर ले जाने का रिवाज था गज रास्ते में आने वाले छोटे छोटे घरों को रौंद देता है एवं मार्ग के बीच खड़ा होकर लोगों का मार्ग अवरुद्ध कर देता है 131 एक गज एक वीर को आसानी से चीर डालता है 132 युद्ध में गज के दांतों का बड़ा महत्व है दांतों के सहारे वह अनेक कार्य करता है वह क्रोध में आकर दांतों से पर्वतों को पीटता है 133 वह दांतों से विशाल पर्वत के पत्थरों को उखाड़ सकता है फिर मनुष्य की आंतों को उखाड़ना तो उसके लिए साधारण काम है वह दांतों से वीरों पर भयंकर प्रहार करता है शत्रु सेना के हाथी के शरीर में वह अपने दांत गड़ा देता है हाथी दांतों की आपसी टक्कर आग को पैदा कर देती है एवं इससे युद्ध में भयंकरता आ जाती है 134 हाथी के दांत अत्यन्त मजबूत होते हैं उन पर सैनिक चढ़ जाने पर भी वे नहीं टूटते 135 केवल करवाल से ही गजदन्त को काटा जा सकता है 136 दांतों की टक्कर से मकानों में दरारें पड़

125–A तदानीलनागकुलसंकुल० शिशु 5/68
126 वारणानां विभावरीवार्ता—ह० च० पृ० 347
127 स्तैम्बेरमा० ह० च० पृ० 20
128 शुश्राव मातंगमार्गमाग० ह० च० पृ० 374
129 सद्यिद्धन० रघु० 5/49
130 हिंसा परागज । बु० च० 21/52
131 करिचरणदलित० ह० च० पृ० 366
ध्रुव गुल्मा० शिशु० 3/ 9
132 कश्चिमर्या० शिशु० 18/52
133 मत्ते० रघु० 4/59
134 येषां० रघु० 5/72
ऊन विदास्या० बु० च० 2/44
135 श्रोधाद० कुमार० 16/29
136 खड्गेन मूलतो हत्वा० कुमार० ।

जाती है [137] गज के दातो की आपसी टक्कर से खट खट की आवाज होती है [138] ऊची जाति के हाथी के बच्चे द्वारा दूसरे हाथियो को पछाडने का उल्लेख भी मिलता है [139] गज आपस म दातो को इतना जोर से टकराते हैं कि उनके दांत टूट जाते हैं फिर भी बलवान हाथी लडना बन्द नही करते वे निरन्तर युद्ध करते हैं [140] लडते लडते हाथी दातो के बल गिर जाते है एव उनके दात ही उस समय अवलम्बन हो जाते है [141] युद्ध म सनिक एव दूसरी सेना के हाथियो को फटकारते है [142] *कादम्बरी म गजद न के उखाडने का वर्णन मिलता है* [143] *कन्दर्पकेतु के खड्ग से* हाथी के मस्तक से मुक्ता निस्सरन का वर्णन वासवदत्ता म उपलब्ध है [144] चन्द्रापीड के गणो म गज के मस्तक को विदीर्ण करने की क्षमता थी [145] युद्ध म विजयी गजो को थपथपाया जाता है जो उनकी वीरता व समझदारी पर प्रकाश डालता है [146] सौन्दरनन्द मे हाथियो, घोडो व रथो वाले शत्रुओ पर विजय पाने वालो को उच्च योद्धा नही माना गया है [147]

गज एव सिंह — जगल म रहने वाले गज व सिंह दोनो का प्रमुख स्थान है शाकाहारी जीवो म गज एव मासाहारी जीवो म सिंह राजा माने जाते

---

137 दतैयदन्त्य० कुमार० 13/38

138 अन्योन्ये० शिशु० 18/32

139 शमयति गजानन्य० विक्रम० 5/8

140 शिशुपाल० 18/33

141 लब्धायाम दन्तयोपु ममेव० शिशु० 18/46

142 हत हस्तिपक० । हर्ष० च० पृ० 375
'परिक्षते वक्षसि दन्तिदन्ते । किरात० 16/11
मातगानादन्तसघटा । शिशु० 18/34
मातानगे शिशु० 18/34

143 समुत्पन्न विघत गजदन्ते— कादम्बरी पृ० 94

144 यस्य च निशितनारा च०—वासवदत्ता पृ० 29

145 मदकलकलभकुम्भ०—कादम्बरी पृ० 303

146 जयतु जर कुम्भस्थला स्फालन । कादम्बरी पृ० 559

147 तथा हि वीरा ० सौ० न० 9/23

है अत गज व सिंह का द्वन्द्व सदा से चला आ रहा है सिंह अवसर पाकर कभी भी गज पर आक्रमण कर देता है कादम्बरी में सिंह के द्वारा नोचे गये मस्तक वाले गजों के कराहने का वर्णन है [148] सिंह गज पर आक्रमण करता है [148-A] गज सिंह से डरकर छिप जाते हैं [149] गज का मस्तक सिंह द्वारा नोचे जाने पर मोती निकलते हैं [150] एक ओर गज व शेर का सम्बन्ध शत्रुता का प्रतीत होता है किन्तु दूसरी ओर इनके शावकों में अपनत्व मिलता है यह आश्चर्यजनक बात है आश्रम में रहने वाले पशु-पक्षी हमेशा मानवता को अपनाते हैं गज शावक शेर के बालों को नोंचते रहते हैं [151] जबकि सिंह उनके प्रति बिल्कुल क्रोध नहीं करता

कवियों द्वारा उपमित गज —संस्कृत साहित्य में हाथी के अंगों व उसके कार्यकलापों को कवियों ने कल्पना का विषय बनाकर संस्कृत साहित्य में सादृश्यमूलक अलंकारों का महत्त्व बढ़ाया है गज के अंगों की एवं कार्यों की तुलना कवियों ने सजीव एवं निर्जीव दोनों प्रकार के पदार्थों से की है कवियों की यह सूक्ष्म अवलोकन शक्ति निस्सन्देह सराहनीय है

गज की सूँड से निकलने वाली सू सू की आवाज को कवियों ने साँप की फुंकार से सादृश्य दिया है [152] राजा के खड्ग की तुलना रक्तरूपी जल में उतरते हुए गज की पाँव रूपी कछुवे से की गयी है [153] एक स्थान पर गज की सूँड की तुलना अजगर से की गई है [154] वास्तव में गज की सूँड अजगर की भाँति मोटी होती है साथ ही गज की सूँड से निकलने वाली फूत्कार भी अजगर की फूत्कार से काफी साम्य रखती है अत कवि की उपमा उचित ही है सूँड की भाँति गजदन्त को भी कवियों ने उपमित किया है दाँतों की स्वच्छता की तुलना चाँदनी से दी गई है चाँदनी की किरणों को हाथी दाँत से बने पनाले की उपमा दी है [155] दाँतों

148 मृगपति० कादम्बरी पृ० 84

148-A कुहरे क्रम करि करिपतौ क्रूराकृति केसरी वा० द० पृ० 79

149 यु० च० 13/55

150 केसरि० वासवदत्ता पृ० 65

151 एष मृणाल० कादम्बरी पृ० 141

152 हस्तिव धमिव० वासवदत्ता पृ० 237

153 रक्तवासि० यशोपरि पृ० 30

154 करदण्डानु० कादम्बरी पृ० 69

155 दन्तामयकरमुख ह० च० पृ० 28

की आपसी रगड को वृक्षो की रगड स उपमित किया गया है क्याकि दाना की रगडा से अग्नि की उपस्थिति देखी जाती है[156] हाथी के काले कपोल को रात के अधकार मे सम्बन्धित किया गया है[157, 158]

इसी प्रकार गज समूह को काले मघा से उपमित किया गया है गज का रग बिल्कुल काला नहीं होता ठीक उसी प्रकार बादल भी गहरे काले नही होते अत कवि की उपमा निस्सन्देह सार्थक है निरर्थक नही[159] वासवदत्ता मे अधकार का मस्त हाथियो के गण्डस्थल के सदृश्य व गज मस्तक सर्पो के शरीर के समान उज्ज्वल कहा गया है[160]

सामान्यत गज शाम के समय जल मे अधिक निवास करता है स्नान के साथ साथ वह जलकेलि के समय अपनी सूड म पानी भरकर उछालता है हाथी की सूड से निकले पानी स डर कर प्रकाश भाग गया इस प्रकार की उपमा शाम के समय के लिये दी गई है[161] युद्ध काल मे गज के मस्तक पर निकले रक्त को सिन्दूर स उपमित किया है[162] गज की आवाज की तुलना दुन्दुभि की आवाज से की गयी है[163] अन्यत्र गज की चाल म धरती से दुन्दुभि की आवाज का उल्लेख मिलता है[164]

हाथी के कर्णताला की फटफट एव भौंरो की आवाज से मिलकर दुन्दुभि की ध्वनि को निरोहित किया गया उल्लेख एक अन्य स्थान पर किया है[165] कल्पना स अलङ्कृत घण्टा व शब्दावली कि यादवी को बाण ने हाथी की गति से उपमित किया

156 दन्तिदन्ताग्निविकीर्णे भुवने । कादम्बरी पृ० 589
157 शिशु० 18/3?
158 अधकारितदिगन्तरेण0 कादम्बरी पृ० 348
159 सान्द्राम्भोधरमास्ते० शिशु० 18/37
160 मत्तवारण मनोहर गण्डमण्डले । वासवदत्ता पृ० 165
धनतरमो ) यथोपरि ।
161 इभ कर० कादम्बरी पृ० 349
162 करेणुवधूमुणा च० कादम्बरी पृ० 348
163 आहूयमान दिग्नु दिक्कुन्जरे । यथोपरि 341
वृत्त कलकल० ह० च० पृ० 372
164 मन्थरत करि चरण० कादम्बरी प० 319
165 करिणा० ह० च० पृ० 373

है [166] गज का एक स्थान पर रौद्र-रस कहा है [167] हाथी को कालिदास ने विघ्न का मूर्तिरूप कहा है [168] गज को दिशा का रूप माना है [169] एवं उसकी तुलना धय की न्यूनता से की गई है [170] मनुष्य की जाघो की विभिन्न अगो की गज के अगो से तुलना की गई है मनुष्य की जाघो व भुजाओं को हाथी की सू ड से उपमित किया गया है [171] स्त्रियो की जाघो को भी हाथी की सू ड का सदृश्य बताया है दमयन्ती की जाघो ने हाथी की सू ड को पराजित कर दिया ऐसा उल्लेख श्रीहर्ष ने किया है [172] महाकवि भारवि ने सुरगनाओं की जाघा को हाथी की सू ड के समान मोटा बताया है [173] वास्तव म हाथी की सू ड की मनुष्य या स्त्री के साथ उपमा उचित भी है जिस प्रकार हाथी की सू ड ऊपर से मोटी एव क्रमश पतली होती जाती है ठीक उसी प्रकार मानव की जाघ की स्थिति है हाथी की सू ड भूरे-भूरे बालो से ढकी होती है वही स्थिति मानव की जाघ या बाहु की है काव्यकारो ने पौराणिक मनुष्य, देवता व राक्षसो को हाथी के समान बताया है देवताओं मे शकर, कामदेव, यमराज, कृष्ण का हाथी से सम्बोधित किया गया है भगवान कृष्ण का हाथी को शत्रु कहा है [174] कामदेव का युवतियो के हृदयो को क्षत-विक्षत करने वाला गज कहा है [175] मदन रूपी हाथी की पूववर्ती ध्वजा व चिन्ह रूप चामर के समान पुष्प मजरी का वर्णन कादम्बरी मे उपलब्ध है [176] कामदेव का दिशारूपी हाथियो के लिये लोहे की अगला कहा गया है [177] यम

---

166 मत्तमातगत्येव०—वासवदत्ता पृ० 82
167 रौद्र एव रसो रस –शिशु० 17/39
168 मूर्तो विघ्न तपस इव । शाकु० 1/31
169 दिगन्तदन्ति । शिशु० 1/757
170 घर्मा व सादेन० किरात० 3/38
171 उदिण्डाभ्यामुपहसन्ती० ह० च० पृ० 40
ऐरावतकरपीवर० कादम्बरी पृ० 498
दिक्कु जर० ह० च० पृ० 337
172 उरुपकाण्ड० नैषध० पृ 4/94
173 करोभिर्वारण हस्तपीवरश्चिराय । किरात० 8/22
174 करीर । शिशु० 19/104
हरिर्याक्षपुर । शिशु० 1/39
175 धाराप्रणित पथिक वधू हृदयतट । वासवदत्ता पृ० 111
176 ध्वजचिन्ह० कादम्बरी पृ० 423
177 अमेय ते० पयोपरि 30 पृ० 599

राज को गज कहा गया है[178] इसी प्रकार न पूरक नाम के गधर पुत्र की चाल की तुलना गज की चाल से की है[179]

महर्षि दधीचि को गज व कान का शमन कहा है[180] नारदजी के इन्द्रवाहन ऐरावत के समान सुशोभित बताया गया है[181] गौतम को हाथियों के यौवन जानने का इच्छुक कहा है[18] राक्षसों में रावण को गज कहा है हाथी द्वारा किसी सैनिक को पकड़कर मर्दन करने के बाद मूर्ति ऊपर जाती दिखाई दी वह इस प्रकार की प्रतीत हुई मानो यम ने नन्दन्या की शिला पर पटका हो तब वह स्फटिक या आसमान की ओर जा रही हो यहाँ गज व वस की समता प्रदर्शित की गई है[183] यहाँ यमराज रावण व वस की गज से समता बताने के दो कारण सामने आते हैं प्रथम तो यह कि ये सभी लोग काल रंग के थे एवं द्वितीय यह कि ये सभी बलवान एवं क्रोधी माने गये हैं अतः यह समता तार्किक है मनुष्यों में बुद्ध चन्द्रापीड अर्जुन दुष्यन्त राजा हंस नन्द राज्यवर्धन, शूद्रक व छन्दक को गज कहा गया है महाकवि अश्वघोष की कृति बुद्ध चरित में बुद्ध को विभिन्न क्रियाओं के आधार पर हाथी से उपमित किया गया है बुद्ध ने हाथी के समान बाहर जाने का विचार किया हाथी के समान जिसकी छाती से वहीं लगी हुई थी उस रात नहीं सोया गज राज के समान पराक्रमी मृगराज की सी गतिवाला वह मस्त हाथी के समान वह, इन वाक्यों में बुद्ध व गज की समानता बताई गई है[184] बुद्ध के पिता उसी प्रकार कांपने लगे जिस प्रकार हाथी बच्चे द्वारा हिलाया गया पेड़, यहाँ बुद्ध को गज से उपमित किया गया है[185] राजा चन्द्रापीड पर सामन्तों ने उसी प्रकार पुष्पवर्षा की जिस प्रकार हाथी ऐरावत पर जलकणों की वर्षा करते हैं[186]

178 मृत्युरवनेभ० ह० च० पृ० 311

179 मद रेवदाल स० । कादम्बरी पृ० 519

180 मन्मथदन करिरण शावामशनेन । ह० च० पृ० 66
नाग व भिवेन्द्र वाहनम । शिशु० 1/8

181 जितातमाना नागेषु । सौ० न० 1/36

18? इतीव मनुष्य धमणा शिशु 11/5?

183 कसनेव स्फटिकताया गजेना । शिशु०18/50

184 ह० च० 3/2
प्रलम्ब बाहुर्मृगराज विक्रमो । ह० च० 8/53
न हिश्य सा रात्रि हृदय गत शल्यो गज इव । ह० च० 4/103
गत स यत्र द्विपराजविभ्रम । यथोपरि 8/12
मत्त मातंग इव । यथोपरि । 25/32

185 राजा करिणेवाभिहतो द्रुमश्चाल । यथोपरि 5/29

186 ऐरावत इव कादम्बरी पृ० 343

यहा चन्द्रापीड का गजराज एव सामन्तो को गज से उपमित किया गया है हाथी के मस्तक पर मदलेखा के समान चन्द्रापीड की दाढी के बाल थे [187] शकर के दोनो पगो को हाथी के कानो से उपमित किया गया है [188] किरातार्जुनीयम मे अर्जुन को हाथी कहा गया है जिस प्रकार एक वन-गज दरार के मध्य के पानी को पीने मे अभ्यस्त किसी अन्य गज द्वारा पीय जाने पर उसे ढूँढता है उसी प्रकार अर्जुन का हाथ खाली तरकस पर गया जिसके वाणो का शोषण शकर ने कर दिया था [189] यहाँ अर्जुन का अभ्यस्त गज व शकर को अन्य गज उपमित किया गया है अन्यत्र अर्जुन को उदण्ड हाथी से उपमित किया गया है [190] दुष्यन्त को गज से उपमित करते, हुए कहा है कि व कमजोर होने पर भी वे कमजोर गज के समान कमजोर प्रतीत नही हो रह थे [191] दशकुमार चरित मे राजवश नामक राजा को एगवन कहा है [192] नन्द वनमान म पकडे गय हाथी क समान चिन्ता के वशीभूत हो गए है [193] अन्यत्र कहा गया है कि नन्द मुनि के समीप मुक्त हाथी के समान चला [194] शूद्रक को भी गज कहा है [195] वासवदत्ता म कुवलयापीड नामक गज को कामदेव का वाहन बनाते हुए राजा का कस की उपमा दी है [196] एक नये पकडे हाथी म भिखारी की तुलना की गयी है [197] बुद्ध को छोडन क बाद छदक एव आसक्त को कीचड म फस हाथी से उपमित किया गया है [198]

शान्तनु म भीम की अपेक्षा अधिक हाथियो का बल था [199] राज्यवर्धन व हर्षवर्धन

---

187 गण्डमण्डलोद्भासिनी–कादम्बरी उ० पृ० 536

188 पोय । किरात० 17/25

189 किरात० 17/36

190 तत उदग्र इव द्विरदे० किरात० 18/1

191 गिरिचर इव नाग प्राणसार बिभर्ति । शाकु० 2/4
यूथानि सचाय० । शाकु० 5/5

192 सुराज० द० च० 5

193 चिन्तावशो नवग्रहीन इव द्विपेन्द्र । सौ० च० 5/33

194 पार्श्वे मुने प्रतिमयौ० सौ० न० 18/61

195 करिणी० कादम्बरी पृ० 46

196 कस इव कुवलया०/वासवदत्ता पृ० 22

197 अथ पुन प्रत्यग्र० द० च० पृ० 182

198 नदीपङ्क इव द्विप । बु० च० 6/26
यथा पङ्केजरो गज । बु० च० 26/62

199 भीमादने कनागायुतबलम । ह० च० पृ० 131

को क्रमश इन्द्र व उपेन्द्र बताते हुए हाथी पर गमन करने वाला बताया है[200] महाराजा नल को राजाओं के कुल मे हाथी के समान बताया है अर्थात वे राजाओं म प्रधान गज की भांति हैं[201] किरातार्जुनीयम म द्रोपदी ने अर्जुन को दाँत टूटे हुए हाथी से उपमित किया है जिस प्रकार दाँत टूट जाने से हाथी विरूप हो जाता है उसी प्रकार अर्जुन मान हानि के कारण विरूप हो गये थे[202]

स्त्रियों के गमन को हाथी की चाल से पुन पुन उपमित किया है रानी कल्प सुन्दरी को गज गामिनी कहा है[203] दमयन्ती गति से गज को जीतने वाली थी[204] अप्सराओं की चाल को भी गज की चाल के सदृश्य माना है[205] दमयन्ती के शरीर मे कामदेव रूपी गज का निवास बताते हुए श्रीहर्ष ने दमयन्ती की नाभि को खूटे का स्थान, रोमा का टूटी जजीर एव कुचा को हाथी के साने का उच्च स्थान बतलाया है[206] रानी विलासवती को हाथी की मदरेखा कहा है[207] बुद्ध चरित मे गजमुखी भूत का वर्णन किया है[208]

कादम्बरी प्रमोदवन की सौरभ को उसी प्रकार रोक रही थी जिस प्रकार हस्तिनी हाथी को रोकती है[209] सौदरनन्द मे वर्णन है कि रानी माया ने स्वप्न म छ दातो वाले श्वेत गज को गर्भ मे प्रवेश करते देखा[210] स्त्रियों के रोने को भी हस्तिनी के रोने स उपमित किया है रानी पति की मृत्यु के समाचार सुनकर हृदय म विषलिप्त तीर से घायल हुई हथिनी क समान

---

200 इन्द्रोपेन्द्रविव मार्गेन्द्रगतौ। ह० च० पृ० 232
201 प्रवनि०। नदघ० 21/123
202 दन्तौ०। किरात० 3/45
203 निशान्तोदयानमगा०। ह० च० पृ० 293
204 जितदन्तिनार्यो। नयध० 7/10
द्वीप द्विरदाधिपतिमन्दपदे। नयध० 11/73
205 यत्र च मातगगामिन्य। ह० च० पृ० 166
206 उन्मूलिता०। नयध० 7/85
207 शिशु० 7/47
इवकम्तुम कठिने०। शिशु० 13/16
208 मदलेखेव दिग्गजस्य। कादम्बरी पृ० 188
209 करिणामिव सम्मुखागत० कादम्बरी पृ० 620
210 स्वप्नेऽपसमये। सौ० न० 2/50

जोर मे रोई 211 वृद्ध द्वारा त्यागी गई पत्नी को गज द्वारा छोड़ी गई हस्तिनी कहा है 212 हाथी के विषय में शिशुपालवध में एक अत्यन्त सुन्दर शृंगारिक वर्णन प्राप्त होता है लिखा है—स्नान के कारण जल में गिरे मेरु की धूलि की लालिमा से तथा जल में लगे कमल के सम्पर्क से ऐसा ज्ञात होता है जैसे कोई नायक व नायिका सम्भोगोपरान्त वस्त्र परिवर्तित करते हों यहाँ गज गरव धारण करता है, एवं नदी कमल को अन्त में वैपरीत्य हुआ 213 गज का पवन से अनेकधा साम्य बताया गया है हर्षचरित में कैलाश पर्वत को हाथी कहा गया है 214 मत्त करि हाथी को पर्वत कहा गया है 215 हाथी रास्ते को रोक देता है किन्तु सेना गमन पर हाथी के समान पर्वत ने सेना के मार्ग को नहीं रोका 216 वह पर्वत अब भी अगस्त्य को बुला रहा है जिस प्रकार सिंह से विदीर्ण हाथी 217 गज गन्धमादन समुद्र में पर्वत के समान विद्यमान रहा था 218 हाथी के दाँतों का हनन एवं हाथी की पर्वत की उपमा शिशुपालवध में दी है 219

मनुष्यों के अंगों के अतिरिक्त पेड़-पौधों से भी गज के अंगों की तुलना की गयी है कादम्बरी में लक्ष्मी को कन्दर रूपी हाथी का कदलीवन कहा है 220 एक सोयी हुयी स्त्री को गज द्वारा तोड़ी गई कालिकर की शाखा कहा है 221 जिस प्रकार पेड़ के पत्ते धरती को झुक झुक कर छूते रहते हैं ठीक उसी प्रकार हाथी की पूँछ धरती को छूती रहती है 222 दोनों वस्तुएँ सजीव हैं एवं दोनों की क्रिया वास्तव में एक सी है 223 अनारदाना व गजमुक्ता में सादृश्य बताया गया है 224 गजमुक्ता भी लाल होते

211 सौ० न० 6/24
212 वृ० च० 9/27
213 सर्साविय –शिशु० 5/39
214 कलासकुंजर । ह० च० पृ० 34
215 महामतगज । शिशु० 12/29
216 नगेन नागेन० शिशु० 12/48
217 अद्यापि कुम्भसम्भव० वासवदत्ता । पृ० 78
218 अन्त प्रविष्ट०–कादम्बरी 30 पृ० 561
219 शिशु० 18/38
220 कदलिका कामकरिणा । कादम्बरी पृ० 326
गजभग्ना इव० । बु० च० 5/51
222 महाकरिभित्ति–कादम्बरी पृ० 387
223 हरिनखरभिन्न०–कादम्बरी पृ० 53
224 दिग्वारणकराघृत० सौ० न० 215

हैं और अनारदाने भी आकाश में होने वाली पुष्पवर्षा का सादृश्य गज द्वारा चित्ररथ वृक्ष को लाकर गिराये गये पुष्पों से की गई है[224] नागवृक्ष के फूलों व हाथी दांत से संपुट में भरे खाने में समता प्रदर्शित की गई है[225] चट्टान पर बैठे इन्द्र की तुलना (ऐरावत) पर बैठे इन्द्र से की गई है अर्थात् चट्टान हाथी के समान है[226] गज के मस्तक से बहने वाले रक्त की नदी से बहने वाले पानी से समता बताई गयी है[227] तारों से भरा आकाश गज द्वारा फेंके गये जल के कणों जैसा सफेद है अर्थात् जिस प्रकार जलकण धवल होते हैं उसी प्रकार सितारे भी श्वेत एवं चमकदार होते हैं[228] हाथियों के झुण्ड को सुन्दर वरारम्भ से उपमित किया है[229] चन्द्रमा के सामने हटे बादल को शत्रु के शरीर से गजचर्म हटने के समान माना है[230] इस प्रकार संस्कृत काव्यकारों ने गज को सजीव एवं निर्जीव वस्तुओं से उपमित किया है एवं अपनी कल्पना शक्ति का प्रदर्शन कर संस्कृत साहित्य में कल्पना नामक एक नया अध्याय जोड़ा है

हाथी से उपलब्ध पदार्थ – गज एक विशालकाय पशु है अतः इसके शरीर से अनेक ऐसे पदार्थ मिलते हैं, जिनका हमारे दैनिक जीवन में बड़ा महत्त्व है गज से उपलब्ध पदार्थों को मानव ने अपनी आवश्यकता एवं इच्छानुसार समय-समय पर परिवर्तित कर काम में लिया है इन पदार्थों में बहुमूल्य एवं अधिक काम आने वाला पदार्थ है गजदन्त गजदन्त से अनेक प्रकार की वस्तुओं का निर्माण होता था ऐसा वर्णन काव्यों में मिलता है हाथी दांत के पंखे का वर्णन दशकुमार चरित में आया है[230] शयन स्थान के पैरों में हाथी दांत लगाया जाता था एवं हाथी दांत की डिबिया भी मिलती थी[231] कानों में भी दांत के आभूषणों का पहिनना बताया गया है[232]

---

225 पुष्पोत्कराला प्रपिनाणवक्षा । सौ० न० 7/9

226 सुरधिष्ठित० शिशु० 4/13

227 हतद्विप० किरात० 15/24

228 दिक्करि करावकीर्ण० कादम्बरी पृ० 588

229 करिण्येरिव समत्नयारभ । वासवदत्ता पृ० 86

230 दन्तमयतालवन्त । द० च० पृ० 281

231 दन्तपाण्डुरपाद । द० च० पृ० 119

दान्तशफरक धारिण्या कनकपुत्रिकया । द० च० पृ० 254

232 धवलदन्त० । द० च० पृ० 36

एकदन्त–कादम्बरी पृ० 30

कादम्बरी म हाथी दात ॥ निर्मित चण्डिका की मूर्ति का वणन मिलता है[233] चण्डिका मन्दिर के किवाडो म गजन्त की कील लगी थी[234] बाणभट्ट ने हाथी दात की कघी चवर एव ग्रटारी का भी उल्लेख ग्रपने ग्र थ म किया है[235] हाथीदात की पालकी एव हाथी दात की मूठो का वणन क्रमश बुद्धचरित एव शिशुपालवध मे मिलता है[236] गज से दूसरा मुख्य प्राप्य पदाथ है–गजमुक्ता गजमुक्ता का इधर उधर बिखरे रहन का बारवार वणन ग्राया है चण्डिका मन्दिर के पास गजमुक्ता बिखरे थे[237] भील लोग गजमुक्ता हाथा म लिये रहते थे[238] राजा शूद्रक की तलवार मे मुक्ता लग थे[239] गजमुक्ता वतमान मे गज व कुम्भ से प्राप्त नही होन–श्रन ये केवल कवि कल्पना मात्र है इस विषय म कालीदास ग्र थावली के ग्रभियान कोप मे स्पष्टीकरण दिया है[240] शिवगज चम धारण करत थे ऐसा वणन भी मिलता है ग्रत गजचम वस्त्र का काम ग्राता था[241] हर्षचरित म लिखा है कि चमडे के बने हाथी की तरह बार बार प्रतिहारो के घू से खाकर किसी का धक्का दिया गया[242] हर्ष चरित म एक मुहावरा भी दिया गया है कि सुमेरु स टक्कर लने वाले हाथी कभी वाबी से नही मिलते[243] इसी प्रकार किरात म कहा है कि हाथी शृगालो से मेल नही करत

233 वनद्विरददन्त–कपाटे । कादम्बरी पृ० 636
234 हम्स दन्त दण्डागलम । कादम्बरी प० 639
235 दन्तपत्रम । काद० पृ० 257
वारु–चार–नागदन्त काद० पृ० 161
कामदेव गृहदन्तवालभिकाम । कादम्बरी पृ० 533
236 द्विरददमयी० । बु० च० 1/86
सिततरदन्त चारव । शिशु० 17/25
237 विदलितवन–करि०–कादम्बरी प० 638
238, गजकुम्भ० यथोपरि प० 94
239 लग्नस्थूल मुक्ताफलेन । यथोपरि पृ 14
240 द्रश्य कालिदास–ग्रन्थावलि–सीताराम चतुर्वेद
241 गताजिन० कादम्बरी प० 391
242 पशुपते० । मेघ० पृ० 40
प्रालेय० शिशु० 4/64
243 करिकमचम० । ह० च० प० 366
भवन्ति गोमायुसखा० । कि० 14/42
न सुमेरु च० । ह० च० पृ० 326

गज का वणन कालिदास ने १६५ बार अश्वघोष न ७१ बार, भारवि ने ४५ बार माघ ने १०३ बार श्रीहष ने १ बार, सुबधु न ३१ बार बाण ने १३४ बार एव दण्डी ने १० बार किया है इस प्रकार गज वणन के आधार पर कालिदास का स्थान प्रथम, बाण का द्वितीय एव माघ का तनीय है इस प्रकार सस्कृत का यो म गज का वणन कुल मिलाकर ५८२ बार मिलता है प्रस्तुत तालिकाम्रा म गज के वणन का विभिन्न विश्लेषण प्रस्तुत किया जाता है

---

## तालिका–१

'गज के यणन का कालिदास के काव्यो में विश्लेपण (१६५)

| सख्या | का य | वणन का क्रम |
|---|---|---|
| ७६ | रघु० | १/ ६,७१ ७८ २/३७ ३८ ३/३,३२ ३७,५५ ४/४ २२ २६,३२ ३८ से ४० ४५ ४७ ४८ ५७ ५६ ६६ ७५ ७६ ८१ ८३ ४/४३ स ५१ ५२ ५६ ७२,७५ ७/७ २७,५४,७३,८३ ७/३७ ३६ ४२,४६, ४८ ६/६५ ७१ ७३,७४ १०/५७ ११/३६ १२/७३ ६३, १०२ १ /२०,७४ १५/६७ १६ /२ ३,१६,२६,३०,३३ ४१,६८,७८ १७/ ३२,६६ ७० १८/५ ८ ६ १६/११ |
| ५० | कुमार० | १/६ ७ ३६ २/५० ३/२२ ६७ ५/७० ७८,८० ७/३२ ५२ ८/६४ ६६ ४/६२ १३/२२ ३८,४१ १४/१४,१५,१६से २३ २६ २३ ४१म ४४ ४७,१५/८ १०,१५ २३,१६/२,२१ २४,२६ से ४०३ १७/२६, |
| १२ | मेघ० | पू०–२ १४,२०,२१ २२ ३६ ४०,४६,५५,६३ व ६६ उ०–२१, |
| ६ | ऋतु | १/१४ १६ २७ २/१,१५ १६ |
| ४ | शाकु० | १/३१ २/४ ५/५ व ७/३१ |
| ४ | मालविका० | १/ग ५/ग ६४ |
| १३ | विक्रम० | १/१७ ४/१६ २३,२६ २५ ४३ से ४५,५४ ५६ ६२,७२ ५/१४ |

## तालिका—२

### 'गज के वणन का कालिदासोत्तर काव्यो में विश्लेषण (४१७)

| कवि | सख्या | काव्य | वणन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्व घोष | ५५ | बु०च० | १।६० ८६,२।१,२,२२ ३/४ ४।२७ १०३, ५।२३ २६ २६, ५१ ८२,६।२६ २६ ७।१६ ८।१२ ५३,६।२७ १०।३६ १२। ५ ११६ १३।१६,५३ १४।२४ १६।४६ १६।५१,२१।४३ स ५२ ५४,५६ ६१ ६३ ६५ ६७ ६६, २४।४, २५।३२ २६। ६२,१०६ २७।११,६० ६५,२८.८ |
| | १६ | सौ०न० | १।३६ ५१ २।५०,५३,३।१ ४।४० ५।१ ५३,६।२४ ७।६,२६ ८।१७ ६।२३,१२।११,'५।१४,१८।६१, |
| भारवि | ५५ | किरात० | १।१६ २६ २।६ १८ २३,२५ ३।३८,४५,५०,५।७,२६ ४७, ६।७,१२,६।२,६,११,१३, २६,२४,३०,३६,८।१२,२२ ६। २० १०।८³ १२।४८ ४६ १४।०२, ३५,१५।१६ २४ २६, १६।२,८,११ से १४,३८, १७।१३, १७,२५,३६,४५,५१, १८।१, |
| माघ | १०३ | शिशु० | १।८,३६,५५,६४,३।२७, २६ ४।१३ ४६,६०, ६४,५।५, ३० से ५३,६८, ६६ ६।५०,७।४७ १२।१२,१५,१६,२१, २४ २७ से २६ ३४,३८ से ५०,५३ से ५५ ५८ से ६०, ६२,६४,६५,७२,१३।५, १६,१९, १७।२३ २५ ,३१,५७, १८।२,४ ३३ से ५१,५८,६१,१६।२५,२६,३३,३४,३६, ३७ ४४ से ४६ १०८ २०।५१,५२, |
| श्रीहष | १३ | नषघ० | १।१०८,२।३३,७।८५,६४,१०१,१०।८,११।७३, १२।८२, ८५,१३।५,१५।१८,१६।६ २१/१२७, |
| सुबन्धु | ३१ | वासव दत्ता | पृ० १२,२२,३०,३१,६४ से ६६,७४ ७८, ७६, ८२ ८६, ६४,६५,६८ १०४,५,११,१२,२६,३४, ६३,६५, ६६,६८, २०५ २०,३२ २५,३७,४३, |
| बाणभट्ट | ४५ | ह० च० | पृ० २५,२६,३४,३६,४०,६६,८२ ६३,६४'११०,१५,१८, १६,३०,३३,३४,४२ ६६,२१६,३२ ३८, ४३, ४६, ५४, ३०१ ७,२०,२४,२६,३२,३७,४७,४८,६४ ६६, ६७,६६, ७२ से ७५ ६० ६६,४०५ ५१, |
| | ८६ | कादम्बरी | पृ० १२ १४, १६, १६, २२ २८, ३०, ३२ ४०, ४६, ५२,५८,६६,७६,८०,८१,८३ ८७,६४,६४,६६ १२२,२५, ४१ ६१,८८ २३२ ५७ ६६ ७६,६३,३००,२,३,२३ २६ ४१,८३, ४३,, ४८ ४८,४८,४६,४६,५० से ५२ ५५ ५७, ५६, ६८, ६६,७४,७४,७६ ८४,८४,८४, ८७, ६१,४२३ ६८,५१६, ३३, ५६ ७७ ८८,८६,६०४ २०,३३,३८ ३६, ६१३ ५४६ ६१,६१ ६१,६४,६७,७३,८०,६६ ६६ |
| दण्डी | १० | द०च० | पृ० ५,३६,१४८,५०,८१,८२,२६३,३०१,१०,११ |

## गडक
## THE RHINOCEROS

'प्रचलित खडग भीषणा"
—कादम्बरी पृ० ५७

संस्कृत-साहित्य म गडे का स्थान गौणतम है वन्य साहित्य म गड को खडग[1] वध्र[2] नामो से कहा गया है अमरकोष म गडक को वध्र, खडग व गण्डक शब्दो से कहा गया है[3]

गडा मेरुदण्डीय उपजगत् के अन्तर्गत गडा परिवार का एक मात्र सदस्य है[4]

गडा विश्व के विशालकाय जीवो म द्वितीय स्थान रखता है[5] यो तो गड अनेक प्रकार के होते हैं किन्तु उनमे तीन भेद प्रमुख हैं जिनका हम यहा पर सक्षिप्त वर्णन करेंगे एव तदनन्तर गड के सामान्य गुणो का उल्लेख करेंग

(१) काला गडा—यह गडा मुख्यत अफ्रीका म पाया जाता है इसका कधा ५ फीट ऊचा एव वजन ००० पौण्ड के करीब होता है इसके दो सीग होने हैं यह गड िन म किसी ठण्डे रेतील भाग म सोते देखे गये हैं[6] इसकी गति काफी तेज होती है यह २८ मील प्रति घण्टा की गति स दौड सकता है यद्यपि इसका शरीर काफी भारी होता है काले गडे का गर्भाधान काल सुनिश्चित नही किन्तु गर्भा

---

1 म० स० 3/14/21 का० स० 24/40

2 का० स० 24/40

3 गण्डके खडग खण्गिनौ इत्यमर (सिहादि वर्ग)

4 'जीवजगत'– पृ० 628

5 ए० किग पृ० 670

6 यथोपरि पृ० 675

धान के १९ माह बाद मादा सामान्यतः एक बच्चे को जन्म देती है जिसका वजन ७५ पौण्ड होता है

(२) सफेद गडा—यह गडा मध्य अफ्रीका म पाया जाता है सफेद गैंडा काले गण्डे की अपेक्षा ऊचा होता है इसकी ऊचाई ६ फीट से ६½ फीट तक होती है यह ऊचाई कन्धे की है इसका वजन ४ टन के करीब होता है इस जाति के नर मादा दोनो लम्बे सींग वाले होते हैं गर्भाधान के १७ या १८ माह बाद मादा बच्चे को जन्म देती है

(३) भारतीय गडा—यह जाति भारत नेपाल, तिब्बत एव प्राय सभी एशियाई देशो म पायी जाती है इनकी पहचान यह है कि इनके एक ही सीग होता है भारत का यह गण्डा बडा ही भयकर होता है एव इसका मानसिक सतुलन इतना बिगडा होता है कि हाथी जसे विशालकाय जीव भी इससे असुरक्षित हैं इसकी मादा गर्भाधान के १८ या १९ माह बाद बच्चा जनती है बच्चे का वजन ७५ से १६० पौण्ड तक पाया गया है

गण्ड की थूथन पर एक सींग होता है, जो वास्तव म कोई सींग नही होता अपितु गण्डे के कड बालो के आपस म चिपक जाने से यह सीगनुमा बन जाता है गैंडे के शरीर का रग काला, सफेद व ललछौं होता है दुम व कान के अतिरिक्त कही भी बाल नही होते इसका शरीर ऐसा लगता है मानो ढाला से ढका हो इसके शरीर की रचना कछुए के शरीर से काफी साम्य रखती है इसके पैरो म तीन तीन नख होते हैं इसका सिर बडा पर शरीर के अनुपात से छोटे एव आख छोटी छोटी होती हैं दो कान होते हैं जो बहुत छोटे होते है

गण्डा सामान्यतः सीधा व मस्ती म जीवनयापन करने वाला जीव है किन्तु इसकी आकृति ही कुछ डरावनी है घायलावस्था म यह आपे से बाहर हो जाता है

सस्कृत काव्यो मे गण्डक—सस्कृत काव्यो म गडक के लिये खड्ग[7] व गण्डक[8] शब्दो का प्रयोग हुआ है महाकवि बाण ने वन मे भ्रमण करने वाले गैंडो का उल्लेख किया है[9] नवजात बच्चो को मादा गैण्डा भयभीत होने का वर्णन बाण ने किया है एव भीलो द्वारा गैण्डे से खिलवाड की बात कही गयी है[10] वि ध्याटवी

---

7 कादम्बरी० पृ० 57–58

8 यथोपरि० पृ० 59 वासवदत्ता० पृ० 213

9 'प्रचलित खड्ग भीषणा—कादम्बरी पृ० 57

10 'कतिपय दिवस-प्रसूतानाश्च खड्गधेनुकाना त्रासपरिभ्रम्यपोतकावेपितग्रीवा-मुमुक्षुतकण्ठ०' यथोपरि० पृ० 86

को गैण्डों के घूमने से सुशोभित कहा है[11] महाकवि सुबन्धु ने भी गैण्डों से विभूषित वन की बात कही है[12]

इस प्रकार सम्पूर्ण काव्यों में गण्डक का वर्णन कुल मिलाकर ६ बार हुआ है। महाकवि बाण ने गण्डक का वर्णन पांच बार एवं वासवदत्ता में एक बार हुआ है। अन्य सभी कवियों ने गण्डक के विषय में रुचि प्रदर्शित नहीं की है। गण्डक के वर्णन का विश्लेषण प्रस्तुत तालिकाओं में दर्शनीय है—

तालिका (१)

गण्डक के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (×)

तालिका (२)

'गण्डक' के वर्णन का कालीदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (६)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| सुबन्धु | १ | वासवदत्ता | पृ० २१३ |
| बाणभट्ट | ५ | कादम्बरी | पृ० ४७, ४८, ४६<br>८४, ८६ |

———

11 गण्डकाभरणा च—यथोपरि० प० 59

12 'अरण्येव गण्ड शोभितेन'—वासवदत्ता पृ० [illegible]

# अश्व
# THE HORSE

'पत्रश्यामा दिनकरहयस्पर्धिनो यत्रवाहा"
—मेघदूत ३०/३

सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य में वर्णित पशु वर्ग में अश्व का प्रमुख स्थान रहा है गज की भांति अश्व के वर्णनों की अविरल धारा भी वैदिक काल से ही बहती रही है वेदों में अश्व के लिये अत्र, अश्व, मय हय, वाजिन्, सप्ति शब्दों का प्रयोग हुआ है[1] इसके अतिरिक्त दधिक्रा तार्क्ष्य, पद्व एवं एतश नामों का उल्लेख भी वैदिक साहित्य में विद्यमान है[2] रंग के अनुसार भी अश्व के कतिपय भेद किये गये है जैसे-हरित, हरि अरुण, पिशाग, रोहित श्याम एवं श्वेत[3]

रामायण में अश्व के लिये हय, वाजिन्, व अश्व शब्दों का प्रयोग देखा गया है[4] राम रावण युद्ध में अश्व प्रमुख पशु था ही अमरकोष में अश्व के लिये घोटक, पीति तुरग, अश्व, तुरगम वाजिन् वाह, अर्वन, गन्धर्व, हय सैन्धव, सप्ति, आजानेय कुलीन, विनीत व साधुवाहिन् शब्दों का उल्लेख है

अश्व विश्व के तीव्रतम पशुओं में से एक है यह मेरु दण्डीय उपजगत् के अन्तर्गत अश्व उपवर्ग में घोड़ा परिवार के अन्तर्गत आता है यह गज की भांति बुद्धिमान् एवं कुत्ते की भांति स्वामिभक्त होता है अश्व विश्व के सभी भागों में पाया जाता है मुख्यत मैदानी भागों में इसका अधिक निवास है काबुल व अरब के

---

1 ऋक० 1 4,3 7, वै० इ० पृष्ठ 42 (1), वा० स० 17/19
ऋक० 5/46/1, 7/44/4 वा० स० 7/74, वै० इ० 1 पृ० 42

2 वै० मा० प० 281

3 व० इ० 1 पृ० 42

4 'हय क्षपति राज्य च त्वत्सनाथमनिन्दि ते'—वा० रा० 22/8
'हयग्रीवचदानवम–वही 42/28

घोड़े गर्म देशों में उत्पन्न होते हैं भारत में कठियावाड़ के टांगन घोड़े प्रसिद्ध हैं सम्पूर्ण विश्व में अरब घोड़ा सर्वोत्कृष्ट माना जाता है। अफ्रीका, अमेरिका के कतिपय भागों में जंगली घोड़े भी पाये जाने का उल्लेख मिलता है किन्तु उनके निवास का एक सीमित क्षेत्र होता है। पर उन्हें जंगली नहीं कहा जा सकता।

अश्व जानवरों में सबसे सुडौल प्राणी है सुप्रसिद्ध पश्चात्य हॉगर्थ का कथन है कि घोड़ा कई दृष्टि से अद्भुत जन्तु है मेरा मत है कि सजीव जगत की शरीर रूपी कला में घोड़े के शरीर की बनावट सर्वोत्कृष्ट है।[5]

अश्व मानव का सबसे बड़ा साथी है उसने मानव का अनेक कार्यों में साथ बनाया है प्राचीन राजाओं के नाम अश्व के नाम से युक्त होते थे—उदाहरणार्थ घोड़ पाश्व इत्यादि संस्कृत के एक महाकवि का नाम भी 'अश्वघोष' है सम्भवतः अश्व के समान बुद्धिमान् एवं बलवान् लोगों को इस प्रकार के नाम रखने का शौक रहा होगा।

अश्व की शरीर रचना बड़ी सुन्दर है यह न अधिक लम्बा है न अधिक मोटा सम्पूर्ण स्तनपायित समुदाय में केवल घोड़ा जाति के ही जीव हैं जिनके खुर चिर हुये नहीं होते हैं पहले घोड़े का कद लोमड़ी जितना सा ही था इसका वर्णन प्रस्तर विकल्पों के आधार पर किया गया है घोड़े के कुल २४ दांत होते हैं जिनमें १२ कृन्तक व १२ दाढ़ें होती हैं घोड़े के आठ मोटे होते हैं एवं इसमें अश्व का स्पष्ट दांत विद्यमान होता है घोड़े के पांव इस भांति के बने होते हैं कि यह आसानी से दौड़ सके क्योंकि इसके पास अपने बचाव का एकमात्र साधन तेज दौड़ना ही है।[6] घोड़े के न सींग होते हैं और न ही पंजे जिनसे यह अपनी रक्षा कर सके। घोड़े के शरीर पर बाल होते हैं जिनको मनुष्य समय समय पर काटता रहता है इसकी गर्दन पर बड़े बड़े बाल होते हैं पूंछ के बालों को कभी जड़ से नहीं काटा जाता घोड़े के कान नुकीले होते हैं ऐंव सदा खड़े रहते हैं यह अश्व की जागृति का प्रमाण है अश्व दौड़ने में सबसे तेज है[7] अश्व एक बलवान् पशु है इसकी शक्ति के माप को 'अश्वबल' कहते हैं आधुनिक मशीनों में भी 'अश्वबल' को शक्ति की इकाई माना है यह मीलों आसानी से दौड़ सकता है, भले ही वह स्थान पहाड़ी हो या मदानी, रेतीला हो या पक्युक्त छ साल में घोड़ा जवान हो जाता है[8] अश्व का गर्भाधान काल ११ माह का होता है अश्व का शिशु जन्म के समय बकरी जितना होता है घोड़ा बड़ा उपयोगी जीव है यह

---

5 जन्तु जगत पृ० 157

6 ए० ब्रिग० पृ० 651

7 इन० चेम्बर० भा० 7 पृ० 227

8 इन० ब्रिटे० भाग 11 पृ० 754 ब

बग्गी या तागा खीचता है खेल के मदान म घुड़ दौड व पोलो अश्व पर आधारित मुख्य खेल हैं युद्ध के मदान मे सेना मे एव सकर्म म अश्व का महत्वपूर्ण स्थान है घुड सवारी को प्राचीन समय म सज्जन पुरुष की शिक्षा का एक आवश्यक अग माना जाता था [9]

अश्व एक शाकाहारी जीव है, यह मुलायम हरी घास पसन्द करता है इसके प्रोठ घास उखाड़ने म सहायक होते हैं घास के अतिरिक्त अश्व को दालें बडी अच्छी लगती हैं यह दालो को खाने से अधिक पुष्ट एव फुर्तीला रहता है अत मदानी भागो मे अश्व अधिक आसानी से अपना खाद्य प्राप्त कर सकता है पर्वतीय भागो म भी अच्छी घास मिल जाती है प्राचीन समय म खाने के लिय अश्व का शिकार किया जाता था किन्तु बाद मे इसे सवारी एव अन्य कार्यों के लिय उपयोग म लाया जाने लगा और यह पालतू पशु के रूप म सामने आया [10] शुक व रवि ने अश्व को सवारी के रूप म ग्रहण किया है

अश्व का पालन एक कठिन काय है इस पालतू बनाने के लिये घोडो को शिक्षित किया जाना है जगली घोडो को पकडने का तरीका गज को पकडने के तरीके के समान ही होता है सामान्यत खदे म बन्द करने के बाद कोई सवार घोडे की पीठ पर कूद कर बठ जाता है एव उसे काबू मे करने का प्रतिदिन प्रयास करता है क्रमश अश्व शिक्षित हो जाता है एव पालतू बन जाता है पालतू घोडो को कायकलापों के आधार पर चार भागो मे विभक्त किया गया है —

१ सवारी का घोडा—

सवार को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने वाले अश्व इस श्रेणी मे आते हैं, सेना व पुलिस के अश्व इसी प्रकार के हैं

२ गाडी खीचने वाले घोडे —

दूसरी प्रकार के अश्व जो गाडी, तागा, बग्गी आदि को खीचते हैं गाडी खीचन वाले अश्व कहे जाते हैं

३ लद्दू घोडे —

जो घोडे एक स्थान से दूसरे स्थान तक बोझा ढोते हैं, इस श्रेणी म रखे जाते हैं

---

9 वही० —इन० ब्रिटे० भाग ११ पृ० ७५४ व

10 इन० चेम्बर० भाग 7 पृ० 227

४ भार खींचने वाला घोडा —

ये घोडे खेत जातने, कुआ से पानी निकालने व भार ढोने के काम आते हैं घोडे म खीचने की शक्ति बहुत तीव्र होती है इसके ज्वलन्त उदाहरण है सिकन्दर का घोडा—ब्यूसिफेलस, नेपोलियन का अश्व मेरेंगो एव महाराणा प्रतापसिंह का अश्व चेतक (चेटक) जिन्होने अपनी स्वामिभक्ति को सवदा निभाया घोडे की बुद्धिमत्ता पर विद्वान् एकमत नही सामान्यत इसे गज, वनमानुष व कुत्ते के बाद अर्थात् चतुथ माना है किन्तु कतिपय विद्वानो के मत मे इसका दसवा या इससे भी नीचा स्थान स्वीकार किया गया है [11]

अश्व के सोने का तरीका भी विचित्र है वह तीनो टागो पर खडा होकर एक टाग को ऊपर उठाकर सोता है यही कारण है कि उसके परो की मासपेशिया सवदा जागृत रहती हैं जिसके कारण वह तेज दौड सकता है अश्व बहुत ही कम लेट कर सोता है।

अश्व का इतिहास बडा पुराना है यह हजारो वर्षों से मानव जगत् की सेवा करता रहा है बेबीलोनिया के लोगो को भी अश्व का ज्ञान था [12]

## संस्कृत काव्यो मे अश्व

संस्कृत काव्यो मे अश्व का प्रमुख स्थान है काव्यो मे इसे अश्व हय, वाजिन् तुरग, हरिद तुरग तुरगवर एव वाह नामो से सम्बोधित किया गया है [13] अब हम अश्व की काव्यगत विशेषताओ पर विचार करेंगे

अश्व एव मानव —

अश्व एव मनुष्य का सवदा साथ रहा है अश्व को भी गज की भाति धन माना है क्योकि कोशल के राजा ने रघु को अश्व दिये थे यह बात इसका प्रमाण है कि अश्व सम्पत्ति के रूप म होता था [14] अश्व का मनुष्य से इतना गहरा सम्बन्ध रहा है कि अश्व के सम्पर्क म रहने वाले लोगो के नाम भी अश्व का प्रधान मान कर रखे गये है [15] अपने स्वामी के दु ख म पशु-वग भी दु खी एव सुख म सुखी होता है बुद्ध का

---

11 इन० ब्रि० भाग पृ० 754 अ०

12 ए० ब्रि० पृ० 652

13 सौ० न० 1/23, बुद्ध० 3/1, कुमार० 14/19 रघु० 7/37 बुद्ध० 3/30 बु० च० 5/79, भवच० 2/69, रघु० 4/70

14 'अश्वजित्' सौ० न० 16/68

15 'तुरगावचर' बु० च० 5/68

अश्व कन्दुक उन घोडों में से एक था जो बुद्ध के अभिनिष्क्रमणोपरान्त दुखी हुआ था[16] मनुष्य भी अश्व को अपना समझकर उसे प्यार करते हैं[17] बुद्ध ने अपने अश्व से उसके साथ को सफल बनाने की प्रार्थना की थी[18] उन्होंने अश्व को मित्र माना है अतः यह उनके प्रेम का परिचायक है[19] समय के अनुसार अश्व अपनी आदतों में आमूल परिवर्तन कर लेता है[20]

इन्द्रायुध अश्व विशेष —

संस्कृत साहित्य में इन्द्रायुध एक विशेष अश्व है जो मानव योनी से अश्व योनी को प्राप्त होता है इसका विस्तृत विवेचन महाकवि बाण ने अपने ग्रन्थ कादम्बरी में किया है यहां यह महाराजा तारापीड के कनिष्ट पुत्र चन्द्रापीड के प्रिय अश्व के रूप में वर्णित हैं[21] इस अश्व के अनेक गुणों का वर्णन किया गया है इन्द्रायुध राजकुल में उत्पन्न, विनय गुण सम्पन्न, बलवान् सुन्दराकृति व शिल्पकला विशारद कहा गया है इन्द्रायुध काफी ऊँचा अश्व था[22] वह दुर्गा के सिंह के समान सटाओं वाला था[23] इन्द्रायुध को इन्द्र के अश्व का अवतार माना है[24] इन्द्रायुध को अश्वजाति के श्रेष्ठ छात्रों में से मानते हैं[25] वह भगवान् महादेव के वृषभ के समान था[26] अन्य स्थान पर इसे भगवान् भास्कर के रथ का अश्व कहा है[27] वेग में वह गरुड का प्रतिद्वन्द्वी एवं सांपों की तरह तैरने वाला था[28] इस प्रकार इन्द्रायुध को एक महत्व पूर्ण अश्व माना है

---

15 " कन्थक स्तुरगोत्तम ।
निह्नुया लिलिहे पादौ वाष्पमुष्णं मुमोच च ॥ बु० च० 6/53

17 मुञ्च कन्थक मा बाष्पं दर्शितेन सदश्वता ।'–बु० च० 6/55

18 'तुरगोत्तम वेदविक्रमाभ्यां प्रयतस्वात्महिते जगद्धिते च'–वही० 6/66

19 'इति सुहृदमिवानुशिष्य कृत्ये'–वही० 5/79

20 वही० 5/79

21 कादम्बरी– इन्द्रायुध वर्णना (24) पृ० 239–247

22 'उच्चस्पुरुप पृष्ठ भागम–वही पृ० 7

23 'लोहित सटमिव पार्वतीसिंहम'–वही पृ० 240

24 अशावतारमिवोच्च श्रवस '–वही पृ० 242

25 'अश्वातिशयमिन्द्रायुधमद्राक्षीत्'–वही पृ० 243

26 'कैलास तटाघात धातुधूलि पाटनमिव हरवृषभम' वही० पृ० 239

27 गगनतल निपतित दिवसकर रथ तुरग शंका मिलोप जनयन्तम'–वही पृ 241

28 जव प्रतिपक्षमिव गरुत्मत '–वही पृ० 242

इन्द्राश्व उच्चैःश्रवा —

इन्द्रपुर की भाँति उच्चैःश्रवा भी संस्कृत साहित्य में सर्वत्र समादृत एवं प्रयुक्त रहा है। उच्चैःश्रवा के समुद्र से उत्पन्न होने का वर्णन आता है। इन्द्र के अश्वारोही होने का। अश्वों का राजा 'उच्चैःश्रवा' की उत्पत्ति का निरूपण किया गया है।[29] शिशुपालवध में तो यहाँ तक कहा गया है कि इन्द्र अश्व को 'उच्चैःश्रवा' नाम की अनुपम उच्चैः पदवी प्रदान की गई है क्योंकि शिव की कान्ति को ... नहीं ... उच्चैःश्रवा से उपमित किया है।[30]

अश्व का विभाग—

अश्व प्राचीन समय से ही मनुष्यों के साथ रहा है। इसे अश्वशाला में रखा जाता है। हर्ष चरित में बाण ने अश्वों के विभाग स्थानों के नाम से किया है। वहीं बाण ने वनायु में उत्पन्न वाहीक (पंजाब) में उत्पन्न काम्बोज (मध्य एशिया) उत्पन्न भारद्वाज (गढ़वाल) में उत्पन्न सिन्धु देश एवं पारसीक (ईरान) में उत्पन्न अश्वों का उल्लेख किया है। ये सभी स्थान अश्वों के मुख्य विभाग स्थल हैं।[31]

अश्व की शरीर रचना —

पशु जगत् में अश्व की अपनी शरीर रचना है। यह अत्यन्त सुडौल और ... अश्व की शरीर रचना के विषय में महाकवि माघ ने एक सुन्दर विवरण प्रस्तुत किया है। अश्वों के गुणों का वर्णन करते हुए उन्होंने लिखा है कि उन घोड़ों की रीढ़ का पिछला भाग लम्बा था, पुच्छमूल विस्तृत थे, जिनके बाल घुंघराले व छोटे थे एवं स्थिर थे। उनकी पीठ के भाग लम्बे हुए और उठे हुए थे, उनके मस्तक, कमर एवं सीना विशाल थे।[32] यहाँ अश्व की शरीर रचना की स्पष्ट झलक प्रस्तुत की गई है। इससे यह स्पष्ट प्रमाणित होता है कि महाकवि को अश्व के बारे में व्यापक ज्ञान था। घोड़े के रंग के विषय में भी शब्दों में पटुता दिखाते हुए लिखा है सूर्य के घोड़ों का रंग पीला बताया गया है। यहाँ माघ पर वेदों के हरित शब्द का प्रभाव प्रतीत होता है। अतः सूर्य के घोड़े उसकी किरणें ही होती हैं जो पीली हुआ करती हैं। वैदिक साहित्य में हरित शब्द पीले के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है जो 'जरद' (पारसी) से साम्य रखता है।[33] दूसरे स्थान पर सूर्य के घोड़ों का विभिन्न वर्ण वाला

---

29 शिशु० 5/57

30 नैषध० 16/25

31 ह० च० पृ० 107

32 'प्रततविपि पुच्छ मूलवालि निभृत ह्रस्वतनुग पुच्छधरणम्–शि० व० 5/73

33 'हरिरिव हरिदश्व–शिशु० 11/56

बतलाया है [34] नील रग के अश्व का वणन भी मिलता है [35] महाराज नल के घाडे का रग श्वत बताया गया है [36] शिशुपालवघ म मुनहर अश्व का वणन किया गया है [37] महाकवि बाण न विभिन्न वण के अश्वा के नाम दिये हैं उन्होने लाल, श्याम, श्वत समद नीला सब्जा एव तीतरपखी रगा का निर्देश किया है [38] जगत म उपयु क्त वर्णित सभी प्रकार के अश्व वतमान में उपलब्ध हैं, अन इन सबका लिखना सत्यता के बहुत कुछ नजदीक हैं

अश्व के काय कलाप

विश्व का कोई जीव चुपचाप नही बठ सकता वह कुछ न कुछ काय अवश्य करता है अश्व तो पशु-जगत का शिरोमणि है अत वह अनक काय करता है अश्व का सबसे प्रमुख काय है—दौडना तेज दौडना अश्व का प्रमुख गुण है रथ म जुते अश्वो की क्रिया का वणन करते हुये कालिदास ने लिखा है कि अश्वा के माथे की चौरी सीधी खडी करके व घोडे इतन वेग से दौड रहे हैं कि इनकी टापा से उडी धूल भी इन्हे नही छू पाती है [39] नषधकार ने अश्व के वेग से आधी की तुलना की है [40] बलराम अश्व बहुत तीव्र गति से दौडत हैं, चाहे व रथ मे जुते हो या एकाकी [41] नल तेज घोडे पर चलता था [42] अश्व एक बली पशु है अत क्रोधावस्था म वह खूटा उखाडकर भी दौड पडता है [43] कादम्बरीकार न तो यहाँ तक लिख दिया है कि घोडो की टापा की आवाज से अ तराल बहरे हो जात हैं [44] वास्तव म अश्व की टापों की ध्वनि तज होती है नल की सेना के अश्व तो इतने तीव्र गति वाल थ कि उनके सम्मुख इन्द्र के अश्व भी नही टिक पाते थे इसी प्रकार पत्ते के समान सावले अलका-

---

34 शिशु० 4/14
35 ह० च० पृ० 41
36 शिशु० 5/55
37 ह० च० पृ० 107
38 वही० पृ० 107
39 शाकु० 1/8
40 नैषध० 1/73
41 द० च० 1/1
2 तमश्वारा जवनाश्यायिनम्'—नषध 1/65
43 उत्खातदप चलितेन सहैव रज्वा कील प्रयत्न परमानवदुग्ध हेरण'—शिशु० 5/59
44 'चलित-चटुल–तुरग-बल–मुखर-खुर–बधरी कृत भुवना तराला'—कादम्बरी० पृ० 186

नगरी क घोडे अपने रग व चाल दानो स सूय के घोडो को परास्त करने वाले थे[45] महाकवि माघ न अपने काव्य म अश्व की चाल का यन्त सुदर वणन किया है अश्व की गति अश्व रक्षको पर आधारित होती है[46] अश्वो की गति मे भी समानता होती है उनके चलने का भी एक विशेष तरीका होता है[47]

जिस समय घोडे दौडत हैं तो मदानो की मिट्टी उडने लगती है एव वातावरण धूलमय हो जाता है इसका कारण यह है कि अश्वो की गति अत्यन्त तीव्र होती है एव इसी कारण मिट्टी उडती है नषधकार ने घोडो के द्वारा उडायी धूल से समुद्र म रेत भरने का वणन किया है[48] घोडो के द्वारा उडायी गयी धूल स दिशा रूपी हाथी स्नान करते हैं एव यह धूल लोगो क ललाट पर चिपक जाती है[49] मिट्टी ठोकर खाकर भी सवदा शीश पर आ चढती है ऐसी मान्यता है अश्व एक चचल पशु है अत वह चुप नही बठ सकता वह अपने खुरो से अस्त बल को उखाड डालता है[50] यह उसकी चचलता एव जागृति का प्रतीक है। सस्कृत काव्यो म एक ओर अश्व द्वारा धूल उडाने का वणन है तो दूसरी ओर धूल शात करने का कादम्बरी म अश्व की लार से मिट्टी शात होने का उल्लेख है[51] महाकवि की यह कल्पना मात्र प्रतीत होती ह क्योकि घाडो की लार से धूल शात नही हो सकती हाँ, यह सम्भव है कि यदि एक अश्वशाला म अनेक अश्व बन्धे हो एव वे सब लार टपकायें तो वह सीमित स्थान गीला हो सकता है किन्तु धूल शात नही हो सकती

अश्व की बोली को हिनहिनाना कहते हैं जिसका उल्लेख काव्यो मे मिलता है[53] घोडो का हिनहिनाना मधुर होना है[54] अश्वो की हिनहिनाहट तीव्र होने स हाथियो की चित्कार के मध्य भी स्पष्ट सुनाई देती है अश्व की हिनहिनाहट को सुन

---

45 'यत्र श्यामा दिनकरहयस्पर्धिनो यत्रवाहा'—मेघ० उ० 13
46 शिशु० 5/10
47 'इतीव धारामधीय मण्डली क्रिया वियामडि तुरगमस्थली'—नषध० 1/72
48 वाजिभिराहत खुर'–कुमार० 14/19
49 नषध० 1/57
50 नैषध० 1/57
51 कादम्बरी० पृ० 337
52 शिशु० 17/31
53 शिशु० 12/15
54 'हृतमधुरहेषारव –ह० च०

कर सेना म लोगो को मूच्छा प्राप्त का उल्लेख मिलता है[55] अश्व के बोलने का कोई निश्चित समय नही होता किन्तु वह किसी विशेष परिस्थिति म ही बोलता है हृष चरित म अश्व के रात्रि म बोलन का वणन मिलता है[5-A] अश्व के प्रवेश पर राजकुमार के प्रवण की निश्चितता मानत है[55-B] अत सिद्ध होता है कि बुद्ध व अश्व का अटूट सम्बध था बुद्ध का अश्व वडा समझदार था जो स्वामी की अनिच्छा पर नही हिन हिनाता था[56]

घोडा थकने पर आराम चाहता है थकन पर घोडे का हरी घास व शीतल जल की आवश्यकता रहती है ताकि वह फिर फुर्तीला बन जावे[57] अश्व के सोकर उठने का उल्लेख हर्षचरित म हुआ है वहा बताया गया है कि सोकर उठन पर अश्व पाछे के परो को तानता है, रीढ को अन्दर गढाता ह अपन अङ्गो को फलाता है गदन का झुकाता है मुँह को छाती म लगाता ह अपनी अयाल को झाडता है, घास खाने के लिए थूथन को लचायमान बनाता है एव मन्द मद घुर घुरता हुआ खुरा से जमीन को कुरेदता है[58] अश्व को स्पश करने म भी उस आराम मिलता है अश्व की सुरत क्रीडा का उल्लेख भी काव्यो म मिलता है इन्द्र की घाडिया सूय क घोडा से रति की कामना रखती थी[60]

अश्व की शोभा बढाने के लिये उस आभूषणो से अलकृत किया जाता है इनके गहन लोगो को आकर्षित करत रहते हैं एव ध्वनि दिशाओ को मुखरित करती रहती है[61] अस्ताचल की ओर जात हुए अश्वो की दशा का सुदर वणन किराताजु-नीयम् मे करत हुए महाकवि भारवि ने लिखा है कि अश्वा के सिर झुक जात हैं काना की चौरिया पुन पुन आखा पर गिरने लगती है एव केशर जूडे के लगाव से निखर जाते हैं[62]

---

55 बु० च० 28/49 55-A ह० च० प० 36, 55-1 बु० च० 8/19

56 'यदि हयहेषिष्यत बोधयन जन
खुर क्षितौ वाप्यकरिष्यतध्वनिम् ।
हनुस्वन वाजिनिष्यदुत्तम
न चाभविष्यन्मम दु खमोक्षम् ॥ वही० 8/41

57 कादम्बरी० प० 368

58 हर्षचरित

59 स्पश निस्तीणमित वाजिनम् बु० च० 6/4

60 नैषध० 19/17

61 शिशु० 17/36

तीव्रतम सवारी– विश्व के पशु जगत मे अश्व सबसे तीव्र सवारी है इसीलिये काव्यकारो ने अश्व की तीव्रतम गति वाली वस्तुओ से बहुधा तुलना की है घोडे की सवारी करने से पूर्व उस पर जीन कसी जाती है ताकि सवार ठीक से बैठ सके[62] अश्व अतिशीघ्र ही लम्बे मार्ग को पार कर जाता है[63] अश्व की तीव्रगति को देखकर लोग उसे पख युक्त अश्व मानते हैं[64] अश्व की तीव्रता का एक बडा प्रमाण यह है कि घुड सवारो से कुत्ते पीछे रह जाया करते थे[65] घोडे रथ मे जुडे होने पर भी तेज चलते है[66] अश्व को तेज चलाने के लिए अश्व को चाबुक से हाका जाता है[67] अश्व पर चढने का वर्णन विभिन्न काव्यो मे मिलता है[68] चन्द्रापीड को अश्व पर चढने व अश्व को हाकने का ज्ञान दिया गया था[69] स्त्रियो का अश्व पर चढना भी काव्यो मे वर्णित है[70] अश्व की लगाम को खीचकर उनका वेग कम किया जाता है[71] घोडो को रोकने का वर्णन भी मिलता है[72] सवारी के लिए घोडो को लाने का उल्लेख भी यदा कदा मिलता है[73] अश्व से उतरने का वर्णन सभी काव्यकारो ने किया है[74] इससे यह सिद्ध होता है कि अश्व एक लोकप्रिय सवारी रहा है

अश्व एक सेनाङ्ग—गज की भाति अश्व का भी युद्ध मे बडा हाथ रहा है अश्व की दौडने की शक्ति व फुर्ती युद्ध मे अत्यन्त सहायक है सेना मे हाथियो की अपेक्षा घोडो की सख्या अधिक होती है युद्ध मे अश्व को लेकर जाने का उल्लेख

---

62 किरात॰ 8/42

63 वापय वाजिन पर्याणम'—ह० च०

64 'प्रतूर्णतुररो विदक्षुरत लताभण्डपेदवुश भाजगाम ।'—ह० च० प० 43

65 'प्रद्यापि सेना तुरगा सविस्मयरलूनपक्षा इव मेनिरे शिशु॰ 12/17

66 ह० च० प० 72

67 तुरगेषु कशाभिघात —कादम्बरी०

67 शिशु॰ 18/17

69 'नीलसिन्धुवारवर्णे वाजिनि महति समारुढम'—ह॰ च॰ पृ॰ 41

70 कादम्बरी॰ प॰ 231

71 शिशु० 12/20

72 ह० च० प० 95

73 'प्रगृह्य तां वाजिन —शाकु० 1 गद्य

74 बु० च० 6/11

काव्यकारा न किया है [75] 'सेना म जाने वाले ग्रश्वो को लोगा ने देर तक देखा' [76]– इस वाक्य क पढ़न से यह प्रतीत होता है कि घाडा की सख्या काफी होती थी महा कालिदास न इन्दुमती स्वयवर क समय घुडसवारा के आपस म उलझन का उल्लेख किया है [77] युद्ध की यात्रा म ग्रश्व के शामिल होने का विवरण भी मिलता है [78] शिशु पालवध म श्री कृष्ण की सेना के ग्रश्वो का वर्णन है [79] वसुमित्र द्वारा सेना के ग्रश्वो को लौटाने का उल्लेख कालिदास ने किया है [80]

ग्रश्व व गज—ग्रश्व एव गज का निरन्तर सम्पर्क रहा है जहा जहा ग्रश्व का उल्लेख ग्राता है सामान्यत वहा वहा गज की उपस्थिति देखी जाती है सेनाङ्गो म गज, ग्रश्व, रथ एव पैदल का ग्रनेक स्थला पर उल्लेख ग्राया है इससे ऐसा प्रतीत होता है कि जहा गज भारी भरकम वस्तुग्रो को हटाने म समर्थ होता है वहा ग्रश्व तीव्रगति से बाधाग्रो को पारकर सेना को ग्रागे बढाने म सहायक होता है ग्रत सिद्ध होता है कि गज व ग्रश्व का चोली दामन का साथ है

कवियो द्वारा उपमित ग्रश्व —संस्कृत काव्यो मे ग्रलकारो का विशेष महत्त्व है उनमे भी सादृश्यमूलक उपमादि ग्रलकारो पर काव्यो म विशेष बल दिया गया है ग्रश्व का सामान्य गुण चपलता ग्रर्थात् स्फूर्ति है ग्रश्व की स्फूर्ति को कवियो ने इन्द्रियो व लहरो से उपमित किया है मनेन्द्रियो एव लहरो को वश म करना एक कठिन कार्य है ठीक उसी प्रकार ग्रश्वो को रोकना भी कठिन है ग्रत कवियो की यह उपमायें सार्थक साधक हैं बुद्ध को जितेन्द्रियाश्व कहा है [81] उन्मार्गगामी इन्द्रियो को वश म करना ग्रश्व को वश म करने के समान कठिन है [82] कामीजन इन्द्रियरूपी ग्रश्वो द्वारा बहकाये जाते हैं [83] सौन्दरानन्द मे चपल इन्द्रियो का ग्रश्व कहा है [84] मन को रथ एव इन्द्रियो को मन रूपी रथ के ग्रश्व माना है जो उसे तीव्रता से दौडाते रहते हैं [85]

---

75 'हयाना लक्षत्रयम—ह० च० प० 1830
76 शिशु० 5/6
77 'तुरग सादीतुरगाधिरूढम—रघु० 7/37
78 ह० च० पृ० 142
79 शिशु० 12/1
80 मालविका० 5/15
81 जितेन्द्रियाश्व'—बु० च० 5/23
82 बद च दुष्टेन्द्रियवाजिवश्यता —किरात० 2/39
83 सौ० न० 8/58
84 लोलैरिन्द्रियमाजिभ '—वही० 12/70
85 वही० 10/41

अश्वो द्वारा उड़ाई गयी रज (धूल) जिस प्रकार आंखो को निस्तेज बना देती है, उसी प्रकार इन्द्रिया रूपी अश्वो के द्वारा मनुष्य की आखे रजता (राग, लालिमा) को प्राप्त होती है[86] बुद्ध ने धैर्य धारण कर इन्द्रियरूपी अश्वो का दमन किया[87] किरातार्जुनीयम् म यक्ष अर्जुन को कहता है कि अर्जुन की इन्द्रिया अश्वो के समान उन्मार्गगामी नही हैं[88] अश्वो की गति की समता लहरो के मचलने से की गई है अश्वो को समुद्रीय जल के सदृश भी वर्णित किया है[89] अन्यत्र अश्वो की तुलना बाण की तीव्रगति से की है जिस प्रकार तीव्र तीर शत्रुओ की सेना मे (सैनिको म) प्रवेश पा जाते हैं उसी प्रकार अश्व भी प्रवेश कर जाते हैं[90] इस प्रकार अश्वो की गति की तुलना लहरो इन्द्रियो व बाण से की गई है वास्तव मे अश्व की चाल हवा के समान होती है यह जीवधारियों म तीव्रतम सवारी है[91]

अनेक बार अश्व के अगो की तुलना मानव अगो स की जाती रही है सन्यासी के अधरोष्ठ को घोडे के ओठ से उपमित किया है[92] युवक की तुलना घोडे के बछडे से करते हुये कवि ने लिखा है कि युवक ने घोडे के बछडे के समान प्रिया के स्तनद्वय चपलता स छू लिया[93] यहाँ अश्व की चपलता की युवक की चपलता से समता प्रदर्शित की गई है रथ म दो घोडो के साथी की तुलना दो सहोदरो से की है[94] अश्वो के दौडने पर गर्द उडती है एव वह ऊपर तक छा जाती है हिमालय पर रघु की सेना के अश्वो ने दौडना प्रारम्भ किया तो गर्द हिमालय के ऊपर तक छा गयी, जिससे ऐसा प्रतीत होने लगा मानो हिमालय और भी ऊचा हो गया है[95] अश्व के खुरो से निकलने वाली धूल की तुलना भगवान् नारायण के चरण कमल से निकली गगा की धारा स की है[96] रघुवश म अश्वो की गति की तुलना बुद्धि स की गई है लिखा है कि जिस प्रकार सूर्य के घोडे शीघ्र ही चारों दिशाओ को पारकर लेते हैं उसी

86 हु० च० पृ० 21
87 'धुर्येन्द्रियाश्वाश्चापलानि विनिन्ये'—बु० च० 2/34
88 किरात० 5/50
89 'तुरगैस्तरगायमाणम —ह० च० प० 99
90 किरात० 16/10
91 वही० 19/62
92 'तुरगानुकरणाधरोष्ठम' ह० च० प० 172
93 'तुचरसकिशोर को कयचिवरसया तदंगेन परमृशने — शिशु० 7/73
94 'रथसर्वाविव सर्वाहितु'—मालविका० 5/14
95 रघु० 4/71
96 'विपथगाप्रवाह इव हरिचरणप्रभव'—कादम्बरी० पृ० 351

प्रकार महाराज रघु न बुद्धि की सहायता से शीघ्र ही चारो विद्याओ को सिख लिया [97]

कवियो की कल्पना के अनुसार सामान्य अश्व सूय के रथाश्वो से ईर्ष्या करत हैं एव स्वय को उनके समान बनाना चाहत हैं हषचरित मे लिखा है कि अश्व सूय के रथाश्वो की ईर्ष्या से स्वय अपनी चामरमाला को पखो म परिवर्तित कर आसमान म उड जान क इच्छुक हैं [98] नल का अश्व सूय क अश्वो का अपनी श्वतता एव पातो की किरणो स उपहार कर रहा था—इस प्रकार का वणन महाकवि हष ने किया है [99] अश्व हिरणो का भी उपहास करत हैं [100]

इस प्रकार अश्व का विभिन्न कवियो न विभिन्न रूपो मे उपमित करने का सफल प्रयास ही नही किया अपितु सस्कृत साहित्य म एक नया अध्याय भी जोडा है

सस्कृत काव्यो मे अश्वमेघ यज्ञ का वणन भी मिलता है [101] इन्द्र ने दिलीप के अश्वमेघीय अश्व को अपन रथ से बाध लिया था [102] राजा दिलीप न अश्वमेघ यज्ञ के लिए जो अश्व छोडा था उसकी रक्षा का भार रघु पर था [103]

यदि अश्व के वणन का हम विश्लेषणात्मक अध्ययन करें तो हम पायेंगे कि अश्व का सबसे अधिक वणन कालिदास ने ७८ बार किया है द्वितीय स्थान बाण एव ततीय अश्वघोष का है, जिन्होंने क्रमश ६२ व ५० बार अश्व का वणन किया है माघ श्री हष भारवि, दण्डी व सुबन्धु ने क्रमश २३, २३, ६, ८, व ३ बार अश्व का वणन किया है इस प्रकार कालिदास एव कालिदासोत्तर काव्यो मे अश्व का वणन कुल मिलाकर २५६ बार हुआ है जो गज के वणन से आधे से कुछ कम है । प्रस्तुत तालिकाओ मे अश्व के वणन का विश्लेषण दशनीय है

---

97 रघु० 3/30
98 ह० च० पृ० 99
99 नषध० 1/62
100 ह० च० प० 99
101 मालविका 5 गद्य
102 हरतमश्व रथरश्मिसयतम —रघु० 3/42
103 'नियुज्य ≡ होम तुरग रक्षणे'—रघु० 3/38

## तालिका–१

### अश्व के वणन का कालिदास के काव्यो म विश्लेषण (७८)

| सस्या | काय | वणन का क्रम |
|---|---|---|
| ५० | रघु० | १/४२, ४८, ५४ ३/३०, ३८, ३९ से ५५ ६२ ६४, ६५, ६७ ४/२५ ४८, ५६ ६२, ६७ ७०, ७१ ६/३३, ७/३७ ३९, ४२, ४७ ५६ ५९, ७० ९/५०, ५२ ६६, १२/८४, १०३ १३/३, १५/५८ १६/३० १८/२३ |
| १९ | कुमार० | ६/७५ स ७८ ८/४१ ३४, ४१ ४३ १५/१५ २३ १६/२ ८, ४१, ४२ १७/२९ से ३१ |
| १ | मेघ० | उ० १३ |
| ४ | शाकु० | १/८, गद्य, ५/४ |
| ५ | मालविका० | ५/१४ १५ ५/गद्य |
| १ | विक्रम० | १/५ |

## तालिका–२

### 'अश्व के वणन का कालीदासोत्तर काव्यो मे विश्लेषण (१७८)

| कवि | सस्या | काव्य | वणन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्व घोष | ४२ | बु० च० | २/१ २२ ३४ ३७ ५/३ २२ ६८, ७१, ७२ से ८१ ६/३ से ५ ११ २९ ३१, ४३, ५४ ६६ ८/१८ १९, २३ ३८ ४०, ४१ ४४ ४५, ७४, १३/१९ १६/४९ १९/५१, २६/३६ २८/४ ८ ५२ |
| | ८ | सौ० न० | १/५२ ३/१ ५/१ ९/२३ १०/४१ १२/२१ १६/५८, ८८ |
| भारवि | ९ | किरात० | १/१६ ५/५० ७/११, १९ १५/१६ २४ २६/४, ८ |
| माघ | २१ | शिशु० | ३/२९ ३०, ५५, ६४ ६६, ६८ ८२ ५/१० १२/२, ६, १५ १७, २२, ३१ ७३, १६/७४ १७/३२, ६४ १८/३, ५, २२ १९/२५, ६२ |
| श्रीहर्ष | २१ | नषध० | १/५७ ६१, ६२ ६४ से ६६ ६९ ७० से ७३, १०९, २३ २/८० ५/५८ १०/८ ११/१२७ १२/९९ १०० १३/२४ १६/२५ १७/२०४ १९/१७ |
| सुबन्धु | ३ | वासवदत्ता | पृ० ३१ ५५, २५६ |
| बाण भट्ट | १७ | ह० च० | पृ० २१ ४१ ४३ ५९, ९५ ९९, १०७, १२, ४२ ५८, २१२ ६१, ३२४, ६६ ६६ ६९ ४४१ |
| | ४५ | कादम्बरी | पृ० १७, ३७ १८६, २३८ से २४८ ३०३ ४ ४८, ५० ५१, ६४ ६६, ६८, ८०, ९४, ४४९ ५५२ ६०४, ५, ८, [illegible] २८, २९ ३२ ३३, ४८, ४९ ५२, ३०, २०, ४२, ६५, ६७, ११३, ४५, ७६, ९२ |
| दण्डी | ८ | द० च० | पृ० ५ १३ २१, २३, ४७, ७१, ७२, १७० |

# खर
## THE ASS

"यादृशी शीतलादेवी तादृशोवाहन खर
—सुभाषित पद।

सम्पूर्ण संस्कृत-साहित्यारण्य मे खर का गौण स्थान रहा है वैदिक-साहित्य में खर का यदा-कदा उल्लेख किया गया है वीरकाव्य-साहित्य म खर का वर्णन मिलता है खर को वेदो म परस्वान्[1] खर[2] एव गर्दभ[3] शब्दो से कहा गया है रामायण म इसे खर शब्द से कहा गया है रावण के रथ को खर-युक्त एव खर के समान शब्द करने वाला कहा है[4] अमरकोष मे खर को चक्रीवन्त, वालेय, रासभ, गर्दभ व खर शब्दो से कहा गया है[5]

अश्व के वश म खर का प्रमुख स्थान रहा है यह मेरुदण्डीय-उप-जगत् के अन्तर्गत अश्व परिवार का सदस्य है खर अश्व जाति की एक उपजाति है यद्यपि खर उत्कृष्ट जाति का जीव है फिर भी इसे 'गधा' मात्र कहकर अत्यन्त निकृष्ट जीव माना जाता है हमारे देश म तो इसे नीचता एव मूर्खता का साक्षात रूप मान लिया है इसे शीतलामाता का वाहन माना है एव कहा है जैसी शीतला माता वैसा ही उसका वाहन '[6] इस प्रकार बेचारे गधे का बडा मजाक उडाया गया है वास्तव मे यह सीधा परिश्रमी और सहनशील ता होता ही है बोझ उठाने म भी अपना सानी नहीं रखता[7] गधा सामान्यत चार फुट लम्बा एव तीन फुट ऊचा प्राणी है गधे के कान

---

1 ऋग्वेद 10/61/8

2 यथोपरि० 3/53/23

3 एतरेय आरण्यक 3/2/4

4 'खरयुक्त खरस्वन' वा० रा० 3/49/19

5 चक्रीवन्तस्तु वालेया रासभा गर्दभा खरा इत्यमर (वैश्यवर्ग)

6 यादशी शीतलामाता तादशो खरवाहन —लोकोक्ति

7 जीवजगत् पृ० 625

दीघ होते है इसका र ग सलेटी होना है खर की बोली बनी नही होती है इसकी बोली को रवना कहते हैं इसका प्रमुख खाद्य घासफूस है मादा एक बार म एक ही बच्चा देती है जो लगभग नौ माह म उत्पन्न होता है[8] बोझा ढोना गधे का परम कर्त्तव्य हो गया है इसी कारण भारत म धोबी व कुम्हार का प्रमुख सहायक बन गया है इतना उपयोगी एव कामकारी होने हुये भी इसे दाग कायर छोड दिया जाता है एव श्रासानो से फिरन भी नही लिया जाता किन्तु मिश्र इत्यादि देशो मे खर का अत्यन्त आदर है खर को वहा विशेष मुक्त वातावरण मिला है यही कारण है कि वहा के गधे हमारे देश के गधो से अधिक स्वच्छ एव बड कद के होते हैं खर भी अश्व की भाँति वर्षों स मानवता की सवा करता रहा है[9] प्राचीन समय म खर खेती व सिचाई के कामो म अत्यन्त सहायक रहा है आजकल भी खेतो के कामो म खर का महत्वपूर्ण स्थान है पहाडी भागो म गधे का उपयोग सवारी के लिये किया जाता है इस प्रकार गधा मानव सेवा म व्यस्त रहा है

अश्व-परिवार के अन्तगत खर के अतिरिक्त एक और प्राणी आता है जिसे खच्चर कहा जाता है यह खर और बडवा के सम्भोग से उत्पन्न होने वाला जीव है इसम सन्तानोत्पत्ति की क्षमता नही होती प्रस्तुत लेख म हमने खर व खच्चर को एक ही समुदाय म रखा है

## सस्कृत काव्यो म खर

सस्कृत काव्यो म खर का उल्लेख विरल है, इसे चक्रीवत्,[10] वालेय[11] रासभ[12], गदभ[13], एव खर[14] नामो स पुकारा गया है

**खर एव मानव**—खर एव मानव का गहरा सम्बन्ध रहा है खर के नाम पर राक्षसो के नामो का उल्लेख मिलता है रघुवश महाकाव्य मे 'खर' नामक राक्षस का नाम मिलता है[15] बाण ने लम्बकर्णामो का उल्लेख किया है, जो गधे की

---

8 ए० हिन्ग० पृ० 659
9 यथोपरि० प० 658
10 हर्षचरित प० 366 शिशु० 5/8
11 कादम्बरी पृ० 302
12 यथोपरि० पृ० 79 कुमार० 15/21
13 बु० च० 21/27
14 रघु० 12/42
15 'खरादिप्रस्त तथाविधम। —रघु० 12/42
यथोपरि० 12/47, 13/65

भाति काफी बाक्र उठाने वाले हान हैं [16] 'एक मुनि ने एक बार एक खर का शिश्नि किया'—इस प्रकार का वर्णन बुद्धचरित में मिलता है [17]

खर के कार्य कलाप—खर भी अश्व की भाति बुद्धिमान् जीव है वह अनेक बातो को आसानी से सीख सकता है गधा सवारी का भी एक उत्तम साधन है [18] गधा पर लडको द्वारा सवारी करने के वर्णन मिलते हैं [19] खच्चरो के द्वारा गाडी खीचने के उल्लेख भी मिलते हैं [20] खच्चरो का सेनाङ्ग के रूप मे उल्लेख नपषकार ने किया है [21]

कवियो द्वारा उपमित खर—खर को काव्यकारो ने अनेक स्थलों पर अनेक सन्दर्भों में उपमित किया है विशालकाय कुत्ता को गधा से उपमित किया है [22] धुयें का रग गधे के रग से साम्य रखता है अत खर के रग की तुलना धुए से की है [23] तपोवन के अग्निहोत्र की धूम रेखाओ को भी गन्हे के रोमो से उपमित किया गया है [24] किसी किसी प्रदेश की धूल सलेटी रग की होती है शिशुपालवध मे वर्णन किया गया है कि गधे के रोम के समान धूल आकाश में फैल गयी [25]

इस प्रकार सम्पूर्ण काव्यो मे खर का वर्णन कुल मिलाकर १८ बार हुआ है कालिदास ने खर का ५ बार उल्लेख किया है बाण, माघ अश्वघोष श्रीहर्ष एव भारवि ने खर का वर्णन क्रमश ५, ३, २, व १ बार किया है निम्नांकित तालिकाओ मे खर के वर्णन का विश्लेषण दिया गया है

---

16 लम्बित शस्टे' ह० च० प० 375

17 गदभ च मुनिश्रेष्ठो दिदीपे दीनवत्सल बु० च० 21/27

18 रघु० 5/32

19 ह० च० पृ० 366

20 शिशु० 12/19

21 नपध० 10/8

22 'प्रप्रतो वालेय० कादम्बरी० पृ० 302

23 'धूम ज्वलन्तो० कुमार० 15/21

24 रासभ-रोम-धूसरासु'—कादम्बरी० प० 79

26 मूरेण० शिशु० 5/8

## तालिका–१

'खर' के वर्णन का कालीदास के काव्यों में विश्लेषण (५)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| ४ | रघु० | ५/३२ १२/४२ ४७ १३/६५ |
| १ | कुमार० | १५/१ |

---

## तालिका–२

खर' के वर्णन का कालीदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (१३)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्वघोष | २ | बु० च० | १३/१६ २१/२७ |
| भारवि | १ | किरात० | १६/७ |
| माघ | ३ | शिशु० | ५/८ १२/१६ २४ |
| श्रीहर्ष | २ | नैषध० | १०/८ १७/७७ |
| बाण | २ | ह० च० | पृ० ३६६ ७५ |
| भट्ट | ३ | कादम्बरी० | पृ० ७६ ८८ ३०२ |

---

# क्रमेलक
# THE CAMEL

'क्रमेलक निन्दति कोमलेच्छु जभलक कण्टकलम्पटस्तम्"
—नैषधचरित 6/104

संस्कृत साहित्य म वर्णित पशु वग मे ऊट का गौण स्थान रहा है वदिक साहित्य मे ऊट का कही कही उल्लेख मिलता है ऊट को वदिक साहित्य मे धूम्र व उष्ट्र नामा से एव मादा ऊट का उष्ट्रि नाम से कहा है, आप्टे के शब्दकोष मे ऊट के लिये क्रमेल शब्द मिलता है [1]

ऊट का वश एकाकी वश है यह मेरुदण्डीय उपजगत् के अन्तगत ऊट-परिवार का एक सदस्य है रेतील टीलो वाला प्रदश इसे अधिक प्रिय है भारत मे थार के रेगिस्तान (राजस्थान) म ऊट मानव की सर्वोत्कृष्ट सवारी का सहारा है राजस्थान के ऊट प्रसिद्ध हैं

ऊट के शुभ लक्षणो को बताते हुये कहा गया है कि जिसका मस्तक नगाडे जसा और जिसके कान रत्ती की तरह छोटे छोटे हो वह उत्तम ऊट होता है [2]

राजस्थानी लोक साहित्य मे ऊट को अनेक योद्धाओ एव प्रेमियो की सवारी तो कहा ही है साथ ही इसे 'प्रेमदूत' एव 'पथ प्रदशक' भी माना है ऊट के शरीर की बनावट बडी विचित्र सी है यह काफी लम्बा एव ऊचा जानवर है सामान्यत ऊट की ऊचाई ८ फीट से १० फीट तक की होती है इसकी गदन काफी लम्बी होती है जिससे वह ऊचे वृक्षो के पत्ते खाकर अपनी जीविका निर्वाह करता है ऊट की टागे काफी पतली सी एव लम्बी होती है पीठ पर उसके एक कूबड जो सामान्यत बालो से ढका रहता है ऊट का रग भूरा एव कत्थई होता

1 त० स० 1/8/21/1 काठक० 15/2 ऋक० 10/106 वा० रा० यु० 60/45, उष्ट्र क्रमेलकमयमहाम'

2 'माथा दामण जेहडा कान रतीड़ रतीह'—राजस्थानी लोकोक्ति

है इसका अधरोष्ट लटकता सा होता है जो कि उसकी स्पर्शेन्द्रिय है कहते हैं कि ऊट का कूबड चर्बी की एक गाठ मात्र है जो उसे लम्बे सफर म काम देती है चर्बी शरीर का पोषण करती रहती है एव ऊट को भोजन की अत्यावश्यकता नही रहती [3] खाद्य की भाति ऊट के पट म जल जमा करने के लिय थलिया बनी होती हैं जिनके पानी को यह लम्बे सफर म काम लेता है कहते हैं ऊट ३४ दिन बिना पानी के गुजार सकता है बोझा ढोते हुये रेगिस्तानो को यह आसानी से पार कर लेता है [4] इसके परो के नीचे मुलायम गद्दी लगी होती है जिसमे यह टीलो पर आसानी से दौड सकता है क्रमेलक एक घटे मे ८ से १० किलोमीटर की दूरी तय कर सकता है इसकी घ्राणेन्द्रिय भी बडी तीव्र होती है रेगिस्तान मे जहा जहा पानी का दर्शन तक न हो एव सब निराश हो चुके हो ऐसे समय मे ऊट की रास ढीली छोड देने पर यह सीधा नखलिस्तानो की ओर दौडकर मानव की प्राण रक्षा करने म समर्थ है

ऊट को खाने के लिये कटील वृक्ष चाहिये वे रेगिस्तानो म बहुतायत मे मिल जाते हैं इस कड कुरमुर काटे अति प्रिय है [5]

अपने जीवन काल मे ऊटनी अपने स्वामी को सवारी ही नही देता अपितु पीने के लिये पानी भी देती है एव कपडा के निर्माणार्थ ऊन भी देती है मादा ऊट के दूध स अनेकानेक औषधियो का निर्माण भी होता है ऊन के नमदे कम्बल व कपडे बनते हैं मरणोपरात उसकी चम के जूते बनाये जाते है इस प्रकार यह मानव का परममित्र है यह जीवन क आदि से जानजातर मानव की सेवा करता है *जबकि मानव इसकी नाक को चीर कर इसे परतत्रता के बन्धन मे डाल देता है* इसका परोपकार किसी महामुनि के परोपकार से किसी प्रकार न्यून नही यह एक बुद्धिमान जीव है इस फल व सब्जी विक्रेताओ के द्वारा माग पर बिना निर्देशन क चलते हुय देखा गया है जो बस आदि की स्वत रास्ता देकर चलत हैं

ऊट अपने शत्रु व मित्र को अच्छी तरह पहचानता है यदि मालिक इस अधिक तग करत हैं तो अवसर पाकर यह उसका प्रतिशोध करता है [6]

---

3 जीव जगत पृ० 616

4 ए० हिन्गo प० 699

5 काणो ऊट कडा खानो देख —राज० कहावत
दूजा दोवड चोवडा, ऊट कटासह खाए'—ढोला मारू रा दूहा-309

6 ए० हिन्गo पृ० 698

राजस्थान सरकार द्वारा ऊट को आर० एo सी० का प्रतीक माना है राज स्थान के प्रसिद्ध स्काउट कमिश्नर एव मरु स्काउटिंग योजना के प्रवतक श्री दत्त ने ऊट को मरु स्काउटिंग का प्रतीक बतलाया है

मा॰ा ऊट साल म किसी भी समय बच्चा दे सकती है गर्भाधान ३१५ से ३८६ दिन बाद बच्चा पदा होता है ऊट के बारे मे एक मुहावरा भी अत्यन्त प्रचलित है—'ऊट क मुँह मे जीरा"—इसका अथ यह है कि ऊँट जसे विशाल काय जीव को थोडी सी वस्तु से क्या हो, उसे तो खान क लिय काफी चाहिय सस्कृत उक्तिया म गधे व ऊट दाना के पारस्परिक सम्ब ध को प्रदर्शित करने वाली एक उक्ति इस प्रकार है जिसमे गधे द्वारा ऊट के रूप एव ऊट द्वारा गधे की ध्वनि को प्रशसा किया जाना वर्णित है

'उष्ट्राणा विवाहेषु गीत गायन्ति गदभा ।<br>
परस्पर प्रशसन्ति ग्रहोरूपमहोध्वनि ॥

सस्कृत काव्यो में उष्ट्र —

स्कृत का॰यो म उष्ट्र का वणन यून है इसे उष्ट्र, क्रमेलक, रवण, दासेर ए॰ा शृ खलक नामा से कहा गया है[7]

ऊट की शरीर रचना—ऊट की शरीर-रचना के विषय म सस्कृत का॰यो म कोई स्पष्ट उल्लेख नही मिलता कादम्बरी मे ऊट के बाला को पिंगल वण का बतलाया है[8]

ऊट के क्रिया-कलाप—ऊट का प्रमुख काय बाेम ढोना है कौत्स के लिए ऊटो पर रघु द्वारा दिया गया धन लादा गया था[9] ऊटो का पालन करने वाले लोग साथ-साथ भेडो का भी पालन करते हैं[10] ऊट की तेज गति का वणन करते हुए कहा गया है कि ऊट बिना रोकटोक क अति शीघ्र चल दिय[11]

ऊट का भोजन—ऊट का प्रमुख खाद्य काटा वाली भाडियाँ एव पौधे

---

7 रघु० 5/32, कादम्बरी पृ० 531, शिशु० 21/9 वही० 12/92, वही० 12/7 वही० 12/26, ह० च० प० 303

8 क्वचित् क्रमेलक सटा सन्निभि'—कादम्बरी० प० 351

9 'प्रयोष्ट्रयामीशतवाहितार्थम'—रघु० 5/32

10 हृष चरित पृ० 161

11 विगृ ह्य शृ खलका प्रतस्थिरे'—शिशु० 12/7

होते हैं इसीलिए कोमल पत्ते खाने वाले ऊंट की एवं ऊंट कोमल पत्ते खाने वालो की परस्पर निंदा करते हैं [12] नीम ऊंट का प्रिय खाद्य पदार्थ है उसका 'रवण' नाम नीम के कटु पत्ते खाकर कटु शब्द करने के कारण ही पडा हो, ऐसा महाकवि माघ का मत है [13] ऊंट पत्ते खाना पसन्द करता है तभी तो सवार की परवाह न करके वह पत्तो को खाने दौड पडता है [14] ऊंट की गर्दन लम्बी इसीलिए बनी है कि वह आसानी से ऊंचे ऊंचे वृक्षो के पत्ते खा सके अत उसकी लम्बी गर्दन का होना सार्थक हो गया है [15] इन सब उदाहरणो से यह स्पष्ट हो जाता है कि ऊंट का प्रमुख खाद्य कटीली झाडियाँ व पत्ते हैं ऊंट रेगिस्तान का प्राणी है एवं रेगिस्तान मे कटीले वृक्षो का बाहुल्य होता है

सवारी का साधन ऊंट—ऊंट रेगिस्तान का जहाज है शीघ्रता से अपने भाई राज्यवर्धन को बुलाने के लिए महाराजा हर्षवर्धन ने तीव्रगामी ऊंटों को एवं दूतो को भेजा था इससे स्पष्ट है कि ऊंट चलने मे कम नही [16]

ऊंट (सनाग)—सेनाङ्ग के रूप मे भी ऊंट का काफी महत्त्व है सेना के भारी भरकम सामान को लादने के लिए सर्वत्र उसका प्रयोग होता रहा है ऊंटो के एकत्रित होने का उल्लेख हर्षचरित मे मिलता है

कवियो द्वारा उपमित उष्ट्र—संस्कृत साहित्य मे सादृश्यमूलक अलकारो पर विशेष जोर दिया गया है इसी कारण कविगण प्राय जीवो को भी उपमित करते रहे हैं उष्ट्र विषयक कुछ उपमाए काव्यो मे इधर उधर मिलती है छोटे ऊंट के कण्ठ के रंग की तुलना रेत के पिंगल वर्ण से की गई है [17] हर्षचरित मे भैंसो के खुरो से उडी धूल को ऊंट के रोगटो के समान कपिल रग वाली कहा है [18] वानर के गात्र के रग से ऊंट के लाल रग को उपमित किया गया है [19] शिशुपालवध मे ब्राह्मण ग्राम के पत्ते व ऊंट को गरुड से उपमित किया गया है [20]

---

12 क्रमेलक' निन्दति कोमलेच्छु क्रमेलक कण्टकलम्पटस्तम'—नैषध० 6/104
13 शिशु० 12/9
14 वही० 12/32
15 वही० 5/69
16 ह० च० पृ० 277
17 शिशु० 5/43
18 ह० च० पृ० 281
19 'कपिकपोलकपिल क्रमेलककुल कपिलाय मानम'—ह० च० पृ० 100
20 शिशु0 5/66

बाण ने ऊट का वणन सबसे अधिक किया है, उससे कम माघ ने बाण ने ऊट का वर्णन बारह बार किया है, जबकि माघ ने ६ बार महाकवि कालिदास व श्रीहर्ष ने ऊट का एक एक बार वर्णन किया है इस प्रकार कालिदास एव कालिदासोत्तर काव्यो मे ऊट का केवल बीस बार वर्णन आया है इसके अतिरिक्त सभी काव्यकार इस पशु के बारे मे मौन हैं

---

## तालिका—१

'उष्ट्र' के वर्णन का कालीदास के काव्यो मे विश्लेषण (१)

| सख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| १ | रघु० | ५/३२ |

## तालिका—२

'उष्ट्र के वर्णन का कालीदासोत्तर काव्यो में विश्लेषण (१६)

| कवि | सख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| माघ | ६ | शिशु० | ५/३, ५, ६५, ६६ १२/७, ६, ३२ |
| श्रीहर्ष | १ | नैषध० | ६/१०४ |
| बाण भट्ट | ११ | हु० च० | पृ० ४८, ४६, १००, ६१, ६१, ६१ २४६, ७७, ८१, २६४, ७४ |
| | १ | कादम्बरी | पृ० ५५१ |

---

# धेनु
# THE COW

"ददौ द्विजेभ्यः कृशनं च गाश्च
—बुद्धचरितम २/३६

संस्कृत—साहित्य म धेनु का स्थान प्रमुख रहा है वदिक साहित्य से काव्यो तक धेनु के उल्लेख निरन्तर उपलब्ध होते रहे हैं वदिक साहित्य मे गो, उस्रा उस्रिका व कयी शब्दो से गाय को कहा गया है [1] गाय के बछड़े को उस्रिका कहा गया है [2] गाय को वेदो मे अवध्य कहा है अथर्ववेद व शतपथब्राह्मण म गाय को पवित्र एव गो मास भक्षण को बुरा कहा गया है [3]

रामायण मे गाय के वर्णन मिलते हैं और काव्यो म गो व रोहिणी शब्दो का प्रयोग मिलता है [4] अमरकोष म गाय को माहेयी सौरभेयी गौ, उस्रा, माता शृङ्गिणी, अर्जुनी, अवध्या एव रोहिणी नामो से कहा गया है [5]

धेनु मेरुदण्डीय उपजगत के अन्तगत स्तनप्राणी श्रेणी के शफवग के गो उपपरिवार के गो परिवार के गो उपपरिवार की सदस्य है

भारत म गाय अत्यन्त प्रचलित पशु है घर घर म गाय को रखा जाता है इसे माता' की उपाधि से पुकारते हुये सम्पूर्ण पशुओ म पूजनीय एव स्तुत्य माना ह गायें ससार के सभी भागो मे पायी जाती हैं कहते हैं कि गायो के निवास के कारण ही हमारे देश की एक नदी का नाम 'गोमती' पडा ह जो लखनऊ के पास बहती है गाय की शरीर रचना बडी सुडौल होती ह यह भी अश्व खर गज व उष्ट्र की भांति चार टाग का प्राणी ह इसके खुर बीच म से चिरे होते हैं गाय

1 ऋक्० 1/173 श०ब्रा० 2/4 3/13, ऋक्० 1/3,8, ऋक्० 1/190 5 अथर्व० 4/38, 6/7,
2 ऋक्० 5/58/6
3 व० मा० प० 287
4 वा० रा० कि० 28/26, वा० रा० अ० 4/12 वा० रा० अर० 14/28
5 माहेयी सौरभेयी० इत्यमर (वश्यवर्ग)
6 जोदजगन० पृ० 580

या लम्बाई ५ फीट व ऊँचाई ४ फीट के लगभग होती ह ऊट की भाँति गाय की पीठ पर एव कूबड हाना ह इसकी पूछ परा के सिरे तक लम्बी होती ह एव बाला स ढकी होती ह पूछ की सहायता से धेनु मक्खियो और मच्छरो से अपने शरीर की रक्षा करती ह गाय मे दो सीग होते हैं जो सामान्यत अद्ध चन्द्राकाराकृति क होते हैं गाय क गल के नीचे गल कम्बल लटकती रहती ह गाय देखने म बडी सुन्दर लगती ह गायें सफेद, ललछौंह काले व चितकबर रग की होती हैं [7]

गाय का प्रमुख खाद्य घास व पत्तियाँ हैं दाना व खल भी गायो को पुष्ट बनाने के लिये दिये जाते हैं गाय विशुद्ध शाकाहारी पशु ह कुछ गायें मल खाती हैं किन्तु उनको हय माना जाता ह गाय को धन मानते हुये इसे भारतीय परिवार की सम्पत्ति स्वीकार किया गया ह [8] गाय की अनेक नस्लें भारत म हैं जिनमे हरियाणवी, पवार, खरीगढ एव साचोरी (राजस्थान) प्रमुख हैं

गायो म 'कामधेनु को सर्वश्रेष्ठ माना ह इसे स्वर्ग की गाय कहा ह यह इच्छानुसार कार्यों को पूरा करने वाली मानी गयी ह इसके चारो पैरो को चार वेद कहा गया ह इसके चारो स्तन अर्थ, धर्म, काम एव मोक्ष के रस को बहाने वाले बताये गये हैं [9] कामधेनु की पुत्री का नाम 'नन्दिनी' कहा गया है

गाय से प्राप्त होने वाले पदार्थों मे उसका दूध मुख्य है जो शरीर को पुष्ट बनाता ह दूध से अनेकानेक पदार्थों का निर्माण होता ह मरणोपरान्त गाय के चमडे के जूते बनाये जाते हैं एव सीगो से सरेस प्राप्त किया जाता ह विदेशो मे लोग गाय का मास भी खाते हैं परन्तु भारत म इसे हेय कर्म माना गया है

इस प्रकार गाय मानव सेवा मे निरन्तर व्यस्त है जिस प्रकार माँ दूध पिला कर बच्चे को बडा करती है गाय जीवन पर्यन्त दूध पिलाकर उसके स्वास्थ्य को बढाती ह और यही कारण ह कि भारतीय समाज म इसे 'माता' का सम्मान मिल पाया ह

गाय सामान्यत एक बार म एक ही बछड को जन्म देती ह परन्तु यदा कदा दो बछडे भी होते देखे गये हैं गाय का गर्भाधान काल १० माह का ह [10]

## संस्कृत काव्यो में धेनु

संस्कृत-साहित्य म गाय का स्थान प्रमुख है गाय को काव्यो म गो [11],

---

7 यथोपरि० पृ० 584

8 'गो धन गजधन, वाजिधन और रतनधनखान'—हिन्दी साहित्य०

9 कालिदास ग्रन्थावली (अभिधानकोष) पृ० 140

10 पृ० कि० पृ० 771

11 नैषध० 17/177 सौ न 16/50, किरात० 17/20

धेनु[12] सौरभेयी,[13] एवं रोहिणी[14] नामों से कहा है यहाँ हम गाय की कतिपय विशेषताओं पर दृष्टिपात करेंगे

मानव एवं गाय—मनुष्य एवं गाय का सदैव अटूट सम्बन्ध रहा है, गोमन्द में गोमन्त व गवांपति नामक योगाभ्यासियों के नाम आये हैं [15] गोमन्त का अर्थ गाय के प्रताप से उत्पन्न व्यक्ति को कहा जा सकता है इसी प्रकार बहुत सी गायों का स्वामी (सांड) गवांपति कहा जा सकता है अहीर जाति को भारवि ने गायों के सम्पर्क में रहने के कारण उनका कुटुम्बी कहा है [16] गायों के परानवान गोपालों का गायों व उनके बछड़ों से स्नेह हो जाता है वे नवजात बछड़ों के साथ साथ उछल-उछल कर मनोविनोद करते हैं [17] भारतीय परम्परा में गाय को कष्ट देना एक हेय कर्म माना गया है इसीलिये तो राजा कार्तवीर्य गायों के लिये ब्राह्मणों को दुःखी करने के कारण अकाल मृत्यु को प्राप्त हुआ [18]

गाय एक धन—गाय को संस्कृत काव्यकारों ने भी एक धन के रूप में स्वीकार किया है तभी तो गो-सेवक राजा दिलीप कहते हैं कि वे अपने सम्मुख अपने गुरु के धेनु रूप धन को नष्ट होते नहीं देख सकते [19] ब्राह्मणों को गाय एवं स्वर्ण देने की परम्परा भी इसी बात की द्योतक है कि गाय भी सोने के सदृश एक सम्पत्ति है, धन है राजा शुद्धोदन ने ब्राह्मणों को सोना व गायें दीं [20] इसी प्रकार राजा हर्षवर्धन ने भी स्वर्णपत्र-मण्डित शृंगों एवं सींगों वाली गायें विप्रजनों को दान में दीं [21]

---

12 रघु० 2/1 किरात० 4/13, बु० च० 23/15

13 रघु०2/3

14 शिशु० 12/40

15 'गोमन्त'-सौ० न० 16/88, गवांपतिश्च'-वही० 16/91

16 ददृशे गोपानुपधेनु पाण्डवः कृतानुकारानिव गोभिरार्जवे—किरात०4/13

17 वत्सीश्वालकलालितलम्वतरलततणकानि । ह० च० पृ० 78

18 'कार्तवीर्यो गोब्राह्मणानि पीडनेन निधनमयासीत्' । ह० च० पृ० 152/

19 धनमाहितानेनश्यत्पुरस्तादनुपेक्षणीयम्'-रघु० 2/44

20 'ददौ द्विजेभ्यः कृशनं च गाश्च'-बु० च० 2.36,

'अपि च शतसहस्रपूर्णसंख्याः
स्थिरवयसस्तनयाः सहेमशृङ्गीः ।
अनुपगतजराः पयस्विनीर्गाः
स्वयमददात्सुतवृद्धये द्विजेभ्यः ॥
वही० 1/84

21 'कनकपत्रलतालंकृतशफशृङ्गशिखरा गावश्चाबुदशः'-ह० च० पृ० 360 ।

नन्दिनी एक गाय विशेष—नन्दिनी को वसिष्ठ मुनि की गाय कहा गया है, जिसकी सेवा इक्ष्वाकुवंशज राजा दिलीप ने की थी[22] यह कामधेनु की पुत्री मानी गयी है एवं कामधेनु के सदृश सब फलों को देनेवाली है स्वयं नन्दिनी के मुख से महाकवि ने दिलीप को कहलवाया है कि वह एक दूध प्रदान करनेवाली गाय मात्र नहीं अपितु प्रसन्न होने पर सब फलों को देनेवाली है[23] राजा दिलीप के कोई पुत्र नहीं था इसका कारण वसिष्ठ ने बताया कि एक बार कामधेनु कल्पवृक्ष की छाया में बैठी थी[24] उस समय दिलीप ने कामधेनु की परिक्रमा नहीं की थी[25] इस कारण राजा दिलीप से कामधेनु ने रुष्ट होकर नन्दिनी की सेवा किये बिना पुत्र न होने का शाप दे दिया था[26] अतः महर्षि वसिष्ठ ने दिलीप को कहा कि वह नन्दिनी को कामधेनु का प्रतिनिधि समझकर अपनी पत्नी सहित श्रद्धापूर्वक यदि उसकी सेवा करे तो उसके मनोवाञ्छित फलों की पूर्ति हो सकती है[27] इस लिये राजा दिलीप ने ऋषि की उस गाय को वन के लिये छोड़ा[28] राजा ने अपने अनुचरों के साथ नन्दिनी की सेवा की[29] कालान्तर में नन्दिनी दिलीप की परीक्षा लेना चाहती है एवं एक नकली सिंह को उपस्थित करती है जो नन्दिनी को मारना चाहता है तब दिलीप उसके रक्षार्थ कहता है कि शाम को अपने बछड़े से मिलने की इच्छुक इस ऋषि की गाय को वह मुक्त करे[30] पर सिंह कहता है कि उस (राजा को) एक गाय के लिये अपने आपको समर्पित नहीं करना चाहिये[31] वह तो काफी दूध देनेवाली अनेक गायें देकर प्रचण्ड गुरु को प्रसन्न कर सकता

---

22 वसिष्ठधेनोरनुयायिनम्–रघु० 2/19 ।

23 न केवलानां पयसा प्रसूतिमवेहि मां कामदुघां प्रसन्नाम्'–रघु० 2/63 ।

24 'आसीत्कल्पतरुच्छायामाश्रिता सुरभिः पथि'–वही 1/75

25 'प्रदक्षिणक्रियार्हायां तस्यां त्वं साधु नाचर'–वही० 1/76

26 'मत्प्रसूतिमनाराध्य प्रजेति त्वां शशाप सा' वही० 1/77

27 'सुतां तदीयां सुरभेः कृत्वा प्रतिनिधिं शुचिः ।
आराधय सपत्नीकः प्रीता कामदुघा हि सा ॥'
—वही० 1/81 ।

28 'यशोधनो धेनुमृषेर्मुमोच'—रघु० 2/1

29 व्रताय तेनानुचरेण धेनोर्न्यषेधि शेषोऽप्यनुयायिवर्गः ।' रघु० 2/4

30 'दिनावसानोत्सुकबालवत्सा विसृज्यतां धेनुरियं महर्षेः' —वही० 2/45

31 अथैकधेनोरपराधचण्डाद्गुरोः'– वही० 2।49

है[32] गाय मुक्ति पाने के लिये दिलीप को बार बार हार देखती है[33] राजा सिंह को समझाने का प्रयास करते हुए कहता है कि यह गाय कामधेनु से किसी भी प्रकार न्यून नहीं है तुमने शंकर के प्रभाव से इसपर आक्रमण किया है अन्यथा तुम इतने सशक्त कहाँ जो इसको कष्ट दो[34] पर सिंह ने दिलीप की एक भी नहीं सुनता है उसने उसेमूर्ख कहा और प्राणी भी अन्त में दिलीप ने अपने प्राण देने का पूरा निश्चय कर आता को अपना किन्तु उस समय वह क्या देखता है कि वहाँ केवल नन्दिनी खडी है जो माता के समान थी एवं जिसके स्तनों से दूध प्रवाहित हो रहा था[35] इस प्रकार वह वसिष्ठ की धेनु दिलीप पर प्रसन्न हो गयी[36] राजा ने गाय की परिक्रमा की[37] जब रघु के अश्व को इन्द्र ने छल से चुराया तब नन्दिनी वहाँ उपस्थित हुयी[38] नन्दिनी का मूत्र आखों से लगाने पर रघु को सब वस्तुयें स्पष्ट दिखाई देने लगी[39]

इस प्रकार महाकवि कालिदास ने अपने रघुवंश काव्य के द्वितीय एवं तृतीय सर्ग में नन्दिनी के विषय में विचारों का प्रदर्शन किया है इनमें से सभी घटनायें व्यावहारिक एवं वास्तविक नहीं किन्तु इतना अवश्य मानना होगा कि गाय की सेवा से मनुष्य को आत्मिक शांति मिलती ही है

**निवास**—गाय एक पालतू पशु है अतः इसका निवास मानव के साथ का है मनुष्य गायों को बाडे में घेरते हैं शिशुपालवध में गोपालों द्वारा व्रज में गायों के घेरने की तुलना माहिष्मती नगरी को घेरने से की गई है[40] भगवान् कृष्ण ने गायों के रहने के स्थान पर मण्डलाकार बैठे ग्रामवासियों देखा जो आपस में बातचीत कर रहे थे[41]

---

32 दृशानु प्रतिमद्विषेपि कोटिशा स्पशमता धटोघ्नी ' वही ।

33 धेन्वा तदध्यासितकातराक्ष्या —वही० 2/52

34 'इमामनूना सुरभेरवेहि रुद्रौजसा तु प्रहृतं त्वया स्याम — वही० 2/54

35 'ददर्श राजा जननीमिव स्वा गामग्रत प्रस्रविणीं न सिंहम्'—रघु० 2/61

36 'इत्थ क्षितीशेन वसिष्ठधेनुर्विज्ञापिता प्रीततरा बभूव ।'—रघु० 2/67

37 धेनु सवत्सां च नप प्रतस्थे —रघु० 2/71

38 'वशिष्ठधेनुश्च यदृच्छयागता श्रुतप्रभावा ददृशेऽथ नन्दिनी'—रघु० 3/40

39 'तद गनिस्यन्दजलेन लोचने प्रमृज्य बभूव भावेषु दिलीप नन्दन ।
—रघु० 3/41

40 निरुद्धविवधासारप्रसारा गा इव व्रजम'—शिशु० 2/64

41 गोष्ठेषु गोष्ठीकृतमण्डलासना सनादमुत्थाय मुहु स बल्गत '—शिशु० 12/3

क्रिया कलाप

गाय एक समुदाय-प्रधान जीव है गायों के समुदाय से सुन्दर हुङ्कार कर निकलती हुयी श्रेष्ठ गाय को थी कृष्ण ने देखा [42] गायें शाम के समय चरागाहों से लौटते समय वेग से पृथ्वी पर दौड नही सकती थी क्योकि वे अपने-अपने बच्चो का स्मरण करके उत्कण्ठित हो गई थी जिसके कारण उनके पीन पयोधरो से क्षीर बह रहा था [43] इन उल्लेखो से स्पष्ट होता है कि गाय मनुष्य के सम्पर्क मे रहने वाला एक सामुदायिक जीव है घास के मैदानो मे गायें चर रही थी यह भी गायो के झुण्ड को प्रदर्शित करता है [44] जाबालि के आश्रम मे गायो का दूध निकालने के लिए स्तनस्पर्श की बात कही गई है वह कुचमर्दन नही होता था यह भाव है [45]

प्रजनन

गाय के बछडे की उत्पत्ति साड के सम्पर्क से होती है साड को पाने के लिये तरनेवाली गायें नदी को तैरकर भी बैल (साड) का अनुसरण करती हैं [46] इसी प्रकार एक गाय, जो बैल मे आसक्त थी ने गधे को दूर भगा दिया [47] इस प्रकार संस्कृत काव्यो मे गाय के प्रजनन व कामशक्ति की ओर संकेत हैं

उपमित धेनु

अन्य पशुओ की भाँति गाय को भी काव्यकारो ने स्थान स्थान पर उपमित किया है गौतमी के रोने की तुलना उस गाय से की गयी है जिसका बछडा नष्ट हो गया हो एवं वह आर्त और करुण होकर निरंतर रो रही हो [48] इसी प्रकार अश्रुपूर्ण नेत्रो से छन्दक और अश्व को स्वामी के बिना देखकर राजगृह की उत्तम स्त्रियो के विषण्ण वदन रोदन को साड से परित्यक्त गाय से उपमित किया गया

---

42 पर्गाढगया ꣸ कृतिधारु नियतीभरिधोरक्षत गोमतल्लिकाम्'—शिशु० 12/41

43 उपारता पश्चिमरात्रिगोचरादपारयन्तः पतितु जवेन गाम् ।
तमुत्सुकाश्चकुरवेक्षणोत्सुक गवा गणाः प्रस्नुतपीवरौधस ।।
—किरात० 4/10

44 सम्पन्नशालिनिचयावृतभूतलानि स्वस्थस्थितप्रचुरगोकुलशोभितानि
—ऋतु० 3/16

45 'स्तनस्पर्शो होमधेनुषु'—कादम्बरी० पृ० 125 ।

46 'नदीं तितीर्षवो गावोऽनुगच्छन्ति गवांपतिम—बु० च० 23/15

47 सा तु सौम्यवृषासक्ता खर दूरान्निरास तम्'—नैषध० 17/178

48 'प्रनष्टवत्सामिव वत्सला गामजस्रमार्ता करुणं रुदन्तीम'—बु० च० 9/26

है 49 राजा दिलीप को गाय की छाया से उपमित किया है 50 दिलीप की पत्नी सुदक्षिणा को स्मृति एवं गाय नन्दिनी को श्रुति कहा गया है कहा है कि नन्दिनी के पीछे-पीछे चलती हुयी सुदक्षिणा श्रुति के पीछे पीछे जाती हुयी स्मृति की भांति प्रतीत हो रही थी 51 नन्दिनी को सन्ध्या से उपमित किया गया है यह दिलीप व सुदक्षिणा के मध्य इसी प्रकार विद्यमान थी जिस प्रकार दिन व रात्रि के मध्य सन्ध्या विद्यमान रहती हैं 52 नन्दिनी की रक्षा राजा का कर्त्तव्य था, गाय ही वे जंगली जीवों को शांत रहने की शिक्षा दे रहे थे, मन गाय के साथ-साथ शांत वातावरण की भी सिद्धि होती है 53

यहां होमधेनु का अर्थ यज्ञ की क्रियाओं को सम्पन्न करने वाली गाय से है न कि यज्ञ में बलि दी जानेवाली गाय से नन्दिनी को कालिदास ने पृथ्वी से उपमित किया है 54 पृथ्वी जिस प्रकार मनुष्य की कामनाओं की पूरक होती है उसी प्रकार नन्दिनी भी दिलीप के लिये कामनाओं की पूरक थी गाय को माँ कहा गया है 55 इसी प्रकार सम्पूर्ण-साहित्य में पृथ्वी को भी अनेकधा माता कहा गया है माता का दूध बचपन में पुत्र की पुष्टि करता है किन्तु गाय का दूध जन्म भर कवि ने नन्दिनी की तुलना शाम की लाली से की है कारण कि वह लाल रंग की गाय थी 56 किरात में सफेद गाय का उल्लेख आया है गाय को बर्फ की चट्टान के समान श्वेत बताया है 57 सौन्दरनन्द में वाणी को गाय से उपमित करते हुये

---

49 निरीक्ष्य ता बाष्पपरीतलोचना
निराश्रय शून्यरथमेव च ।
विषण्णवक्त्रा रुरुदुवराङ्गना
वनान्तरे गाव इवर्षभोज्झिता ॥ बु० च० 8/23

50 छायेव तां भूपतिरन्वगच्छत्'—रघु० 2/6

51 श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्'—रघु० 2/2

52 तदन्तरे सा विरराज धेनुर्दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या —रघु० 2/20

53 'रक्षापदेशान्मुनिहोमधेनोर्वन्या—
विनेष्यन्निव दुष्टसत्वान् ।
रघु० 2/8

54 'गोरूपधरामिवोर्वीम्'—रघु० 2/3

55 'वत्सस्य होमार्थविधेश्च शेषमृषेरनुज्ञामधिगम्य मात ।'

56 'प्रचक्रमे पल्लवरागताम्रा प्रभापतङ्गस्य मुनेश्च धेनु'—रघु० 2/15

57 गवा हिमानी विशद कदम्बक ,—किरात० 4/12

कहा गया है कि मन्त्री वाणी के स्तन हैं स्पष्ट अभिव्यक्ति गलकदम्ब है सदम दूध है एवं प्रतिमान सींग हैं, इस प्रकार की वाणी को पीकर मैं (नन्द) उसी प्रकार तृप्त हो गया जिस प्रकार क्षुधाकुल बछड़ा गाय का दूध पीकर होता है[58] बुद्धचरित मे भी गाय की तुलना 'मा' से की गयी है लिच्छवि की तुलना गाय व बछड़े मे करते हुये कहा है कि दीर्घकाल के लिये वन मे गमन करनेवाली जिसके थनों से दूध प्रवाहित हो रहा हो ऐसी अपनी मा' गाय को देखकर जिसने कभी दूध न पिया हो ऐसे बछड़े के समान वे कातर होकर विलाप करने लगे[59] मनस्विनी को गाय से उपमित किया है[60] वशिष्ठ की तुलना गाय से की गई है[61] गाय के द्वारा प्राणियो के जीवन चाटने से की गयी है[62] जरा से व्याकुल मनुष्य की वज्र के शब्द से व्याकुल गाय मे समता प्रदर्शित की है जैसे जरा को सुनकर मनुष्य व्यथित हो जाता है, उसी प्रकार समीप मे महावज्र का शब्द सुन कर गाय भी सविग्न हो जाती है[63] बाणो की भयकर वृष्टि की तुलना मेघ गर्जन से करते हुए, शिव की भूत सेना की समता कापती हुई गायो के परिवार से की है गोपाल गायो को धान्य चरने से रोकते हैं इसका उल्लेख बुद्धचरित मे किया गया है हर्षचरित मे कहा गया है कि राजा पुष्यभूति ने पृथिवी को अपनी महिषी बनाया, जैसे कि आदि राजा पृथु ने पृथिवी को धेनु बनाया था चन्द्रमा की सफेद चादनी जो समुद्र को श्वेत बनाती है ऐसी प्रतीत हो रही थी मानो हाथीदांत का पनाला गोलोक से दूध की धार बहा हो[64] गाय के श्वेत दूध से कवि ने आश्रमों की स्वच्छता की तुलना की है कि नियाश्रमो के पार्श्ववर्ती स्थान गायो के समुदाय

---

58 मैत्रीस्तनों व्यञ्जनचारुसास्नां

सद्धर्मदुग्धां प्रतिमानभृङ्गाम् ।

तवास्मि गां साधु निपीय तृप्त

तृषेव गामुत्तमवत्सवर्णः ॥सौ० न० 18/11

59 'दीर्घकाल वन यातों गा यथा च क्षरत्स्तनीम ।

अपीतदुग्धवत्सास्ते कातराश्चक्रुशुभ शम ॥ बु० च० 24/62

60 तत क्रमेण प्रस्नुतप्रवृत्ता धर्मधेनुमिवाघोषावसानधवलपयोधराम्'—

61 'गामधुक्षद्वसिष्ठवत्'—सौ० न० 1/3

62 'सकललोकक्षयवायलेहलम्पटा बहला बहलिहालेवि लोहिताचिता चितागारकाली कालरात्रि जिह्वाजीवतानि जीविनात'—ह० च० पृ० 457

63 'श्रुत्वा जरा सविविजे महात्मम महाशनेर्घोषमिवान्तिके गौ'—बु० च० 3/34

64 'गामधर्मेणाधुक्षत्क्षीरवर्येण गामिव'—सौ० न० 2/19

से प्रसरित दूध से धवलता को प्राप्त हो रहे थे [65] रघुवश मे यश की स्वच्छता की समता गाय के दूध की धवलता से की गयी है भगवान् बुद्ध को ज्ञान रूप दूध देने वाली गाय कहा गया है [66] असमय म किये गये योगाभ्यास की समता असमय म वत्सहीन गाय को दुहने से की गयी है [67] इस प्रकार भिन्न भिन्न काव्य कारो ने गाय को विभिन्न रूपो म उपमित किया है

## गाय से प्राप्त पदार्थ

प्रस्तुत काव्यो मे गाय से प्राप्त वस्तुओ म गाय के दूध व मक्खन का उल्लेख मात्र किया गया है राजा शुद्धोदन के राज्य म दूध देनेवाली गायो का वणन मिलता है [68] इसी प्रकार राजा दिलीप को ग्रामीणो द्वारा ताजा मक्खन भेंट करने का उल्लेख रघुवश मे किया गया है

इस प्रकार गाय का स्थान सस्कृत काव्यो में प्रमुख है सम्पूर्ण काव्यो म गाय का वणन ८२ बार हुआ है जिनमे सबसे अधिक वणन रघुवश म उससे क्रमबुद्ध चरित व हषचरित म एव उससे कम सौन्दरनन्द मे हैं गाय का वणन रघुवश मे ४३ बार, बुद्धचरित व हष चरित म १० १० बार एव सौन्दरनन्द मे ५ बार आया है जबकि किरातार्जुनीय मे ४ बार शिशुपालवध म ३ बार एव नषध चरित व वासवदत्ता म २ २ बार आया है कादम्बरी कुमार सम्भव व ऋतुसहार मे गाय का वणन केवल एक एक बार आया है जबकि मघदूत, एव दशकुमार चरित गाय के विषय म सवथा मूक है गाय के वणन का विश्लेषण तालिकाओ मे अवलोकनीय है

---

65 प्रस्नुतमुखमाहेयीयूदक्षरत्क्षीरधाराधवलितेष्वासन्नच न्द्रोदयोद्दामक्षीरोदल—हरीक्षालितेष्विव दिव्याश्रमोपशल्येषु'—ह० च० पृ० 24

66 'ज्ञानादुग्धवतो धेनुदद्र्तम —बु० च० 24/51

67 'प्रमावत्सा यदि गां दुहीत नवाप्नुयात्क्षीरमकालदोही' सौ० न० 26/50

68 बहुक्षीरदुहश्च गाव '—बु० च० 2/5

69 'हैयगवीनमादाय घोषवृद्धानुपस्थितान रघु० 2/45

## तालिका–१

### 'धेनु' के वर्णन का कालिदास के काव्यो मे विश्लेषण (४५)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| ४३ | रघु० | १/४५,७५ से ७७,७६ से ८१/८३ से ६५ २/ से ४,६ ८,१५, १६,२०, ४४,४५,४६, ५२,५४, ५४ ६१,६३, ६७,६७ ७१,७६ ३/३२ ४०,४१ |
| १ | कुमार० | ८/३८ |
| १ | ऋतु० | ३/१६ |

## तालिका–२

### 'धेनु' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यो नें विश्लेषण (३७)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्व घोष | १० | बु०च० | १ ८४ २/५ ३६ ३/३४ ८/२३ ६/२६ २३/१५ २४/५१, ६२,२४/३५ |
| | ५ | सौ०न० | १/३ २/१६ १६/५०,६१ १८/४ |
| भारवि | ४ | किरात० | ४/१० १२ १३ १७/२० |
| माघ | ३ | शिशु० | २/६४ १२/३८,४१ |
| श्रीहर्ष | २ | नषध० | १/१७७ १७८ |
| सुबन्धु | २ | वासवदत्ता | पृ० ८७ २६६ |
| बाणभट्ट | १० | ह० च० | पृ० २४,२८,३२,७८,१५२ ६४ ७० ३४४,६०,४५७ |
| | १ | कादम्बरी | पृ० १२५ |

# वृषभ
# THE BUI

विलोक्य वृद्धोक्षमधिष्ठितं त्वया महाजनः स्मेरमुखो भविष्यति
—कुमार० ५ ७०

संस्कृत साहित्य में वृषभ का स्थान गौण रहा है गाय के समान बैल का वर्णन भी संस्कृत साहित्य में वैदिककाल से ही चला आ रहा है वैदिक साहित्य में वृषभ को उक्ष, उक्षिका उक्षि ऋषभ गौर दित्यवह पष्ठ्यवह महोक्ष उक्षि, वत्सग एवं गवय शब्दों से कहा गया है [1] दित्यवह दो वर्ष के एवं पष्ठ्यवह चार वर्ष की आयु के बैल या साँड के लिये आया है रामायण में वृषभ के लिये वृष, ऋषभ, गवाक्ष व गवेन्द्र शब्दों का प्रयोग किया गया है [2] अमरकोष में बैल के लिये उक्षन्, भद्र बलीवर्द ऋषभ वृषभ, वृष व अनडुह् शब्दों का उल्लेख है [3]

इस प्रकार नामोल्लेख पर पूर्ण विचार करने के पश्चात इस वृषभ की का गत वर्णनात्मक विशेषताओं पर सम्यक् प्रकार से विचार करने जा रहे

वृषभ मेरुदण्डीय उपजगत के अन्तर्गत गो उपपरिवार के गाय बैल जाति का प्राणी है

भारतीय पशु जगत में बैल या साँड एक प्रचलित पशु हैं प्रस्तुत लेख में हमने बैल व साँड को एक ही श्रेणी में रखा है क्योंकि इनके शारीरिक रचना में

---

1 व० इ० (2) पृष्ट 105, वही० (1) पृ० 115 (2) 241 वही० पृ० 359, पृ० 511 (2) पृ० 145 (2) 236 (1)[पृ० 222

2 'गोष्ठे वृष मत्तमिव भ्रमतम —वा० रा० सु० 5/1
'जाता वया गोषु समान कामा—वही० कि० 8/21
सिंह स्कन्धो महोत्साहो समदाविव गो वृषो यथोपरि० कि० 3/1
'ऋषभेण गवाक्षेण गजेन गवयेन च—वही० यु० 41/40
गजो गवाक्षो गवय शरभो गयमादन वही० कि० 27/35
मुदिता गवेन्द्रा ।—यथोपरि० कि० 28/43

3 उक्षाभद्रो बलीवर्द ऋषभो वृषभो वृष ' इत्यमर (वश्यवर्ग)

अधिक अन्तर नहीं बल को सांड से निकृष्ट कोटि का पशु माना गया है गाय की भांति बल भी किसान का एक सहारा है जिसके बल पर वह हम सबके लिये अन्न उपजाता है बल विश्व म सभी स्थानों पर पाया जाता है विदेशी बलो म अनेक के कूबड नहीं होता शारीरिक रचना की दृष्टि से बल एक सुडौल प्राणी है यह चार टांग का प्राणी है जो देखने मे बडा सुन्दर ज्ञात होता है इसके खुर बीच मे से चिर हुये होते हैं पीछे की ओर गुच्छेदार बालो से ढकी पूंछ लटकती है इसके नितम्ब पुष्ट होते हैं और पीठ पर एक कूबड होता है सांड का कूबड बल के कूबड की अपेक्षा आकार मे सुडौल एव बडा होता है बल के दो सींग होते हैं जो अर्द्ध चन्द्राकार एव चिक्कण होते हैं बल के गले के नीचे खाल लटकती रहती जो बडी ही सुन्दर लगती है गायों की भांति बल भी सफेद, काले, ललछौंह व मटरी रग के होते हैं

बल का प्रमुख खाद्य है घास पात किन्तु इसे पुष्ट करने के लिये दाल, खल, गुड एव तल भी खिलाया जाता है बल को पौरुष एव बल युक्त माना गया है

हमारे देश म गाय बलो की साहीवाल, हरियाना थारपारकर, कनकथा गगातीरी, सिन्धी, खरगनी पवार आदि किस्म प्रचलित हैं [4] राजस्थान के नागौरी-बल विख्यात हैं

वृषभ का मुख्य उपयोग खेती करने व बोझा ढोने मे होता है [5] खेती के कार्यों के अतिरिक्त बलगाडी मे भी बल जोते जाते हैं कुंओ से पानी निकाल कर सिंचाई करने म भी वृषभ का भारी हाथ रहा है इसे शनिदेव की सवारी भी कहा गया है इसके चमडे के जूते बनते हैं एव सींगो से सरेस प्राप्त किया जाता है इसकी हड्डिया खाद बनाने के काम आती है वृषभ के गोबर की खाद बहुत अच्छी मानी जाती है गाय की भांति गौ-पुत्र वृषभ भी मानव सेवा मे सवदा रत रहा है

## संस्कृत-काव्यों मे वृषभ

संस्कृत काव्यों म वृषभ का स्थान मध्यम है वृषभ को काव्यो मे वृष वृषभ, ऋषभ बलीवद अनडुह उक्ष, ककुद्मत महोक्ष गवय व गोपति नामों से सम्बोधित किया गया है [6] वृषभ के नामों का उल्लेख करने के पश्चात्

---

4 जीव जगत पृ० 584

5 इन० ब्रि० भाग 5 पृ० 46

6 बु० च० 23/4 रघु० 1/13 मेघ० उ० 56 कादम्बरी पृ० 374, 341

अब हम उसकी काव्यगत विशेषताओ पर विचार करने का प्रयास करते हैं

नन्दी एक वृषभ विशेष —कैलासवासी भगवान् शकर का वाहन नन्दी नाम का वृषभ है जिसका वणन सम्पूण साहित्य में यत्र-तत्र विद्यमान है यह वृषभ सदा शिव की सेवा म उपस्थित रहता था, जिसकी ध्वनि सिंह की गजना से साम्य रखती है [7] भगवान् शकर इस वृषभ पर बठा करते थे जिस पर सिंह चम बिछा होता था [8] कुमार सम्भव म शिव के पाणिग्रहण का सुन्दर वणन प्रस्तुत करते हुय ब्रह्मचारी पावती से कहता है कि शकर की सवारी बूढा बल है जिस पर वे बठकर आयगे तो लोग तालिया बजायेंगे [9] वास्तव म दुल्हे का बल पर बठकर आना हास्यास्पद होता है क्योकि दुल्हे द्वारा घोडी की सवारी करने का ही प्रचलन है कुमार सम्भव के बारहवें सग म नन्दी का वणन बडा ही आश्चयपूण है क्योकि वह अपने सोने के दण्ड को कोने मे रखकर भगवान् को हाथ जोडकर प्रणाम करता है इन्द्रागमन की सूचना देता है और इन्द्र का स्वागत भी करता है [10] इस वणन मे वृषभ के पुरुषविध रूप का वणन किया गया है परन्तु नन्दी को सवदा एक वृषभ के रूप म ही वर्णित किया गया है यहाँ जो वणन आया है वह कवि की कल्पना मात्र प्रतीत होता है इससे अधिक कुछ नही इस प्रकार नन्दी को एक दिव्य वृषभ के रूप म काव्यो मे वर्णित किया गया है

मानव व वृषभ —मानव एव वृषभ का सवदा सम्बन्ध रहा है मानव बल को पूजनीय मानता आया है जिसका उल्लेख हषचरित म भी किया गया है [11] शिशुपालवध मे कृष्ण का बल को मारने वाला उपाधि स कहा गया है [12] इसी प्रकार रघुवश म इन्द्र ककुत्स्थ राजा के अश्व बने थे ऐसा उल्लेख मिलता

---

7 वृद्ध कथचिदगव य० यथोपरि० 1/56

8 स गार्पात नन्दिभुजावलम्बी० कुमार 7/57

9 'विलोक्य वृद्धोक्षमधिष्ठित त्वयामहाजन स्मेरमुखो भविष्यति'—वही० 5/70

10 मत स कक्षाहित हेमदण्डो नन्दी सुरेन्द्र प्रतिपद्य सद्य यथोपरि० 12/6

11 'सन्ध्यावलिवष —ह० च० पृ० 171

12 हतवषो —शिशु० 15/35

13 'महेन्द्रमास्थाय महोक्षरूपम —रघु० 6/72

14 'नास्ति तात० विक्रम० 5 (गद्य)

हैं 13 विक्रमोर्वशीयम में राजकुमार अपने पिता के राज्य के बारे में कहने हैं कि रथ के जिस जुए का बड़ा बल खींचता है उसे छोटे बछड़े के कंधे पर डालना उचित नहीं[14] इन सब बातों के आधार पर यह स्वतः सिद्ध हो जाता है कि मानव व ऋषभ का सम्बन्ध रहा है जिसे काव्यों में यत्र तत्र देखा जा सकता है वैसे मानव एवं पशु का सम्बन्ध तो काफी प्राचीन रहा है जिसे हम अस्वीकार नहीं कर सकते

कार्यकलाप —वृषभ एक क्रियाशील प्राणी है वह अनेकानेक क्रियायें करता देखा गया है जो निम्नलिखित प्रकार हैं —

वप्रक्रीडा— गज की भांति वृषभ भी वप्रक्रीडा करता पाया गया है कादम्बरी में कहा गया है कि कतिपय स्थानों पर बैल के द्वारा उखाड़े गये शिलाखण्ड विद्यमान थे[15] मेघदूत में कैलास के शिखरों को साण्ड ने उखाड़ दिया ऐसा वर्णन मिलता है[16] शिशुपालवध में वर्णन करते हुये लिखा है कि नदियों के तटों को उखाड़ने से सींगों के अगले भाग में मिट्टी लगाये हुये कलंक रूपी मल युक्त अर्द्ध चन्द्र को हूमते हुये सींगों से दूसरे बैलों को तंग करते हुये गम्भीर गर्जन के साथ नदियों के किनारों का ढाहने लगे[17] यमुना नदी को पार करते हुये बैल गरजते हुये लाल। से ऊंचे-ऊंचे यमुना के किनारों को उखाड़ने लगे थे[18]

मालवाहक —वृषभ प्राचीन समय से ही माल ढोने वाला प्राणी रहा है बैल सामान को रखने में उदण्डता भी करता है और यत्र-तत्र सामान को आसानी से पीठ पर नहीं रखने देता[19] सामान को लादे हुये बैल यदि किसी कारण से बिदकने लगते हैं तो व्यापारी गणों की दशा वास्तव में शोचनीय हो जाती है[20] वृषभ की चाल काफी तीव्र होती है तभी तो भगवान् शंकर का बैल शीघ्र ही औषधिप्रस्थ नगर को पहुँच गया[21] बैल खेतों में हल को खींचते हैं जिसका वर्णन बुद्धचरित में करते हुये कहा गया है कि हल चलाने के श्रम से बैल

---

15 'क्वचिद् त्र्यम्बक वृषभ विषाण कोटिखण्डित तट शिला खण्डम् ।'
—कादम्बरी पृ० 374

16 शैलादाशु त्रिनयन वृषोत्खात कूटानि यत्र —मेघ० उ० 56

17 मृत्पिण्ड० शिशु० 5/63

18 शृंगरपस्कीर्णमहत्तटो० शिशु० 12/74

19 शिशु० 12/10

20 कलकलोपद्रवद्रवद्द्रविण बलीवर्द० ह० च० प० 366

21 कुमार० 7/50

विरत हो गये हैं ²² विश्राम करते हुये बैलों का सुन्दर वर्णन करते हुये माघ ने लिखा है कि गाय से आलस्य युक्त वृषभों के समुदाय जुगाली करने से गलकम्बल को हिलाते हुए एवं आंखों को बन्द किये हुए विश्राम कर रहे हैं ²³ यह वर्णन बहुत ही स्वाभाविक है और लोक व्यवहार के समान है

उपमित वृषभ —तुलना संस्कृत साहित्य की प्राण है जब तक किसी वस्तु का अन्य वस्तु के साथ सादृश्य वर्णित नहीं किया जाय तब तक काव्य में लालित्य नहीं आ सकता अतः काव्यकारों ने वृषभ को विभिन्न प्रकार से उपमित कर परम्परा का पालन किया है राजा दिलीप को साँड के समान ऊँचे एवं भारी कन्धों वाला एवं बुद्ध व राम को वृषभ के कन्धों के समान कन्धों वाला वर्णित किया गया है ²⁴ अर्जुन के वक्षस्थल की तुलना वृषभ के वक्षस्थल से की है ²⁵ महाराज शुद्धोदन एवं बुद्ध की तुलना बल की आंखों से की गयी है ²⁶ तथागत की चाल की समता वृषभ की चाल से की गयी है ²⁷ रघुवंश में रघु के युवा होने की समता बछड़े के बड़े होने से की गयी है ²⁸ बल को मन से अधिक वेग से चलने वाला कहा है अर्थात जिस प्रकार मन अतिशीघ्र बहुत सी दूरी तय कर लेता है उसी प्रकार बल भी थोड़े से ही समय में अधिक दूर चला जाता है ²⁹ दुन्दुभि की ध्वनि की समता महादेव के अपूर्व उच्च हास्यरव की शंका से आनन्दपूर्वक करते वृषभ के आलाप से की गयी है ³⁰ राक्षसों के प्रसन्नतापूर्वक हँसने की तुलना साँड के प्रसन्नतापूर्वक गरजन से की है ³¹ शंकर के बल से जुगाली के समय निकलने वाले फेन से धूल की समता की गयी है अर्थात वह धूल अत्यन्त श्वेत थी ³² अहंकार की समता गायों के राजा वृषभ के रूप में की गयी है अर्थात दप

---

22 बु० का० 5/6
23 रोमन्थ० शिशु० 5/62
24 व्यूढोरस्को वृषस्कन्ध शालप्रांशुमहाभुज'— रघु 1/13
25 किरात० 14/40
26 'दीर्घबाहुमहावक्ष सिंहांसो वृषभेक्षण सौ० न० 2/50
27 समुन्नतपीन युगबाहु० वृषपरि० 3/6
28 रघु० 3/23
29 मनोति वेगेन ककुद्मता ते' कुमार० 9/37
30 हृष्टेन० कादम्बरी० पृ० 341
31 बु० च० 13/26
32 वृषभ रोमन्थ फेन पिण्ड पाण्डु कादम्बरी पृ० 351

शरीर रूपी वल के समान है 33 मरने की तुलना सिंह के भय से व्याकुल वृषभ से की है 34 रघु के वचपन के खिलवाडो की समता वल के द्वारा नदियां के किनारा को ढाहने स की गयी है 35 शकर का वल बाल्ला को अपने सीगो से बार बार फकारता हुआ चला जा रहा था जो उसके सीगा म इस भाति लग हुये थे मानो नदी की तीर पर से टीला को ढाहते समय उनमे कीचड लग गयी हो 36 समुद्र गृह मे लेटे हुय आय गौतम की हाट मे लेटे साड स तुलना की गयी है 37 रघुवश के तेरहवें सग मे जव राम लका स अयोध्या का लौटात हैं उस समय महा कवि चित्रकूट की गुफा को वृषभ के मुख चित्रकूट से निकलने वाली जल की धारा की ध्वनि का वृषभ की डकार मे पवत के शिखर को वल के सीग से व त्रिकूट पर छाय वादल को वृषभ के सीग पर लगी कीचड से उपमित कर पूर्णोपमा का सुदर प्रकार प्रस्तुत किया है 38

इस प्रकार काव्या मे वृषभ का कायात्मक वणन बडा ही सुन्दर वन पडा है कालिदास ने वृषभ का वणन सबसे अधिक किया है उनके काव्यो म वृषभ का १७ बार वणन आया है कालिदास के अलावा अश्वघोष, माघ, बाण एव भारवि ने वृषभ का क्रमश ८,५,५ व २ बार वणन किया है श्री हष, दण्डी एव सुवन्धु के का यो म वृषभ का वणन उपलब्ध नही होता इस प्रकार कुल मिलाकर वृषभ का वणन ३७ बार हो पाया है अत इसका स्थान सस्कृत साहित्य म वर्णित पशुओ म मध्यम है वृषभ के वणन का विश्लेषण निम्नांकित तालिकाओ म दशनीय है

— — —

33 'ददश पुष्टि दधते शारदी० किरात० 4/11

34 समय नियमुर्जेहात्सिहार्ता वषभा इव —ब० च० 25/64

35 मदोत्प्रा ककुदमन्त ० रघु० 4/22

36 'तटाभिघातामिव० कुमार० 7/49

37 समुद्रगृहस्य विपणि गत० मालविका० 4 (गद्य)

38 दृप्त ककुदमानिव चित्रकूट —रघु० 13/47

## तालिका (१)

'वृषभ' के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (१७)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| ६ | रघु० | १।१३, ३।३२ ४, २२ ६।७२, १२।३४ १३।४७ |
| [illegible] | कुमार० | ५।७० ७।३७, ४६, ८० ६।३७, १२।६ ३७ ११।४३ |
| १ | मेघ० | उ०, ५६ |
| १ | ऋतु० | १।२७ |
| १ | मालविका० | ४।गद्य |

## तालिका (२)

वृषभ' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (२०)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्व घोष | ६ | बु० च० | ५।६ ८।५३ १३।२६ २३।४ २५।६४ |
| | २ | सौ० न० | २।५८ ३।९ |
| भारवि | २ | किरात० | ४।११ १४।४० |
| माघ | ५ | शिशु० | ५।६२ ६३ १२।१० ७४, १५।३५ |
| बाण भट्ट | २ | ह० च० | पृ० १७१, ३६६ |
| | ३ | कादम्बरी० | पृ० ३४१ ५१ ७४ |

# महिष
## THE BAFFALO

'गाह ता महिषा निपानसलिल श्र ङ्ग गु हुस्ताडितम्'
—शाकु तलम् २/६

सपूण सरकत-साहित्य म वपम की भाति महिष का स्थान गौण रहा है किंतु महिष का उल्लेख काफी प्राचीन हैं वन्दि साहित्य मे महिप के लिये महिष [1] एव मादा के लिय महीषी[2] श ग का प्रयोग हुआ ह महिप शब्द का प्रयोग अधिक प्राचीन है एव महिषी का प्रयाग अपेक्षाकृत अर्वाचीन वाल्मीकि रामायण म भैंसे के लिए 'महिष शब्द का ही प्रयोग हुआ ह [3]

भसा मेरुदण्डीय उपजगत् के अ तगत गो-उपपरिवार के भस जाति का प्राणी ह [4] सामा य भाषा म भैंसा एक चौपाया जाति का जीव ह

भसा भी मानव समाज के लिए एक उपयोगी पशु सिद्ध हुआ ह यह चौपाया जानवर देखन मे वडा डरावना होता ह इसका शरीर भारी होता ह इसक सींग बडे बडे हाते है जगली भसा जिसे अरना भैंसा कहते हैं कि चौडाई ४ फीट एव लम्बाई ११ फीट होनी हैं इसके माथे पर चन्द्राकार दो सींग होते हैं जिनकी लम्बाई २ फीट से ३ फीट तक होनी है वृषम की भाति इसके खुर बीच म से चिरे होने हैं अन नदियो के भागो मे यह रेतीने श्रा तो को आसानी से पार करने म समथ होता हैं भस का रग सामा यत काला या गहरा सलेटी होता है परो के प्रा त भागो म सफेद रग भी होता है शरीर पर छोटे छोटे बाल हाते है जो समय समय पर कम ज्यादा होते रहते हैं

भसा ससार के सभी देशो मे पाया जाता है किन्तु इसकी कई किस्मे होती हैं। तिब्बत का याक भी इसी श्रेणी से साम्य रखने वाला जीव है मादा जिसे भस कहत हैं दूध भी देती है लोग भस का मास भी खाते हैं भारत, बर्मा

---

1 ऋ क 8/58/15
2 का स 15/6, मै स 3/8/5
3 'महिषो दु दुभिनाय कलास शिखर प्रम । वा रा कि 11/7
4 सुनायोमहिषो इत्यमर (सिंहादि वग) जीव जगत पृ 586

व ग्रफीका मे भैंसो का बाहुल्य है नर भैंसा भार ढोने का प्रमुख साधन है भसा कम पहाड़ो वाले हल्के हल्के जगल वाले मैदानी भाग को अधिक पसद करता है पवतो की तराई मे भसे दलदल पूण छोटे छोटे तालो के पास पाये जाते हैं। यह जीव पानी को बहुत पसन्द करता है एव जब मालिक से छुट्टी पा लेता है तो वह तालो म जाकर लेटा रहता है घास-पात इसका प्रमुख खाद्य है पालतू जीव को दाना व खली भी खिलाई जाती है भसा वरा बडा सीधा जानवर माना जाता है किन्तु घायल हो जाने पर यह हाथी जसे विशालकाय जीव का भी क्रोध म ग्राकर डटकर मुकाबला कर बठता है

भम दस माह म एक बच्चा न्नी है भसा हल जोतने, कुम्रो से पानी निकालने, बोभा ढोने एव गाडी खीचने म वृषभ की भाति ग्रत्यन्त सहायक है मरणोपरान्त इसके चम की एव सीगा की ग्रनेक वस्तुयें बनती हैं भसा बल की भानि ग्रत्यन्त उपयोगी है किन्तु इसम दो कमिया हैं प्रथम तो सुस्ती एव द्वितीय मन्दगति ग्रत यह इतना उपयोगी नही कहा जा सकता जितना कि बल हमारे देश मे भस के लिए "काला ग्रक्षर भैंस बराबर' एव भस के ग्रागे बीन बजाना ' मुहावरे भी प्रचलित हैं

## सस्कृत काव्यो में महिष

सम्पूण सस्कृत काव्यो मे महिष का वणन विरल रहा है काव्यो म भसे के लिए महिष [5], कासर [6] एव भस के लिए महिषी[7] शब्द का ही प्रयोग हुग्रा है प्रस्तुत काव्यो मे इसके ग्रतिरिक्त भसे के किसी भी पर्यायवाची का प्रयोग नही हुग्रा है महिष का नामोल्लेख करने के पश्चात हम भसे की काव्यगत विशेषताग्रो पर विचार करगे

मानव एव महिष —मनुष्य व पशु का सम्बन्ध एक ग्रति प्राचीन सम्बन्ध रहा है तभी तो मानव के जीवन म पशु का वणन ग्रा पाया है महिष को मृत्यु क देव यमराज का वाहन कहा है कुमारसम्भव म लिखा है कि जिस समय भगवान् कार्तिकेय राक्षसा का दमन करने चले तो यमराज भी ग्रपने नीलम के समान काल रग क महिष पर चढ कर चल पडे [8] इस बात स स्पष्ट होता

---

5 शिशु 12/75 17/41 कादम्बरी पृ 57, 83, 89 ह च पृ 82 139, 157, 160, 416
6 कुमार 14/7, किरात 12/50
7 बु च 8/24
8 कुमार 14/7

है कि महिष पहले भी सवारी का साधन रहा है महिष नाम के असुर का वणन जिसे 'महिषासुर' कहा है कादम्बरी मे आया है [9] रावण के द्वारा महिष के सीगो का उखाड कर उनका धनुष बनाने का उल्लेख भी मिलता है [28] इस बात से यह ज्ञात होता है कि प्रारम्भ मे भैंसे आकार मे बडे होते रहे होंगे तभी तो उनके सीगो का धनुष बन सकता होगा इसी प्रसग मे कहा गया है कि दूसरे से अपमानित व्यक्ति का लज्जित होकर मस्तक नीचा कर लेना उचित ही है [10] शकुन्तला के प्रेम मे राजा दुष्यन्त अपने कत्तव्य को भूलते हुए शिकार त्याग को महत्व देते हुए कहते हैं कि भैसो को अपने सीगो से पानी को पीटने दिया जाय [11] हमारे देश म बलि देने की प्रथा एक परम्परा के रूप मे आज तक भी विद्यमान है हषचरित व कादम्बरी मे महिषबलि का वणन किया गया है [12] मनुष्य मनोरञ्जन के लिए प्रतिमाओ का निर्माण करता है इस प्रसग मे कादम्बरी मे एक लौहनिर्मित महिष का वणन करते हुए कहा गया है कि उसके शरीर मे हस्ताकृति रक्तचन्दन के चिन्ह लग थे उससे ऐसा ज्ञान होता था कि मानो यमराज ने उसे चलाने के लिए रक्ताग्र हाथ से ताडन किया हो [13]

इस प्रकार उपयु क्त उदाहरणो व वणनो से ऐसा प्रतीत होता है कि महिष व मानव का सम्ब ध सदा रहा है और रहेगा

काय कलाप —सस्कृत काव्यो म महिष के काय-कलापो का यदाकदा वणन किया गया है कादम्बरी मे वणन मिलता है कि महिष समूह म रहते हैं।[14] ग्वाला का महिष पर बठकर गायो की रक्षा करने का वणन भी सस्कृत काव्यो म मिलता है [15] महिष अगरू को विदलित करते हुए भाग वन्त रहते हैं।[16] गज एव वृषभ की भाति महिष को भी वप्रक्रीडा करने वाला जीव माना गया है भैंस बाबियो को खोद डालते है [17] जल के प्रेम से वह स्फटिक को

---

9 'रुधिर मृदित-महिषासुर-रुधिर, कादम्बरी पृ 32
10 परेतभतु महिषोऽधुना शिशु 1/57
11 शिशु पृ 36
12 'गाहन्ता महिषा निपानसलिल शाकु 2/6
13 पवतहति क्वणित कादम्बरी पृ 87
14 अभिमुखप्रनिष्ठे म कादम्बरी पृ 637
15 वनमहिषयूथम—कादम्बरी पृ 89
16 'महिष पृष्ठ प्रतिष्ठित ह च पृ 160
'महिषलता गुरु किरात 12/50

अघकार की तुलना भैंस से अनेकधा की गयी है [28]

इस प्रकार महिष का काव्यात्मक वणन बड़े ही सुदर ढग से सस्कृत-साहित्य म उपलब्ध होता है

महिष का सबसे अधिक उल्लेख गद्य काव्यो में हुआ है कादम्बरी मे महिष का वणन सबसे अधिक बार यानि १२ बार आया है हषचरित म महिष का वणन ६ बार शिशुपालवध म ३ बार नषधीय चरित्र म २ बार एव दश कुमार चरित, रघुवश व कुमारसम्भव ऋतुसहार बुद्धचरित किरातार्जुनीयम व अभिज्ञान शाकुतलम मे महिष का केवल एक एक बार वणन किया है इस प्रकार महिष का वणन कुल मिलाकर ३० बार हुआ है महिष के वणन का विश्लेषण प्रस्तुत तालिकाओं म दशनीय है

---

28 'जर महिषविषाण धूवराम्' यथोपरि 17/41

29 रविरथतुरगमार्गानुसारेण ह च प 157

## तालिका-१

### 'महिष' के वर्णन का कालिदास के काव्यो मे विश्लेषण (4)

| सख्या | काव्य | वणन का क्रम |
|---|---|---|
| १ | रघु० | ६/६१ |
| १ | कुमार० | १४/७ |
| १ | ऋतु० | १/२१ |
| १ | शाकु० | २/६ |

## तालिका-२

### 'महिष' के वणन का कालिदासोत्तर काव्यो मे विश्लेषण (26)

| कवि | सख्या | काव्य | वणन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्वघोष | १ | बु च | ८/२४ |
| भारवि | १ | किरात | १२/५० |
| माघ | ३ | शिशु | १/५७ १२/७५ १७/४१ |
| श्रीहर्ष | २ | नषध | १३/३४ १६/६२ |
| बाणभट्ट | ६ | ह च | पृ ८२, १३६ ५७, ६०, ४१६ १६ |
| , | १२ | कादम्बरी | पृ ३२, ५७, ८०, ८३, ८८ ८६, ८६ ६६ ३७८, ५१२, ६३७, ३७ |
| दण्डी | १ | द च | पृ ११ |

# अज
# THE GOAT

'प्रलम्ब कूर्चधरैश्छागैरपि धृतव्रतैरिव ।'
—कादम्बरी० पृ० ६४१

संस्कृत साहित्य मे अज का स्थान अन्य पशुओ की अपेक्षा गौणतर है, किन्तु अज का उल्लेख संस्कृत साहित्य म प्राचीन है वैदिक साहित्य मे बकरी को अज, अजा छग छाग वस्त शब्दो से कहा गया है[1] लाल बकरी को लोह[2] कहा गया है संस्कृत मे अज के लिए अज, छाग छगलक, वस्त शुभ एव मादा अज के लिए अजा व छागी शब्दो का प्रयोग हुआ है[3] अमरकोष म स्तभ छाग, वस्त छगलका अज एव अजा शब्दो का प्रयोग हुआ है[4] वाल्मीकि रामायण म अजामुखी राक्षसी का नाम आया है[5]

बकरी मेरुदण्डीय उपजगत के अतगत स्तनप्राणी श्रेणी के अज उपपरिवार का प्राणी है[6] सामान्य भाषा मे यह एक चौपाया पशु है

बकरी मानव समाज के लिए एक उपयोगी प्राणी है यह जीव देखने म बडा चंचल स्वभाव का होता है इसके सिर पर दो सीग होते हैं जो विभिन्न प्रकार की किस्मो के अज के आधार पर विभिन्न आकार प्रकार के होते हैं अज का शरीर बालो से ढका रहता है इसके बालो का रग विभिन्न प्रकार का होता है बकरिया सामान्यत काली सफेद भूरी स्वर एव चितकबरी होती है

---

1 ऋक 10/16/4 अ वे 9/5/1, 8/70/15, अ वे 4/71/1 श ब्रा 5/6/22/1 ऋक 2/162/3 वा स 16/89 21/40 ऋक 1/161/13 त स 2/3/7/4, 5/3/1/5

2 ऋक 53/23

3 स इ डि आप्टे प 186

4 अजाछाग इत्यमर (वश्यवर्ग)

5 वा रा सुन्दरकाण्ड

6 जीव जगत पृ 588

भेड की भांति बकरी भी घास के मैदानो मे पायी जाती है घाटिया मे बकरियो का बाहुल्य होता है क्योकि वहा मुलायम घास अधिकता मे उपलब्ध होती है, रेगिस्तानो मे भी बकरिया पायी जाती है बकरी एक सामुदायिक प्राणी है

बकरी का उत्पत्ति स्थान पूर्व मे माना जाता है कारण कि बकरी के प्रथमावशष फारस मे उपलब्ध हुये हैं[7] बकरी चीन, ग्रेट ब्रिटेन, यूरोप, उत्तरी ग्रमरिका, बलूचिस्तान, ग्रफगानिस्तान, पाकिस्तान भारत, मध्येशिया व सिंघ म पायी जाती है भारत म बकरी कश्मीर, पजाब, हरियाणा, हिमाचलप्रदेश व राजस्थान में बहुतायत से पायी जाती है बकरी सामान्यत शुष्क एव उष्ण जलवायु म रहती हुयी गर्मी को ग्रासानी म सह लेती हैं किन्तु नमी इसके लिए ठीक नही[8] ग्रज का चन्द्रमा की सवारी माना गया है

बकरी का दूध, ऊन, मास व चमडा मनुष्य के बड काम की वस्तुयें हैं,[9] बकरी को गरीब की गाय माना गया है इसका दूध विशुद्ध धवल रग का होता है एव गाय के दूध की भांति टिकाऊ एव उपयोगी होता है[10] यो तो बकरिया ग्रनेक प्रकार की होती है किन्तु उनम प्रमुख प्रकार निम्नलिखित है —

(ग्र) कश्मीरी—भारत के कश्मीर राज्य मे पायी जाने वाली एक नस्ल है यह एक सामान्य बकरी म ग्रधिक उपयोगी होती है[11] इसकी ऊन ग्रच्छी व मास खाने योग्य हाता है

(ब) ग्रगोरा—यह बकरी कम दूध देने वाली होती है इसे शीत एव शुष्क जलवायु की ग्रावश्यकता है यह ग्रच्छी ऊन देने वाली किस्म है[12]

(स) जमुनापारी—यह कद म विशाल होती है एव ग्रधिक दूध देने वाली होती है यह बकरी १८९६ मे एक ग्रग्रज द्वारा ग्रायात की गयी थी[13]

(द) बरबरी—यह जमुनापारी से विपरीत गुणा वाली हाती है यानी

---

7 इन ब्रि भाग 10 पृ 456

8 इन चेम्बर भाग 6 प 402

9 ए किंग प 8.9 इन ब्रि भाग 10 प 457

10 यथोपरि यथोपरि

11 यथोपरि ए किंग प 839

12 यथोपरि इन ब्रि भाग 10 पृ 457

13 यथोपरि यथोपरि

कद में छोटी व कम दूध देने वाली यह एक बारगी दो बच्चे देने वाली होती है अतः यह किस्म सख्या म निरन्तर बढ़ती रहती है

बकरी का दूध बच्चे के लिए उपयोगी एव स्वास्थ्यप्रद होता है महात्मागांधी भी बकरी का दूध पीते थे बकरी का मास सम्पूर्ण भारत म खाया जाता है बकरे के चमड़े के जूते बनते हैं इसके बालो के नमदे कपड़े व रस्सिया बनाई जाती है बकरी को यदि एक पौण्ड अनाज नित्य खाने को दिया जाय तो वह तीन पौंड दूध नित्य दे सकती है[14] इस प्रकार यह एक सस्ता घरेलू प्राणी है इसके निवास के लिए थोड़े से स्थान की आवश्यकता होती है

अज का जीवन काल ८ से १२ वर्ष के मध्य होता है[15] बकरी एक बार मे दो बच्चो को जन्म देती है सामान्यतः तीन भी देती है और यदा-कदा चार एव पाच भी देते हुए देखी गई है[16] बकरी का बच्चा छ माह मे बड़ा हो जाता है

## संस्कृत काव्यों मे अज

संस्कृत काव्यो म अज का वर्णन विरलतम है काव्या म बकरी के लिए छाग शब्द का प्रयोग हुआ है[17]

मानव व अज—अज एव मानव का सम्बन्ध गहरा रहा है सूतिका गृह के बाहर द्वार पर वृद्ध अज को बाधना शकुन समझा जाता है[18]

उपमित अज— दीर्घदाढ़ी को धारण कर बकरिया भी माना व्रतावलम्बन कर देवी की आराधना करती थीं'—इस वाक्य म बकरी की दाढ़ी की समता कूर्च वाले व्रतावलम्बी महर्षियो से की गयी है[19] वासवदत्ता म इन्दुमती को अज (राजा अज, बकरा) की अनुरागिनी कहा गया है[20] नैषधीयचरितम् म बकरे के स्वादिष्ट मास का उल्लेख है[21]

सम्पूर्ण काव्या म अज का उल्लेख केवल ४ बार हुआ है बाण, सुबन्धु व श्रीहर्ष ने क्रमश २ १ व १ बार अज का उल्लेख किया है अज के वर्णन का विश्लेषण सलग्न तालिकाओ मे दर्शनीय है

---

14 यथोपरि,
15 यथोपरि
16 यथोपरि

## तालिका—१

'अज' के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (X)

( × )

## तालिका—२

'अज के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (3)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| सुबन्धु | १ | वासवदत्ता | पृ ३८ |
| बाणभट्ट | २ | कादम्बरी | पृ २२०, ६४२ |
| श्रीहर्ष | १ | नैषध | १६/८६ |

— — —

# मेष
# THE SHEEP

'मदोद्धत मेषमधिष्ठित शिखी

—कुमार० ४/६

संस्कृत वाङ्मय म मेष का स्थान अन्य पशुओ की अपेक्षा गौणतर है मेष का उल्लेख संस्कृत साहित्य मे काफी प्राचीन है वदिक साहित्य म मेष को उरा अवि मेष उसनी परप्नी व उणवती नामो का उल्लेख है [1]

मेष मेरुदण्डीय उपजगत के अन्तगत स्तनप्राणी श्रेणी के अज उप परिवार का पशु है सामान्य भाषा मे मेष चौपाया जाति का जीव है

मेष मानव जाति के लिए एक अत्यन्त उपयोगी पशु सिद्ध हुआ है विश्व मे अनेक प्रकार की भेडें पायी जाती हैं, जिनम मेरीना, स्लेनी कोलम्बियन आक्सफोर्ड कराकुल, यान उरियल भरल इत्यादि प्रमुख हैं [2] भेडें विश्व के अनेक भागा म पायी जाती है जिनमे प्रमुख स्थान है—पामीर-पूर्वी तुर्किस्तान पश्चिमी मगोलिया साइबरिया लद्दाख, अफगानिस्तान, तिब्बत अफ्रीका नेपाल व भारत भारत म भेडें पञ्जाब, राजस्थान हरियाणा कश्मीर व मध्यप्रदेश मे पाली जाती है भेड एक लघुकाय प्राणी है यह ऊन से ढका रहता है इसके सिर पर दो सीग होते है मादा मेष के सीग नर मेष की अपेक्षाकृत छोटे होते हैं इनके सीग हरे या भूरे रग के होते हैं नर के सीग टेढे होते हैं एव धारीदार होते हैं [3] भेडा के नर बकरी की भाति दाढी नही होती भेडे अनेक रग की होती हैं इनके मुख्य रग है—काला चितकबरा, सफेद एव मटिया

भेडें घास के मैदानो एव पहाडियो की तलहटी मे पायी जाती है कारण कि इनका वहा घास मिल जाती है रेगिस्तान म भेडें बडी ही उपयोगी होती है जो थोडा खाकर अधिक लाभान्वित करती है यह भी बकरी की भाति एक सामुदायिक जीव है ये कतार बनाकर एक के पीछे एक चलती देखी गई है और इनकी इसी क्रिया के कारण इनकी चाल को 'भेड चाल' कहा जाता है इस बात से यह

---

1 मेढोरभ्रो इत्यमर (वश्यवग)

2 इन ब्रि भाग 84482 ए किग पृ 20 55पृ 5

3 यथोपरि

सिद्ध होता है कि भेड एक अल्पबुद्धि वाला प्राणी है भेडो की चाल की बात अक्षरश सही है व वास्तव म बिना किसी कठिनाई के बारे मे विचार किये निरन्तर चलती देखी गयी हैं

भेड से मानव को तीन वस्तुयें मुख्य रूप मे प्राप्त हैं—दूध, मास एव ऊन भारत मे तो नहीं किन्तु अमेरिका, ब्रिटेन, रूस व अफ्रीका मे भेड के मास का आयात निर्यात काफी मात्रा मे होना है भेड का दूध पीने के काम तो आता ही है साथ ही टूटी हुयी हड्डियो पर मलने से भी आराम मिलता है ऊन भेड स प्राप्त होने वाली सबसे महत्वपूर्ण वस्तु है जिससे विभिन्न प्रकार के वस्त्रो का निर्माण होता है [4]

सामान्यत भेड एक पालतू प्राणी है, किन्तु जगली भेडें भी पाली जाती है जगली भेडें सख्या मे कई होती हैं एव एक समुदाय म एक वृद्ध नर भेड के पीछे-पीछे चलती हैं वे आकार मे बडी होती है [5] पालतू भेडें आकार, सख्या, ऊन की श्रेष्ठता, रग एव दूध की उत्पत्ति के आधार पर जगली भेडो से भिन्न होती हैं [6] कुछ भेडो की ऊँचाई करीब ४ फीट होती है [7] वे लम्बाई मे ७ फीट तक होती हैं मादा भेड गर्मी के मौसम म एक या दो बच्चा को जन्म देती है

## सस्कृत काव्यो मे मेष

सस्कृत काव्यो म भेड का वणन अत्यन्त विरल है काव्यो मे भेड के लिए उरभ्र एव मेष शब्दो का प्रयोग किया गया है [8]

मानव व मेष—हषचरित मे एक स्थान पर भेड पालन का उल्लेख किया गया है कि ग्वाले ऊँटा के साथ साथ भेडो को भी पालते हैं [9] मेष को महाकवि कालिदास ने अग्निदेव की सवारी के रूप मे वर्णित किया है [10]

उपमित मेष—सस्कृत काव्यो म मेष को केवल दो बार उपमित किया गया है एक स्थान पर भेड से ब्राह्मण को उपमित किया है जस गर्भिन भेडा

---

4 इन चेम्बर भाग 12 पृ 462

5 इन्न ब्रि भाग 20 पृ 482

6 यथोपरि 482

7 द० स० ए० भाग० 2 पृ 350

8 बु० च० 13/23 ह० च० पृ० 161 कुमार० 14/6

9 'करभीय कुमार'० ह० च० पृ० 161

10 'महोघत मेषमधिष्ठित '–कुमार० 14/6

चोट करने की इच्छा से पीछे हट जाता है उसी प्रकार तुम्हारा यह ब्रह्मचय पीछे हट जाता है" इस प्रकार का वाक्य गौत्तम का शिष्य आनन्दनन्द के प्रति कहता है[11] अयत्र भेड के से मुख वाले राक्षसा का वणन किया गया है[12]

इसप्रकार सस्कत का यो म मेप का नामोल्लेख केवल ६ बार हुआ है महाकवि अश्वघोष ने मेप का वर्णन दो बार किया है—एक बार सौंदरनन्द मे तथा दूसरी बार बुद्धचरित मे हषचरित, शिशुपालवध एव नषधीयचरित मे भेड का एक एक बार उल्लेख मिलता है महाकवि कालिदास ने अपने काव्य कुमारसम्भव म भेड का एक बार वणन किया है कालिदास के नाटको मे मेप के वणन का अभाव है मेप के वणन का विश्लेपण निम्नाकित तालिकाओ म अवलोकनीय है

---

11 सौ० न० 11/25
12 बु० च० 23/13

## तालिका—१

'मेप' के वणन का कालिदास के काव्यो में विश्लेपण (1)

| सख्या | काव्य | वणन का क्रम |
|---|---|---|
| १ | कुमार० | १४/६ |

## तालिका—२

'मेप के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेपण (5)

| कवि | सख्या | काव्य | वणन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्वघोष | १ | बु० च० | १ ।२३ |
| | १ | सौ० न० | ११।२५ |
| श्रीहष | १ | नषध० | |
| माघ | १ | शिशु० | |
| बाणभट्ट | १ | ह० च० | पृ० १६१ |

# मृग
# THE DEER

सोऽयं न पुत्रकृतक पदवी मृगस्ते ।'

—शाकुन्तलम् ४/४१

सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य मे मृग का प्रमुख स्थान रहा है मृग शब्द संस्कृत साहित्य मे अनेक अर्थों म प्रयुक्त हुआ है वदिक साहित्य मे मृग के लिए रुरु कृष्ण, पृषत्, हरिण, कुलुग, पृषति, एणी, रोहित शब्दो का प्रयोग किया गया है जिनमें अन्तिम तीन नाम सामान्यत मादा मृग क वाचक है[1]

मृग मेरुदण्डीय उपजगत के अन्तगत मृग (काला) उपपरिवार का जीव है[2] मृग उप परिवार एक बहुत बडा परिवार है जिसमे मृग (काला) व चिकारा आते हैं संस्कृत मे मृग शब्द का एक विशेष अथ किया गया है जिसके अन्तगत रोझ उपपरिवार का चौसिंगा बारहसिंघा परिवार के बारहसिंघा, हगन्त, साभर, चीतल, पढा, काकड, व कस्तूरी मृग भी आ जात हैं तात्पय यह है कि मृग शब्द एव ऐसा सामान्य शब्द है जिसका प्रयोग प्रत्येक प्रकार के पशुओ के लिए किया जाता है[3]

मृग एक शाकाहारी प्राणी है सामान्य अवस्था मे यह एक जगली जीव है, जो जगलो म इधर उधर घूमता रहता है सामान्यत हरिण, हल्के पीले, ललछौह, नारगी, काले, चितकबरे, बादामी, भूरे इत्यादि रग के होत हैं

---

1 तै० स० 5/19/1 8/4/10 वा० स० 24/27/37 ए० ब्रा० 3/33 त० स० 5/2/5/6 6/1/3/1 शा० ब्रा० 1/1/4/1 3/2/1/28 त० स० 5/5/17/1 मै० स० 3/14/9/21 वा० स० 24/27/40 निरुक्त 2/2 ऋक 1/16/3/1 5/78/2 अ० वे० 6/67/3 3/67/3 तै० स० 5/5/11/1 मै० स० 3/14/9/13 वा० स० 24/27/32 ब० इ० (1) पृ० 19 अ० वे० 5/14/11 त० स० 5/5/15/1 ऋक० 10/39,8 अ० वे० 4/4/5/7

2 जीव जगत पृ० 598

3 गन्धव शरभो राम सृमरो गवय शश । इत्यादयो मृगेन्द्राद्या गवाद्या पशुजातय । इत्यमर (सिंहादिवग)

मृग अनेक प्रकार के होते हैं[4] यह एक सुन्दर जीव है छोटी छोटी पतली चार टाँगें, सिर पर छोटे-बड़े अनेक प्रकार के चित्र विचित्र सींग एवं बड़ी-बड़ी सुन्दर आँखें ही मृग की सुन्दरता का राज है

मृग मुलायम घास के मैदानों में निवास करने वाला प्राणी है कई मृग तो पहाड़ी भागों से परे बिल्कुल मैदानी भागों में ही विचरण करना अधिक पसन्द करते हैं क्योंकि मैदानी भागों में हरी हरी घास उगती है जो मृग का प्रमुख खाद्य है मृग के चरने का कोई सुनिश्चित समय नहीं होता है यह इच्छानुसार चरता देखा गया है मृग के विभिन्न प्रकारों की मादाओं का गर्भाधानकाल अलग अलग हैं, पर सभी एक या एक से अधिक बच्चे देती पाई गई हैं मृग सामान्यतः भारत, अफ्रीका एथोपिया, टागानिका एवं साइबेरिया के भागों के अतिरिक्त यूरोप के अनेक भागों में भी पाये जाते हैं[5] वास्तव में कोई[6] भी वास्तविक मृग अमरीका का नहीं है मृग की शरीर रचना कार्य-कलाप एवं रंग इत्यादि के बारे में इतनी विभिन्नतायें विद्यमान हैं कि जब तक इन सब में से कतिपय का संक्षिप्त ज्ञान न हो तब तक उनके बारे में जानना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है अतः अब हम मृग के विभिन्न प्रकारों में से कतिपय पर संक्षेप में विचार करेंगे—

मृग—हमारे देश का हरिण इस श्रेणी के अन्तर्गत आता है इसे कालिया हरिण व कृष्णसार नामों से भी कहा गया है ये मृग मैदानी भागों में अधिक पाये जाते हैं ये लम्बाई में ५ से ६ फीट एवं ऊँचाई में ढाई से तीन फीट तक होते हैं नर के सींग १४ से २१ इंच तक लम्बे धारीदार एवं सीधे होते हैं[7] मादा मृग शृंग विहीन होती है या बहुत छोटे सींगों वाली होती है मृग का रंग बादामी या कत्थई होता है इसका मांस खाने योग्य होता है[8]

चिंकारा—यह मृग सामान्य मृग से छोटा एवं अति सुन्दर होता है इसका रंग गहरा होता है नीचे का भाग सामान्यतः श्वेत होता है मादा के सींग होते हैं चिंकारा से सम्बन्धित कई कहानियाँ हैं

चौसिंगा—जैसा कि नाम से स्पष्ट है इसके सिर पर चार सींग होते हैं मादा शृंग विहीन होती है ये हमारे देश में महाराष्ट्र, पंजाब हरियाणा,

---

4 इन्‍ डि भाग 2 पृ 21 जीवजगत पृ 598–612
5 इन सेन्चर भाग 2 पृ 21
6 वही वही
7 ए डिक पृ 821
8 इन डि भाग 2 पृ 21

राजस्थान, मध्यप्रदेश के अतिरिक्त हिमालय की तराई म भी पाया जाना है

कस्तूरी मृग—प्राय हिमालय की तराई मे पाया जाने वाला यह मृग ५०० से ७०० मि मी तक ऊँचा एव ७५० से ९५० मि मी तक लम्बा होता है यह शृ ग विहीन होता है इसकी पिछली टागें छोटी होती हैं शरीर का रग विभिन्न प्रकार का होता है यह एकान्त सेवी होता है[9] इसकी नाभि से कस्तूरी प्राप्त होती है जिसे सस्कृत म 'मृगमद' कहा गया है एक मृग मे १० से ४५ ग्राम तक कस्तूरी प्राप्त होती है जो आर्थिक जगत् म महत्वपूर्ण वस्तु है

बारहसिंघा—जसा कि इसके नाम से विदित है इसके दोनो सीगो में कुल मिलाकर बारह सींग होते हैं जो समय-समय पर (सामान्यत पौष माघ म) गिरते रहते हैं यह प्राणी ६ फीट तक लम्बा एव करीब चार फीट तक ऊँचा होता है मध्यप्रदेश व हिमालय की तराई मे बारहसिंघा पाया जाता है सर्दी मे इसका रग बादामी होता है किन्तु गर्मी म सफेद चित्तो से पूर्ण खर हो जाता है

चीतल—इस मृग के शरीर पर चित्ते होते हैं अत यह बहुत ही सुदर प्रतीत होता है यह गम रगिस्तानो को छोड सम्पूर्ण भारत म उपलब्ध होता है यह लगभग ५ फीट लम्बा एव तीन फीट ऊँचा प्राणी है इसके शरीर पर सफेद रग की चित्तियाँ होती हैं जो कि मुख पर कम व हल्की होती हैं यह सरोवरों के किनारे बडे बडे समुदायो म मिलता है

साभर—इस प्रकार का मृग हमारे देश म प्राय सभी स्थानो पर पाया जाता है यह वन प्रधान पहाडी घाटियो म रहना अधिक पसन्द करता है यह एक विशालकाय प्राणी होता है इसकी ऊचाई साढे चार फीट एव लम्बाई साढे सात फीट तक होती है इसके सीग बडे होते है एव शाखायुक्त होते हैं आश्विन के माह मे इनके नये सीग आते हैं इसका रग कत्थई होता है प्राचीन साहित्य में एक कहानी मिलती है जो एक लडके से सम्बन्ध रखती है जिसे भारतीय भाषा मे 'मौगली' एव आग्ल म 'गेजल बाय' नाम दिया गया है यह लडका देखने मे मानव किन्तु क्रियाओ मे शिकारी था[10]

इस प्रकार हमने विभिन्न मृगो की विभिन्न विशेषताओ पर विचार किया अब हम इसकी काव्यात्मक विशेषताओ पर विचार करने का प्रयास करेंगे

---

9 हि वि कोष भाग [illegible] पृ 406

10 ए किंग पृ 814 मौगली, श्रीकृष्णदत्त शर्मा।

## सस्कृत काव्यो में मृग

सस्कृत काव्यो मे मृग का स्थान सर्वत्र मुख्य रहा है इस काव्यो मे मृग, हरिण, कुरग एण, एणक, चमर शरभ रुरु नीलाण्डज प्रियक, गवय कृष्ण कृष्णसार पृषत, रकु, सारग नामो से कहा गया है[11]

मादा के लिए विशेषत कतिपय काव्यकारो ने मृगी, एणी व हरिणी का भी प्रयोग यत्र तत्र किया है उपयुक्त नामो मे कतिपय नाम मृग की भिन्न भिन्न किस्मो के भी है किन्तु इनमे से अधिकतर आधुनिक युग मे मृग शब्द के पर्याय बन गये है[12] इस प्रकार नामोल्लेख करने के पश्चात इनकी काव्यगत विशेषताओ पर विचार करेंगे योजनानुसार हमे इस स्थान पर मृगो का कार्यात्मक विभाजन प्रस्तुत करना चाहिए, किन्तु काव्यो मे भी प्राय उन्ही मृगो के प्रकारो का विवरण किया गया है अत पुनरावृत्ति से बचने के लिए हम यहा मृगो का विभाजन प्रस्तुत नही करते

निवास व मानव से सम्बन्ध—सस्कृत-साहित्य मे मृग सर्वदा वन प्रदेशो मे विचरण करते हुए बताए गए हैं मृग एक समुदाय वाला प्राणी है[13] राजा दिलीप जब वन मे अपनी पत्नी के साथ जाते हैं तो रास्ते मे मृगो के समुदाय उनके रथ की ओर एकटक होकर देखते हैं[14] इसी प्रकार महर्षि वशिष्ठ के उटज द्वार पर मृग खड़े रहते हैं, ऐसा वर्णन कालिदास ने किया है[15] रैवतक पर्वत पर मनोहर

---

11 कु स 2/1 सौ न 1/13 किरात 1/40, मेघ०उ० 37, शिशु० 2/53 रघु० 9/55, कुमार० 1/46, ऋतु० 2/9 नैषध० 2/21, ह० च० पृ० 326 कादम्बरी० पृ० 58 रघु० 14/68 सौ० न० 1/12, किरात० 12/52, मेघ०उ० 46 कादम्बरी० पृ० 638 कुमार० 5/15 ह०च०पृ० 424 ह० च० 137 324 कादम्बरी पृ० 141, स०इ०म०डि० आप्टे० पृ० 96 कादम्बरी० 121 127, शिशु० 4/143 किरात० 12/47 ह०च०पृ० 420 रघु० 9/66, रघु० 1/23 रघु० 9/72 ह० च० पृ० 420 ह० च० पृ० 420 शिशु० 4/32 ह०च०पृ० 420 ह०च०पृ० 68, कादम्बरी पृ० 18 कादम्बरी 388 नैषध० 18/19, नैषध० 12/77, ह० च० पृ० 420 शाकु० 1/६

12 इ० स० डि० आप्टे० पृ० 96

13 'मृगकदम्बकम्—कादम्बरी पृ० 83

14 मृगद्वन्द्वेषु पश्यन्ती स्यन्दनाबद्धदृष्टिषु ।—रघु० 1/40

15 रघु० 1/50

एव अनेक रगा वाले रोमयुक्त मृग के भ्रमण का वणन भी प्राप्त होता है[16] 'हरिणी' नामक अप्सरा का वणन महाकवि कालिदास ने किया है जिसे इन्द्र ने मुनि की तपस्या भग करने के लिए भेजा था[17] राजा नल का वन म मृगा के साथ मोक्षाथ निवास करन का वणन भी किया गया है[18]

महाकवि बाणभट्ट ने अच्छोद सरोवर की सिकता मिट्टी पर चमरी एव कस्तूरी मगो के निशानो का वणन किया है[19] इसी प्रकार महाकवि कालिदास ने कस्तूरी एव शरभ मगों का निवास हिमालय पवत को बतलाया है[20] इन सभी बातो के आधार पर यह कहना तार्किक होगा कि मृग खुले मैदानो नदियो की घाटियो वनो एव पवतीय भागो म निवास करत हैं यह बात अवश्य है कि इन मृगो की किस्म म कतिपय भेद अवश्य है जो उनकी भौगोलिक परिस्थितियो पर पूण आधारित है इन विवरणो स एक द्वितीय बात यह प्रमाणित होती है कि मृग का मनुष्य के साथ गहरा सम्बन्ध रहा है एव यह मनुष्य की दृष्टि म एक प्रिय पशु रहा है तभी तो आश्रमवासी चिल्ला उठते है कि यह आश्रम का मृग है इसे नहीं मारा जाना चाहिए[21] शकुन्तला का मृग के प्रति इतना प्रेम है कि कवि ने इसे पुत्र कहा है राजा दुष्यन्त द्वारा शकुन्तला के साथ रहकर उसे भोली चितवन सिखाने वाले मृगा पर बाण चलाने की असमथता पशु प्रेम का प्रत्यक्ष प्रमाण है

क्रिया कलाप—हरेक प्राणी की क्रियाओ म कुछ न कुछ विशेषतायें होती हैं मृग की क्रियाओ म उसकी चौकडी भरना प्रमुख क्रिया है जिसका सभी काव्य कारो न वणन किया है

राजा दशरथ ने रुरु नाम के विशेष मृग का पीछा किया था एव राम को सोन का मृग दूर ल गया था य दोनों बातें इस बात का साक्षात प्रमाण है कि मृग बडी तज गति से चलता है तभी तो ये नृप श्रेष्ठ उनके पीछे भागते होंगे[22]

---

16 रुचिरकल्पतनरुह शालिभि विघलित प्रियकव्रज—शिशु० 4/32

17 हरिणी सुराङ्गनाम'—रघु० 8/79

18 मगरजम जरसोपदिष्टमदेह बन्धाय पुनबन्ध' ।—रघु० 18/7

19 'सिकता निमग्न–चमर–कस्तूरिका–मृगो–खुर–पङ्क्तिना'—रघु० 18/7

20 मेघ० पृ० 56, 58

21 आश्रममृगोऽयं न हन्तव्यो न हन्तव्य—शाकु० 1 (गद्य)
साऽयं न पुत्र कृतक पदवीं मृगस्ते—वही० 4/14 वही 2/4

22 'दरोगृहीतवर्त्या विपिने पाश्व चररलक्ष्यमाण —रघु० 9/72
'मृगानुसारिण साक्षात्पश्यामीव पिनाकिनम्'—शाकु० 1/6
कनकमृगो राघवमति दूर जहार—कादम्बरी पृ० 66

अभिज्ञान शाकुन्तल में मृग के दौड़ने का बड़ा ही स्वाभाविक वर्णन प्रस्तुत करते हुये महाकवि कालिदास ने लिखा है कि राजा दुष्यन्त जब मृग का पीछा कर रहे थे तब मृग गर्दन को पुनः-पुनः घुमाकर रथ की ओर मनोहरता पूर्वक देखता हुआ बाण के लगने के भय से अपनी पीठ का शरीर के पूर्व भाग में समझकर आधे चबाये हुए कुशा के ग्रासों को परिश्रम से खुले हुए अपने मुख से मार्ग में फैलाता हुआ आकाश में छलांगें मारता हुआ दौड़ रहा है वह पृथ्वी पर कम पर रख रहा है एवं मानो आकाश में उड़ा जा रहा है हरिण भोजन में इतने तन्हा हैं कि अश्व भी मानो उनसे होड़ करके दौड़ने लग हों ऐसा उल्लेख शाकुन्तलम में किया गया है[23] इसी प्रकार मृग के चौकड़ी भरने के उल्लेख अन्य स्थानों पर भी प्राप्त होते हैं अतः मृग का तेज दौड़ना मृग की एक क्रियात्मक विशेषता कही जा सकती है

मृग हाथी, अश्व व श्वान की भांति एक समझदार प्राणी है गजों के समुदाय में जिस प्रकार एक मादा आगे आगे चलती है उसी प्रकार मृगों में काला मृग समुदाय में सबसे आगे चलता है काले मृग के बाये सींग से मृगी के द्वारा आंख खुजलाने का वर्णन मिलता है[24] मनुष्य के दुःख में मृग भी दुःखी एवं सुख में सुखी होते देखे गये हैं सीता के विलाप को सुनकर मृग घास का कौर गिरा देते हैं एवं वे दिलीप जैसे दयालु राजा को देख कर भयभीत नहीं होते[25] मृगों को शायद गायन अत्यन्त प्रिय है तभी तो वे संगीत के लिये घास चरना छोड़ कर उसे ध्यान पूर्वक सुनते हैं एवं यदा कदा व्याधों के चक्कर में भी आ जाते हैं[26]

---

23 ग्रीवाभङ्गाभिरामं मुहुरनुपतति स्यन्दने बद्धदृष्टिः
पश्चार्धेन प्रविष्टः शरपतनभयाद् भूयसा पूर्वकायम्।
दर्भैरर्धावलीढैः श्रमविवृतमुखभ्रंशिभिः कीर्णवर्त्मा,
पश्योदग्रप्लुतत्वाद्वियति बहुतरं स्तोकमुर्व्यां प्रयाति।—शाकु० 1/7
धावत्यमी मृगजवाऽक्षमयेव रथ्या—वही० 1/8

24 मृगाणां यूथं तदग्रसरगर्वितं कृष्णसारम—रघु० 9/55
मृगांगनायूथ विभूषितानि — ऋतु० 4/8
शृङ्गे कृष्णमृगस्य वामनयनं कण्डूयमाना मृगीयम—शाकु० 6/17
'हरिणाध्यासिता — कादम्बरी० पृ० 58

25 रघु० 14/68

26 विलोकयन्त्यो वपुरापुराणां प्रकाम विस्तार फल हरिण्य। रघु० 2/11
एणकानां गीत श्रवणव्यसनम—कादम्बरी० पृ० 127
समासन्नकिन्नरीरव समान रव —ह० च० पृ० 420

गीत उनके आल्हाद का कारण है, भय का नहीं भय की अवस्था में तो मृग भागते हैं तभी तो महाकवि भारवि ने शिव की सेना को देख कर भयभीत हुये चमरी मृगों का उल्लेख किया है जो कि भगने का प्रयास कर रहे थे किन्तु पूंछ के झाड़ियों में फंस जाने से भाग नहीं सकते थे[27] वाटिकाओं में निडर होकर विचरण करने वाले मृगों का वर्णन मिलता है[28] वन में विचरने वाली विश्वास भरे चमरी मृगों का भी उल्लेख मिलता है आश्रमों में मृग निडर होकर विचरण करते हैं एवं तपस्वियों के साथ हिलमिल कर रहते हैं[29] कादम्बरी द्वारा मृगों को विस्तृत यवांकुर देने का एवं साथ ही मृग किस प्रकार मरकत मणि की किरणों को हरितवर्ण घास समझ कर खाना चाहते हैं, का उल्लेख मिलता है[30] जिससे दो बातें सिद्ध होती हैं प्रथम तो यह कि मृग मानव से प्रेम करता है और दूसरी यह कि मृग कभी कभी अज्ञानवश मूर्खता भी कर बैठता है, जो उसके पशुत्व का साक्षात् प्रमाण है परन्तु यह मूर्खत्व यत्र-तत्र देखा जा सकता है सर्वदा नहीं मृगी द्वारा अपने बच्चों को चाटना, काले हरिण का हरिणी को सींग से खुजलाना एवं राजा दशरथ द्वारा हरिण को मारने का विचार करने पर हरिणी का बीच में आकर खड़ा हो जाना मृगों के पारस्परिक प्रेम के ज्वलन्त उदाहरण हैं जो मानस पटल पर अमिट छाप छोड़ जाते हैं[31] मृग व सिंह का सम्बन्ध एक विचित्र

---

गीतानिगोप्या कलम मृगव्रजो न नूनमल्लीतिहरिण्यलोक्यत –शिशु० 12/43
देखिये शिशु० 4/43 व्यापजनगीतगहोत चित्तयेव हरिण्यैतन विज्ञात मया —
मालविका०–3 (गद्य) देखिये बु० च० 11/35 सौ० न० 8/15

27 किरात० 12/47

28 निरालङ्करकव । हृ० च० 423
नष्टाशङ्का हरिणशिशवो मन्दमन्द चरन्ति —शाकु० 1/15
चमरी ।' हृ० च० पृ० 388

29 तपोवनमृगेणानगम्यमान हरिति —कादम्बरी० पृ० 111
शब्दाभि हित्वाभिमुखश्च तस्थुर्मृगाश्च ताम्रामग चारिणश्च । बु० च० 7/5
विश्वासोपगमादभिन्नगतय शब्द सहन्ते मृगा — शाकु० 1/14

30 आभरणमरकत म्यूखान लिहते भवन हरिणशावकाय
श्रवणादपनीय यवांकुर प्रसर प्रयच्छतीयम —कादम्बरी० पृ० 544
परिसर विषयेषु लीढमुक्ता हरिततृणोदगमशङ्कया मृगोभि —किरात० 5/38

31 एणी जिह्वाम्पल्लवोपालह्यमान मुनिबालकम—काद० पृ० 120
शृङ्गेण च स्पर्शनिमीलिताक्षीं मृगीकण्डूयत कृष्ण सार —कुमार० 3,36
लक्ष्यकृतस्य हरिणस्य हरिप्रभाव प्रेक्ष्यस्थिता सहचरीं व्यावधायदेहम
—रघु० 9/57

सम्बन्ध रहा है एक स्थान पर मृगी के बच्चे द्वारा शेरनी से दूध पीने का उल्लेख है तो अन्यत्र हिरण मारने के लिये शेरों के समुदाय को ले जाना लज्जाप्रद बताया है एवं मालवा के व्यवहार को हिरणों द्वारा सिंह के बाल पकड़ना कह कर बेचारे मृग की स्थिति का मजाक उड़ाया गया है[32] कहीं मृग का हिंस्र पशुओं के साथ विचरण बताया गया है[33] रघुवंश में मृगों के द्वारा नीवार (धान विशेष) खाने एवं मृगों द्वारा हरी घास पर बैठने के उल्लेख मिलते हैं[34] कुमारसम्भव में मृगों द्वारा तिल खाने एवं किरातार्जुनीयम् एवं रघुवंश में कुशों को खाने व छिन्न भिन्न करने का वर्णन मिलता है[35] चमरी मृगों द्वारा शुक नामक वृक्ष के पत्ते खाकर उसकी जड़ों में विश्राम करने का वर्णन भी काव्यों में मिलता है[36] इन सब बातों से यह ज्ञात होता है कि मृग एक शाकाहारी प्राणी है जो नीवार, तिल व कुशाग्रों को खाता है शरभों के पानी पीने का उल्लेख कालिदास ने किया है[37] प्राणी जगत् में बहुत से प्राणी ऐसे होते हैं, जो भोजन के बाद जुगाली करते हैं मृग भी उनमें से एक है जिसकी जुगाली पर काव्यकारों का विशेष ध्यान गया है हरिण आंगन में सुख से जुगाली कर रहे थे, हरिणों के जुगाली करने से फेन निकलता है, चमर मृगों के समुदाय ग्राम के वृक्ष के नीचे बाग में जुगाली कर रहे थे, वनभूमियों के मुलायम बयानों में समुदाय के समुदाय मृग बैठ कर धीरे-धीरे पगुरी करने लगे एवं आश्रम मृग जुगाली कर रहे थे इस प्रकार के अनेक उल्लेख काव्यों में यत्र तत्र

---

32 प्रथमुत्सृज्य मातरमजात केहरि केशरि शिशुभि सहोजजातपरिचय पिबति कुरंग शावक सिंहीस्तनम । —कादम्बरी० पृ० 141
हरिणायमति हेपण सिंह सभार । ह० च० पृ० 326
सोऽय कुरगक कचग्रह केशरिण —ह० च० पृ० 324

33 अपिभुद्रा मृगा यत्र शान्तात्वेह समभृग —सौ० न० 1/13
'निर्विकारवृकविलोक्यमान पोतपोत मवयद्व नेव '—ह० च० पृ० 420

34 अपत्यैरिव नीवारभागधेयोचितैर्मृगै —रघु० 1/50
मृगाध्यासित शाद्वलानि'—वही० 2/17

35 अरण्यबीजाञ्जलिदानलालितास्तथा च तस्या हरिणाविशश्वसु —कुमार० 5/15
मार्गदिजालूनशिखेपुर्वाहिषाम —किरात० 1/40
प्रापमुदितहरिणीदशक्षत० किरात० 12/52
कुश गर्भमुख मगाण युयम—रघु० 9/25

36 प्रचिपण-ग्रास मुदित—चमरी कुल-निसेवित मूल —कादम्बरी० पृ० 385

37 शरभकुलमजिह्मं प्रोद्धरत्यम्बु वप्रात्—ऋ० स० 1/23

सवत्र विखरे पडे हैं [38] वियोगावस्था मे मृग भी दुखी होते हैं इसका प्रमाण है मृगो का शकुन्तला के प्रति प्रेम जब शकुन्तला पतिगृह जाती है तो मृग मुह से कुशाग्रो को निकाल कर दुख प्रकट करते हैं इस प्रकार पगुरी करना मृग समुदाय की एक आवश्यक क्रिया है

वचारा मृग प्राचीन समय से ही शिकार का साधन बना हुआ है बुद्ध चरित म विश्वास पदा कर मृग को मारने का उल्लेख है तो रघुवश म राजा के द्वारा मृगो को घेरने का उल्लेख है [39] मृग मानव के मनोरजन का भी साधन रहा है, तभी पावती हरिणियो की आख से अपनी आख का मापा करती थी [40] मृगो के विश्राम एव जागरण का उल्लेख भी प्राप्त होता है [41] गज व वृषभ दो ऐसे प्राणी है जो वप्रक्रीडा विशेष रूप मे करते है किन्तु सीगो से मृग भी कुन्दो को उखाडा करता है जिसे मृग की वप्रक्रीडा कहे, तो अनुचित न होगा [42] अत्रि के द्वारा मृगी के साथ समागम करने का उल्लेख दशकुमार न किया है [43] सामान्यत हरिण सवारी का साधन नही है किन्तु काव्य मे इसे पवन देव की सवारी का साधन माना है [44]

मेघदूत म एक विशिष्ट प्रकार के पशु का वणन आया है जिसे 'शरभ' कहते

---

38 देखिये—रघु० 1/52 कादम्बरी पृ० 575
कादम्बरी पृ० 84 हु० च० पृ० 420 वही० पृ० 137
कादम्बरी पृ० 151
'छायाबद्ध कदम्ब मगकुल रोमन्थमभ्यस्यतु—शाकु० 1/6
उद्गलित दर्भकवला मगा—वही० 4/13
रघु० 14/69
विश्वास्य मृगानिहर्मि'—बु० च० 6/62
चमरान्परित प्रवर्तिताश्व —रघु० 9/66
40 यथा तदीयनयनै कुतुहलात्पुर सखीनामभिमीत लोचन, कुमार० 5/15
41 सुख निषण्णानीलाण्डजमण्डजा —हु० च० पृ० 420
प्रभातशिशिरमारुताहतमुत्तप्तजतुत्सेशिलष्ट पक्ष्मालमिव सशेषनिद्राजिमद-मितततार चक्षुर भीलयत्सु शनै शनै० —कादम्बरी पृ० 80
42 ऋषिजनायमैणकविषाणशिखरोत्खन्यमान विविधकन्दमूलम
—वही० पृ 121
43 'अत्रेम गो समागम —दशकुमार च० पृ० 170
44 कुमार० 14/10

हैं यक्ष बादल से हिमालय वर्णन के सन्दर्भ मे कहता है कि उसकी गर्जन को सुन कर 'शरभ' अपने हाथ-पैरों को चलायेंगे वास्तव मे शरभ आठ परो का एक मृग होता है जो बिजली की चमक से बहुत उछलता है उसके शरीर के लम्बे लम्बे बाल झाडियो म फस जाते हैं वह बहुत तडफता है और इसी बीच उसके पैर टूट जाते हैं वर्तमान म हिमालय पर कोई शरभ नही मिलता ऐसा प्रतीत होता है कि यह जाति अब लुप्त हो गई है शरभ को 'अष्टपाद' भी कहते हैं

उपमित मृग —संस्कृत काव्यकारो ने मृग को अनेकधा अनेक प्रकार से उपमित किया है शबर के बाण को मृगो के कालपाश के सदृश्य, चमरी-मृग की पूछ के बालो को नल के बालो के समान, एव नृपपुत्र की समता मृग से की गयी है जो मृगराज के समान गति वाला है [45] कम्बोज देश के नवयुवको को आखो के चचल तारा वाले हरिणो की भाति उडान भरने वाला कहा है [46] कि इस प्रकार के व्यक्ति के पास लक्ष्मी उज्ज्वल मयक की भाति एक रात भी नही रुकती [47] गीत के मनोहर राग द्वारा खीचे गये मन व हिरण द्वारा खीचे गये रथ की समता प्रदर्शित करने हुये महाकवि कालिदास ने लिखा है कि गीत के मनोहर राग न मन का वश ही खीचा, जसे राजा के रथ को हरिण ने [48]

कुल कुमारियो की समता मुग्ध मृगी स की है [49] टेढी मेढी नदी की तुलना वाले मृग के टेढे सीग से की है [50] अन्यत्र लक्ष्मी को इन्द्रियरूपी हरिणो के पन्न म व्याधो का गान कहा है [51] दुराशारूपी मृगी एव मनुष्य की इन्द्रिया को मृग कहा है [52] शोभा की समता मृग को फसाने वाले जाल से एव बुद्ध के

45 कालपाश कुरगयूथानाम —हृ० च० पृ० 416
स्थावालभारयतुरतनागज सम चमर्यैव तुलाभिलाषिण नैषध० 1/25
स राजसुनुमृ गराजगामी मगाजिर तन्मगवत्प्रविष्ट —बु० च० 7/2

46 काम्बोजयासिन इवास्कन्दत तरलतारकाहरिणाइवोड्डीयमाना' —
हृ० च० पृ० 223

47 'कातरस्य तु शशिन इव हरिण हृदयस्य पाण्डुरपृष्ठस्य कुतो द्विरात्रमपि विचला लक्ष्मी हृ० च० पृ० 337

48 एष राजेव दुष्यन्त सारगमातिरहसा'—शाकु० 1/5

49 वनमगीमुग्धस्यकुलकुमारी जनस्य —हृ० च० पृ० 44

50 कुरगनारमाकृ मभगुरा —नैषध० 18/19

51 व्याधगीतिरिन्द्रिय मगाणाम —कादम्बरी पृ० 325

52 दुराशा मगतृष्णिकया—कादम्बरी पृ० 500

परा को मृग द्वारा चाटने को शमाभाव पान से एव धूल को वृद्ध-हरिए विशेष के लोग गुच्छ मे उपमित किया है [53] शास्त्रो म कृष्णमृग के प्रतिबिम्ब की समता मृग के काले केशा से की गई है [54] चमरी मृगा के प्रमाण से युक्त विध्याटवी को राज्य की मर्यादा स उपमित किया गया है [55] रोमावली की समता कस्तूरी से धोये गय मथुरावासी स्त्रियो के वस्त्रो से की गयी है [56] कृष्णमृगो के द्वारा वृक्षो की खुजलान की समता उनके द्वारा यजमाना को यश म खुजलाने से की गई है [57] सौन्दरनन्द म पवित्र वेदियो पर सुप्त हरिणो को लावे व माधवी के फूलो के समान उपहार कहा है [58] दमयन्ती के केशपाशो के सम्मुख समता मे चमर मृग के बालो को तुच्छ माना गया है [59] राजा की गोद म मृत इन्दुमति को चन्द्रस मृगछाया के समान माना है अर्थात् इन्दुमति राजा अज की गोद मे इस प्रकार निश्चल पडी है माना चन्द्रमा म मृगशावक निश्चल है [60] हिमालय पवत पर रहते वाले चमरी मगा द्वारा घुमाई जान वाली पूछ ऐसी प्रतीत होती है माना हिमायल को चवर हिला कर,उसका गिरिराज नाम साथक कर रहे हो यहा चमरी की पूछ को चवर व हिमालय को राजा से उपमित किया गया है [61] करघनी की तुलना कामदेव के चचल चित्त रूपी मग को बाधने की पास म की गयी है [62]

---

इन्द्रिय हरिण हारिणी च सतत मतिदुरन्तेयम उपभोग मगतृष्णिका।'
—कादम्बरी पृ० 315

53 कुरगस्यामापमान लावण्यम ह० च० पृ० 106
उदशर्मिव पिपद्भिपन हरिणी जिह्वालताभिरूप लिह्यमान पादपल्लवम
ह० च० पृ० 424
क्वचित परिणतरल्लकरोमपल्लवमलिन —काद० 351

54 पतितकृष्णचामरप्रतिबिम्बाना च शिवच्छेदलग्न—केशजालकानामिव
—कादम्बरी पृ० 640

55 चमरमगबाल व्यजनो शोभिता—कादम्बरी पृ० 58

56 'श्यामीकृता मगपदरिव माथुरीणा —नषध० 11/106

57 दीक्षितरिव कृतकृष्णसारविषण कडूयन । काद० 388

58 विरजुर्हरिणा यत्न सुप्ता मेध्यवासुवेदिषु
हृत इव ॥ सौ० न० 1/12

59 'पशुना s तत्तुल्य नामिमिच्छत चामेरणा क ' । नैषध० 2/20

60 मृगलेखा मुषसीव चन्द्रमा –रघु० 8/42

61 यस्याय युक्तम् गिरिराजशब्द कुर्वान्ति बालव्य कुमार 1/13

62 वही० 9/25

सस्कृत साहित्य म यत्र तत्र-सवत्र मृग की आखो की तुलना स्त्रियो के नेत्रो से की गयी है[63] पार्वती ने आखो की चितवन मृगो का धरोहर के रूप मे दे दी एव पार्वती न आखो की चितवन हरिणियो से सीखी इस प्रकार के उदाहरण मिलते हैं[64]

मृगनयनी स्त्रियो के उल्लेख सभी काव्यो म बिखरे पडे हैं[65] तात्पर्य यह है कि स्त्रियो के नेत्र मृगी के नेत्रो के समान बडे होते हैं एव उनम मृगी के समान चितवन भी देखी जा सकती है[66] कतिपय स्थानो पर मृगशावक के सदृश्य अधीर नेत्रो वाली स्त्रियो का उल्लेख भी प्राप्त होता है[67] अन्यत्र हरिणियो की आंखो को चमक के समान बताया है और दमयन्ती के नेत्रो को हरिणी के सदृश्य कहा है[68] एक स्थान पर दमयन्ती के नेत्रो की समानता म अपने नेत्रो को तुच्छ समझने वाले मृगो का खुर द्वारा नेत्र-कण्डूयन वर्णित किया गया है[69]

प्राप्य पदार्थ —मृग जाति से मानव समाज को अनेकानेक वस्तुओ की उपलब्धि होती रही है इनम से मृगचर्म कस्तूरी एव चामर तीन वस्तुए प्रमुख हैं मृगचर्म धारण करने का उल्लेख अनेक बार हुआ है[70] मृग की खाल को पकाने, आसन के रूप मे बिछाने एव वस्त्र के रूप मे पहनने का वर्णन विभिन्न

---

63 स स्वर्गीय मगचदातीय वशीकाराय मारायते नषध० 14/89

64 विलोल वष्ट हरिणागनासु च'–कुमार० 5/13

65 देखिये–रघु 8/59, ऋ ए 4/10 मेघ उ 37, बु च 28/14 ह च पृ 48, कुमार 5/72 नषध 7/72 विक्रम 4/8 मालविका० 3/1

66 चकित हरिणीप्रेक्षणे दृष्टिपात'—मेघ उ 46
'चकित बालकुरगलोचना'–द कु च पृ 84

67 वनिताभिधीरलोचनाभिम गशावाभि–'बु च 5/41
बालपूर्ण द लोचना'–नषध–12/77

68 पयन्तसस्थितमगीनयनोत्पलानि –ऋ स 3/14
हरिणीदशेवम –नषध 10/133

69 'स्वदृशोर्जनयन्ति सान्त्वना खुरकण्डयनकतवान मगा –नषध 2/21

70 देखिये–नषध 10/97 101 104
'अपश्यन्विनमविध्यनजिन ब्रह्मचारिणा –नषध 17/189
शिशु 1/6 किरात 12/27

वायमारो न किया है[72] ग्रस्त्रो की मत्रयुक्त शिक्षा लेने के लिये एव ग्राखेट पर जात समय मृग चम धारण किया जाता है[72]

द्वितीय मुख्य प्राप्त-वस्तु कस्तूरी है जिसकी सुरभि इतनी उत्कृष्ट होती है कि यदि मृग शिलातल पर बठा हो तो वह स्थान सुगंधित हो जाता है[73] कस्तूरी के सम्पक से महल, पवन एव दिशाग्रो के सुरभित होने के वणन भी काव्यों मे मिलत हैं[74] हिमालयवासी लोगो के लिय कहा गया है कि वे कस्तूरी की सुरभि म बसे हुये मृग रोम द्वारा निर्मित वस्त्रो को पहनने वाले हैं इसी प्रकार ग्रस्त्र शिक्षा के समय रघु द्वारा मृग चम पहनने का वणन भी मिलता है[75] कस्तूरी के सम्पक से वस्तुयें श्यामवण हो जाती हैं[76] मृग के बाल एव सीग भी कतिपय काय कलापो म उपयोगी सिद्ध हुये हैं[77] हरिणो के शिकार करने का उल्लेख भी बहुत मिलता है एक स्थान पर लिखा है कि हरिण सामर इत्यादि को मारने से खेत की

---

71 'सक्रियमाण कृष्णाजिन –कादम्बरी पृ 122
'ग्रास्तीणाजिमरत्नासु'–रघु० 4/65
कृष्णाजिनविकीण शुष्यत्पुराद्वाशीय श्यामाकतण्डुलानि ह च पृ 78
कृष्णाजिनी'–वही पृ 68
'नक्षत्रराशिभि चित्रमृगकृत्तिकाश्लेयोपशोभित'
—कादम्बरी पृ 113

72 'परिधाय रौरवीमशिक्षतास्त्र –रघु 3/13 ग्रजिनदण्डभृत–वही 9/21

73 'ग्रासीनाना सुरभितशिल नाभिगन्धैम गाणा –मेघ पृ 56
मगस्यनाभिकस्तूरिका सौरभवासनाभि'–नयध 22/85
वृषदोवासिजोत्सगा निषण्ण मगनाभिय –रघु 4/74

74 इतस्तत प्रचलित–परिचिताभित कस्तूरिका कुरग परिमललवासितदिड मुखम
—कादम्बरी-पृ० 271
कस्तूरिका मृग विमव सुगन्धिरेति-शिशु 4/61
'परिमला मोदितककुभचकस्तूरिका कुरगान -ह च पृ० 389

75 'मृगमदपरिमल वाहिमगरोमाच्छादितहिम वत्पादरिव महत्तरै स्थिरीकृत'
ह च प 162

76 'हरिण मदेन स कृष्ण –नयध 21/45

77 मगशृ ग परिग्रहाम –रघु 9/21
'कश्चिदगृहिता चमर माल –कादम्बरी पृ 93
चामरग्राहिणी'–वही पृ 545

फसल चर जाने से बच जाती है⁷⁸ अतएव जब मृग जब ही फसल का शिकारियों द्वारा मारा जाता था यह अभाव का कारण है तो फिर कहीं मृगों को मारने के प्रयुक्त का प्रस्तार किया गया है⁷⁹

यद्यपि मृग को गोद में धारण किये है फिर भी चन्द्रमा को मृगलांछन कहा गया है⁸⁰ अतएव मृग तृष्णा से हिरण चन्द्रमा में निवास करता है, ऐसा वर्णन मिलता है⁸¹ मृग युक्त चन्द्र को कलंकित समझकर हुए लोग इसको देखता है⁸²

मनुष्य सदैव पशु पक्षियों का प्रेम करता रहा है तभी तो उसने अपनी कला कृतियों में भी मृग की मूर्तियों का निर्माण किया है⁸³ इसके में को मृग व मृग-युक्त रथ का वर्णन भी मिलता है⁸⁴

इस प्रकार काव्यकारों ने मृग का मनोरम वर्णन प्रस्तुत किया है मृग का सबसे अधिक वर्णन बाण ने किया है द्वितीय स्थान कालिदास का है बाण ने कादम्बरी में ८९ बार व हर्षचरित में ४२ बार कुल १३१ बार मृग का वर्णन किया है कालिदास ने रघुवंश कुमारसम्भव, मेघदूत, ऋतुसंहार अभिज्ञान शाकुन्तल, विक्रमोर्वशीय व मालविकाग्निमित्र में क्रमश ३१, १४ ५, ६ १८ ५ व २ बार मृग का उल्लेख किया है इस प्रकार कालिदास ने मृग का वर्णन कुल ८१ बार किया है इसके अतिरिक्त श्रीहर्ष, माघ, भवभूति गुणाढ्य भारवि व दण्डी ने अपने काव्यों में क्रमश ६३, २०, १६, १६, १५ व ८ बार मृग का वर्णन किया है इस प्रकार संस्कृत काव्यों में मृग का उल्लेख कुल मिलाकर ३५० बार हुआ है, मृग के वर्णन का विश्लेषण आगे तालिकाओं में प्रस्तुत किया जाता है

---

78 हरिण गवतगवयादिविघ्नेन सस्यसोपप्रतिक्रिया–ह च पृ उ 8/24
79 कृपेति चेदस्तु मृग क्षत क्षणादनेन पूर्व न मयेति का गति'
–किरात 14/15
मगवधू वधस्य दीक्षादादक्षरनेक्ष्वर्णे यथि' –काद पृ 93
80 अकाधिरोपितमृगश्च चन्द्रमामृगलाञ्छन '–शिशु 2/53
उत्संगसंगि हरिणस्य मृगाङ्क मूर्त्ते' -वही 4/22
81 नन मुस्त्यजति तामृगतृष्णयेवा–नैषध 22/153 शिशु 6/34
82 ग्लानिस्यात तदपि नितरां हरिणो य कलक –नैषध 19/56
वही 22/66
83 अयत्राङ्कुरितामिव कुटिल हरिण विषाण कोटि कुट –कादम्बरी पृ 638
84 'भग प्रयुक्तान् रथकांश्च हेमानचक्रिरेऽ हस्म सुहृदालयेभ्य —' बु च 2/21
'हिरण्मयान् हरितमयांश्च वाहश्च –बु च 2/22

## तालिका—१

'मृग' के वणन का कालीदास के काव्यों में विश्लेषण (८१)

| सख्या | काव्य | वणन का क्रम |
|---|---|---|
| ३१ | रघु० | १।४० ५०, ५२ २।११, १७ ३।३१ ४।६५ ७८ ५।७ ८।४२ ५६ ७६ ९।२१ २१ ५१, ५५, ५७ ६६, ७२ ११।२३, ४४, १२।३७, ५३ १३।१८, २५, ३९, ४३, १४।६७, १६।१५, १८।७ १३ |
| १४ | कुमार० | १।१०, १५, ४६, ४८ ३।३१, ३६ ५।१३, १५, ७२ ८।३८ ९।२५ १४।१०, २७, २९ |
| ५ | मेघ० | १।२५, ५६, ५८ २।३७ ४६ |
| ६ | ऋतु० | १।२३, २।८, ९ ३।१४ ४।८ १० |
| १८ | शाकु० | १।५, ६, ९, गद्य गद्य, गद्य, १० १४ २५ गद्य २।३ ३।६ ४।गद्य १२ १४ ६।१४, गद्य, १७ |
| २ | मालविका० | ३।१, गद्य |
| ५ | विक्रम० | २।गद्य, ४।८, ५७, ६१, गद्य |

## तालिका—२

'मृग' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (२५६)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्वघोष | ११ | बु० च० | १/२६, २/२, ३२ ५/४१ ६/६२ ७/४, २८ ११/३५ १३/५३ २६/३८ २८/१४ |
| | ५ | सौ० न० | १/१२, १३ ४/३६ ८/१५ ७/३३ |
| भारवि | १५ | किरात० | १/४० ४/३० ५/३८ ११/५८ १२/२७, ३८, ४७, ५२ १३/४६ ६३, ६८ १४/१३ से १५ १५/१० |
| माघ | २९ | शिशु० | १/६ ३९ २/५३ ४/२२ ३२, ४३ ४४ ५/५३ ६/९, ३४ ९/८३ १०/२९ १२/३० ४२ ४३ १५/२०, ८० १७/३६ १९/१२० २०/६१ |
| श्रीहर्ष | ६३ | नैषध० | १/२४ २/२०, २१, ६७, ८३ ४/१४ ५/१११ ६/१८ ७/३० ३३, ७२ १०८ ८/४० ९/२९ १०/३३ ९७, १०१ ४ ३३ ११/४ ५३, ९०, ९७ १०६ ९ २१ २३ १२/१५ ४२ ४६, ७५ ७७ १३/१७ १४/८९ १५/७ ३० ३७ १६/२१ ८६ १७/६८, १८९ १८/७, १२, १९ ५६ २०/१४५ २१/२६, ४५ २२/२४ २९, ६४,६६,७६,७८ १०६ ७ १५,२३२४,३२ ३५,३८ |
| सुबन्धु | १६ | वासवदत्ता | पृ० ६० ६५ ६५ ६८, ८२ १२७ ३४ ५५ २०४ ६ २५ २२, ३३, ३३, ४६, ५१ |
| बाण | ४२ | ह० च० | पृ० १५ १७, १९ २३, २४ ४४, ४८, ५४, ५८ ६८, ७८,९९,१३८,६२, ९५ २२३, ३८, ५३, ५८, ५८, ६१, ७० ७५, ३२४ २६, ३७ ४० ५० ५१, ५७, ८८, ८८, ९२,४१०, १५ १०, २०, २०, २० २०, २४, ४२ ५० |
| | ८९ | कादम्बरी | पृ० ४१, ४९, ५० ५८, ६० ६६, ७६, ७८, ८०, ८३ से ८४ ८५ ८६ ९१, ९३, ९३ ९५, ९५ ९८, १००, ११, ११, १३ १७ १७ २० से २२, २९ ४१, ४१ ४२, ४९, ५० ५० ५२ ५५, ६१ ८६, ९० ९६ २६१, ६५, ७१, ७१ ७२ ७५ ८६, ९१ ९३ ९३ ३०३, ३, ४, ४, १५ १५ २५ २७ ४१, ५१ ७० ८३, ८५ ८८, ९८ ९८,४०४ २० ७५ ९६ ५००, १७ ३३ ३५, ४४, ४६, ५७, ७५, ९९ ६१९, ५, ४०, ७११, ३३, ४१, ६३ ६५, |
| दण्डी | ८ | द० च० | पृ० ५१, ८४, १०४, ६, १९, २८, ७०, ४४६ |

5

# सिंह
## THE LION

'अवेहि मां किंकरमष्टमूर्तेः कुम्भोदरं नाम निकुम्भमित्रम् ।
—रघुवंश २/३५

सम्पूर्ण संस्कृत-साहित्य मे वर्णित पशु-वर्ग में सिंह का प्रमुख स्थान रहा है वैदिक काल से लेकर काव्यों तक सिंह के वर्णन की अविरलधारा प्रवाहित होती है वैदिक साहित्य में सिंह के लिये सिंह[1] शब्द का प्रयोग किया गया है वाल्मीकि रामायण में सिंह का वर्णन अनेकधा आया है एवं इसे सिंह[2] व हरि[3] नामों से कहा गया है अमरकोष में शेर के लिये सिंह, मृगेन्द्र, पचास्य, हर्यक्ष, केसरी व हरि पर्याय शब्दों का उल्लेख है[4]

भारतीय राजचिन्हों मे सिंह को प्रमुखता दी गयी है यह भी उसके राजत्व की स्वीकारोक्ति है सिंह वन का राजा माना गया है यह विशुद्ध जगली एवं मांसाहारी जीव है वैज्ञानिकों की दृष्टि मे यह मेरुदण्डीय उपजगत् के अन्तर्गत बिल्ली समूह के बिल्ली परिवार का सदस्य है[5] सिंह विश्व के सभी भागो मे पाया जाने वाला जीव है यह भारत, अमेरिका व फारस में पाया जाता है सिंह रेतीले मदानों, चट्टानी भागो में एवं लम्बी घास व झरने वाले स्थानो में रहना पसंद करता है यह घने जगलो में रहना पसद करता है इसे मुक्त वातावरण वाले भाग अधिक प्रिय है आधुनिक युग में सिंह का अभाव स्पष्टतः देखा गया है कारण कि यह विश्व के विशालकाय पशुओं में से हैं, फिर भी अजायबघरों में देखा जा सकता है सिंह एक डरावना रोबीला जीव है इसी कारण जगत् के रोबीले लोग सिंह सम्बोधित नाम

---

1 ऋक्० 1/64/8 1/95/5 अ० वे० 4/36/6 तै० स० 5/5/21/1 का० स० 12/10 म० स० 2/1/9

2 सिंहविप्रेक्षितो वीरो महाबलपराक्रमो' —वा० रा० कि० 3/8

3 दृप्तसिंहगतिस्तत —यथोपरि० कि० 14/14
हर्यश्च हरयो पत्यम् —यथोपरि० 3/14/24

4 सिंहोमृगेन्द्र पचास्यो हर्यक्ष केसरी हरि इत्यमर (सिंहादिवर्ग)

5 ए० ब्रिग० पृ० 580 जीवजगत पृ० 665

रखते देखे गये हैं यथा—शेरसिंह, केसरीसिंह, बाघसिंह, शार्दूलसिंह, रामसिंह, हिम्मतसिंह, ओङ्कारसिंह आदि आदि सिंह के शरीर पर हल्के बाल होते हैं जिनका रंग भूरा पीला एवं मटियाला में से एक होता है इसके सिर पर काफी बाल होते हैं जिनके कारण यह अति सुन्दर लगता है इसके नाक के नीचे के भाग में ३ इंच से ५ इंच लम्बी मूंछें होती हैं पूंछ के सिरे पर बालों का एक गुच्छा होता है जो गहरे भूरे या काले बालों से युक्त होता है इसकी कमर पतली होती है एवं सीना उठा हुआ होता है इसका सिर चपटा एवं विशाल होता है सिंह के दांत बड़े मजबूत होते हैं यह हड्डियां को आसानी से चबा सकता है शेर का शयनकाल दिन में होता है यह गुफा या किसी झरने के किनारे घास के बीच दिन के गर्म भाग को व्यतीत करता है इसका कार्यकाल रात का समय है[6]

सिंह शुद्ध मांसाहारी जीव है इसके प्रमुख खाद्य हैं—जेबरा जिराफ, भैंसा, बारहसिंघा बतख आदि शेर जीने के लिये मारता है अर्थात् बिना आवश्यकता के यह किसी पशु को नहीं मारता[7] मनुष्य पर सिंह यदा कदा ही हमला करता है सामान्यतः यह मनुष्य से दूर ही भागता है सम्भवतः उसे मनुष्य की बुद्धि का ज्ञान है सिंह कामी पशु नहीं यह शेरनी के साथ किसी एकान्त स्थान की खोज करता है सामान्यतः सिंह की मादा एक बारगी एक बच्चा देती है किन्तु यदा कदा दो बच्चे भी देखे गये हैं गर्भाधान के १०८ दिन बाद बच्चा परिपक्व होता है

सिंह व शेरनी में कतिपय मुख्य भेद होते हैं सिंह की लम्बाई पूंछ सहित १० फीट तक होती है जबकि शेरनी की ८ फीट या इससे भी कम सिंह की ऊंचाई कंधे से ३ फीट होती है वजन करीब ५०० पौंड जबकि शेरनी कद में छोटी एवं वजन में ३०० पौण्ड मात्र होती है[8]

सिंह समुदाय प्रिय जीव है इसे अकेला बहुत कम अवसरों पर देखा जा सकता है[9] शेर की दहाड़ बड़ी भयंकर होती है जो शाम को या रात को सुनने में आती है इसकी दहाड़ का समय व स्थान सुनिश्चित सा होता है जिससे शिकारी लोग इसके निवास स्थान का अनुमान करने में सफल होते हैं

सिंह का जीवनकाल १५ वर्ष होता है पर कई सिंह २५ वर्ष तक भी जीवित देखे गये हैं[10] मरणोपरान्त सिंह का शरीर मसाले भरकर अजायबघर में रख दिये

6 ए० किंग पृ० 581
7 यथोपरि० पृ० 582
8 इन० चेम्बर० भाग 6 पृ० 402
9 ए० किंग पृ० 581
10 इन० चेम्बर० भाग 6 पृ० 402

जाते हैं इसकी खाल बिछाने के काम आती है कतिपय शोभादायक वस्तुओं का निर्माण भी इसकी खाल से होता देखा गया है

## संस्कृत-साहित्य में सिंह

संस्कृत साहित्य म वर्णित पशु-वर्ग म सिंह का प्रमुख स्थान रहा है सिंह वणन की यह परम्परा हम वदिक काल से अविच्छिन्न रूप म मिलती है वदिक साहित्य म इसके लिये सिंह शब्द का प्रयोग हुआ है वाल्मीकिरामायण म सिंह का वणन अनेकधा मिलता है वहाँ इसे सिंह एव हरि कहा गया है परवर्ती साहित्य में इसके बहुविध पर्यायवाची शब्द मिलते हैं यथा केसरी (रघु०, काद०), हरि (नपध हर्षच०) सिंह (रघु० ह०), मृगेन्द्र (ऋतु), मृगपति (कादम्बरी) मृगराज (रघु० बुद्धचरित), मृगाधिप (किरात०) मृगाधिराज (रघु०), मृगेश्वर (ऋतु०), द्विपद्विप (शिशु०) यहां कालिदास एवम् उत्तरवर्ती प्रमुख रचनाकारों की कृतियों म समाविष्ट सिंह-वर्णन पर विवेचन किया गया है

सिंह विशेष कुम्भोदर—महाकवि कालि ास ने अपने काव्य रघुवश के द्वितीय सग म एक सिंह विशेष की कल्पना की है, जो अपना नाम कुम्भोदर बतलाकर निकुम्भ का मित्र बताता है[11] उसकी सबसे बडी विशेषता है उसका मनुष्य के समान बोलना[12] वह राजा दिलीप से बातचीत करता है एव कहता है कि वह कोई साधा रण सिंह नही है अपितु भगवान् शकर का दास है एव पार्वती ने उसे वन क रक्षाथ रख छोडा ह[13] वह राजा से कहता है कि ह राजन्! तुम व्यथ एक गाय मात्र के लिये अपने एकछत्र राज्य को खोना चाहते हो, यह तुम्हारी मूर्खता का स्पष्ट प्रमाण है[14] किन्तु भक्त दिलीप स्वय को गो के लिय अर्पित करने के लिय तत्पर हो जाता है वह सिंह क सम्मुख आख बन्द कर गिरने लगता है सिंह गायब हो जाता है इस प्रकार कालिदास ने एक सिंह की सुन्दर कल्पना प्रस्तुत की है जो अन्यत्र दुलभ है

मानव व सिंह —मानव व सिंह का दूर का सम्बन्ध सदा से रहा है मानव अपने नाम के आगे सिंह शब्द का प्रयोग आज भी करता देखा गया है बाण ने सिंह नाद नामक सेनापति का उल्लेख किया ह[15] राज्यवधन को सिंह कहा है कही वे

11 रघुवश 2/35
12 रघुवश 2/33
13 रघुवश 2/35, 2/38
14 रघुवश 2/47
15 हर्षचरित, पृ० 333

पुरुषसिंह गिरिकन्दरा म त भने जाय [16] एक शत्री का नाम सिंहपोत बताया गया है [17] एक स्त्री को तेज शस्त्रों की धारा त वनों म विचरण करनेवाली सिंही कहा है [18] कृष्ण, बलराम व उद्धव को सिंह कहा गया है [19] एव सिंहाकृति रावण का भी उल्लेख मिलता है [20] भरत क द्वारा खेला क लिए जकड़ सिंह शावक को खीचन का वर्णन कालिदास ने किया है [21] शकुन्तला भरत से कहती है कि यदि यह शेरनी के बच्चे को नहीं छोड़ेगा तो शेरनी उसपर आक्रमण कर बठेगी [22] पर भरत सिंह क बच्चे से मुह खोलन को कहते हैं क्योंकि वे उसके दात गिनना चाहते हैं [23] तपस्विनी राजा को देखकर भरत द्वारा पकड़ते हुए सिंह शावक को छुड़ान को कहती है [24] भारतीय साहित्य म अवतारों का बड़ा महत्त्व रहा है दण्डी ने अपने काव्यों म जयसिंह, सिंहवर्मा चण्डसिंह नामक व्यक्तियों का उल्लेख किया है [25] नृसिंहावतार भी उसमे से एक अवतार रहा है नृसिंह नर एव सिंह की साम्यावस्था है अर्थात् नर के शरीर पर सिंह का सिर लगा हुआ है भगवान कृष्ण को माघ न नृसिंह कहा है [26] बिम्बसार को अश्वघोष न नसिंह कहा है [27] अन्यत्र भगवान बुद्ध को भी [28] बाण न चन्द्रापीड को नरसिंह कहा है एव अन्यत्र एक श्यामवर्ण क युवक की आवाज की समता नसिंह से की गयी है [29] इस प्रकार काव्यों म नसिंह का वर्णन यदा कदा मिलता है

क्रियाकलाप—काव्यों म सिंह के अनेक कार्यों का सुन्दर वर्णन मिलता है

16 हर्षचरित, पृ० 304
17 हर्षचरित पृ० 243
18 हर्षचरित, पृ० 196
19 शिशुपाल वध, 2/5
20 शिशुपाल वध, बु० च०, 13/52
21 अभिज्ञानशाकुन्तल, 7/14
22 अभिज्ञानशाकुन्तल, (गद्य)
23 अभिज्ञानशाकुन्तल (गद्य)
24 अभिज्ञानशाकुन्तल, (गद्य)
25 दशकुमारचरित प० 147
26 शिशुपालवध 1/47 14/72
27 बु० च०, 10/17
28 बु० च० 25/8
29 कादं० पृ० 340, ह० च० 191

सिंह झाडियो के मध्य घूमा करता है [30] सिंह एक हिंसक पशु है उसके द्वारा गाय को दबोचने का वर्णन मिलता है [31] सिंह हाथियो को *मारकर अपना आहार सम्पन्न* करता पाया गया है [32] कई बार सिंह गज को मारकर भी चला जाता है एव उसे आहार नही बनाता [33] माघ ने सिंह की क्रूरता की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए कहा है कि लोग उस निदय सिंह को मृगाधिप की सज्ञा देते है जो मृगो का हनन करता है गर्मी का मोसम इतना भयकर होता है कि गर्मी के कारण पशु पक्षी अपने आपसी भेदभाव को भुला देते हैं, तभी तो सिंह के पास शयन करनेवाले गज को वे नही मारते [34] आश्रम के प्रभाव मे भी पशु हिंसा को त्याग देते हैं भदन के आश्रम म विश्रब्ध भाव से बठे हुए सिंह शावको का उल्लेख उपलब्ध होता है [35] दहाडना सिंह की एक प्रमुख क्रिया है मेघ की गजन को सुनकर सिंह दहाड करते हैं [36] बाण ने प्रभात में सिंह के दहाडने का उल्लेख किया है [37] *अत बाण का यह कथन सत्यता* से परे हटता प्रतीत होता है सम्भवत बाण ने सिंह की दहाड सूर्योदय के काफी पूव सुनी होगी और प्राचीन परम्परा के अनुसार ३ ४ बजे क समय को प्रभात मानकर यह लिखा होगा या किसी अवसर विशेष के कारण सिंह ने प्रात दहाड की हो ये दोनो ही बातें सम्भव हो सकती हैं पर सिंह रात या शाम को सुनिश्चित समय पर ही दहाडता है इसमे दो राय नही हो सकती प्रात काल मे शर के जम्हाई लेन का उल्लेख मिलता है [38] सिंह के सोने का वणन भी कवियो न किया है माघ ने इसका सूक्ष्म निरीक्षणात्मक वणन करते हुए कहा है कि सिंह नेत्रो को खोलकर पुन बन्द कर लेता है [39] कवि का यह वणन 'श्वनीनिद्रा' से काफी साम्य रखता है निद्रा के बाद यदि सिंह को बाधा पहुँचती है तो वह भडक उठता है दशरथ के बाण की टकार एव हाथी की चिग्घाड से निद्रा त्याग किये सिंह का क्षुब्ध होना वर्णित है [40]

30 काद० पृ० 59
31 रघु० 2/27
32 किरा०, 2/18 विक्रमो० 4/63
33 द० च० पृ० 40
34 द० च०, ऋ० 1/14, एवम 1/27
35 हृ० च० प० 424
36 किराता० 2/21
37 काद० पृ० 82
38 काद० पृ० 79
39 काद० प० 30, शिशुपा० 12/52
40 रघु०, 9/54 तथा 964

उपमित सिंह —ग्र य पशुग्रो की भाति कवियो न सिंह को भी बारम्बार उपमित किया है का यकारो न भगवान बुद्ध राजा पुण्य राजा ध्रुवसधि तारापीड, भगवान कृष्ण ग्रज सिंहवर्मा महाराज शुद्धोदन राजवाहन प्रभाकरवधन हर्षवधन व चन्द्रापीड को यत्र तत्र सवत्र सिंह से उपमित किया है भगवान बुद्ध को सिंह की सी गति वाला कहा गया[41] विषयो से लुभाये गये बुद्ध की दशा का विपलिप्त तौर मे सिद्ध उस सिंह के समान बताया है जिसे इस दशा म न भय होता है न चन[42] अयत्र बुद्ध को गौग्रो के मध्य स्थित सिंह के समान कहा है[43] बुद्ध की ग्रावाज की समता सिंह की ग्रावाज स की है[44] यशो के द्वारा की गयी घोषणा की ध्वनि की तुलना सिंह की ग्रावाज स की गई है[45] राजा रघु का कुल पुण्य की उपस्थिति म उसी प्रकार शोभायमान हुग्रा जस एक मृगशावक की उपस्थिति म वन[46] यहा रघुकुल व वन एव मृगशावक व पुण्य की समता प्रदर्शित की गयी है राजा ध्रुवसधि को मनुष्या म सिंह कहा है[47] तारापीड को मृगपति कहा है[48] भगवान कृष्ण को हाथियो को मारने वाले (द्विपद्विप) ग्रर्थात् सिंह कहा गया है[49] मच पर चलते हुये ग्रज की तुलना शिला पर बठे हुये सिंह के बच्चे से की है[50] चम्पश्वर को सिंह सदृश ग्रसाधारण पराक्रमी कहा है[51] महाराज शुद्धोधन के कधो की समता सिंह के कधो स की है[52] पिजरे म बद राजवाहन का पिजरे म बद सिंह के बच्चे से उपमित किया है[53] प्रभाकरवधन को सिंह एव राज्यवधन को सिंह शावक कहा गया है प्रभाकरवधन ने कवच धारण करने योग्य राज्यवधन को हूणो के दमन क लिये भेजा, जिस

---

41 बु० च० 5/27, 8/56 तथा 1/55
42 बु० च०, 5/1
43 बु० च०, 13/33
44 बु० च०, 24/2
45 बु० च० 15/61
46 रघु० 18,37
47 रघु० 18/65
48 काद०, पृ० 184
49 शिशु० 1/39
50 रघु० 6/3
51 द० च० पृ० 1'8
52 सौ० न० 2/58
53 द० च०, पृ० 137

प्रकार एक सिंह अपने बच्चे को हरिणों को मारने भेजता है[54] प्रभाकरवर्धन की आवाज की तुलना सिंह से की गयी है[55] महाकवि बाण ने विद्यालय में रखे गये चन्द्रापीड की तुलना पिंजरे में रखे सिंहशावक से की है ' पुरुषों की भांति स्त्रियों की तुलना सिंह या शेरनी से करने में संस्कृत के कवि सिद्धहस्त हैं प्रभाकरवर्धन की पत्नी को बाण ने सिंह के सदृश प्रकाण्ड पुरुष की शेरनीवत् गृहिणी कहा है[57] विन्ध्यवासिनी की आभा की तुलना सिंहवाहिनी पार्वती से की है[58] चन्द्रमुखी पुत्तलियों की उपस्थिति में मृगलाञ्छना के प्रभावशाली नगरी की तुलना सिंह के द्वारा मृगों को मारकर साफ करने में की गयी है[59] यहां नगरी में चन्द्रमुखियां हैं अतः मृगों का अभाव है, वह अभाव उसी प्रकार है जिस प्रकार सिंह मृगों को मारकर सफाया कर देता है चन्द्र की लालिमा की तुलना सिंह के द्वारा मारे गये मृग के लाल रक्त से की गई है[60] अगस्ति कुसुम की कलियों की समानता सिंह के नखों से की है[61] गेरु के पहाड़ पर लगे लोध्र के पुष्प की तुलना नखों पर बैठे सिंह से की गयी है[62] गजमद में भीगे हुए भीलों के बालों की तुलना सिंह के अयाल से की गयी है[63] तपे हुये सोने के तारों से मढ़े हुये बालों के बन्द हुए भगवान् कृष्ण के बालकों से धातु की शिला के सम्पर्क में आने से पीत हुये सिंह से समता की गई है[64]

**सिंह और सिंहासन** —सिंह के चर्म से बने आसन को सिंहासन कहा जाता है सिंहासन का उल्लेख कवियों ने किया है चन्द्रापीड के सिंहासन पर बैठने का उल्लेख मिलता है[65] बहुमूल्य एवं स्वर्ण निर्मित सिंहासनों पर बैठने के उल्लेख मिलते हैं[66] बाद में चलकर सिंह के चित्र या मूर्ति से उक्त आसन को भी यह कहा जाने

---

54 ह० च० पृ० 257
55 ह० च०, पृ० 286
56 काद० पू०, पृ० 230
57 ह० च० पृ० 291
58 कादम्बरी, पू० पृ० 58
59 नैषध 2/83
60 ह० च० पृ० 27
61 कादम्बरी पृ० 6 7
62 रघु० 2/29
63 कादम्बरी, पृ० 90
64 सौ० न० 10/9
65 रघु० 15/83, काद०, पृ० 340
66 रघु० 7/18, बु० च०, 23/8, द० च० पृ० 15 मालविका०, 1/12, रघु०, 4/4

संस्कृत काव्यों में सिंह का सबसे अधिक उल्लेख महाकवि कालिदास ने किया है। उन्होंने रघुवंश में ४४, कुमारसंभव में ७, ऋतुसंहार में २, अभिज्ञानशाकुन्तल में ५, मालविकाग्निमित्र में एक, विक्रमोर्वशीय में २, कुल ६१ बार, सिंह का उल्लेख किया है। द्वितीय स्थान बाण का है जिन्होंने हर्षचरित में ३३ एवं कादम्बरी में १२ बार कुल ४५ बार सिंह का वर्णन किया है। इनके अतिरिक्त प्रवरसेन ने २४, दण्डी व माघ ने १८-१८ बार, सुबन्धु ने १० बार, भारवि ने ६ बार एवं श्रीहर्ष ने ५ बार सिंह का उल्लेख किया है।

इस प्रकार प्रस्तुत काव्यों में सिंह का वर्णन कुल मिलाकर १८७ बार हुआ है। सिंह के वर्णन का विश्लेषण तालिकाओं में अवलोकनीय है।

---

## तालिका–१

'सिंह' के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (६१)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| ४४ | रघु० | २।२७ से ३१ ३३ से ६१, ४।४, ७२ ६।३ ७।१८ ६।८६ ९४ १५।८३ १७।७ १८।३५ ३७ [illegible] ४० |
| ७ | कुमार० | १।६, ५६ ६।३६ ७।३७ ११।४३, ४४ १४।२७, २८, २९ |
| २ | ऋतु० | १।१३ २७ |
| ५ | शाकु० | १।गद्य ७।३ १४ गद्य, गद्य |
| १ | मालविका० | १।१२ |
| २ | विक्रम० | १।१७ ४।६४ |

## तालिका–२

**'सिंह' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों मे विश्लेषण (१२६)**

| कवि | सख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्व घोष | २० | बु० च० | १।१५ ५।१ २७ ७७, ७।२ ८।५३ १०।१७, १३।१६, ३३,५० १५।६१ २१।१८ २३।८ २४।२ २५।८ २° ३१, ५६ २६।३६ २७।६ |
|  | ४ | सौ० न० | १।१६ २।५८ ८।४४ १०।६ |
| भारवि | ६ | किरात० | २।१८ २१ ७।३६ १२।४८ १५।४५ १६।५० |
| माघ | १८ | शिशु० | १।३६, ४७ ४८ २।५ ५३ ५।११२ ६।१६ १२।५२ १⁷।२८ १४।७२ ७३ १५।३४ १६।३४, ५६ १७।३१ १६।२, २१, २६ |
| श्रीहर्ष | ५ | नैषध० | २।१३ १२।७४, १३।५ १६।६ २१।५६ |
| सुबन्धु | १० | वासवदत्ता | पृ० ७ ६४ ७६ ७६ ८०, ६८, १६३ २२३, २३ ३४ |
| बाण भट्ट | ३३ | ह० च० | पृ० २७, ५५ ६० ८२ ११६, ५४, ६१, ६६ २१६, ३० ३८ ५७, ५८, ६१, ८७, ६१ ३०७, १४, २०, २२, २२, २८,२६ २६ ३२, ३२ ३३, ३३, ३७, ४०, ४०५, १६, २८ |
|  | १२ | कादम्बरी | पृ० ५८, ५६, ७६, ८२, ६०, १८४, २३० ३०२ ४०, ४०, ८०, ६३७ |
| दण्डी | १८ | द० च० | पृ० २३, ४१, १२६ ३७, ३८ ३८, ४७, २३७ ४३ ४७ ५८, ३१२, २१, २२ २६, ४५४ ७७, ८० |

— — —

# व्याघ्र
# THE TIGER

'मय्या परिभवो व्याघ्रयामित्यवेहि त्वया कृतम् ।"
—रघुवंशम् १२/३७

संस्कृत साहित्य मे व्याघ्र का स्थान गौण रहा है वैदिक साहित्य मे बाघ को द्वीपिन[1] शब्द से कहा गया है वीरकाव्यो मे व्याघ्र का उल्लेख कई स्थानो पर हुआ है वहा इसे व्याघ्र[2] व शार्दूल[3] शब्दो से कहा गया है अमरकोष मे व्याघ्र के लिए शार्दूल, द्वीपिन व व्याघ्र शब्दो का उल्लेख है[4]

व्याघ्र एक मासाहारी शुद्ध जगली जानवर है वैज्ञानिको की दृष्टि मे यह मेरुदण्डीय उपजगत मे अन्तगत बिल्ली समूह के बिल्ली परिवार का सदस्य है[5]

बाघ एशिया का प्रमुख बिल्ला परिवारीय पशु है यह साइबेरिया, कस्पियन सागर के उत्तरी भागो व भारत मे पाया जाने वाला पशु है यह घने वनो मे रहना अधिक पसन्द करता है[6]

यह अधिक अन्धकारमय जलपूर्ण स्थानो मे रहना चाहता है जहा इसे आसानी से पानी प्राप्त हो सके सिंह से कुछ कम रोबीला यह जानवर धारीदार चर्म से युक्त होता है इसकी पूछ ठीक बिल्ली जैसी होती है

इसके शरीर का रग बादामी या ललछौंह होता है इसका सिर चपटा व बडा होता है इसके दात भी सिंह के दातो की भाति मजबूत होते हैं इसकी ऊचाई

---

1 ऋ० स० 4/8/7 6/38/2
2 इद तु पुरुषव्याघ्र '–वा० रा० स० 58/98
3 'राघवो नप शार्दूल '–वा०रा०सु० 61/17
उत्तिष्ठ हरिशार्दूल भजस्व शयनात्तमम्'–वही० 20/25
शार्दूलमृग सघुष्ट सिंहैर्भीमरवमतम्'–वही० कि० 27/2
4 'शार्दूल द्वीपिनौव्याघ्रे'–इत्यमर (सिंहादिवर्ग)
5 जीव जगत पृ 657
6 ए ब्रिग० पृ 587

२ फीट से ३ फीट एव लम्बाई ५ से ६ फीट तक होती है इसकी पूछ ढाई से तीन फीट लम्बी होती हैं शेर की भाँति इसकी मूछें भी तीन इन्च तक लम्बी होती हैं

बाघ विशुद्ध मासाहारी जीव है यह सूअर हिरण, साभर गाय-बल व घोडे का शिकार करता पाया गया है भेड बकरी भी उसका प्रमुख खाद्य है[7] ये थपेडा मारकर जानवर की गदन को तोड डालते हैं एव फिर उसे खाते हैं यदा-कदा यह मनुष्य को भी मार डालता है बाघ अच्छा तराक होता है इसीलिए यह पानी के स्थानो का प्रमुखता देता है यह विशेषरूप से छलाग लगाने म समय रहता है एक छलाग मे यह १५ फीट तक उछल जाता है[8]

बाघ का शिकार एक कठिन काय है भारतीय लाग इसे गड्ढे मे डालकर मारते हैं किन्तु पाश्चात्य शिकारी उच्च शक्तिशाली राइफल से इसका शिकार करते हैं[9]

बाघ के गर्भाधान का कोई सुनिश्चित समय नही है गर्भाधान के सौ दिन के पश्चात मादा दो से पाच तक बच्चे देती है

## सस्कृत काव्यो में व्याघ्र

सस्कृत काव्यो मे बाघ का स्थान गौण रहा है इसे काव्यो म व्याघ्र[10] व शार्दूल[11] कहा है नामोल्लेख करने के पश्चात हम व्याघ्र की काव्यगत विशेषताओं पर विचार करेंगे

मानव व बाघ—यद्यपि बाघ एक भयानक जीव है फिर भी मानव से उसका सम्पक रहा है हषचरित म राजा को व्याघ्र कहा है[12] अश्वघोष ने अपने काव्य बुद्धचरित म व्याघ्रमुखी राक्षस का उल्लेख किया है[13] शबरो का बाघो के साथ रहना बतलाया गया है[14] सूतिकागृह म अखण्डित-व्याघ्र चम के लटकाने का उल्लेख बाण ने किया है[15] मानव एक बुद्धिमान् जीव है अत वह सब जीवो को

---

7 ए किंग प 590

8 ए किंग पृ 588

9 ए किंग 592

10 रघु 12/37, ह च प 390 सौ न 1/37

11 सौ न 10/12, ह च प 4/5 कादम्बरी पृ 637

12 कुपित नरव्याघ्रम्'-ह च प 390 वही पृ 391

13 व्याघ्रर्क्षसिंहद्विरदाननाश्चे'-बु च 13/19

14 क्रूरारम्भि शार्दूलै सह सवास — कादम्बरी पृ 98

15 'आलम्बिताविकलव्याघ्रचमणा वन्दनमाला — वही प 2/8

वश मे कर लेता है व्याघ्र के शिकार का वर्णन दण्डी ने किया है वहाँ बाण द्वारा व्याघ्र के प्राण हरण का उल्लेख किया है [16]

काय-कलाप—विश्व की रचना कम के आधार पर हुइ है, अत हर जीव कोई न कोई क्रिया अवश्य करता रहता है बाघ की भी ऐसी ही क्रियायें देखने म आती हैं वन मे व्याघ्र क निवास पर कवियो का ध्यान गया है वन म व्याघ्रो द्वारा सनिको का मरवाने का उल्लेख मिलता है [17] बाघ क खाने व दौडने का वणन भी मिलता है [18] कुमार को बाघ खा गया ऐसा वर्णन दशकुमार चरित मे आया है [19] एक तरफ बाघ की भयकरता का उल्लेख मिलता है तो दूसरी तरफ व्याघ्र के द्वारा बुद्ध के सम्पक म आकर मास भक्षण को त्याग कर शील का पालन करने का वर्णन भी कवियो ने किया है [20] इससे पशुओ की बुद्धिमत्ता एव सत्सगति की महिमा स्पष्ट होती है व्याघ्र के मारने से स्थल माग का शोधन हो जाता है इस प्रकार का वणन दण्डी ने किया है

उपमित व्याघ्र—व्याघ्र भी कवियो की उपमा का विषय बना है शूपनखा से कवि ने सीता को कहलवाया है कि उसन (सीता ने) उसका (शूपनखा का) अपमान उसी प्रकार किया है जिस प्रकार कि हरिणी बाघिन का अपमान करती है [21] यहा शूपनखा को बाघिन व सीता को हरिणी स उपमित किया है महावर लगा कर सीढियो पर चढने स लाल परो को अकित करने वाली स्त्रियो की तुलना सद्य मारे गय हरिण के रक्त से लाल नखयुक्त बाघिन द्वारा सीढयो पर चढने से की गई है [22] *कपिल गौतम की तुलना युवावस्था मे बाघ के बच्चो की तरह युवा होने से की गई है* [23] बाघ के रक्त से सन नखो की समता पलाश के रक्तपुष्पो से की गई है [24] गुफाओ म से निकलन वाल किरातो को गुफाओ मे से निकलने वाले बाघो स उपमित किया गया है [25]

---

16 व्याघ्रस्य'—द च प उ,8/31
17 'व्याघ्रम् – वही उ पृ 8/31
बालप्रीवेव व्याघ्रनखपंक्ति मंडिता'—काद प 59
18 व्याघ्र शीघ्रम द० च उ 8/31
19 'कुमार शार्दू लभक्षित'—वही उ 8/41
20 [illegible] च पृ 424
21 रघु 12/37
22 रघु 16/15
23 सौ न 1/37
24 कादम्बरी प 637
25 सौ न 10/12

प्राप्य वस्तुयें—बाघ के चमड़े से बने आसन को बिछाने का उल्लेख मिलता है[26] शबरों द्वारा बाघाम्बर पहनने का वर्णन बाण ने किया है कि शबर लोग शंकर के गणों के समान बाघचर्म लपेटे थे[27] बाघ के चमड़े से बने तरकस का वर्णन भी मिलता है[28] बूढ़े व्याघ्र के चर्म से बनी कंचुक का बाण ने कादम्बरी में उल्लेख किया है[29] इस प्रकार बाघ से उपलब्ध पदार्थों का भी कवियों ने उल्लेख किया है

बाघ का सबसे अधिक वर्णन बाण ने, उससे कम दण्डी ने एवं उससे कम कालिदास एवं अश्वघोष ने किया है बाण ने हर्षचरित में ५ बार एवं कादम्बरी में ५ बार कुल १० बार बाघ का वर्णन किया है दण्डी ने ५ बार एवं कालिदास व अश्वघोष ने ३–३ बार बाघ का वर्णन किया है इस प्रकार बाघ का वर्णन कुल २१ बार हुआ है जबकि भारवि, माघ, श्रीहर्ष व सुबन्धु ने बाघ का वर्णन अपने काव्यों में नहीं किया है कालिदास के नाटकों में भी बाघ के वर्णन का सर्वथा अभाव है बाघ के वर्णन का विश्लेषण प्रस्तुत तालिकाओं में प्रदर्शित है

26 स देवदारु द्रुम वेदिकायां शार्दूल चर्म 43 /कुमार 3/44
27 कश्चित प्रमथैरिव केसरी कृत्तिधारिभि —कादम्बरी पृ 94
28 शार्दूल चर्मपट पीडित'—ह च पृ 415
29 'जरद् व्याघ्र चर्म —कादम्बरी"

तालिका–१

'व्याघ्र' के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (3)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| २ | रघु | १२।३७ १६।१५ |
| १ | कुमार | ३।४४ |

तालिका–२

'व्याघ्र' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (18)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्वघोष | १ | बु च | १३।१६ |
| , | २ | सौ न | १।२७ १०।१२ |
| बाणभट्ट | ५ | ह च | प ३६०, ६०, ६१, ४१५ २४ |
| | ५ | कादम्बरी | प ५६ ६४, ६८ २१८, ६२३ |
| दण्डी | ५ | द च | प ३१ ८।२४, ३१,३१४१— |

# मार्जार
## THE CAT

"ओतुर्विडालो मार्जारो वृषदंशक आखुभुक्"
—अमरकोष

सम्पूर्ण-संस्कृत साहित्य में बिल्ली का गौण स्थान रहा है वैदिक साहित्य में घरेलू बिल्ली के लिये जाहक शब्द का प्रयोग हुआ है[1]। अमरकोष में बिल्ली के लिये ओतु, बिडाल, मार्जार, वृषदंशक व आखुभुक नामों का उल्लेख किया गया है[2] बिल्ली मेरुदण्डीय उपजगत् के अन्तर्गत बिल्ली परिवार की सदस्या है[3]

मनुष्य का यह परिचित जीव दूध दही के चक्कर में घरों में यत्र तत्र सर्वत्र फिरता पाया जाता है बिल्ली की अनेक जातियाँ भूमण्डल पर फैली हुयी हैं यह शेर व चीते की तो मौसी कहलाती है सामान्य बिल्ली की अनेक नस्लें देखने में आती हैं यहाँ हम उनका नामोल्लेख मात्र करेंगे—१ एंगोरा २ परसियन ३ स्यामी ४ बर्मी ५ अबेसिनियन ६ स्सोनीली इनमें एंगोरा व परसियन लम्बे बालों वाली होती हैं एन्गोरा का सिर तीखा, नाक लम्बा रेशमी फर प्रमुख पहिचान के चिह्न हैं इसकी पूँछ के सिरे पर बालों का आधिक्य होता है[4] बिल्लियाँ सामान्यतः सफेद भूरी कलछौंह एवं चितकबरे रंगों की होती हैं

बिल्ली की ऊँचाई एक फुट एवं लम्बाई पूँछ सहित डेढ़ से २ फीट तक होती है मादा आकार में कुछ छोटी होती है बिल्ली के मुख पर मूँछें होती हैं एवं अंधेरे में इसकी आँखें चमकती रहती हैं[5]

बिल्ली घरेलू पालतू एवं चुस्त जीव है यह कृपापात्र मित्रतापूर्वक साथी बनाती है किन्तु यह स्वतन्त्र है एवं अपना स्वयं का मार्ग चाहती है[6] बिल्ली की

---

1 त० सं० 5/5/18/1

2 ओतुर्विडालो मार्जारो वृषदंशक आखुभुक्। इत्यमर (सिंहादि वर्ग)

3 जीव जगत पृ० 667

4 इन० ब्रि० भाग 5 पृ० 14

5 इन० ब्र० भाग 3 पृ० 215

6 वही० पृ० 216

स्मरणशक्ति अत्यन्त तीव्र होती है वह अपने शत्रु व मित्र को खूब पहिचानती है [7]

बिल्ली के प्रमुख खाद्य हैं मुर्गी कबूतर चूहे बतख एव अन्य छोटे प्राणी बिल्ली पका खाना भी खा लेती है दूध व दूध की मलाई इसे शायद अधिक प्रिय है क्योकि दूध को चट करने म यह कभी पीछे नही रहती

बिल्ली का पालन सवप्रथम ३००० ई० पू० मिश्र म प्रारम्भ हुआ क्योकि यह अनाज के भण्डारो की रक्षा म बडी सहायक थी अत मिश्रवासियो ने अपने अनाज की रक्षाथ बिल्ली का पालन प्रारम्भ किया [8] आजकल बिल्ली पालन का शौक भारतीय समाज म भी बढने लगा है बिल्ली की खाल एव बालो म अनेक छोटी बडी वस्तुओ का निर्माण होता है

बिल्ली एक बार मे अनेक बच्चो को जन्म देती है जिनको उठाकर यह एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाती हुयी पायी गयी है बिल्ली से सम्बन्धित अनेकानेक कहानिया हमारे देश म प्रचलित हैं

साहित्य म भीगीबिल्ली व 'बिल्ली के भाग्य से छींका टूट गया' मुहावरों का प्रयोग किया जाता है बिल्ली के द्वारा रास्ता काटा जाना अशुभ माना है तथ बिल्ली को मारना महापाप

सस्कृत-काव्यो मे बिल्ली —सस्कृत-काव्यो म बिल्ली का स्थान सवथा गौण रहा है इसे प्रस्तुत काव्यो म बिडाल व आखुक नामो स कहा गया है [9]

क्रिया-कलाप —बिडाल के द्वारा चूहे के पकडने की बात का महाकवि कालिदास ने प्रसिद्ध नाटक अभिज्ञान शाकुन्तल म विदूषक के द्वारा कहलवाया है कि वह बिल्ली के पन्जे म पडे हुये चूहे के समान अपने प्राणो म हाथ धोय बैठा है यहाँ राजा इन्द्र का सारथि विदूषक को पकड लेता है इस वणन म सारथि को बिल्ली तथा विदूषक को चूहे से उपमित किया गया है [10] विदूषक ने मालविका की दशा का वणन करते हुये उस बिल्ली के पन्जे मे पडी हुयी कोयल के समान बतलाया है [11] आख्यायिका म बिल्ली की उपस्थिति श्री सुबन्धु ने वर्णित की है इस आधार पर बिल्लियो का निवास झाडियो भी हैं यह प्रमाणित होता है [12] कम के विपयास की प्रमाणता म

7 इन० ब्राइ भाग 3 पृ 216

8 इन० ब्रि० भाग 5 पृ० 14

9 शाकु० 6 (गद्य) वासवदत्ता० पृ० 243

10 'बिडालोगृहिता मूषक० शाकु० 6 (गद्य)

11 यो बिडालगृहीतायां परिभूतिकाया'—मालविका 4 (गद्य)

12 गुञ्जाकुञ्ज० वासवदत्ता० पृ 233

महाकवि बाण लिखते हैं कि लोग कुक्कुट का भक्षण (व्रतविशेष) करते थे, तथापि बिडाला जैसा व्यवहार (हिंसा) नहीं करते थे[13] इस प्रकार कतिपय काव्यकारों ने ही बिल्ली का वर्णन प्रस्तुत कर पशुजगत के प्रति अपने उदार व्यवहार का प्रमाण दिया है

सम्पूर्ण काव्यों में बिल्ली का वर्णन केवल ५ बार आया है कालिदास बाण व दण्डी ने क्रमश ३, १ व १ बार बिल्ली का उल्लेख किया है वर्णन का क्रम तालिकाओं में है।

13 कृतकुक्कुटव्रता अप्यबिडालवृत्तय '—ह० च० प० 69

## तालिका—१

'मार्जार' के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (३)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| १ | शाकु० | ६ गद्य |
| २ | मालविका० | ३।१५ ४ गद्य |

## तालिका—२

'मार्जार' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (२)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| सुबन्धु | १ | वासवदत्ता पृ० २३३ | |
| बाणभट्ट | १ | हर्षचरित पृ० ६६ | |

# ऋक्ष
## THE BEAR

'ऋक्षाच्छभल्ल भालुका ।"

—अमरकोश ।

संस्कृत-साहित्य में ऋक्ष का स्थान सामान्य है, किन्तु इसका वर्णन संस्कृत साहित्य में प्राचीनतम है वदिक-साहित्य में ऋक्ष को केवल ऋक्ष नाम से कहा गया है[1] जबकि बाद के साहित्य में अन्य नाम भी प्राप्त होते हैं वाल्मीकि रामायण में भी ऋक्ष शब्द ही उपलब्ध हैं[2] यहा जामवन्त नामक भालू का विशद वर्णन किया गया है अमरकोष में ऋक्ष, अच्छ, भल्ल, भालूक व भल्लूक शब्दों से भालू को कहा गया है[3] भालू या रीछ मेरुदण्डीय उपजगत् के अन्तर्गत स्तनप्राणी श्रेणी के भालू परिवार का सदस्य है[4]

भालू एक विशालकाय एवं अत्यन्त डरावना प्राणी है यह मांसाहारी जीव है इसका सारा बदन बालों से ढका होता है इसकी टांगे अत्यन्त सुदृढ होती हैं यह ऊँट की तरह लुढकता हुआ चलता है यानी एक तरफ की दोनो टांगो को एक साथ आगे रखता है इसका थूथन सूअर की भांति लम्बा होता है इसका सिर बन्दर की तरह गोल होता है परन्तु इसकी पूंछ छोटी होती है इसके पैरों में ५ नाखून होते हैं यह अपनी पीछे की टांगों पर कभी-कभी खड़ा होता है यह शहद खाना पसन्द करता है[5] भालू मुख्यतः निम्नलिखित प्रकार के होते हैं —

१ भूरा-भालू—भालू भूरे एवं कुछ लाल झलक लिये हुये होता है यह भालू उत्तरी गोलार्द्ध के शीतोष्ण क्षेत्र में स्पेन से जापान तक पाया जाता है[6] इसकी लम्बाई लगभग २ मीटर होती है मौसम के साथ-साथ इसके बालों के रङ्ग में परिवर्तन आ जाता है जाड़ों में इसके बाल अधिक लम्बे हो जाते हैं भूरा भालू एक सीधा

---

1 ऋक० 5/56/3 दा० सं० 24/36 म० सं० 3/14/17
2 ऋक्षाश्च वानरा० वा० रा० कि० 39 28
3 ऋक्षाच्छभल्लभालुका'—इत्यमर (सिंहादिवर्ग)
4 जीवजगत पृ० 687
5 इन० ब्रि० भाग० 3 पृ० 258
6 यथोपरि०

जीव होता है यह आक्रमण करने की अपेक्षा भाग जाना अधिक पसद करता है इसका प्रमुख खाद्य पत्ते हैं किन्तु यदा कदा यह भेड बकरियो को भी चम्कर जाता है इसका गर्भाधानकाल एक वर्ष का होता है यह भालू लङ्का व भारत म अधिक पाया जाता है

२ रीछ —रीछ भारतवासियो का जाना-पहचाना जीव है यह भी लका व भारत मे अधिक पाया जाता है यह पूर्णत बालो से ढका रहता है इसके सीने पर वी (V) आकार के सफेद बाल होते हैं इसकी लम्बाई करीब २ मीटर होती है भालुओ म रीछ विशप बडा नही होता किन्तु यह अत्यन्त चञ्चल होता है यह राह गीरो पर हमला कर देता है और घायल कर देता है यह पेडो पर भी चढ जाता है इसकी घ्राणशक्ति अत्यन्त तीव्र होती है जबकि श्रवण व दशन शक्तिया क्षीण पायी गई है यह कन्दमूल फलो के अतिरिक्त दीमक को खा जाता है जाडे मे मादा दो बच्चे देती है

३–काला भालू—यह भालू बलूचिस्तान से मन्चूरिया तक पाया जाता है इसे हिमालय व तिब्बत का काला भालू भी कहा जाता है [7] यह भालू डेढ से २ मीटर तक लम्बा होता है यह भालू बडा भयकर एव बदमाशी करने म अग्रणी होता है यह मनुष्य पर तुरन्त हमला कर देता है यह पानी म तैरने और पेड पर चढने म समय होता है [8] यह भी फल एव शहद तो खाता ही है साथ ही मास भी इसे काफी पसन्द है इसकी मादा २ साल से गर्मी के आरम्भ मे बच्चे देती देखी गयी है

४–ध्रुवीय भालू- यह भालू ध्रुवीय प्रदेशो मे पाया जाता है इसके शरीर पर सफेद लम्बे बाल रहते हैं यह एक क्रियाशील जीव है इसका मुख्य भोजन सील, मरे हुए जानवर मछलिया नारियल, अण्डे फल जडें घास व चीटिया होती है यह बर्फ की गुफाओ के मध्य म निवास करता है [9]

भालू खाने की तलाश मे मीलो की यात्रा कर जाता है यह पारिवारिक जीवन के प्रति उदासीन रहता है पालतू भालू बडे ही मनोरञ्जक तमाशे प्रस्तुत करने वाले होते हैं भालू के खेल यदा कदा भारतीय गावो मे देखे जा सकते हैं भूरे भालू तो मुक्केबाजी एव कुश्ती म काफी प्रवीण देखे गये है [10] हर भालू शिकारी नही होता फिर भी अवसर पाकर ये मास खा लेते हैं भालुओ म कई भालू अच्छे तराक होते हैं भालू विश्व के कामुकतम पशुओ मे से एक हैं

---

7 इन० चेम्बर भाग 11 पृ० 174
8 ए० किग० पृ० 464
9 ए० किग० पृ० 459, इन० बिo भाग 3 पृ० 258
10 ए० किग० पृ० 462

ग्रामीण जीवन म भालू का विशेष महत्व नही किन्तु ध्रुवीय भालू की फर एव सामान्य भालू के बाल अनेक प्रकार की छोटी वनी वस्तुओ के निर्माण म सहायक हैं

सस्कृत काव्यो में ऋक्ष—प्रस्तुत सस्कृत काव्या म भालू के लिए ऋक्ष व भल्ल नामा का प्रयोग हुआ है [11]

मानव व भालू—भालू व मानव का पुराना साथ रहा है बुद्धचरित में भालू के मुख वाले राक्षस का वर्णन मिलता है [12] अभिज्ञान शाकुन्तल मे विदूषक सेनापति स कहता है कि उसे वन म ही कभी न कभी किसी नाक के लोभी बूढे रीछ के मुह मे पडना पडेगा [13]

काय-कलाप—बाण ने विन्ध्याटवी म रीछो के निरन्तर घूमने का उल्लेख किया है [14] वास्तव मे रीछ चुप बठने वाला प्राणी नही क्योकि उस अजायबघरो म भी पिंजडे के भीतर निरन्तर घूमते हुए पाया गया है अत कवि का वर्णन सूक्ष्म निरीक्षण का फल है भालू का शहद प्रिय होता है उसके द्वारा शहद चाटने का उल्लेख बाण ने किया है [15] भालुओ के आराम करने का वर्णन करते हुए सुबन्धु लिखते हैं कि भालू पेडो की छाया मे आराम कर रहे थे [16] अन्य मन्दिरो मे भालुओ के उत्पात का उल्लेख भी मिलता है [17]

प्राप्य-पदार्थ—मरणोपरात ऋक्ष के चमडे से वस्तुओ का निर्माण सभव है बाण ने शबर-सनिक के तरकस को भालू के चम का बना हुआ बतलाया है [18]

सम्पूर्ण काव्यारण्य म ऋक्ष का वर्णन विरल है बाण ने ऋक्ष का उल्लेख ४ बार एव अश्वघोष व सुबन्धु ने एक-एक बार किया है शाकुन्तल म ऋक्ष का एकधा वर्णन किया गया है कुल मिलाकर ऋक्ष का वर्णन ७ बार हुआ है वर्णन का विश्लेषण आग तालिकाओ म प्रस्तुत है

---

11 बु० च० 13/19 कादम्बरी प० 58, 647, ह० च० पृ० 98, 415
12 व्याघ्रर्क्षसिंह द्विरदाननाश्च'—बु० च० 13/19
13 नरनासिकालोलुपस्य जीर्णर्क्षस्य कस्यापि मुखे पतिष्यसि —शाकु० 2 (गद्य)
14 सततभ्रमत्० कादम्बरी पृ० 58
15 भल्लगोलाङ्गूल० ह० च० पृ० 98
16 ऋक्षगदयशारम केसरिकुमुद पनस० वासवदत्ता प० 65
17 धसद्दुत्सन देव० कादम्बरी० पृ० 647
18 प्रच्छभल्लचर्ममयेन—ह० च० पृ० 412

## तालिका–१

'ऋक्ष' के वर्णन का कालिदास के काव्यो म विश्लेषण (1)

| सख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| १ | शाकु | २ गद्य |

## तालिका–२

'ऋक्ष' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों मे विश्लेषण (6)

| कवि | सख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्वघोष | १ | बु च | १३।१६ |
| सुबन्धु | १ | वासवदत्ता | प ६५ |
| बाणभट्ट | २ | ह च | पृ ६८, ४१५ |
| ,, | २ | कादम्बरी | प ५८ ६४७ |

# तरक्षु
# THE HYENA

'प्रभुदिततरतरक्षव''
—हर्षचरितम् पृ० ४२०

संस्कृत-साहित्य में तरक्षु का स्थान गौणतम रहा है तरक्षु का वर्णन काफी पुराना है वरन् साहित्य में तरक्षु एवं सालावृक शब्दों का उल्लेख मिलता है[1] अमरकोष में तरक्षु एवं मृगादन शब्दों का प्रयोग हुआ है[2] तरक्षु मेरुदण्डीय उप-जगत के अन्तर्गत बिल्ली उपवर्ग के बिल्ली समूह के लकड़बघा परिवार का सदस्य है[3]

लकड़बघा भारत में पाया जाने वाला एक सुपरिचित जीव है लकड़बघा के दो प्रमुख प्रकार हैं जिनकी शरीर रचना एवं वितरण में कुछ अन्तर है अतः उनका अलग-अलग उल्लेख कर सामान्य विशेषताओं पर विचार करेंगे

१-धारीदार लकड़बघा—इस प्रकार का लकड़बघा भारत, फारस, एशियामाइनर, एवं उत्तरी-पूर्वी अफ्रीका में पाया जाता है[4] यह बड़ा गन्दा एवं बेडौल जीव होता है इसका कद भेड़िये जितना होता है एवं यह झलक लिए हुए ललछौंह रंग का होता है[5] इसके शरीर पर धारियां होती हैं इसकी दुम की लम्बाई लगभग डेढ़ फुट होती है इसके शरीर का अगला भाग बड़ा ऊँचा सा होता है एवं इस कारण यह बड़ा रोबीला लगता है इसके अगले पैर पीछे के पैरों से अपेक्षाकृत बड़े होते हैं

२-चित्तीदार लकड़बघा—इस प्रकार का लकड़बघा अफ्रीका के घने वनों में पाया जाता है इस जीव पर बड़े-बड़े धब्बे होते हैं यह धारीदार लकड़बघे

---

1 तै० सं० 5/5/9/1, ऋक० 10/73/2 तै० सं 6/2/7/5
2 'तरक्षुस्तु मृगादन'—इत्यमर (सिंहादिवर्ग)
3 जीव जगत पृ 676
4 इन ब्रि भाग 12 पृ 8
5 यथोपरि

से आकार म बडा होना है एव सोये हुए लोगो पर भी आक्रमण कर बठता है इसके कधे की ऊँचाइ ३ फीट तक होती है एव वजन १७५ पौण्ड तक [6] इसे हस-मुख लकडबघा भी कहत है

इतना रोबीला होते हुए भी लकडबघा बडा डरपोक जीव है यह प्राय मुर्दों को खाकर पेट पालता है रेतीले भागो म यह धूल उछालकर राहगीरो को परेशान करता है और मौका पाकर पकड भी लेता है इसकी रीढ की हड्डी से चलते समय खट खट की आवाज सुनाई देती है इसके दात व जबडे बडे मजबूत होत हैं जिनकी सहायता से यह हड्डियो को आसानी से चबा जाता है इसके पजो की पकड भी मजबूत होती है [8] इसकी गन्दी हरकतो के कारण यह जानवरो का भगी भी कह-लाता है इसकी चिल्लाहट बडी भयकर होती है

इसका प्रमुख खाद्य मास है यह बस्ती मे से मुर्गों, बतखो कुत्तो व भेड बकरियो को उठा ले जाता है [9] इसकी मादा एक बार म ३ से ५ तक बच्चे दे देती है

सस्कृत काव्यो मे तरक्षु – सस्कृत काव्यो मे तरक्षु के लिए तरक्षु शब्द का ही प्रयोग मिलता है इस पशु का वर्णन काव्यो मे गौणतम रहा है इसका वर्णन अश्वघोष एव बाण ने ही किया है बुद्धचरित मे तरक्षु की आकृति वाले राक्षस का उल्लेख मिलता है [10] हर्षचरित मे किन्नरियो के सङ्गीत म आनन्दित हरिणो का लकडबघे द्वारा देखे जाने का उल्लेख है [11]

इस प्रकार प्रस्तुत सस्कृत काव्यो म तरक्षु का कुल मिलाकर २ बार वर्णन हुआ है अत इसका स्थान वर्णित पशु जगत म सख्या व वर्णन के आधार पर सबसे नीचा रहा है जिसका वर्णन आगे की तालिकाओ मे दर्शनीय है

---

6 ए किग पृ 551
7 इन ब्रि भाग 12 प 8
8 इन० चेम्बर भाग 7 पृ० 327

## तालिका–१

'तरक्षु के वर्णन का कालिदास के काव्यो में विश्लेषण (X)

( × )

## तालिका–२

'तरक्षु के वणन का कालिदासोत्तर काव्यों म विश्लेषण (2)

| कवि | सख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्वघोष | १ | बु च | १३।५२ |
| बाणभट्ट | १ | ह च | पृ ४२० |

— — —

७

# शृगाल
# THE JACKAL

'जहासि निद्रामशिवै शिवारुतै"

—किराताजु नीयम १/३८

संस्कृत-साहित्य में शृगाल का वर्णन अत्यन्त न्यून है। वैदिक साहित्य में शृगाल का यदा कदा उल्लेख मिलता है। इसे वैदिक साहित्य में वंक, लोपाश व शृगाल नामों से कहा गया है।[1] पौराणिक साहित्य में शृगाल शब्द अधिक प्रचलित हो गया था।[2] रामायण में वंक, शिवा व गोमायु शब्दों का प्रयोग हुआ है। अमरकोष में शृगाल के लिए शिवा, भूरिमाय, गोमायु, मृगधूर्तक, शृगाल, वञ्चक, क्रोष्टु, फेरु, फेरव व जम्बुक शब्दों का उल्लेख है।[3]

शृगाल मेरुदण्डीय उपजगत के अन्तर्गत कुत्ता-समूह के कुत्ता-परिवार का सदस्य है।[4] यह दक्षिणी एशिया, अफ्रीका, दक्षिणी-पूर्वी यूरोप, भारत व लंका में पाया जाता है।[5] सियार एक ऐसा जीव है जो क्या पर्वत, क्या जंगल और क्या गाँव (बस्ती) सभी स्थानों पर भ्रमणशील पाया गया है। मरघट वाले स्थानों में सियार की उपस्थिति निरन्तर देखी गई है। एक लोक कथा के अनुसार कहा गया है कि सियार पहले बस्ती में रहा करता था, किन्तु जंगल में रहने वाले कुत्ता से इनका समझौता हो गया और कुत्ते जंगल से बस्ती में आ गये एवं सियार जंगल

---

1 ऋग् 1/42/2 य वे 7/95/2 12/1/49
ऋग् 10'28/4 त स 5/21/1 मै स 3/14/17 श ब्रा 12/5/2/5

2 व इ (2) पृ 468

3 वा रा [illegible] 7/54, 7/54 41/20, 57/3

'स्त्रियां शिवा भूरिमाय गोमायु मृगधूर्तकाः
शृगालवञ्चक क्रोष्टु फेरुफेरव जम्बुकाः ॥'

अमरकोष [सिंहादिवर्ग]

4 कोष बाल्ड् पृ 683

5 इन चेम्बर भाग–8 पृ 1, इन ब्रि भाग–12 पृ 850, ए विश पृ 441

को चले गये अब ये दोना ही अपने स्थानो पर खुश नही हैं और यही कारण है कि ये हर शाम रोकर अपना समय विताते हैं

सियार की लम्बाइ एक मीटर व ऊँचाई २ फीट के लगभग होती है यूरोप व सिन्ध के सियार अपेक्षाकृत काफी बडे होते हैं[6] इनका रग भूरा व कत्थई होता है बाल पीठ पर गहरे कत्थई एव नीले हल्के रग के होते हैं[7] इसके शरीर के बाल काले एव दुम के बाल खर रग के होते हैं चौपाया होने के कारण इसमे सभी चौपायो के गुण यानी दो कान दो आखें व एक नाक होती है इसकी शक्ल कुत्ते की शक्ल से अत्यन्त साम्य रखती हुई होती है सियार की धूर्तता से सम्बंधित अनेक कहानिया प्रचलित हैं[8] इसकी धूर्तता क कारण 'रगा सियार' एक प्रसिद्ध मुहावरा बन गया है इसकी आवाज बडी तेज व हुक्का-हुआ व 'हाव-हाव' की आवाज होती है लोमडी की भाति इसमे बचाव के गुण विद्यमान होते हैं[9]

सियार रात्रिचर प्राणी है यह खेती को वहुत हानि पहुचाता है फल-फूल व अनाज के अतिरिक्त यह छोटे पक्षियो को भी मारकर खा जाता है मरे हुये जीवो क मास साथ शेर द्वारा शिकार कर छोडे हुये जीवो को भी यह खाता देखा गया है[10] मास, मछली आदि तो इसके प्रिय खाद्य हैं ही, साथ ही गन्ना भी अतिप्रिय है[11] सियार की मादा एक बार में कुतिया की भाति अनेक बच्चा को जन्म देती है सियार जाडे म वहुत हाव हाव करते सुने गये हैं लोगों का अनुमान है कि वे सर्दी से पीडित होकर एसा करते हैं पर इसमे तथ्य प्रतीत नही होता, क्योकि सियार हमेशा दिन म गुफा म पडा रहता है एव रात्रि को उसका कार्य कलाप का समय है यदि सियार को हम रजनीचर' कहे तो अतिशयोक्ति नही होगी

सस्कृत काव्यों में सियार—सस्कृत-काव्या मे शगाल के लिए शिवा शगाल मृग धूर्तक, वनशुन शब्दो का प्रयोग हुआ है[12] नामोल्लेख करने के

---

6 इन चेम्बर भाग–8 प 1
7 इन ब्रि भाग–12 प 850
8 हितोपदेश व पञ्चतन्त्र की कहानियाँ
9 इन ब्रि भाग–12 प 850
10 ए किंग प 439
11 इन चेम्बर भाग–8 प 1
12 कुमार 15/18, रघु 11/61 ह च प 456
व च पू 247 कुमार 15/41, शिशु 15/34

पश्चात् अब हम शृगाल की काव्यात्मक विशेषताओं पर विचार करेंगे

मानव व सियार—जैसा कि कहा जा चुका है कि शृगाल मानव के काफी निकट रहा है पर मानवता के साथ इसका वर्णन मिलता है दशकुमारचार दण्डी ने तो एक परिव्राजिका का नाम ही 'शृगालिका' रख दिया है[13] सियार का बोलना अमङ्गल सूचक माना गया है तभी तो वन में निवृत्त युधिष्ठिर से द्रौपदी सियार की ध्वनि युक्त घर को अमङ्गलकारी बतलाती है[14] गीन्हा को पुत्रोत्पत्ति के लिए मांस की बलि देने का उल्लेख बाण ने किया है, जिसमें अन्धविश्वास की स्पष्ट झलक प्रतीत होती है[15] एक तरफ मानव के लिए सियार का रोना अमङ्गलकारी कहा गया है, तो दूसरी ओर उसको भीला के लिए वेद पाठ की संज्ञा देने में भी कविगण पीछे नहीं रहे हैं[16]

क्रिया-कलाप—हर जीव की अपनी कोई न कोई विशेषता होती है शृगाल की भी एक वैसी ही विशेषता है—चिल्लाना सियारियाँ आकाश की ओर मुँह करके चिल्लाने लगीं, सियारियाँ सूर्यमण्डल के चारों ओर डरावने स्वर से रोने लगीं इत्यादि वर्णन कवियों ने सभी जगह किये हैं[17] मरघट में झाड़ियों के मध्य सियारियों के बच्चों के चिल्लाने की तरफ बाण का ध्यान गया है[18] रोने चिल्लाने के बाद सियार की द्वितीय क्रिया के रूप में आता है उसका खाना पीना युद्ध में सियार बाँह का मांस के लालच से खींच लेता है, रक्त-कण के लोभ से चञ्चल सियार-गण लोहमहिष के रक्तनेत्र को जीभ से चाट रहे हैं, इत्यादि उल्लेख कवियों की पैनी अवलोकन शक्ति का चमत्कार है[19]

उपमित शृगाल—कवि अपने काव्य में कभी पीछे नहीं रहा उसे जहाँ कहीं भी कुछ कहने का अवसर मिला है उसने मुक्तकण्ठ से कहा है फिर भला सियार को वह उपमित क्यों नहीं करता सियार की आवाज की तुलना उसने शूर्पनखा की आवाज से की है[20]

---

13 द च पृ 243 'शृगालिका मुख निसृतवार्त्ता'—द च पृ 247

14 जहाति निद्रामशिवैं शिवारुत '—किरात 1:38

15 चत्वरेषु शिवा ' कादम्बरी पृ 202

16 शास्त्रम् शिवारुतम कादम्बरी पृ 98

17 नभसो ववाशिरे शिवानां राजय —ह च पृ 281

18 किलकिलायमान ' ह च पृ 456

19 शिवा भुजच्छेदमपाचकार'—रघु /:50

20 शिवाघोर स्वनां पश्चाद् बुबुधे—रघु 12:39

जहा मानव म पशुओ का कोई गुण आ जाता है, वही उसमे राक्षसत्व की झलक दीखने लगती है यहाँ शूपनखा की आवाज का सियारवत् होना उसके दानवत्व का द्योतक है तारकासुर ने देवताओ की वाणी को सियार के रोने की वाणी से उपमित किया है[21] यह उसके दानवत्व का प्रमाण है शिशुपाल भगवान् कृष्ण की युधिष्ठिर द्वारा की गई पूजा को गीदड की पूजा के समान कहता है[22] सूय की ओर मुह करके रोने वाली सियारियो के लिए कहा गया है कि मानो वे क्षत्रिय रक्त से अपने पिता को तपन करने वाले परशुराम का बुला रही हो।[23] इस प्रकार एक बडे ही मनोहर ढग से कवियो ने सियार को सादृश्यमूलक अलकारा म स्थान देकर जीवो के प्रति अपने गाढानुराग का प्रमाण प्रस्तुत किया है

सम्पूण सस्कृत-काव्यो म सियार का उल्लेख केवल १४ बार हुआ है अर्थात् सियार का स्थान सवथा गौण रहा है सियार का सबसे अधिक वणन बाण व कालिदास ने किया है रघुवश व हर्षचरित म सियार का वणन ३–३ बार कादम्बरी व दशकुमारचरित, कुमारसम्भव व वासवदत्ता म २–२ बार एव किरातार्जुनीयम व शिशुपालवध मे एक एक बार हुआ है पद्य कवि अश्वघोष ने सियार के प्रति अपना मत नही दिया है इसके अतिरिक्त कालिदास के नाटको शाकुन्तलम, मालविकाग्निमित्रम एव विक्रमोवशीयम म सियार का वणन उपलब्ध नही होता इस प्रकार सियार का वणन सस्कृत काव्या मे गौण है सियार के वणन का विश्लेषण आग की तालिकाओ मे दशनीय है

———

21 'निशि स्वर यनाते मृगधूतका इव कुमार 15।41

22 'अस्य वनशुन इवापचिति'–शिशु 15।34

23 रघु 11।61

## तालिका—१

'शृगाल' के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (५)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| ३ | रघु० | ७।५० ११।६१ १२।३१ |
| २ | कुमार० | १५।१८ ४१ |

## तालिका—२

शृगाल के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (११)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| भारवि | १ | किरात | १।३८ |
| माघ | १ | शिशु | १५।३४ |
| सुबन्धु | २ | वासवदत्ता | २।४ १५ |
| बाणभट्ट | ६ | ह च | पृ० ६८ २८१ ४५६ |
| | २ | कादम्बरी | पृ० २०२ ६३७ |
| दण्डी | २ | द च | पृ० २३४ ४७ |

# वृक
# THE WOLF

"नावलुप्यसे सेवकवृकै"

—कादम्बरी, पृ ३३६

संस्कृत-काव्यो मे वृक का स्थान गौण रहा है वदिक साहित्य म भी भेडिये के लिए वृक नाम का उल्लेख मिलता है[1] अमरकोष मे वृक के लिए कोक, ईहामृग एव वृक शब्दो का उल्लेख है[2] वज्ञानिको द्वारा वृक मेरुदण्डीय उप-जगत के अन्तगत कुत्ता परिवार का सदस्य माना गया है[3]

वृक विश्व के अनेक भागो मे पाया जाता है इसे हिमालय की तराई वाले भागो स लेकर दक्षिण मे कन्याकुमारी तक सम्पूण भारत म देखा गया है भेडिया अपनी चालाकी एव गोलबन्दी के लिए प्रसिद्ध है यह अकेला कम देखने मे आता है एव सामान्यत ७–८ के समुदाय म रहता है यह एक खूखार जीव है यदाकदा बच्चो को उठाकर ले जाते हैं और गुफा म उनका पालन करते हैं ये बच्चे फिर बोलना नही सीख पाते एव ज्यादा दिन जिन्दे नही रहते व न मानव ही रहते हैं और न भेडिया ही इस विषय मे श्री रडयार्ड किपलिंग की एक कहानी, जिसे 'जगल–बुक' या 'मोगली की कहानी' नाम दिया गया है, विख्यात है यह एक एसे बच्चे की कहानी है जो भेडियो के द्वारा जगल म पाला गया था जब वह वापस बस्ती म लौटा तो लोगो न उस पर पत्थर फेंके और स्वीकार नही किया यह कहानी स्काउटिंग क साहित्य मे अनेक स्थानो पर मिलती है यह कथा अशत काल्पनिक है[4]

भेडिया आकार म सियार से बडा होता है यह लगभग एक मीटर लम्बा एव २ स ढाई फीट ऊचा जीव है इसकी पूछ करीब आधा मीटर लम्बी होती

---

1 ऋक 1।42।2, अ वे 7।95।2 का स 11।10

2 कोक ईहामृगो वृक'—इत्यमर (सिंहादिवर्ग)

3 'जीवजगत' पृ 861

4 देखिये–'वेनगंगा के किनारे'—श्री श्रीकृष्णदत्त शर्मा

है भेड़िये का रंग राख जैसा होता है पेट का रंग हल्का होता है तथा पीठ पर रंग गहरी धारियों से युक्त होता है

भेड़िया मांसाहारी पशु है खरगोश भेड़-बकरी तथा हिरन प्रमुख खाद्य पदार्थ हैं हो यदा कदा ये मिलकर गाय या बैल आदि का भी अपना आहार बनाने में सफल हो जाते हैं आदमखोर हो जाने पर ये बड़े बड़े भयंकर हो जाते हैं भेड़िये की मादा सर्दी के दिनों में ५–७ बच्चों को एक बारगी जन्म देती है

संस्कृत काव्यों में वृक—संस्कृत-काव्यों में वृक के लिए वृक शब्द का ही प्रयोग हुआ है[5] काव्यों में वृक का वर्णन अत्यन्त विरल है

मानव व वृक—मांसभक्षी पशु होने के नाते वृक का मानव के साथ सामीप्य सम्बन्ध तो नहीं रह सका फिर भी मानव भेड़िये से सर्वदा सम्बन्ध रहा है महाकवि भारवि ने तो अपने काव्य में युधिष्ठिर के भाई भीमसेन को वृकोदर नाम से सम्बोधित किया है[6] भीमसेन शक्ति के भण्डार थे एवं शक्ति के लिए अधिक भोजन की भी उनको आवश्यकता थी अतः अधिक खाने के कारण उन्हें वृक के समान पेट वाला कहा है क्योंकि भेड़िया खाने में सानी नहीं रखता चोरी छलकपट व चालाकी कुछ भेड़िये के ऐसे गुण हैं जो नीच लोगों में देखे जा सकते हैं बाण ने अपनी कादम्बरी में शुकनासोपदेश में चन्द्रापीड को कहलवाया है कि उसे धूर्त भेड़िये रूपी सेवक धोखा न दें[7] इस प्रकार मानव व वृक का सम्बन्ध काव्यों में वर्णित किया गया है

कार्य कलाप—भेड़िया एक मांसाहारी जीव है, अतः मांस की खोज में उसका इधर उधर घूमना आवश्यक है मनुष्य मांसाहारी जीवों से डरता है क्योंकि उसे व उसके पालतू पशुओं को इनसे सर्वदा खतरा बना रहता है इसी बात को ध्यान में रखते हुए दण्डी लिखते हैं कि भेड़िये व व्याघ्र के मारने से स्थल-मार्ग भय रहित हो जाता है[8] एक स्थान पर वृक की चालाकी, उदण्डता एवं बदमाशी की बात कही गयी है तो अन्यत्र वही वृक शान्ति का अवतार सा प्रतीत होता है बाण ने लिखा है कि दूध पीते हुए नील गाय के बच्चों को वृक कुछ किये बिना ही बैठे बैठे देख रहे हैं[9]

---

5 किरात 1।34 कादम्बरी पृ 336

6 महारय सत्यधनस्य मानसं दुनोति नो कच्चिदयं वृकोदरः'—किरात 1।34

7 नावलुप्यसे सेवकवृकै कादम्बरी पृ 336

8 'वृक व्याघ्राद्युपहतेः' द च 8। 24

9 निर्विकार वृक ह च पृ 420

सम्पूर्ण काव्यो म वृक का उल्लेख कुल मिलाकर ५ बार ही मिलता है बाण व भारवि ने दो-दो बार एव दण्डी ने एक बार भेडिये का उल्लेख किया है वृक के वर्णन का विश्लेषण प्रस्तुत तालिकाओ मे द्रष्टव्य है

— — —

तालिका—१

'वृक' के वर्णन का कालिदास के काव्यो में विश्लेषण (X)

तालिका—२

'वृक' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यो में विश्लेषण (5)

| कवि | सख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| भारवि | २ | किरात | १।३४ २।१ |
| बाणभट्ट | १ | [illegible] च | पृ ४२० |
| , | १ | कादम्बरी | पृ ३३६ |
| दण्डी | १ | द च | पृ ८।२४ |

# श्वान
# THE DOG

अस्ति क्षुधार्ता इव सारमेया
भुक्त्वापि यान्नैव भवन्ति तृप्ता ॥
—बुद्धचरितम् । २५

संस्कृत साहित्य में श्वान का स्थान गौण रहा है किन्तु इसका वर्णन अत्यन्त प्राचीन है वैदिक-साहित्य में श्वान का उल्लेख अनेक स्थानों पर हुआ है वैदिक साहित्य में श्वान के लिए कुक्कर [1] मावल,[2] श्वान [3] सारमेय [4] शब्दों का प्रयोग होता था वैदिक साहित्य के बाद वीरकाव्य साहित्य में तो श्वान के बारे में अनेक कथायें मिलती हैं वहां इसे श्वान [5] शुनक,[6] व सारमेय[7] शब्दों से कहा है रामायण में कुत्ते के मांस के खाने वालों को चाण्डाल की संज्ञा दी गयी है[8] संस्कृत साहित्य में चाण्डाल को श्वपच भी कहते हैं अमरकोष में कुत्ते को कौलेयक सारमेय कुक्कर मृगदंशक शुनक, भषक श्वा, विट्चर, एवं ग्राम्यसूकर कहा है[9] श्वान मेरु दण्डीय उपजगत् के अन्तर्गत कुत्ता-समूह के कुत्ता परिवार का सदस्य है[10]

कुत्ता मानव का पुराना साथी है यह संसार के सभी भागों में पाया जाता है कुत्ता एक पालतू जीव है कुत्ता परिवार एक बहुत बड़ा परिवार है अतः कुत्ता

---

1 अ० वे० 7/95/2
2 जै० ब्रा० ∠/440
3 ऋक० 1/161/13, 1/182/4 2/39/ अ० वे० 6/37/3, 11/2/2
4 ऋक० 7/55/2 10/14/10
5 श्वानकुक्कुटवकाश्च'—वा० रा० यु० 100/44
6 सूकरा शुनके सह'—वही० उ० 35/30
7 सारमेयस्य वह्निज'—वही० उ० 1/2/20
8 श्वामांसभोजिन '—वही० बा० 62/18
9 कौलेयक सारमेय कुक्करो मृगदंशक
शुनको भषक श्वा स्यात्
विट्चर सूकरोग्राम्य इत्यमर ॥ (शूद्रवर्ग)
10 जीव जगत पृ० 679

के अनेक प्रकार विश्व मे वितरित हैं उन सबका यहा विस्तृत वर्णन करना सभव नही अत उनका नामोल्लेख मात्र करते हैं —

(१) अलसेसियन (२) स्पेनियल (३) डाक्सहुंड (४) पिकनीज (५) डलमेशियन (६) सेटर (७) ब्लडहाउण्ड (८) बुलटेरियर (९) गोलडन रिट्रीवर (१०) ग्रेहाउण्ड

इन सब प्रकार के कुत्तो के गुण रग आकार आदि मे थोडा थोडा अन्तर पाया जाता है कुत्ते का इतिहास प्रागतिहासिक है स्विटजरलण्ड के लोग कुत्ता को शिकार के लिए काम मे लाते थे[11]

कुत्ता घर घर घूमने वाला जीव है इसका कद सियार के बराबर का होता है कुत्ते अनेक रग के होते हैं सफेद चितकबरे, भूरे बादामी, लालछौंह व काले रग के कुत्ते यत्र-तत्र सर्वत्र देखने म आते हैं कुत्ता आरम्भ मे सियार की भाति जगली था, किन्तु बाद म इसे पालतू बना लिया गया

कुत्ता एक बहुत स्वामीभक्त एव बुद्धिमान जीव है कुत्ते की बुद्धिमानी की अनेक कथाए हमारे देश मे प्रचलित हैं कुत्ते का मानव के साथ युग युग का साथ रहा है और इस कारण कुत्ता बडा समझदार हो गया है इसकी समझदारी के कार्यों को देखकर आश्चर्य होता है कुत्ता घर का एक बहुत बडा चौकीदार होता है कारण कि यह कभी गहरी नीद नही सोता और थोडी सी आहट सुनते ही आख खोलकर देख लेता है कि क्या कुछ हो रहा है इसकी आखे बडी तेज ज्योति वाली होती है और घ्राणशक्ति तो बहुत ही तीव्र होती है कुत्ता एक सगीत प्रेमी जीव माना जाता है शाम के समय जब मदिरो मे घटा ध्वनि होती है तब कुत्ता एक स्वर से भौंकता है कतिपय लोग इसे कुत्ते का रोना कहते हैं पर यह रोना न होकर कुत्ते का सगीत प्रेम प्रदर्शन मात्र हैं, ऐसा मनोवैज्ञानिको का मत है पुलिस व फौजी कुत्ते बडे ही चतुर होते हैं ये चोरो को पकडने मे बहुत सफल हुये हैं यदि कुत्ते को समय पर अच्छा भोजन दिया जावे एव इसे स्वच्छ परम्परा म रखा जावे तो यह बडा साफ सुथरा जीव है शिकारी कुत्ते बडे समझदार एव इशारे पर काम करने वाले होते हैं भारत मे भी अब कुत्ते पालने का शौक दिनोदिन बढता जा रहा है कुत्ता मनुष्य के बडे काम का प्राणी है

कुत्ता एक मासहारी जीव है परन्तु मानव के साथ सम्पर्क होने से यह पका खाना भी खाना सीख गया है कुतिया एक बार मे अनेक बच्चे देती है कुत्ता बहुत कामुक होता है

---

11 इन० ब्रि० भाग 7 पृ० 495

## सस्कृत काव्यो मे श्वान

सस्कृत का यो मे कुत्ते को श्वान सारमेय, शुन कौलेयक, एव ग्राम्यमृग नामो से कहा गया है[12] अब हम श्वान की का यात्मक विशेषताओका वणन करेगे।

मानव एव श्वान —जसा कि सवविदित है कि कुत्ते व मानव का युग-युग का साथ रहा है फिर भला यह कवि की लेखनी से किस प्रकार वचित रह सकता था कुत्तो का बाण ने भीलो का साथी बतलाया है[13] यशोमती राजा के प्रिय कुत्तो को भी डबडबाइ निगाह से देख रही थी[14] शिकार के शौकीन नवयुवको के साथ जगली झाडिया मे कुत्तो के भ्रमण का भी उल्लेख प्राप्त होता है[15]

श्वान के क्रिया-कलाप —कुत्ते अच्छे शिकारी होते है ये मगो को नोच डालते हैं[16] शिकार के लिए कुत्तो को मुक्त करने का वणन भी मिलता है[17] कुत्ते लोगो को भी यदा कदा काट लेते हैं[18] एक तरफ कुत्ता जितनी बहादुरी स काम करता है दूसरी ओर यदि उससे भी बलवान मिल जाता है तो कुत्ते की भी बुरी दशा होती है सूअर कुत्ते पर आघात कर उन्हे घायल बनाने मे समथ होते हैं[19] गाव के लोग वीर होते है वे कुत्तो को कुसष्ठक फासो मे बाधकर घसीट रहे हैं[20] कुत्तो के रोने का उल्लेख महाकवि कालिदास ने किया है[21] कुत्तो की आवाज से वन मे गाव की स्थिति का पता चल जाता है क्योकि कुत्ते गावो म

---

12 कुमार 15/41 ह० च० प० 404
कादम्बरी० पृ० 98 ह० च० प० 4 बु० च० 14/13
बु० च० 11/25 कादम्बरी प० 86
कादम्बरी 87।
ह० च० प० 287 409
शिशु० 15/15।

13 'परिचिता श्वान'—कादम्बरी प० 96

14 भूपालवल्लभ कौलेय० ह० च० प० 287

15 ह० च० प० 409

16 'सारमेय विलुप्यमाना —कादम्बरी प० 86

17 विमुच्यन्ता श्वान —वही० प० 85

18 भक्षयन्ते दारुण श्वनि —बु० च० 14/13।

19 कण्ठमहावराह—प्रहारजजर० कादम्बरी पृ० 93

20 ह० च० प० 379

21 श्वान स्वरेन —कुमार० 15/24

ही रहते हैं[22] कुत्तों की आवाज का उल्लेख मिलता है, जिसे घुर घुर की आवाज कहा है[23]

उपमित श्वान —काम निंदा करते हुए अश्वघोष ने कामी लोगो की अतृप्ति की हड्डी चबाकर भी अतृप्त कुत्तो से समता की है अर्थात् कामी लोग भोग करने के बाद भी तृप्त नही होते जिस प्रकार कुत्ते हड्डी चबाकर भी भूखे ही रहते हैं[24] कालिदास द्वारा वर्णित तारक ने देवनाओ की वाणी की तुलना कार्तिक मास मे भौंकने वाले कुत्तो से की है[25] वीर पुरुषो द्वारा घेरी गई नाव की समता सूअरो को कुत्तो द्वारा घेरे जाने से की गई है अर्थात् नाव व सूअर एव वीर पुरुष व कुत्तो के गुणो म साम्य प्रदर्शित किया गया है[26] घर-घर मे केवल जन्म लेने वाले कवियो को कुत्तों के समान बतलाकर महाकवि बाण ने खल निन्दा का नया उदाहरण प्रस्तुत किया है[27] उनका तात्पर्य सभवत यह है कि जिस प्रकार घर घर मे कुत्ते निवास करते हैं, वसे ही हर व्यक्ति अपने आपको कवि मानने लगा है यह कवि की सूक्ष्म दृष्टि की उपज है माघ ने शिशुपाल व ध्यान्त में भगवान् कृष्ण की तुलना कुत्ते से करते हुए कहा है कि जिस प्रकार जलते हुए हविष्य को पाने मे कुत्ता असमर्थ होता है (ताप के कारण), उसी प्रकार राजा लोगो की उपस्थिति मे कृष्ण इस हविष्य के अद्धाश को पाने म सवथा असमथ रहेगा[28] यहा कृष्ण व कुत्ते की एव राजा लोग व अग्नि युक्त हविष्य की समता प्रदर्शित की गयी है इस प्रकार कवियो ने श्वान को अनेकानेक प्रकारो से उपमित कर सस्कृत साहित्य को एक नयी दिशा दी है

सस्कृत काव्यो म श्वान का सबसे अधिक उल्लेख बाण न किया है द्वितीय स्थान कालिदास व अश्वघोष का है बाण ने कुत्ते का वणन १० बार एव कालिदास व अश्व घोष ने २-२ बार किया है, जबकि माघ व दण्डी ने कवल १-१

---

22 कुक्कुटकौलेय करटिता भुभीयमान० कादम्बरी प० 634

23 शुनांच० यथोपरि प० 87

24 कादम्बरी पृ० 634

25 'श्वान प्रमत्ता इव कार्तिके'—कुमार० 15/41

26 तावदतिश्रवा नौका श्वान० द० च० पृ० 404

27 'सन्ति श्वान इवा सख्या जातिभाजो गृहे-गृहे ह० च० प० 4

28 प्राम्यमग—शिशु० 15/15

बार भारवि श्रीहर्ष, सुबन्धु एवं कालिदास के नाटकों में कुत्ते का वर्णन अनुपलब्ध है इस प्रकार कुत्ते का वर्णन कुल मिलाकर केवल १६ बार हुआ है अतः वर्णन के आधार पर संस्कृत में श्वान का गौण स्थान रहा है श्वान के वर्णन का विश्लेषण संलग्न तालिकाओं में दर्शनीय है

## तालिका—१

'श्वान' के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (२)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| २ | कुमार० | १५।२६, ४१ |

## तालिका—२

'श्वान' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (१५)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्वघोष | २ | बु० च० | ११।२५ १४।१४ |
| माघ | १ | शिशु० | १५।१५ |
| सुबन्धु | १ | वासवदत्ता | पृ० २१५ |
| बाणभट्ट | ४ | ह० च० | पृ० ४ २८७ ३७६, ४०६ |
| | ६ | कादम्बरी | पृ० ८५ ८७ ९३,९८ ३२०, ६३४ |
| दण्डी | १ | द० च० | पृ० ४०४ |

# शश
# THE RABBIT

य एव जागर्ति शश शशाङ्क
वृधो विधत्ते व इवात्रचित्रम् ।
—नैषधीयचरितम् २२/६४

सस्कृत साहित्य म शश का स्थान अन्य पशुओ की अपेक्षा गौण है किन्तु शश का उल्लेख सस्कृत साहित्य मे प्राचीन है वदिक-साहित्य म खरगोश को शश [1] कहा गया है ऋग्वेद मे शश का केवल एक बार उल्लेख आया है [2] शतपथ ब्राह्मण म चन्द्र मे शश का उल्लेख है [3] सस्कृत साहित्य म खरगोश को शश [4] एव शशक [5] शब्दो स कहा है वाल्मीकि रामायण मे भी शश शब्द आया है [6]

शश मेरुदण्डीय उपजगत के अन्तगत स्तनप्राणी श्रेणी के द्विदन्त उपवग के खरगोश परिवार का प्राणी है [7] सामान्य भाषा मे खरगोश चौपाया प्राणी है यह १८ स २० इन्च तक लम्ब होत है लम्बाई मे ३ या ४ इन्च लम्बी पूछ भी शामिल है खरगोश की मादा आकार मे नर से बडी होती है खरगोश की पीछे की टागे बडी होती है और इसी कारण वह तज दौडता है खरगोश जाति एक ही है, किन्तु स्थान स्थान के आधार पर इसे कई जातिया मे विभक्त कर दिया है खरगोश एक हितकर एव शाति प्रिय जीव है [8] यद्यपि इसके दान अत्यन्त कठोर होते हैं किन्तु ये बहुत कम काटते हैं, भले ही इनको पीटा जाय [9] शश की पूछ छोटी एव कान बडे होत हैं

---

1 ऋक० 10/28/2 वा० स० 23/56
म० स० 3/14/15
2 ऋक० 10/28/2
3 श० ब्रा० 11/1/5/3
4 अमर कोष०
5 स० ई० डि० आप्टे पृ० 375
6 'मातग शशश्च सहितौ वने'—वा० रा० सु० 22/16
7 जीव जगत प० 650
8 ए० किग पृ० 230
9 यथोपरि०

खरगोश का उत्पत्ति स्थान भूमध्य सागरीय प्रदेश माना जाता है किन्तु मानव के द्वारा यह सम्पूर्ण समशीतोष्ण यूरोप मे फल गया है एव निरन्तर फल रहे है।[10] खरगोश न्यूजीलड, आस्ट्रेलिया, फ्रास, ब्रिटेन, अमरिका ध्रुवप्रदेश व भारत मे अधिक पाया जाता है यह खेतो व झाडियो वाले भागो म रहता है क्योकि वहा इसको घास व पौधा के अतिरिक्त छिपने का स्थान भी मिल जाता है यह खेतो के लिए हानिकारक है

खरगोश के बदन का ऊपरी हिस्सा खर रग का होता है इसका मु ह कल छौंह एव नीचे का भाग धवल होता है इसकी टागो व सीने का कतिपय भाग लालिमा पूर्ण होता है शश का सारा शरीर बालो से ढका होता है इसके मु ह पर मूछे होती हैं

खरगोश का आर्थिक महत्त्व काफी है इसम मुख्यत दो वस्तुए प्राप्त होती हैं प्रथम तो फर एव द्वितीय मास[11] इसकी फर से कपडे एव टोप बनाये जाते हैं हेतु व्यापार के लिए सबसे अधिक फर आस्ट्रेलिया से निर्यात किया जाता है[12] खरगोश से द्वितीय प्राप्त वस्तु है उसका मास खरगोश का मास सफेद रग का रवेदार एव स्वादिष्ट माना गया है[13] इगलण्ड प्रतिवर्ष दस हजार टन खरगोश का आयात करता है[14]

खरगोश बसन्त ऋतु म बच्चे देता है इसका गर्भाधान काल एक माह का होता है मादा खरगोश एक बार म एक या दो बच्चे देती है छ या सात माह मे खरगोश जवान हो जाता है खरगोश का जीवन काल १०, पर १२ वर्ष से अधिक कदापि नही होता कतिपय खरगोश तो ३ या ४ साल मे ही समाप्त हो जाते हैं[15] खरगोश का प्रयोग उसके मास एव वैज्ञानिक परीक्षणो के लिए समय समय पर होता रहता है

## संस्कृत काव्यों मे शश

संस्कृत काव्यो मे शश का वर्णन विरल है काव्यो म इसे शश[16] एव शशक नामो से कहा गया है

10 इन० ब्रि० भाग 16 पृ० 86
11 ए० लिग पृ० 231
12 इन० ब्रि० भाग 16 पृ० 861
13 ए० लिग पृ० 231
14 पूर्वोद्धृत० पृ० 231
15 पूर्वोद्धृत० पृ० 237
16 [illegible]

मानव एवं खरगोश —खरगोश मानव के जीवन से काफी सम्बन्धित रहा है सेना के मध्य मे खरगोश का आना अनिष्ट कारक माना गया है[18] खरगोश के शिकार एव उसके पालन की झलक भी काव्यो मे उपलब्ध है[19]

शश के कार्य कलाप —शश के बच्चो के शिलाओ पर शयन करने का वर्णन महाकवि बाण ने किया है[20] सेना की कलकल ध्वनि को सुनकर खरगोश इधर उधर उचकने लगे अत प्रतीत होता है कि खरगोश बडा डरपोक व चचल पशु है खरगोश द्वारा ईख खाने का भी उल्लेख मिलता है[21]

उपमित शशक —कवियो ने अनेक बार शश के चिन्ह को चन्द्रमा के लाछन के सदृश बताया है[22] नपधकार ने यह अनुमान किया है कि चन्द्रमा के मध्य म वर्तमान धवलोदर शश का मुख ऊपर की तरफ है[23] कादम्बरी मे कनेर से भरी पहाडियो म शशक का स्वच्छन्द भ्रमण वर्णित किया गया है[24]

इस प्रकार सम्पूर्ण काव्यो म शशक का वर्णन केवल १६ बार आया है बाण ने छ बार हर्ष चरित मे एव दो बार कादम्बरी मे, कुल ८ बार शशक का वर्णन किया है नपधकार, माघ व भारवि ने अपने काव्यो मे शशक का वर्णन क्रमश ५, १ व २ बार किया है अत खरगोश का स्थान वर्णन के आधार पर गौण है खरगोश के वर्णन के विश्लेषण के लिए सलग्न तालिकायें देखिये

— — —

17 नपध० 5/120, ह० च० पृ० 377 व 78
18 उपात० शिशु० 5/25
19 बन्धुक्लोहित रुधिरराजिरजित० ह० च० पृ० 416
20 शलेय सुकुमार०— ह० च० पृ० 420
21 शशश्च० ह० च० पृ० 378
22 'शीतमासि शशक परमन ।'—नपध 5/120 'शश शशाके—वही० 22/94 शशांक शकाम्—किरात० 5/42, 'शशधर'—वही० 10/11 शशमिमादय कालिकयांचित—नैषध० 4/73 'शशांक'—वही० 22/115
23 उत्तानमेवास्य बलक्षकुक्षिदेवस्य युक्ति शशमकमाह—नपध० 22/80
24 'कर्णासुतकर्षेव सनिहित विपुलाचला शशोपगता च—कादम्बरी० पृ० 57

## तालिका-१

'शश के वणन का कालिदास के काव्यो मे विश्लेषण (×)

## तालिका-२

'शश के वणन का कालिदासोत्तर काव्यो मे विश्लेषण (१६)

| कवि | सख्या | काव्य | वणन का क्रम |
|---|---|---|---|
| भारवि | २ | किरात० | ५।४२ १०।११ |
| माघ | १ | शिशु० | ५।२५ |
| श्रीहप | ५ | नपघ० | ४।१३७ ५।१२० २२।८० ६४, ११५ |
| बाण | ६ | हृ० च० | पृ० ३७७ ७८, ४१० १५ १६, २० |
| भट्ट | २ | कादम्बरी | पृ० ५७ ६६४ |





# शूकर
# THE PIG

"वराहपतिभिमु स्ताक्षति पल्लवे ।"

—शाकुन्तम् २/६

संस्कृत साहित्य मे शूकर का स्थान गौण है किन्तु इसका वर्णन काफी प्राचीन है वैदिक साहित्य म शूकर को वराह, दुस्वराह एव सूकर शब्दो से कहा गया है[1] संस्कृत-साहित्य मे शूकर के लिए वराह, सूकर घृष्टि कोल, प्रोथिन किरि, दंष्ट्री, घाधिन् स्तब्ध रोमन क्रोड्, भूदार, घृष्टि, शूकर व शूकरगाव शब्दो का प्रयोग देखा गया है[2] वाल्मिकी रामायण मे वराह एव शूकर का उल्लेख आया है[3]

शूकर मेरुण्डीय उपजगत के अन्तगत स्तनप्राणी श्रेणी के शूकर-समूह के सूकर जाति का प्राणी है सामान्य भाषा म सूकर चौपाया जीव है[4]

---

1 ऋक० 1/61/7, अ० वे० 8/7/23, मै० स० 3/14/19
ऋक० 1/114/5
श० ब्रा० 2/1/4/3
ऋक० 7/55/4, अ० वे० 2/27/2 5/14/1
मै० स० 3/14/21, वा० स० 24/40

2 वराह सूकरो घृष्टि कोल प्रोत्री किरि किरि·
दंष्ट्री घोणी स्तब्धरोमा क्रोडोभुदार इत्यपि
—इत्यमर (सिहादिवर्ग)

इ० स० डि० आप्टे पृ० 191 ।
'पडिता एव जानति सिह शूकरयोबलम'–सुभाषित
इ० स० आप्टे पृ० 560
स० इ० डि० आप्टे पृ० 343

3 'वराहाणां च सचयात्'—वा० रा० यु० 60/32
'सुकरा शुनक सह'—वही० उ० 35/30

4 जीवजगत् पृ० 618

सूकर एक गन्दा एव भद्दा सा प्राणी है इसकी खाल मोटी एव बाल बडे होते हैं इसका थूथन भाग से चपटा होता है इसके ऊपर के दांत बाहर की ओर निकले होते हैं इसके पर छोटे एव शरीर गोल होता है यह धरती के अधिक नजदीक होकर खाता पीता एव श्वास लेता है [5]

सूअर मुख्यत निम्नलिखित प्रकारो के होते हैं —

१ बनला सूअर–ये सूअर मैदानो से लेकर ऊँचे पर्वतीय वनो तक के क्षेत्र मे विद्यमान हैं इसके दान्त बडे एव तीक्ष्ण होते हैं ये सूअर आत्म रक्षा म बडे चतुर होते हैं एवं अपने दांतो की टक्कर से विरोधी का पेट चीर देते हैं य भी गाव के सूअरो की भाति कीचड मे लेटना पसद करते हैं ये सूअर शांतिप्रिय होते हैं एव हमला न करते हुए स्वरक्षा म दौड जाते है परन्तु घायल हो जाने पर शेर या हाथी से भी टक्कर ले लेते हैं इनका मास काफी मात्रा म खाया जाता है

२ सूअर (Pig)—पालतू सूअरो के अनेक प्रकार भू मण्डल पर विद्यमान हैं हमारे देश म इनकी विशेष महत्ता नही, कारण कि मुसलमान सूअरो को स्पश नही करते एव हिन्दुओ मे कतिपय लोग इसका मास खाना पसन्द करते हैं इसी कारण भारतीय सूअर शरीर से काफी कमजोर एव ग न्दे होते हैं ये विष्ठा खाना अधिक पसन्द करत है अत विशष घृणा के शिकार हो गय हैं पर विदेशो म इनकी ओर काफी ध्यान दिया जाता है वास्तव म सूअर एक स्वच्छ प्राणी है बशर्ते उसे स्वच्छ वातावरण मे रखा जाये [6]

३ बनल सानो—यह बनला पशु नेपाल म पाया जाता है यह शाकाहारी एव सरल प्रकृति का प्राणी है यह रात को बाहर निकलता है यह समूह म रहने वाला जीव है इसका मास भी खान योग्य होता है यह अन्य सूअरो से अपेक्षाकृत छोटे आकार का होता है

४ गाइना सूअर —यह सूअर दक्षिणी अमरिका की उत्पत्ति है जो बाद म व्यापारियो द्वारा यूरोप ले जाया गया यह आकार म छोटा एव दौडने म तेज होता है इसके कान छोटे एव गोल होत हैं ये पाल जाने पर परमोपयोगी पशु है [7]

सूअर का उत्पत्ति स्थान रहस्यमय रहा है एक चीनी विद्वान के अनुसार

5 इन० ब्रि० भाग 17 पृ० 916

6 यथोपरि० ब० स० भाग 2 पृ० 391

7 ए० क्रिम० पृ० 559

चीन म २६०० बी० ईसा पूव म सूअर का पालन होता था[8] सूअर के अवशेष भारत एव यूराप म प्राप्त हुए हैं किन्तु अमेरिका में नही[9] वसे सूअर विश्व के सभी भागा म पाया जाता है, किन्तु डेनमाक, नीदरलण्ड, आस्ट्रेलिया न्यूजीलैण्ड, अर्जेंटाइना, पोलण्ड, कनाडा, जमनी, इटली व भारत में इसका बाहुल्य है सामान्यत सूअर को पाला जाता है किन्तु वनल सूअर वनो मे, गुफाओ मे या गड्ढा खोदकर रहते हैं पालतू सूअर वनल सूअरो से रग आकार एव अन्य विशेषताओ के आधार पर भिन्नतायें रखता है[10] पूवक सूअर का पालन उसके स्वास्थ्य दुग्धोत्पत्ति एव विकास के साथ-साथ सूअरोत्पत्ति के लिए लाभप्रद है[11] सूअर का प्रमुख खाद्य है—घास की जडें मक्का गहू जौ, राई, जई व चारा इत्यादि इसकी पाचन शक्ति बडी कमजोर होती है अत यह सेल्यूलोज को पचा नहीं सकता[12]

शूकर का रग कत्थई होता है, इसके पट्ठा का रग भूरा रहता है जा वृद्धावस्था मे सलेटी हा जाता है कतिपय शूकरो के शरीर पर कहीं-कही सफेद बालो का गुच्छा भी होता है

सूअर का आर्थिक महत्व भी कम नही है इससे मुख्यत दो वस्तुयें प्राप्त होती हैं, प्रथम तो मास एव द्वितीय बाल इसका मास बहुत खाया जाता है इगलण्ड सबसे अधिक सूअर के मास का आयात करने लगा है शूकर का मास स्वादिष्ट बनाया जाता है एव लोग इसे बडे चाव से खाते हैं सूअर से दूसरी मुख्य वस्तु जो प्राप्त होती है वह है इसके बाल इसके बाल बडे कडे होते हैं एव सामान्यत ब्रुश बनाने के काम आते हैं

सामान्यत सूकर का गर्भाधान काल १६ सप्ताह होता है जबकि गाइना सूअर का गर्भाधान काल दो माह या ८ सप्ताह मात्र होता है[13]

## संस्कृत काव्यो में शूकर

संस्कृत-काव्या म शूकर को वराह एव सूकर व दंष्ट्री नामो से कहा गया है[14]

---

8 इन० ब्रि० भाग 17 पृ० 916

9 यथोपरि०

10 यथोपरि०

11 इन० ब्रि० भाग 17 पृ० 917

12 इन० चेम्बर भाग 10 पृ० 723

13 ए० विग० पृ० 359

14 कादम्बरी पृ० 59, 83, 84 93, कुमार 8/25 ऋतु० 1/17

मानव एवं शूकर—मानव व शूकर का सम्बन्ध काफी पुराना है वास्तव में मानव सदा पशुओं से प्रेम करता रहा है इन्द्रसुन एवं राजा दशरथ द्वारा वनले सूअरों को देखने का उल्लेख किया गया है[15] शबर लोगों का सम्पर्क सूअर से अधिक रहा है शबर युवक द्वारा सूअर के बालों के मध्य विष औषधि की गुच्छी ले जाने का उल्लेख महाकवि बाण ने किया है[16] आश्रम के बालकों के द्वारा सूअर के मुँह से कमल खींचने का वर्णन भी मिलता है[17] किरातार्जुनीयम में एक विशेष प्रकार के सूअर का वर्णन किया गया है जो वास्तव में एक दानव था एवं सूअर का रूप धारण कर अर्जुन के विरुद्ध युद्ध कर रहा था[18] यह वर्णन ठीक उसी प्रकार का है जिस प्रकार रामायण में मारीच (राक्षस) मृग बनकर राम को धोखा देता है एक दानव का पशु बन जाना एवं पुनः राक्षस बन जाना सत्य प्रतीत नहीं होता अतः इसे कवि कल्पित मानना अधिक उचित एवं तार्किक है

कार्य कलाप—संस्कृत-काव्यकारों ने सूअर के कार्य-कलापों का यदा-कदा अपने काव्यों में उल्लेख किया है सबसे प्रथम बात तो यह है कि वराह एक समुदाय में रहने वाला प्राणी है[19] द्वितीय प्रमुख बात सूअर के बारे में कवि गणों ने कही है वह यह है कि सूअर को कीचड़ से प्रेम है

कादम्बरी में शबर सनिकों से कीचड़ सने सूअरों के गमनागमन के मार्ग के बारे में कवि ने कहलवाया है[20] वास्तव में कीचड़ सने सूअर यदि एक स्थान से दूसरे स्थान पर निरन्तर आया जाया करें तो एक कीचड़युक्त मार्ग बन जाता है अतः कवि का वर्णन अनुभव सिद्ध एवं सूक्ष्म निरीक्षण का प्रतिफल ज्ञात होता है यह कीचड़ में गड़े गहरे हल्दी एवं घास के तन्तुओं को बाहर निकाल फेंकते

---

किरात० 12/37

किरात० 13/1

15 मृगमाशु० किरात० 13/1, द्रुतवराह कुलस्यमार्गम'–रघु० 9/59

16 वराहवाल वलित च घनाभिर्नालदमन'० हृ० च० पृ० 414

17 ऋषिकुमारका०–कादम्बरी पृ० 121

18 किरात० 12/37

19 पल्लवोत्तीर्ण वराह यूथान–रघु० 2/17

20 आद्र-पक 'मलिना वराह पद्धति—कादम्बरी० पृ० 84

हैं यह इनकी स्वाभाविक क्रिया है[21] कुत्तो व सूअरो का पुराना साथ रहा है[22] वास्तव म सूअर बडा भयकर जीव है, वह अपने शत्रु को बुरी तरह से मारता है

उपमित सूअर—अन्य पशुओ की भाति शूकर को भी कवियो ने उपमित किया है सूअर वेशधारी दानवो की समता काले बादलो से की गई है[23] भील के ▮ या मे निमृन गध की तुलना सूअर के मास की गध से की गई है[24] सूअर के दातो की तुलना कमल की खाई हुई डठलो से की गई है[25] ऋतुसहार मे एक वणन आया है कि गर्मी से झुलसा हुआ सूअरो का एक झुण्ड अपने लम्बे थूथनों से नागर मोथे से घिरे हुए बिना कीचड वाले गड्ढे को खोदता हुआ ऐसा प्रतीत होता है, मानो धरती म घुसा जा रहा हो[26] इस वणन का अध्ययन करने स ऐसा ज्ञात होता है कि भगवान के वराहावतार की जो कल्पना की गई है वह इस दृश्य को देखकर ही की गई है

इस प्रकार सम्पूण सस्कृत काव्यो मे सूअर का वणन बडा ही महत्वपूण एव का यात्मक है सूअर का सबसे अधिक वणन महाकवि बाण ने किया है उनकी कादम्बरी म ४ बार एव हषचरित मे ३ बार कुल ७ बार सूअर का उल्लेख हुआ ह दूसरा स्थान कालिदास का है जिन्होंने सूअर का ४ बार वणन किया है तृतीय स्थान भारवि का है जिन्होंने सूअर का उल्लेख ३ बार किया है इस प्रकार सस्कृत काव्यो मे सूअर का कुल १४ बार उल्लेख है का यो म सबसे अधिक वराह शब्द का प्रयोग किया गया है सूअर के वर्णन का विश्लेषण सलग्न तालिकाओ म दशनीय है



21 महावराह दष्ट्रा समुत्खात धरणिमण्डला'–कादम्बरी पृ० 59
22 'क्षतहरति हरिद्राद्रवरज्यमानवराह'० वही० पृ० 420
'वराह पतिभिमु स्ताक्षति पल्लवे'–शाकु० 2/6
23 'स तमसमाद ० किरात० 12/53
24 विविध वन वराह०–कादम्बरी पृ० 103
25 दष्ट्रिणो वनवराह० कुमार० 8/35
26 ऋतु० 1/17

## तालिका—१

'शूकर' के वणन का कालिदास के काव्यो म विश्लेषण (5)

| सख्या | काव्य | वणन का क्रम |
|---|---|---|
| २ | रघु | २।१७ ५।५६ |
| १ | कुमार | ८।३५ |
| १ | ऋतु | १।१७ |
| १ | शाकु | २।६ |

## तालिका—२

'शूकर' के वणन का कालिदासोत्तर काव्यो म विश्लेषण (10)

| कवि | सख्या | काव्य | वणन का क्रम |
|---|---|---|---|
| भारवि | ३ | किरात | १२।३७ ५३ १३।१ |
| बाणभट्ट | ३ | ह च | पृ ८३ ८४ ४१४ |
| ,, | ४ | कादम्बरी | पृ ५६ १०३ २१, ४२६ |

# शाखामृग
## THE MONKEY

'मर्कटा इव सर्वेषा मनो नैर्सागक चलम्"
—बुद्धचरितम २६/४१

संस्कृत-साहित्य मे शाखामृग का स्थान गौण रहा है वदिक साहित्य मे वानर का उल्लेख विद्यमान है ऋग्वेद मे कपि शब्द का केवल एक बार उल्लेख मिलता है[1] अथर्व वेद मे भी कपि शब्द का प्रयोग हुआ है[2] कपि शब्द के अतिरिक्त वदिक साहित्य मे शाखामृग के लिए पुरुषमृग पुरुष हरितद्, मयु एव मर्कट शब्दो का उल्लेख मिलता है[3]

रामायण मे वानर का उल्लेख अनेकधा हुआ है वहा कपि,[4] वानर प्लवग, हरि व शाखामृग शब्दो का प्रयोग हुआ है हनुमानजी के लिए प्लवगाधिप एव प्लवगेश्वर शब्दो का प्रयोग मिलता है[5]

रामायण म तो वानरो का उन्नयन विशेष महत्वपूर्ण है राम की सेना का एक भारी भाग वानरो स ही युक्त था वाल्मीकि न वानर सेना का सुन्दर वर्णन

---

1 ऋक० 10/86/65
2 अ वे 3 9, 4, 4 32, 11
3 त स 5, 5, 12, 1 मै स 3 14 16, वा स 24 35
वा स 24 29, मै स 3, 14 8
तै स 5, 5, 12 1, वा स 24 31
तै स 5, 5 11, 1, मै स 3 14 11, वा स 24, 30
4 'कपि कुञ्जर'–वा रा कि 5/34 वही कि 8/37
'हनुमा नाम वानर वा रा कि 3/21 8/34
राक्षसास्तु प्लवगाना'-वा० रा० यु० 24/5
मल नील हनुमन्तम यारच हरियूथपान–वा० रा० वा० 17/34 हरिपाद विनिमग्नो'—वही कि 74/37
शाखामृगाणामधिप-वही० कि० 2/28
5 वा० रा० कि० 22/2 वही० कि० 2/5

प्रस्तुत किया है जिसका हम विस्तारभय से यहाँ उल्लेख नहीं करेंगे अमरकोष में वानर को कपि, प्लवग, शाखा, मृग, वलीमुख, कीश वानर एवं वनौकस नामों से कहा गया है[6]

विश्व के चचलतम पशुओं में से वानर का प्रमुख स्थान रहा है उसकी चचलता का मर्कटस्य सुरापानम्' कहकर बड़ा मज़ाक उड़ाया गया है वानर मेरुदण्डीय उपजगत के अन्तर्गत वानर उपवर्ग के वानर परिवार का जीव है यह बुद्धिमान् है जिसे बुद्धिमत्ता के आधार पर द्वितीय स्थान मिला है[7] वानर के प्रमुख निवास सम्पूर्ण विश्व में फैले हुए हैं ये सभी प्रकार की प्राकृतिक दशाओं में रह सकता है भूगर्भीय प्रमाणों के आधार पर वानर की यूरोप में उपस्थिति सिद्ध हो चुकी है[8] वानरवर्ग एक बहुत बड़ा पशुवर्ग है जिसमें अनेक उपवर्ग एवं परिवार सम्मिलित हैं अतः यहाँ हम वानर के प्रकारों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करेंगे

१ लंगूर—लंगूर भारत में पाया जाने वाला प्रमुख वानर है यह जंगली वानर है यह समुदाय के समुदायों में इधर-उधर भटकता रहता है रामायण में वर्णित राम की सेना इसी लंगूर परिवार की थी बन्दर में यह कद में बड़ा होता है यह ढाई फीट लम्बा होता है इसकी पूंछ ... फीट तक लम्बी होती है इसका रंग राख के रंग या गदला पीला होता है इसका चेहरा, हाथ व पैर काले होते हैं[9] सामान्य वानरों की अपेक्षा यह सीधे स्वभाव का होता है भारत के धार्मिक स्थानों में यह काफी पाया जाता है जहाँ इसे मारा नहीं जाता क्योंकि हमारी परम्परायें ऐसा करने में बाधक होती हैं

राजस्थान के पुष्कर (अजमेर) एवं गलता (जयपुर) में लंगूरों का बाहुल्य है लंगूर का प्रमुख खाद्य फल फूल है किन्तु यह अण्डा कीड़े-मकोड़े व पत्ते खाना भी पसन्द है आन्त एक बार में एक बच्चा देती है

२ बंदर—यह वानर भारत के उत्तर में अधिक पाया जाता है दक्षिण भारत में इसका अभाव है लंगूर की भाँति इसकी पूंछ लम्बी न होकर छोटी होती है इसका रंग भूरा एवं कुछ लालिमायुक्त होता है इसके बालों में सुनहरा ...

---

6 कपिप्लवङ्गप्लवगशाखामृगवलीमुखा
मर्कटो वानरः कीशो वनौकाः ॥ अमरकोष (सिंहादिवर्ग)

7 इन० ब्रि० भाग 11 पृ० 754 ए०

8 इन० ऐन्सा० भाग 9 पृ० 496

होती है इनके चेहरे की ललाई उम्र के साथ-साथ बढती जाती है ये वानर बडे उत्पाती और बदमाश होते हैं ये खेतो एवं बागो को बडा नुकसान पहुचाते हैं घरो म से ये कपडे, साबुन, खान की सामग्री को तुरन्त नजर बचाकर ले भागते हैं ये शहरो एवं बस्ती के आसपास रहते हैं अवसर पाकर ये काट खाते हैं एव कभी कभी छोटे बच्चो को उठा ले जाते है यह रोटी मिठाई फल पका खाना खाते हैं मादा एक बार मे एक बच्चा देती है बच्चा मादा के पेट से चिपका रहता है

३ नील वानर—भारत के दक्षिण म यह वानर पाया जाता है यह लम्बाई मे दो-ढाई फीट होता है इसकी दुम १० इच से लेकर एक फीट तक लम्बी होती है इसका चेहरा बडा डरावना होता है क्योकि इसके चेहरे के चारो ओर बाबर शेर की तरह बाल होते हैं इसका रग काला होता है पर कही कहीं सफेद बालो की धारियाँ भी होती है यह पद्रह या बीस के झुण्ड म इधर-उधर घूमते हैं यद्यपि नील वानर देखने म बडा भयकर लगता है, पर मनुष्य की आहट पर यह आक्रमण की अपेक्षा दौडना अधिक पसद करता है[10]

जसा कि हम पहले कह आये हैं कि वानर परिवार एक बहुत बडा परिवार है जिसका वर्णन यहा काव्यात्मक दृष्टि से महत्वपूर्ण नही, किन्तु फिर भी वानर का वर्णन करते समय उनका नामोल्लेख आवश्यक है अत विश्व के वानर प्रकारो म से कतिपय का उल्लेख करते है व हैं—

१ अलक वनमानुष २-तवांगु ३-लजीला वानर ४-वेबून ५-गिरि किन ६-मुकारी ७-गिलहरी वानर ८-गोल पुच्छ वानर ९-हिपण्डर वानर १०-गुरिल्ला वानर ११-चिपाजी वानर १२-ओरगोटैंग वानर

वानर के वर्गीकरण पर विचार करने के बाद हम वानर की सामान्य विशेषताओ पर विचार करते हैं वानर की सबसे बडी विशेषता यह है कि उनके पूछ होती है केवल जिब्राल्टर वनमानुष के पूछ नही पाई जाती वानर वर्ग के अधिकाश जीवों का शरीर बालो स ढका रहता है इनके हाथो व परो म पाच-पाच अगुलियां होती है अगूठा परिमाण म छोटा होता है अगुलियो के छोर पर नाखून होते है वानरो के मुख म दात, कुतक, कुकुरदत एव दूध की डाढें और डाढें होती हैं[11] इनकी खोपडी गोल होती है मनुष्य की भाति इनके दो आँखें, दो कान व एक नाक होती है यह अपनी टागो पर सीधे खडे हो सकते है किन्तु

---

10 जीव जगत् पृ० 724

11 जीव जगत् पृ० 717

यह [illegible] भागता है  वानर का पालन बड़ा कठिन काम है  [illegible] के अतिरिक्त पशुसंसार में मनोरंजनात्मक भाग वानरों का पालन करते हैं  वानर का मस्तिष्क बड़ा विकसित होता है  इसमें सीखने की शक्ति तीव्र होती है  वानर को पकड़ने के लिए पिंजरों को प्रयोग में लाया जाता है

पहले तो वानर बड़ा उपद्रव मचाता है किन्तु बाद में सीखने लगता है  मदारी के पास रहने वाले वानर बड़े चतुर एवं समझदार होते हैं  सामान्यतः वानर उत्पाती जीव है जिसका उत्तम उदाहरण हितोपदेश व पंचतन्त्र की कथाओं में 'कीलोत्पाटी वानर' कहकर दिया है

वानर का मांस कई देशों में बड़े चाव से खाया जाता है  वानर मानव के मनोरञ्जन का अच्छा साधन बन गया है

## संस्कृत काव्यों में शाखामृग

संस्कृत काव्यों में शाखामृग का स्थान मध्यम रहा है  काव्यों में वानर के लिए कपि, मर्कट, वानर, वनमानुष एवं गोलाङ्गूल नामों का प्रयोग हुआ है

वानर व मानव—वानर व मानव का सदा का साथ रहा है  अर्जुन के रथ की ध्वजा पर वानर का निशान था  अतः उसे कपिध्वज की संज्ञा दी गई है[13]  वृषभध्वज एवं कपिध्वज के भार को सहने में असमर्थ होकर इन्द्रकील पर्वत विचलित होने लगा ऐसा उल्लेख भारवि ने किया है  मर्कट नामक एक राक्षस का भी उल्लेख है[14]

क्रिया कलाप—वानर के क्रिया कलापों का उल्लेख विभिन्न प्रकार से किया गया है  वानरों के समुदाय की गुफा द्वार पर उपस्थिति बताई गई है  गर्मी में वानर गुफाओं में प्रवेश पाते हैं[15]  ऐसा वर्णन कालिदास ने किया है  रघुवंश में

---

12 कादम्बरी पृ० 280 273 142, 1‹7 हृ च पृ 161 420 138, [illegible]
किरात० 18/12 10/3 ऋतु० 1/23
बु० च० 21/17 वही 26/41
कादम्बरी पृ 59 व 387
कादम्बरी पृ 370
हृ च प 41 4211

13 मुखमिवानुबभूव कपिध्वज –किरात 18/3
कपिध्वज' वही 18/12

14 किरात 8/10, राक्षसो मर्कटो नाम–बु च 2/17

15 वनमानुषमिथुनाध्यासित तटगुहा मुखेन'–कादम्बरी पृ 370 कपिकुलमुपयाति ऋतु 1/23

वानरों द्वारा पेड़ों से मार मारकर राक्षसों की मोहग्रस्तता के सौन्दर्य का वर्णन मिलता है[16] उस समय वानर ताड़ी के वृक्षों को हिलाते हैं एवं इधर से उधर पान करने के लिए वे कूदते रहते हैं[17] वानर अपने उद्यम से लोगों को व्याकुल कर देते हैं एक स्थान पर लाल नेत्रों के डर मारे से कुपित हुए वानरों के द्वारा उनके पंखों को नोचने का उल्लेख मिलता है जिससे वानरों के क्रोध की पराकाष्ठा की एक झलक हमारे सामने आती है[19] सन्ध्याकाल में वानरों के चञ्चलता त्याग का उल्लेख मिलता है[20] अन्य स्थान पर आश्रम के वानरों का चञ्चलता-रहित होकर मुनि कुमारों को फल देने का उल्लेख मिलता है[21]

संस्कृत काव्यों में उपमित वानर—साहित्य में सादृश्य मूलक अलंकारों का सदा बाहुल्य रहा है इसी कारण सर्वत्र इनकी सत्ता विद्यमान रहती है वानर को कवियों ने अनेक प्रकार से उपमित किया है अनार वृक्षों पर वानरों को बैठे हुए देखकर उनके लाल गालों के कारण फूलों का भ्रम होता था[22] यहां गालों की लालिमा को फूलों की लालिमा से समता प्रदर्शित की गई है व्यापारी सोना तोलने के लिए जिस प्रकार चिरमिट्टी उठाते हैं उसी प्रकार वानर वृक्षों के मध्य चिरमिट्टी उठाते हैं[23] सोना तोलने की चिरमिट्टी व वृक्षों से प्राप्त चिरमिट्टी दोनों ही छोटी वस्तुयें हैं एवं इनके उठाने का तरीका एकसा होता है अतः उपमा सार्थक एवं सुन्दर है बन्दरों के द्वारा तोड़े गये वृक्षों वाली विन्ध्याटवी को बन्दरों द्वारा तोड़ी गई अटारियों वाली रावण की नगरी लंका के सदृश बताया गया है[24] यहां भग्नवृक्ष व अटारियों वाली रावण की नगरी लंका से सादृश्य

---

16 रघु॰ 12/73

17 प्रक्रीडितकपिकुलकरतल कादम्बरी प 384
केपिकुल-कम्पित मु वही पृ 56
'लकुचलम्पट गोलांगुल'—ह च पृ 421

18 कपिगिराकुलीकृतेन' कादम्बरी प 273

19 'दशन कुपित —ह च पृ 420

20 ह च प 138

21 इहमिह कपिकुलमपगत चापलमुपनयति

22 कादम्बरी प 142
समारूढ कपिकुलकपोल ह च पृ 161
प्रमाणामि मुखरिव वानर

23 कादम्बरी पृ उ 389

24 क्वचिदशमुखनगरीव॰ यथोपरि पृ 59

बनाया गया है यहा शालवृन्त व अटारियों का समान माना है एव लका व विन्ध्यावटी को एक सा बतलाया गया है राजकुल वानरों से परिपूर्ण था, जिस प्रकार रामायण हनुमान सुग्रीव व बालि आदि वानरों से युक्त थी[25] यहा राजकुल रामायण दोनों में साम्य प्रदर्शित किया गया है कुमुद नामक वानर सेनापति की सेना द्वारा समुद्र पार करने की तुलना प्रकम्पन नामक क्षत्रि की कुमुद के समान उज्जवल कीर्ति के सेतु नामक प्रद्युम्नकाव्य के द्वारा समुद्र पार करने से की गई है[26] इसी प्रकार एक अश्वरोही के रोगटे की तुलना लगूर के मुह पर स्थित काले रोगटों से की गई है[27] अश्वरोही के रोगटे काले व खडे थे उसी प्रकार लगूर के मुख पर भी रोगटें खडे होते है एव काले भी अत साम्य उचित ही है मन की चचलता को वानर की चचलता से उपमित किया गया है[28] चचल वानर व मन दोनों को वश में करना कठिन काय है अत उपमा तार्किक है सत्य है इस प्रकार वानर को कवियो ने उपमित किया है

वानर के मन में नारियल की इच्छा होती किन्तु जाबालि आश्रम वासियों के मन में ऐसा नही होता[29] तात्पर्य यह है कि आश्रमवासी इच्छाओं से परे होते हैं आश्रम में केवल वानर ही ऐसे होते हैं, जो नारियल की इच्छा करते हैं

संस्कृत-काव्यों में वानर का सबसे अधिक वणन बाण ने किया है उन्होने कादम्बरी में ८ बार एव हर्षचरित में ७ बार कुल १५ बार वानर का उल्लेख किया है कालिदास व अश्वघोष ने वानर का दो दो बार वणन किया है द्वितीय स्थान भारवि का है जिन्होने वानर का तीन बार वर्णन किया है जबकि श्रीहर्ष ने केवल एक एक बार पद्यकारों में माघ एव गद्यकारों में सुबन्धु एव दण्डी वानर के बारे में पूर्णत मूक है इस प्रकार संस्कृत काव्यों में वानर का उल्लेख कुल मिलाकर केवल ३३ बार ही पाया है अत वानर का उल्लेख काव्यों में मध्यम रहा है सलग्न तालिकाओं में वानर के वर्णन का विवरण दिया गया है

— — —

25 'रामायणमिव कपि क्यालमाकुलम्' कादम्बरी प 280
26 'सागरस्य परम्पार कपिसेनेव सेतुना' ह च प 80
27 'गोलांगूल कपोल' ह च प 41
28 'मदन्न इव सर्वेषां मनो मर्कटि चलम्—बु च 26/41

## तालिका—१

'शाखामृग' के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (3)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| १ | रघु | १२।७३ |
| १ | ऋतु० | १।२३ |
| १ | मालविका | ४।गद्य |

## तालिका—२

'शाखामृग' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (21)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्वघोष | २ | बु च | २।१७ ६४।४१ |
| भारवि | ३ | किरात | ८।१० १८।२, १२ |
| श्रीहर्ष | १ | नैषध | २१।८० |
| बाणभट्ट | ७ | ह च | पृ ८, ४१, ६८ १३८ ४२ ६१, ४२० |
| " | ८ | कादम्बरी | पृ ५६ ५६ १२७ २०३, ८०, ३७० ८४ ८६ |

— — —

# पक्षी–जगत
# ( Bird–Kingdom )

# मयूर
# THE PEACOCK

'केकोत्कण्ठाभवनशिखिनो नित्यभास्वत्कलापा ।'

—मेघदूत उ० ३

सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य में मयूर का स्थान प्रमुख रहा है वैदिक साहित्य से लेकर आधुनिक संस्कृत-साहित्य तक में मयूर के वर्णन की अविरलधारा प्रवाहित होती रही है वैदिक-साहित्य में मोर के लिये मयूर शब्द का प्रयोग हुआ है[1] वीर-काव्य-साहित्य में मोर के लिये मयूर, शिखी, बर्हिण शब्दों का प्रयोग मिलता है[2] अमरकोष में मोर के लिये मयूर बर्हिण बर्ही, नीलकण्ठ, भुजगभुक, शिखावल, शिखी, केकी व मेघनादानुपाली का उल्लेख मिलता है[3]

*वनानिकी की दृष्टि से मोर मेरुदण्डीय उपजगत् के अन्तर्गत पक्षि-श्रेणी के* मयूरवर्ग के मोर-परिवार का सदस्य है

मोर विश्व के अनेक भागों में पाया जाता है, जिनमें भारत, लंका, बर्मा, मलेशिया, जावा, इण्डोचीन जापान एवं सिन्ध प्रमुख हैं भारत में मयूर सभी भागों में विद्यमान है राजस्थान राज्य में मयूर काफी पाये जाते हैं राजस्थान के अतिरिक्त आसाम व हिमालय की तराई में मयूर का बाहुल्य देखा गया है[5] मयूर एक मनोहर पक्षी है भारतीय सरकार ने इसे 'राष्ट्रीय पक्षी' का सम्मान

---

1 ऋक० 3/45/1, मै० सं० 3/14/4 वाजसनेयी संहिता० 24/23/27 अथर्ववेद० 7/56/7

2 मयूर समदा नन्दति ।—वाल्मीकि रामायण कि० 28/28 'प्रियाविहीना शिखिन प्लवगमा '—वही० 28/27 'प्रवृत्तनतोत्सव बर्हिणानि ।

—वही० 28/21

3 मयूरो बर्हिणो बर्ही नीलकण्ठो भुजगभुक शिखावल शिखी केकी मेघनादानुलास्यपि

—इत्यमर (सिंहादिवर्ग)

4 जीवजगत् पृ० 384

5 पायनियर हैण्ड बुक आफ इण्डियन बर्ड्स 408, इन० ब्रिटे० भाग 17 पृ० 417, इन० चेवस० भा० 1० पृ० 498, बडबुक० भाग 14 पृ० 186

दिया है मोर की दो जातियाँ प्रमुख हैं—१ भारतीय मयूर और २ बर्मा मल या प्रान्त म रहने वाला मोर

मयूर एक बडा ही मनोहर पक्षी है इसी कारण भारतीय सरकार ने इसे राष्ट्रीयपक्षी का सम्मान दिया है

मोर की लम्बाई ४० इन्च से ४६ इन्च तक होती है इसकी पूछ ३८ से ४४ इन्च तक होती है[6] इसकी कलगी नीले रग की होती है इसकी गर्दन बडी मुलायम एव लम्बी होती है जब मोर अपनी पूछ को फनाकर नृत्य करता है तो बडा अभिराम लगता है मोर की दुम भूरी होती है दुम के सिर पर चमकदार चमकदार चिह्न होते हैं जिसम मयूर की सुन्दरता का राज छिपा है मादा की पूछ छोटी होती है एव भूरे रङ्ग की ही होती है दोनो की चाच हरदौंह, सिनटी ऊपर पर भूरे काले होते हैं मोर का वजन ६ से साढे ग्यारह पौण्ड व मादा का वजन ६ से ६ पौण्ड तक होता है[7] जापानी पालतू मोर सफेद रङ्ग के भी होते हैं मोर आबादी वाले भागो मे, बागो व खेतो म स्वतन्त्रतापूर्वक घूमते देखे जा सकते हैं यह छोटी नदी व झरना वाले स्थाना के साथ-साथ पहाडी भागा म रहना पसद करता है

मोर के प्रमुख खाद्य पदार्थ हैं—रसीली घास, अनाज बीज, मेढक, कीडे मकोडे छोटे सरीसृप व छोटे स्तनप्राणी अत मोर को सर्वभक्षी कहा जाय तो अतिशयोक्ति नही[8]

मोर का पालन बडा पुराना है इसके पालतू बनने के बाद इसकी कई किस्मो का विकास हो गया है मोर की बोली बडी मीठी मानी जाती है पर वैज्ञानिको ने इसे दो प्रकार की बताया है प्रथम तो ऊची तथा कर्कश एव द्वितीय छोटी ध्वनि विभिन्न विद्वानो ने मोर की आवाज को मेह आओ (वर्षा आई) का ध्यान, का आन, कोक-कोक कोक-काक कोक कहा है[9] मोर की ध्वनि को संस्कृत भाषा म केका कहते हैं

मोर का घोसला जमीन म झाडियो पर ही होता है यदा कदा बडे वृक्षो के छेदो म खाली मकानो म एव दूसरे पक्षी के खाली घोसलो म भी मोर की उपस्थिति देखी गयी है[10] मादा एक बार मे ३ से १० तक अण्डे देती है जो भूरे

6 पा० हैण्ड पृ० 407

7 वही० पृ० 408

8 इन० वड० भाग० 14 पृ० 186

9 का० के पक्षी० 14/15

10 [illegible]

एव बानामी रग व होते हैं मोर का गर्भाधान जून व अगस्त के मध्य वर्षा के आगमन पर निर्भर करता है किन्तु इस विषय मे विद्वान एव वनानिक एक मत नही[11] मोर एक से अधिक पत्नियो का पुजारी है यह इसके राजत्व का प्रतीक है

मोर से हम दो वस्तुए प्राप्त होती हैं एक तो इसके पख व दूसरा मास इसके पख से अनेक दवाइयो का निर्माण होता है लोग मोर का मास भी खाते हैं कहते हैं राजा अशोक को मोर का मास बहुत प्रिय था उन्होने पक्षियो में केवल मोर का मारना मना कर रखा था पर मोर के बारे मे उनको काफी सोचना पडा था कि क्या मोर का मारना अपराध है या नही मोरो के आधिक्य से ही मौर्य साम्राज्य का नामकरण पडा भारत मे धार्मिकता मोर का मारने की सहमति नही देता साथ ही राष्ट्रीय-पक्षी होने के नाते भारतीय सरकार ने मोर का मारना कानूनी अपराध भी घोषित कर दिया है

मयूर व मानव —मयूर एव मानव का सामीप्य सबन्ध रहा है भगवान् शकर के पुत्र स्कन्द की सवारी के रूप म मयूर का उल्लेख कवियो ने यत्र-तत्र किया है[12] यक्ष मेघ से कहता है कि जब वह देवगिरि पर्वत पर पहुचेगा तो उसकी गरज को सुनकर भगवान् कार्तिकेय का मोर नाच उठेगा जिसके गिरे हुए पखो से चमकीली रश्मियाँ निकल रही होगी[13] वायु कार्तिकेय के मोर की शिखा का चुम्बन करती थी, एव कार्तिकेय हुए पख से चौडी पीठ पर चढ़ हुये चचल रत्नवर्ण पताकायुक्त एव भ्रम का उठाकर रखने से भगवते कार्तिकेय की प्रतिमा का मूर्तिकागृह मे निर्माण कर रही थी'—इस प्रकार के महाकवि बाण कृत वर्णन मोर का स्कन्द का वाहन होना सिद्ध करते हैं[14]

भगवान् शकर का नीलकण्ठ कहा गया है[15] पौराणिक कथाओ म ऐसा वर्णन मिलता है कि जब समुद्रमथन कर चौदह रत्न निकाले गये उस समय विष

---

11 Game Birds of Indian Empire P 3 P 76।
जीवजगत पृ० 388

12 'मयूरपृष्ठाश्रयिणा' रघु० 6/4 भजते खलु षण्मुख शिखी।' नयध० 2/33
स्कन्दमिव शिखिपृष्ठारम्भचचलम्। —कादम्बरी० पृ० 282

13 'धौतापाग हरशशिरुचा पावकेस्त मयूर। 'ज्योतिर्लेखा वलयि गलित यस्य बह भवानी। मेघ० 2/48

14 'षण्मुख शिखण्डि शिखा चुम्बिभि। कादम्बरी। विकच पक्षपुट विकटशिखण्डि पृष्ठमण्डनाधिरूढम आलोल-लोहित पाटप्रटित पताकाम। वही० पृ० 229

15 'नीलकण्ठ' कुमार० 12/26

का पान शंकर ने किया था एवं उसे गले में ही रोक लिया था अतः भगवान् शंकर का गला नीला हो गया इसी कारण उन्हें नीलकण्ठ कहा है इसी प्रकार कृष्ण को मोर मुकटधारी' कहा है[16] कालिदास ने मणिकण्ठक नामक मोर विशेष का नामोल्लेख किया है[17] इसी प्रकार मयूरिका (एक लड़की का नाम) व मायूरी (संगीत विशेष) का मोर से सम्बन्ध प्रतीत होता है[18] मयूरिका को संगीतकारों को बुलाने को कहा गया है तो मायूरी का संगी विशेष अतः इनका मोर की ध्वनि से सम्बन्ध है

मानव ने जब जब अपने को प्रसन्न या दुःखी पाया है, तब तब उसने पशु-पक्षियों का सहारा लिया है पूर्वमेघ में यक्ष मेघ को संदेश देता है कि प्रसन्नता के आंसुओं से पूर्ण आंखों वाले मोर उसका (मेघ का) स्वागत करेंगे[19] महाराजा दशरथ द्वारा मोर पर बाण न चलाना, महारानी का मरते समय मोर की चिन्ता करना, वासवदत्ता द्वारा मोर को बचाने की बात कहना किरातों द्वारा मोरपंख को शरीर व कपोल पर धारण करना अग्निवर्ण का मनवाले मोरों से पूर्ण क्रीडा-पर्वतों में विहार करना, बालकों द्वारा सबको को मोर बनाकर खेलना ये सब बातें पक्षियों के प्रति मानवीय प्रेम व रुचि के अनुपम उदाहरण हैं[20] इसी प्रकार कादम्बरी द्वारा मोरों के धारागृह में ले जाने की बात करना एवं सुलक्ष्य द्वारा राजा सुषेण के उद्यान में मयूरों की उपस्थिति का वर्णन करना पक्षियों के प्रति मानव की रुचि के प्रमाण हैं[21] अतः मोर मानव के मनोरंजन में सहायक रहा है सुख में प्रसन्न

---

16 'बर्हेणेव स्फुरितरुचिना गोपवेषस्य विष्णोः, —मेघ० 1/15

17 मणिकण्ठके शिखिमम् । —विक्रम० 5/23

18 मयूरिके ! कादम्बरी पृ० 533
मायूरी मदयति मार्जना मनांसि । मालविका० 1/21

19 'शुक्लापाङ्गैः सजलनयनैः स्वागतीकृत्य केकाः ।' मेघ० 1/24

20 मयूरं न ॥ रुचिरकलापं बाणलक्ष्यीचकार । रघु० 9/67 मात मागलग्न कस्य समर्पयामि गृहमयूरकम । —हृ० च० पृ० 284 विलासवति ! विलासय मयूरकिशोरकम् —वासवदत्ता पृ० 206 मयूरपत्रोज्ज्वलगात्रलेखा ।' सौ० न० 10/12 'रुच शिखिशिखच्छलाञ्छितकपोलभित्तिना । किरात० 12/41 प्रावृषि प्रमद बर्हिणेष्वभूत्कृत्रिमाद्रिषु विहारविभ्रम ।' रघु० 19/37 क्रीडारसेन नर्तयन्तौ मयूरता नयन्ति वालिशा —हृ० च० पृ० 234

21 'कदलिके ! नय धारागृहं गृहमयूरान ! कादम्बरी पृ० 533
कलापिनां प्रावृषि पश्य नृत्यम । रघु० 6/51

करने वाले पक्षी ही दु ख म दु खी करते हैं तभी तो उत्तरमे म यक्ष प्रिया वियोग मे मोर के पखो म अपनी प्रियतमा के बालो की छवि देखकर दु ख प्रकट करता है [22] विक्रमोर्वशीय म दु खी राजा मयूरो से अपनी प्रिया के बारे मे पूछता है [23] चन्द्रापीड को कामपीडित कादम्बरी की दशा देखकर मोरो का मधुरालाप भी कालदूतो के प्रलाप के समान लगता है [24] कादम्बरी द्वारा गृह मयूरो के मुखो म ताम्बूल देना भी इसी बात को प्रकट करता है कि वह मयूर की केका सुनकर व्याकुलता को प्राप्त होती है, अत ताम्बूल देकर केका को रोकना चाहती है [25] परिस्थितियो के अनुसार जीवधारियो की क्रियाओ म परिवर्तन आना एक स्वाभाविक क्रिया है तभी तो शकुन्तला की विदाई वेला म एव सीता का रोना सुनकर मोरो के द्वारा नत्य क्रिया को छोडने की बात कही गई है [26] महाराजा हर्ष की सेना के प्रयाण के समय डर जाने से मन्द मन्द कदम पहने हुय बालिकाओ के ताल देकर मनाने पर भी मन्दिर मयूरो ने नाचना छोड दिया [27] ये बातें इस बात को प्रकट करती है कि पक्षी भी समयनुसार सुखी एव दु खी होते हैं

अन्य पक्षियो की भाति मोर को भी मानव ने खिलौनो व चित्रो के रूप मे प्रस्तुत किया है अभिज्ञानशाकुन्तलम् म साध्वी द्वारा मिट्टी के बने मोर के लाने एव भरत द्वारा उसी मोर को देखकर प्रसन्न होने की बात कही है [28] कादम्बरी म मरकतमणि से बने स्तम्भो म लगे मयूरो का उल्लेख मिलता है तो सौन्दरनन्द मे लकडी से बने मयूर का [29] इस प्रकार मोर को मानव ने मनोरजन का सहायक बनाकर प्राचीन संस्कृत साहित्य में कला का प्रदर्शन किया है

क्रिया-कलाप —हर पक्षी की अपनी अपनी स्वाभाविक क्रियाए लोक म

---

22 'शिखिना बहुभारेषु केशान् ।'—मेघ० 1/46

23 'बर्हिण! त्वामित्यभ्यर्थये आचक्ष्व मे तद्० विक्रम० 4/20-21

24 उन्मुक्तमदकलकेकाकोलाहल काननेषु कलापिभि ।'-कादम्बरी० उ० पृ० 116' कलापिकेका कालदूतालाप । वही० पृ० 2

25 ताम्बूलवीटिकाशकलमुत्कोचमिव दत्त खण्डित शिखण्डिने ददती
—कादम्बरी पृ० 656

26 परित्यक्तनतना मयूरा ।—शाकु० 4/11 नत्य मयूरा —रघु० 14/69

27 चलवलयावलीवाचाल बालिका० ।'—ह० च० पृ० 337

28 (प्रविश्य मृण्मयूरहस्ता) मात ! रोचते मे एष भद्र मयूर । शाकु० 7 गद्य

29 मरकत मणि मयूर —कादम्बरी० उ० पृ० 31 'मणिस्तम्भमयूरानालम्ब्से वही० पृ० 534 'सरत्नकाष्ठश्च विनीलकण्ठ । सौ० न 7/11

दर्शाई गई है। मोर की दो क्रियायें प्रमुख हैं प्रथम तो उनका नाचना तथा द्वितीय उनका बोलना। इन दोनों क्रियाओं के बारे में सभी काव्यकारों ने अपनी पसन्द दर्शाई है।

वर्षाकाल में बादलों की गड़गड़ाहट को सुनकर मोर मदमत्त हो जाते हैं और उस काल में नृत्य करने लग जाते हैं। मेघ की गम्भीर ध्वनि को सुनकर 'मोर उन्मत्त होकर नाचने लगे। गंगा की धूल से मेघों का भ्रम कर मोर मस्ती में नाचने लगे। शंख व मंगल बाजों को सुनकर मोर उसे बादल का गर्जना समझकर नाच उठते हैं।' रथ की आवाज को बादलों की आवाज समझकर मोर कूकने लगे। मोर अपने मृदंग ध्वनि पर नाचता है एवं हाथियों के गरजने को मेघ का गर्जन समझकर मोर नाचने लगे —इस प्रकार के वाक्य हमारे सम्मुख दो बातें प्रस्तुत करते हैं प्रथम तो यह कि मोर वर्षाकाल में अधिक नृत्य करते हैं और द्वितीय यह कि वे किसी भी प्रकार की गड़गड़ाहट पूर्ण ध्वनि को मेघों की गड़गड़ाहट समझकर नाच उठते हैं जो सम्भवतः उनकी नासमझी का परिणाम है।[30] प्रातःकाल में मोरों के नृत्य करने की बात कादम्बरी में कही गई है।[31] वहीं मयूरों के नृत्य करने की नृत्यशालाओं का उल्लेख किया गया है।[32] महाराज नल के स्वागत में मोर के नृत्य का भी वर्णन मिलता है।[33] बाणभट्ट ने प्रातःकाल में मोरों के नाचने और नाच के समय पंखों को गिराने की बात कही है।[34] इसी बात की पुष्टि महाकवि माघ ने मोरों के पंख हंसों से ईर्ष्या कर झड़ गये हैं इस साहित्यिक ढंग से की है। ये ऐसी बातें महाकवि की सूक्ष्म अवलोकन शक्ति की प्रतीक हैं, शरदऋतु में मोरों द्वारा नृत्य त्याग की बात कालिदास ने कही है।[35]

---

30 जलदपङ्क्तिरनत्यमुन्मद कलविलापि कलापिकदम्बकम् ।'—शिशु० 6/31 सानन्दमनर्ति केकिभि ।—कुमार० 14/35 'पुरोपकण्ठो पवनाश्रयाणां कलापिनामुद्धतनृत्यहेतौ —रघु० 6/9 'षड्ज संवादिनी केकाद्विधाभिन्ना शिखण्डिभि । —वही० 1/39, नृत्यतेस्म परेकिना मुरजनिस्वनघन । नैषध० 18/27, धारियरधीरवारणध्वनि दृष्टकूजितकला कलापिन ।—शिशु० 1?/? 'समद शिखिरुतानि —किरात० 10/25 ।

31 नर्तितशिखण्डि मण्डले ।—कादम्बरी० पृ० 81

32 शिखण्डिताण्डव सगीतगृहे ।—वही० पृ० 575

33 'शिखिलास्य लाघवात् ।'—नैषध० 1/102

34 'शिखण्डिनां नत्य पक्षपात । कादम्बरी पृ० 127

35 नृत्य प्रयोग रहिताशिखिन ।'—ऋतु० 3/13

मोरो की नत्यकला के उप० मयूर की वाली पर विचार करते हैं मोरा का बोलना भी वर्षाकाल में विशेष रूप से सुना गया है मेघ को देखकर तपोवन के मोरा के बोलने का वर्णन मिलता है प्रचण्ड पवन से छिन्नगामी हुई कलगीवाले एव बादलों को देखकर कें कें की ध्वनि करने वाले मोर का सुन्दर वर्णन कालिदास ने किया है[36] अलका, वविजवस्तु एव उज्जयिनी में मोरो के बोलने का वर्णन कवियों ने किया है[37] मयूर एक समुदाय में रहने वाला प्राणी है[38] वह समुदाय में रहकर वन, पर्वत व नदी के कछारों भागों में ध्वनि करता पाया गया है[39] गृह मयूरों की ध्वनि का भी उल्लेख मिलता है[40] मयूरों द्वारा वर्षा ऋतु में मन्कन करने एव प्रातःकाल में बोलने का वर्णन मिलता है[41] शरद् ऋतु में मोरों की ध्वनि कर्कश लगने लगती हैं क्योंकि इन दिनो वे मस्त नहीं होते[42] वास्तव में वर्षाकाल में मोरो का आलाप आनन्ददायी होता है शरद् में नहीं

मोर के नाचने व बोलने के अतिरिक्त उसकी अन्य क्रियाओ का वर्णन भी काव्यकारों ने यदा-कदा किया है प्रभातकाल में मोरो के उठने व सन्ध्याकाल में उनके बसेरो की ओर जाने के वर्णन मिलते हैं[43] मोरो द्वारा अपनी निवास यष्टियों स्वर्ण यष्टियो, पुरमुटो व वृक्षो तथा गर्मी से संतप्त होकर पेडो की जड़ो

---

36 आलोकयति पयोदान्प्रबलपुरोवात ताडित शिखण्ड । केका गर्भेण शिखी दूरोन्नमितेन कण्ठेन ।। विक्रम० 4/28

37 केकोत्कण्ठा भवनशिखिनो नित्यभास्वत्कलापा '—मेघ० 2/3
शिखिना'-सौ० म० 1/11 मत्तमयूर मण्डल-मण्डलीकृत ।' कादं० पृ० 155

38 पश्यन्ति नोन्नतमुखा गगन मयूरा । ऋतु० 3/12

39 मदमुखर मधुररव विरावितान्तर ' कादम्बरी० पृ० 385 मयूरनाद प्रतिपूर्णकुन्जे ।' बु० च० 10/15

40 भवननीलकण्ठकुल कलकेका कलकलमुखरमुखे क्रियमाणाकालकोलाहम'
—वही० पृ० 110

41 'समदशिखिरुतानि —किरात० 10/25 शिखण्डिमण्डल विरुतम
—कादम्बरी० 83

42 'परुषीकृत स्वरमयूरमयू रमणीयताम । शिशु० 6/44 विहाय वाञ्छामुदिते मदात्ययादरक्तकण्ठस्य रुते शिखण्डिन '—किरात० 4/25

43 'विबुद्ध शिखिकुले ।' कादम्बरी० पृ० 79 आवासजन्मोन्मुख बर्हिण प्रि
—रघु० 2/17

के थावले मे वठने क उल्लेख भी मिलत है[44]

साप व मयूर का स्वाभाविक शत्रुभाव है मयूर साप का गा जाना है गोवधन पवत पर रहने वाले मयूरो के सचार के कारण मर्पों द्वारा वृन्दावन का छोडने की वान महाकवि श्रीहष ने कही है[45] चन्दन वृक्ष से लिपटी सर्पिणा का मोर के कोलाहल द्वारा कष्ट पहुचाने का उल्लेख भी मिलता है[46] मस्त मयूरा के कोलाहल से भयभीत सर्पों स परित्यक्त हुय शीतल चन्दन वन का वणन महाकवि बाण न किया है[47] हार का सापकी कचुकी समभकर मोर उस खीच लिया करते हैं[48] मोर व साप का सदा का बर रहा है परन्तु परिस्थितियो म मोर व साप का सामीप्य भी देखा गया है महाकवि कालिदास न लिखा है कि गर्मी स तप्त होकर मोर सापो की कुडली म गला डाले पडे रहते है एव साप मोरो के नीचे कुडली मार कर बठ जाते है[49] अत सिद्ध होता है कि आपद्काल म शत्रु भी शत्रुता को छोड देते है

मोरो की कामक्रीडा का वणन भी कवियो ने किया है वर्षाकाल म मोर द्वारा मोरनी का चुम्बन करने की बात महाकवि कालिदास की एक अनूठी कल्पना है[50] प्रियतमा मोरनी को आते देखकर मोर दूसरी मोरनी को अपनी पूछ से ढक लेता है[51] यह क्रिया मोर की एक समझदारी पूण क्रिया है जो उसे एक कपट नायक के रूप म प्रस्तुत करती है शाम के समय मोर द्वारा अड्डो पर बठने का उल्लेख मिलता है[52] मयूर की अनेक क्रियाओ का वणन करते हुये महाकवि कालिदास ने कहा है कि अड्डा के टूट जाने से यहा (अयोध्या) के मोर अब वृक्षो पर

---

44 कृतयष्टि समारोहणेषु—बर्हिणेषु —वासवदत्ता० पृ० 158 हेममयीभिमयूर यष्टिभि कादम्बरी० पृ० 275 'यामध्यास्ते दिवस विगमे नीलकण्ठ सुहृद्र।' —मेघ 2/19।

'उष्णालु शिशिरे निषीदति तरोर्मूलालवाले शिखी' —विक्रम० 2/22

45 गोवधनाचलकलापि०।' नषध० 11/107।

46 भुजगत्रासलहसतापालिङ्गितचन्दन०।—कादम्बरी० उ० पृ० 33।

47 उन्मद-मयूर-कुल।—कादम्बरी० पृ० 417।

48 भुजग निर्मोक शक्ति मयूर ह्रियमाणहारेण। वही० पृ० 273।

49 'कलापिन' ऋतु० 1/116।

50 प्रवृत्तनत्य कुलमद्य बर्हिणाम।—ऋतु० 2/16।

51 आयान्त्या निजयुक्तौ०।—शिशु० 8/11।

52 वासयष्टिषु निशानिद्रालसा बर्हिणो। —विक्रम 3/2।

जाकर बठते हैं और मृदग न बजने के कारण उन्होने नत्य त्याग दिया है अब ये उन जगली मयूरो की भाति प्रतीत होने लग हैं जिनकी पूछें वनाग्नि से जल गई हो[53] उजडी अयोध्या की दशा को देखकर मोर दुखी हैं अत उनकी यह दशा हो गई है वास्तव से दुखी जीव की क्रियाओ म आमूल परिवतन आ जाया करता है तपोवन मोरो द्वारा यज्ञ की अग्नि को प्रज्ज्वलित करने की बात बाण ने कही है[54] यह मोर की चतुरता का सुदर प्रमाण है

उपमित मयूर—सस्कृत साहित्य विश्व साहित्यो मे एक उत्कृष्ट साहित्य रहा है इस साहित्य म हमे व्यावहारिकता से लेकर आध्यात्मिकता तक के विभिन्न पहलुओ का दशन होता है प्राचीन काव्यकारो ने मानव का तो उल्लेख किया ही है किन्तु उन्हे पशु व पक्षी जगत के प्रति भी जागृत पाया गया है उपमादि अल-कार सस्कृत-साहित्य के शोभाधायक रहे है अत ये काव्यकारो को विशेष प्रिय हैं

काव्यकारो ने हमारे राष्ट्रीय पक्षी मयूर को विभिन्न स्थलो पर भिन्न भिन्न रूपो म उपमित किया है मयूर के समान घन (दृढ) प्रीति के कारण उत्सुक दधीचि मालती के समीप आये[55] यहा मयूर के मेघ प्रेम की समता दधीचि के मालती प्रेम से की गई है भाटो से मोरो की तुलना की गई है[56] समुद्र तट पर रह कर जल का पान करने वाले मोरो की तुलना समुद्र मथन के समय तट पर भगवान शकर के विषपान से की गई है[57] सायकाल मे नृत्य करने वाले मोर की समता भगवान् शकर के ताडव नृत्य से की गई है[58] मधुर मृदग शब्द तथा लय की लास्य लीला से उद्विग्न होकर सगीतशाला म जाने वाली कादम्बरी की तुलना मयूर से की गई है[59] मधुरध्वनि करने वाली रमणी के कंकणो की समता मोर की केका से की गई है[60] बादलो की ध्वनि को मोरो

---

53 क्रीडामयूरा वनबर्हिणत्वम । रघु० 16/14

54 'उपजात परिचय कलापिभि । कादम्बरी० पृ० 121

55 शिखण्डीव घनप्रीत्युत्सुक ' ह० च० पृ० 65

56 'धमच्छेदात्पटुतरगिरो वन्दितो नीलकण्ठ ' विक्रम० 4/13

57 अमृतमन्थनसमयमिव तीरावस्थितशिति कण्ठपीयमानविषम' कादम्बरी०

58 सन्ध्यासमय इव नर्तितनीलकण्ठ '–वासवदत्ता पृ० 245

59 'मयूरीव मुक्तधार धारागहमभिपतति' कादम्बरी उ० पृ० 28

60 'प्रचलत्कलापिकलशङ्खस्वना –शिशु० 13/41 'स्खलितचरणतल–ताडित–मणि सोपान जातगम्भीर–ध्वनि प्रहृष्टानामवरोधशिखण्डिना केकारवरनुगम्य-मान –कादम्बरी पृ० 254

की ध्वनि से उपमित किया है[61] राजा हर्ष के यहा उपस्थित बाण के श्वेत वस्त्र की समता मयूर की आखो के कोने की धवलता से की गई है[62] वर्षा काल मे शब्द करके शरद् मे चुप हो जाने वाले मयूरो की समता शत्रुओ के अप कारक बल के शान्त हो जाने से की गई है[63] मोरो के शत्रु शबर सेनापति की तुलना शिखण्डी के शत्रु भीष्म से की गई है[64] प्रदोषकाल मे मयूरो के बठने के दण्डो की चोटियो पर अधकार व्याप्त हो जाने से उस स्थान मे मयूरो के नही बठने पर भी माना, व उन पर बठे हैं ऐसी प्रतीत होती है[65] यहा मयूरो की अनुपस्थिति का मयूरो की उपस्थिति से साम्य प्रदर्शित किया गया है मयूरो के मध्य बठने के कारण पुण्डरीक की समता मयूरनिर्मित कही गई है[66] मोर के गले की समता मरकत के कमण्डलु एव कान के दन्तपत्र से भी बताई गई है[67] वास्तव मे मरकत का रग मोर के गले के रग से साम्य रखता है अत तुलना सार्थक है सुन्दर है मोर पख की तुलना अनेक पदार्थों से की है चमत्कार पूर्ण व मोरपखो को एकसा बनाया है[68] दमयन्ती के केश और मोरपख आपस मे बहस होने के कारण ब्रह्मा के पास न्याय के लिए गये थे[69] यहा मयूर के पखो की सुन्दरता से दमयन्ती के केशो की सुन्दरता का साम्य प्रदर्शित किया है इन्द्रधनुष व मोरपख को समान बतलाया है[70] इन्द्र धनुष अनेक रगो की साम्यावस्था है एव मोरपखो मे भी अनेक रगो की साम्यावस्था होती है इन्द्रधनुष आसमान मे फला होता है एव मोर के पख भी गोलाकार रूप मे फले देखे जा सकते है अत

---

61 मेघमया इव कृतशिखण्डिकुलकोलाहला ह० च० पृ० 421

62 शिखण्डयपाङ्गपाण्डुनी पौड्रे वाससी वसान —वही० पृ० 145

63 प्रवोऽप्यमालप्य शिखीव शारदो बभूव तूष्णीमहितापकारक '—नषध० 9/14

64 भीष्ममिव शिखण्डिशत्रुम'-कादम्बरी पृ० 95।

65 मयूराधिष्ठितास्विव मयूरयष्टिषु'—कादम्बरी 299

66 मयूरमय इवातिमनोहरे वसन्तज मभूमिभूते लतागहने कृतावस्थानम '
—कादम्बरी०

67 'उद्ग्रीवमयूर मरकतमणिकरकमिव वारिधाराभि ह० च० पृ० 424
'शिखिगलश्यामिना वामश्रवणाश्रयिता दन्तपत्रेण कालमेघपल्लवेन विद्युत इव द्योतमाना वही० पृ० 57

68 भो म्लानमानकेशरच्छविना मयूरपिच्छेन विप्रलब्धोऽस्मि —विक्रम० 2 गद्य

69 अस्या कचाना शिखिनश्च किन्नु विधि कलापौ विमतेरगाताम—नषध० 7/22

70 अभिनव-जलधरमिव-मयूर-पिच्छ-चित्र-चाप-धारिणम'-कादम्बरी पृ० 94

साम्य सूक्ष्म निरीक्षण का परिणाम है कल्पना मात्र नही कण्ठ का वक्ष स्थल चमकते हुए स्वर्ण कुण्डलो के अग्रभाग म जडे हुए पद्मराग मणियो की कान्ति बचपन के योग्य मयूर पख की माला धारण किए हुए के समान शोभता था[71] यहा पद्मराग मणियो से युक्त माला की समता चित्र विचित्र मयूर पख की माला से की गई है मोर के रमणीय पखो के समान नत्यतुल्य विविध विलासो से चद्रापीड के यौवन की तुलना की गई है[7] मयूर कामावस्था मे नत्य करता है एव यौवन कामावस्था होती है अत उपमा ठीक है उचित है राजाओ के मुकुट से रग-बिरगी किरणो का निकलना मयूर के पूछ से निर्मित मुकुट म समता रखता है[78] यहा मुकुट के किरणो की समता मोर के चित्र विचित्र पखो म की है दशो दिशाओ की सुदरता की समता दशो दिशाओ म उडते मयूरो के हिलते हुय चद्रको स की गई है नाचते हुए मोर के बहमण्डल की आकृति वाले मायूर आतपत्रो को माणिक्य के वृक्षो के वन से उपमित किया है,[74] वटवृक्ष को मोरपख स निर्मित छत्र से उपमित किया गया है[75] मञ्जन विदुओ की समता मयूरपिच्छ से की गई है[76] द्वारिका के प्रासा । पर बठे मोरो की हरे रग की पूछें छप्पर के समान बताई गई है[77] जन साधुओ द्वारा मोर पख धारण करने की समता पवन के द्वारा मोरपखो का ग्रहण करने म की गई है[78] यहा पवन मोर के पखो के द्वारा आचार के लिए ग्रहण किय मोर पख के साथ सम्बन्धित किया है

प्राप्य वस्तुये—काव्यकारो ने मयूर से प्राप्त होने वाली वस्तुओ के वर्णन की ओर भी रुचि प्रदर्शित की है मोर स मुख्यत उसकी पूछ प्राप्त होती है अत उसी के प्रति कवियो ने विशेष रूप स ध्यान दिया है प्रात काल मे मोरो के द्वारा पूछ को गिराना शबर सेनापति, गाँव के लोगो, किरातो एव क्षपणको के द्वारा मोर पख को ग्रहण करने व मोर की पूछ म निर्मित ध्वजा तीर इत्यादि के उल्लेख मयूर पुच्छ की प्राप्ति के सबन्ध प्रमाण है[79] मोर के वर्णन का विश्लेषण सलग्न तालिकाओ म दर्शनीय है

---

71 प्रवाप बाल्योचितनीलकण्ठपिच्छावचडावसनामिवोर –शिशु० 3/5
72 'विविध-लास्य-विलासयोग्य कलाप इव शिखण्डिनो यौवनारम्भ प्रादुरभवत्' कादम्बरी पृ० 234
73 चडामणिमरीचिलिर्मायूराणीवाराजन्त राज्ञामातपत्राणि'–हर्ष० पृ० 346
74 माणिक्यवृक्षवनोपमानम मायूरातपत्र –ह० च० पृ० 102
75 शिखिपत्रजमातपत्रम –नैषध० 11/30
76 बहुर्बर्हिचन्द्रकनिभम'–किरात० 6/11
77 हरिन्मणिश्यामतृणाभिरामैर् हाणि नीध्र रिव यत्र रेजु –शिशु० 3/49
78 'क्वचित्त क्षपणकैरिव मयूरपिच्छग्राहिभि –कादम्बरी पृ० 94
79 देखिये–ह० च० पृ० 26 शिशु० 20/46 रघु० 3/56

## तालिका (१)

'मयूर' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों मे विश्लेषण (38)

| सख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| ११ | रघु | १।३६ २।१७ ३।५६, ६।४,६ ५१ ६७ १४।६६ १६।१४ ६४, १६।३७। |
| ३ | कुमार | १।१५ १२।२६ व १४।३३। |
| ५ | मेघ | १५ २४, ४८, ३६ ३, ४६। |
| ६ | ऋतु | १।१३, १६ २।६ १६, ३।१२ १३। |
| ३ | शाकु | ४।१२, ७।गद्य गद्य। |
| १० | विक्रम | २।गद्य २२ ३।२ ४।१ ३, गद्य २० से २२ ७२, ५।१३। |

## तालिका (२)

'मयूर के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यो म विश्लेषण (98)

| कवि | सख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्वघोष | २ | बु च | ७।५ व १०।१५। |
| | ३ | सौ न | १।११ ७।११ व १० १२। |
| भारवि | ८ | किरात | ४।१६, २५ ६।११ ७।२२, ३६, १०।२५ १२।४१ व १७।११। |
| माघ | १३ | शिशु | ३।५ ५० ४।७ ५०, ५६ ६।१६, ३१ ४४ ४५ ४६ १ ।५ ४१ व २०।४६। |
| श्रीहर्ष | ६ | नषध | २।५३ ७।२२ ८।१८ ११।३० ३१ १०७, १५।५८ १६।५२ व १८।२७। |
| सुबन्धु | ५ | वासवदत्ता | प ५७ १६६ २६६ ४५ व ५१। |
| बाणभट्ट | १८ | ह च | प ३४ ५६ ६५, ८४, १०२ ११० १० ४५ २३४, ६१ ८४ ६६, ३५७ ४०६ २१ २४ ४१ व ५१। |
| बाणभट्ट | ३६ | कादम्बरी | प ८१ ६० ६४ ६४, ६५ १२१ ४१ ५५ २१६ ५४, ६८ ७५ ८२ ८४ ६६ ३४७ ८५ ८४ ८८ ४१७ ४२ ४६ ५४ ५८ ५३३ ३३ ३४ ६४ ४६ ३० २८, ३१ ३३, ७०, ११६ २१ व २२। |
| दण्डी | १ | द च | प १११। |

## चकोर
## THE QUAIL

'चमत्कृतचकोरचलाचलाक्षि ।'

—नैषध० ११/७५

संपूर्ण संस्कृत साहित्य में चकोर का स्थान सदा गौण रहा है वदिक साहित्य में चकोर के लिए तित्तिर तित्तिरि एवं कपिञ्जल शब्दों का प्रयोग हुआ है[1] अमरकोष में चकोर के लिए तित्तिरि, कुक्कुभ लाव जीवजीव, चकोरक कोयष्टिक, टिट्टिभक एवं वतक शब्दों का उल्लेख किया गया है[2] वनानिका के मत में चकोर मर दण्नीय उपजगत के मोर परिवार का सदस्य है[3]

चकोर तिब्बत, फारस उत्तरी पश्चिमी भारत व नेपाल में बहुतायात से पाया जाता है[4] आकार-प्रकार में चकोर बहुत कुछ तीतर से मिलता जुलता होता है किन्तु तीतर की भांति यह चितकबरा नहीं होता चकोर के रंग में बादामी एवं राखी रंग का मिश्रण होता है इसके चेहरे पर आंखों से लेकर कपोल पर होते हुए एक काले रंग का चक्कर देखा जा सकता है इसके परों का अधिकतर भाग बादामी होता है इसकी चोंच व पैर लाल रंग के होते हैं[5]

---

1 तै स 2/5/1/2 का स 12/10 मै स 2/4/1
वा स 24/30/36 का स 12/10 वा स 24/20
श ब्रा 1/6/3

2 तित्तिरि कुक्कुभोलावो जीव जीवश्चकोरक ।
कोयष्टिकष्टिट्टिभको वतको वर्तिकादय ॥

इत्यमर (सिंहादिवर्ग)

3 जीवजगत पृ 386

4 भारत में पक्षी पृ 170

5 यथोपरि पृ 170

चकोर के घोसले जमीन पर किसी पत्थर या पेड़ के पास या घास फूस के मध्य होते हैं चकोर कीड़े मकोड़े खाता, बीज एवं गोमय खाता देखा गया है यह अङ्गारे भी खाता है।

चकोर को आसानी से पाला जा सकता है इसको पालने के बाद मुर्गों की भांति मानव के साथ साथ घूमते देखा जा सकता है इसको पिंजड़े में बन्द करना आवश्यक नहीं होता चकोर की मादा एक बारगी ८ से १२ तक अण्डे देती है

भारतीय समाज में यात्राकाल में चकोर का बोलना शुभ माना जाता है [7] चकोर समुदायों में इधर-उधर विचरण करते देखा गया है यह सारस की भांति अधिक दूर तक उड़ने में असमर्थ रहता है अतः रुक-रुक कर उड़ता देखा गया है साहित्य जगत में चकोर का वर्णन मिलता है चकोर एवं तीतर शब्दों को संस्कृत ज्ञान में एक दूसरे का पर्यायवाची माना है किन्तु वर्गानिकी की दृष्टि से यह दोनों अलग-अलग प्राणी हैं वस्तु वर्गानिकी के विभाजन में ये एक ही परिवार के सदस्य हैं [8] चकोर का मांस खाया जाता है

संस्कृत काव्यों में चकोर—संस्कृत काव्यों में चकोर के लिए चकोर शब्द का प्रयोग हुआ है [9]

मानव व चकोर—मानव व चकोर का साथ देखा गया है राजकुलों में चकोर के भ्रमण का उल्लेख मिलता है [10] दमयन्ती के द्वारा चकोर शिशु को रखने का उल्लेख भी मिलता है [11] इससे सिद्ध होता है कि चकोर को मानव ने पाला है एवं मानव का चकोर से पुराना सम्बन्ध रहा है बाणभट्ट ने एक ऐन्द्रजालिक का नाम चकोराक्ष रखा है [12]

क्रिया-कलाप—चकोर के क्रिया-कलापों का विभिन्न काव्यकारों ने वर्णन किया है गंगा में चकोर के निवास का वर्णन मिलता है [13] चकोर द्वारा मिच

---

6 भारत के पक्षी पृ 169

7 यथोपरि पृ 171

8 इ स डि आप्टे पृ 532, जीवजगत पृ 384

9 रघु 6/59 शिशु 6/48 नैषध 11/75
कादम्बरी पृ 512 वासवदत्ता पृ 191

10 उत-कूजित-चकोर-कदम्ब-हारीत-कोकिलम-कादम्बरी पृ 272

11 अपि मम चकोर शिशु नैषध 2/58

12 ऐन्द्रजालिकश्चकोराक्ष-ह च पृ 75

13 'भातेनुरुच्चकित किरात 7/39

व तण्डुल खाने का वर्णन बाणभट्ट ने किया है[14] चन्द्रमा द्वारा चकोर को अपनी किरणे पिलाने का वर्णन श्रीहर्ष ने किया है[15] चकोर द्वारा अपनी सहचरी को चुग्गा देने का वर्णन मिलता है[16] यह वर्णन इन पक्षियो के आपसी प्रेम पर प्रकाश डालता है चकोर के द्वारा भ्रातक नामक फलो को कुतर डालने का वर्णन भी मिलता है[17]

उपमित चकोर—संस्कृत साहित्य मे चकोर की आखो से दमयन्ती, इन्दुमती बालचन्द्रिका एव अन्य स्त्रियो की आखो की तुलना की गई है[18] पिंगलवर्ण आकाश के रंग को चकोर के नयन की कनीनिका के समान बताया गया है[19] कमलिनी की कलिका व चकोर के नेत्र की तुलना की गई है[20]

चन्द्रमा की किरणे पान करने वाले चुल्लु का चकोर की चाच से उपमित किया है इस प्रकार काव्यकारो ने चकोर को भिन्न भिन्न प्रकार से उपमित किया है

सम्पूर्ण काव्यो मे चकोर का वर्णन २३ बार हुआ है चकोर का वर्णन श्रीहर्ष व बाणभट्ट ने ८–८ बार कालिदास व सुबन्धु ने २–२ बार एव भारवि-माघ व दण्डी ने केवल १–१ बार किया है वर्णन का विश्लेषण सलग्न तालिकाओ मे दर्शनीय है

---

14 'अर्धाकित चकोर' कादम्बरी पृ 383 लवलिके ! विक्षिप चकोर यथोपरि पृ 513।

15 चकोर नैषध 22/42

16 सहचरी ह च पृ 419

17 'चकोरचञ्चु ह च पृ० 161

18 चमत्कृतचकोरलोचनाक्षि—नैषध 11/75
सा मत्तचकोर नेत्रा—रघु 7/25 तत्र
'चकोरलोचना—ह च पृ 121

19 चकोर-नयन'—कादम्बरी पृ 512

20 चन्द्रिका —नैषध 22/40

## तालिका (१)

'चकोर' के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (2)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| २ | रघु | ६।५६ ७।२५। |

## तालिका (२)

'चकोर' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (21)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| भारवि | १ | किरात | ७।३६। |
| माघ | १ | शिशु | ६।४८। |
| श्रीहर्ष | ८ | नैषध | ४।५८ ७।३२, ३५ ११।७१, १२।६ २२।४० ४२, ६६। |
| सुबन्धु | २ | वासवदत्ता | पृ १६१, २३२। |
| बाणभट्ट | ४ | ह च | पृ ७५ १६१, ४०८, १६। |
| , | ४ | कादम्बरी | पृ २७२ ३८३ ५१२ ५३३। |
| दण्डी | १ | द च | पृ १२१। |

## हंस
## THE SWAN

हंसश्रेणीरचितरशना नित्यापदमा नलिन्य ।'

—मेघ० २/३

भारतीय सस्कृत-साहित्य मे हस का स्थान सवदा प्रमुख रहा है वदिक साहित्य मे ही नही अपितु आधुनिक सस्कृत साहित्य म भी हस के वणन यत्र-तत्र सवत्र बिखरे पडे हैं वदिक साहित्य मे हस के लिये हंस एव आति शब्दो का प्रयोग हुआ है [1] वाल्मीकि रामायण म हस शब्द का उल्लेख अनेकधा हुआ है [2] अमरकोष मे हस श्वेतगरुत् मानसौकस शब्दो से हस को कहा गया है हस के प्रकारो म राजहस व धातराष्ट्र शब्दो का उल्लेख है [3] वनानिको की दृष्टि मे हस मेरु-दण्डीय उपजगत् के अन्तगत पक्षिश्रेणी के हसवग के हस-उपवग के हस परिवार का सदस्य है [4]

हस विश्व के अनेक भागा म पाया जाता है यह दक्षिणी अमेरिका, आस्ट्रेनिया, न्यूजीलड, यूरोप, एशिया उत्तर अमेरिका व सोवियत रूस म पाया जाता है भारत म यह पक्षी मौसम के अनुसार आता है यह जाडे के दिनो मे कश्मीर के आस पास देखा जाता है किन्तु फिर वापस चला जाता है [5]

---

1 ऋक 1 65, 5 श० ब्रा० 5 12 1 का० स० 38, 1
मै० स० 3 11, 61 वा० स० 19 74 त० स० 2, 6, 2 1 ऋक० 10, 95 9

2 कारडे सारसै हसैवजु लजसकुक्कुट —वा० रा० कि० 13/18
हससारसनादिता '—वही० सु० 14/24
दात्यूहशुकसपुष्टा हससारसनादिता वही० उ० 42/12

3 'हसास्तु श्वेतगरुतश्चक्रांग मानसौकस
राजहसास्तु ते चचुचरणैलोहित सिता, इत्यमर (सिंहादिवग )

4 द्रष्टव्य—जीवजगत् पृ० 347।

5 इन बिट्रे० भाग 21 पृ० 630

हस एक अत्यन्त सुदर पक्षी है हस की लम्बाई करीब ५ फीट तक होती है इसके दोनो डेनो का फलाव ७ फीट तक होता है इसका वजन १८ स ४० पौंड तक होता है इसकी गदन लम्बी एव पर छोटे होते हैं यह पानी म निवास करता है [6]

हम के भोजन के बारे म दो बातें प्रमुख हैं प्रथम तो यह कि वह मोती चुगता है द्वितीय उसका क्षीर-नीर विवेक वास्तव म हम न तो मोती ही चुगता है एव न ही दूध को पानी से अलग कर सकता है ये केवल साहित्य जगत् की काल्पनिक धारणायें है, सत्य नही [7] वास्तव म हस भी अन्य पक्षियो की भाति घास फूस जडें बीज तो खाता ही है साथ ही केंचुए व मछलियो को भी चट करता देखा गया है वह इनको पान के लिये अपनी लम्बी गदन को पानी मे गहरा डुबोता है [8]

हसो के अनेक प्रकार होते हैं अत उनके रगो म अन्तर होता है सामान्य हस का रग दूध की भाति धवल होता है सम्भवत इसी कारण इसे धवल-वस्त्र धारणी वीणावादिनी का वाहन कहा गया है वृद्धावस्था मे यह रग हल्का हो जाता है एव बादामी भाई से पूण हो जाता है इसके पर व चोच का नीचे का भाग काला या भूरा होता है चोच का रग नारगी होता है इसकी उडने की गति बडी तज होती है दशका का कहना है कि हस उडते समय ४० से ५० मील की गति मे होते हैं [9] उडते समय म आग्लभाषा के वी (V) अक्षर के आकार मे समुदायो मे होते है हस की मादा गर्मी मे अडे देती है मादा आकार म छोटी होती है एव उसके वृद्धा होने पर चोचे की जड मे एक कुबज सा निकलता है यो तो हस की अनेक जातिया भूपटल पर उपलब्ध हैं किन्तु उनमे से कतिपय का सक्षिप्त वणन करना ही यहा सम्भव होगा

१ राजहस–यह हस बडा प्रसिद्ध हस है इसकी चोच लाल व पर श्वत होते हैं

२ हस–यह श्वेत रग का पक्षी है जिसके वणन स हमारा सम्पूण सस्कृत साहित्योद्यान भरा पडा है हमारे देश मे यह जाडो में कश्मीर प्रात के कुछ भागो मे देखा जा सकता है

---

6 इन० ब्रिटे० भाग० 21 पृ० 630

7 देखिये जीवजगत् पृ० 347 का० के पक्षी० पृ० 48 50

8 इन० बइ० भाग 5 प्र० 815

9 वही० भाग 5 पृ० 813

३ सवन-यह हस आकार मे अ य हसो से छोटा होता है इसका रग राख के रग स समानता रखता है इसे सस्कृत साहित्य मे कलहस के नाम से कहा गया है हमारे दश म ये जाडो मे पाया जाता है

४ बडी बतख-यह सवन से कद म बडी होती है इसका रग कत्थई एव राखी होता है भारत म यह जाडो मे आकर पुन उत्तर को प्रस्थान कर जाती है

५ नीलसर-नीलसर हमारे यहा निवास करने वाली बतख है जो निलछौह गदन क कारण आसानी स पहिचानी जा मकती है आकार म सवन के समान यानी दो फीट स ढाई फ्ट तक लम्बी होती है

६ बुडार-यह उत्तर बिहार की झीलो मे पाया जाने वाला हस है जो पानी के भीतर काफी समय तक रह सकता है इसका सिर व गदन खर रग के होते है जो इसकी प्रमुख पहिचान है

७ सीख पर-इस बतख की दुम पर दो सीक जसे-नुकीले पर निकले होते हैं यह हमारे देश मे जाडे के दिनो मे काफी सख्या म देखी जा सकती है गर्मी मे यह हिमालय की ओर चली जाती है

८ चैती-भारतवष मे आने वाली छोटी बतखो म यह सबसे प्रसिद्ध है इसकी पहिचान इसकी दोनो आखो पर बडी हरी पट्टी से की जा सकती है

९ नकटा-भारत म सवदा विद्यमान रहने वाली यह बतख अपने नाक पर उठे हुय कुब्बक के कारण बडी जल्दी ही पहचानी जाती है यह छोटे तालो मे एव पास के पेडो म ही अपना जीवन व्यतीत करना पसन्द करती है

इन सब प्रकारो के अतिरिक्त लालसर तिलरी, हसावर, पतेरा, गल आदि अन्य पक्षी भी हस वग के अन्तगत आते हैं उन सब का उल्लेख करना यहा सम्भव नही अत नामोल्लेख मात्र कर हस की काव्यात्मक विशषताओ पर विचार करेंगे

सस्कृत काव्यो मे हस -सस्कृत काव्यो मे हस के अनेक पर्यायवाची नामो व प्रकारो का उल्लेख मिलता है उनम से प्रमुख नाम है हस , कलहस , राजहस चक्राग राजहसी, पत्ररथ, मराल, धातराष्ट्र व कादम्ब [10]

10 नवध० 3/1
 कादम्बरी० पृ० 164
 कुमार० 17/26
 नवध० 3/68
 नवध० 3/6

हंस का निवास —संस्कृत साहित्य में हंस के निवास के विषय में अनेक वर्णन उपलब्ध होते हैं अलका में हंसों का निवास सर्वदा बतलाया है वहां बारहों महीने कमल एवं कमलिनियों को हंसों की पांती घेरे रहती है[1] यक्ष कहता है कि उसके घर में जो वापी है उसमें सर्वदा हंस विद्यमान रहते हैं एवं वे कदापि मानसरोवर को प्रस्थान नहीं करते[1]– मेघदूत में ही हंसों के दशार्ण देश में रहने का उल्लेख मिलता है[13] मानसरोवर को भी हंसों का निवास मानते हुए वर्षा ऋतु में उनके मानसरोवर चले जाने का वर्णन किया गया है[14] वहां जाने वाले हंस क्रौंचरन्ध्र में से होकर जाते हैं[15] विक्रमोर्वशीय के चौथे अंक में भी हंसों के मानसरोवर जाने का संकेत किया गया है[16] कुमारसम्भव के १४वें व १७वें सर्ग में भी हंसों के मानसरोवर में रहने का उल्लेख किया गया है[17] रघुवंश के छठे सर्ग के छब्बीसवें श्लोक में भी इसी बात का संकेत मिलता है रघुवंश में सरयू नदी को हंस युक्त कहा है[18] बाण ने उज्जयिनी एवं ब्रह्मलोक में निवास करने वाले हंसों का वर्णन किया है[19] कुमारसम्भव में गंगा में हंसों का निवास बताते हुये कहा है कि शरदऋतु में गंगाजी में हंस

---

द० च० पृ० 1021 (1 1)
कादम्बरी० पृ० 375
ह० च० पृ० 141

11 हंसश्रेणी रचितरशना नित्यपद्मा नलिन्य मेघ० उ० 2/3
12 प्रेक्ष्य हंसा वही० उ० पृ० 16
13 'संपत्स्यन्ते कतिपयदिनस्थायि हंसा दशार्णा' वही० पृ० 16।
14 हंसैरभिमानस मनभ्रमेरण'—कुमार 14/35
15 सकलहंसगण शुचि मानसम —किरात० 5/13
16 'हंसद्वारं भृगुपति यशोवर्त्मयत क्रौंचरन्ध्रम'—मेघ० पृ० 61
क्रौंचदिव हंसनिवहो निजगाम —कादम्बरी० पृ० 173
17 दक्षिण० विक्रम० अंक 4/30
द्रष्टव्य-कुमार० 14/35 17/36
18 अर्वामिलोलो मदराजहंसै'—रघु० 16/54
सनपुरक्षोमपदाभिरासीदुद्विग्नहंसा सरदंगनाभि' वही० 16/46
दक्षिये० वही० 19/40
19 नूपुर व्याहाराहूतभवनकलहंसकुल ह० च० पृ० 24
भवन कलहंस कोलाहल —कादम्बरी० पृ० 164

ग्रा जात है एव कलरव करते हैं[20] सुमेरुपवत पर हसो की स्थिति बतायी गयी है[21] इस प्रकार हसो को अलका, उज्जयिनी सरयू गग गन्धमादन पवत सुमेरु पवत व मानसरोवर ये सभी स्थान प्रिय लगते हैं तालाबो मे हसो के रहने के उल्लेख मिलते हैं[24] नदियो एव तालाबो के पास वाले तटो पर हसो के भ्रमण के वणन भी मिलते है[23] इन वणनो से हमारे सम्मुख दो बात आती है प्रथम तो यह कि हस वर्षाकाल मे मानसरोवर को चले जाते है एव द्वितीय यह कि हस जल म रहने वाले प्राणी है एव इन्हें शुद्ध जल ही प्रिय है ऊपर जितने भी स्थानो म हस का निवास बताया है ये सब स्थान हसो के अस्थायी निवास हैं स्थायी नहीं जसा कि वणन किया गया है, क्योकि भारत म कोई हस स्थायी रूप से निवास नही करता

**मानव एव हस**—मानव एव हस का सामीप्य काव्यो म यत्र-तत्र सवत्र वर्णित है महाकवि श्री हष ने तो एक एसे हस की कल्पना की है जो मनुष्य की वाणी को समझता है एव मानव वाणी म उत्तर भी देता है नलदमयन्ती के प्रेम को बढाने मे उसका प्रधान हाथ रहा है वह स्वणमय पखो वाला हस कहा गया है[24] उसे देवताओ का अ श भी माना है[25] हस के समुख गमन करने को अशुभ माना गया है[26] यह विशेष प्रकार का हस दमयन्ती के विरह से व्याकुल राजा नल के बगीचे मे उपस्थित होता है एव उसके द्वारा पकड लिया जाता है बाद मे वह करुणापूर्ण बातें मनुष्य वाणी मे करता है तब उसे मुक्त कर दिया जाता है वह प्रसन्न होकर नल के सामने दमयन्ती का वणन प्रस्तुत करता है एव बाद मे राजा की अनुमति से दम-

---

20 ता हसमाला शरदीव गगाम्-कुमार 1/30
समिलद्भिमराल सा कल कूजदभिरमद '—वही० 10/33

21 'हिरण्यहसव्रजवर्जितानाम' कुमार 13/39
अद्यापि हसरभिमानस घनभ्रमेण' वही० 14/35
उड्डीयामनक्लहसकुलोपमानि —वही० 17/27
'धूर्मावलोक्य मुदिता खलु राजहसा' वही० 17/36

22 स्फुटकुमुदचिताना राजहसाश्रितानि'—ऋतु० 3/21

23 'सोन्माद हस मिथुनरपशोभितानि' वही० 3/11
कार्या सैकतलीनहसमिथुना स्रोतोवहामालिनी —शाकु० 6/17

24 न जातरूपच्छदजातरूपता द्विजस्य दृष्टेयमितिस्तुव मुहु ' नपघ० 1/129
हिरण्मय हसमबोधिनपध ' वही० 1/117

25 हसोऽपिदेवाशतयासिन्दया 3/57

26 शस्ता न हसाभिमुखी पुनस्ते यात्रेति ताभिश्छलहस्यमाना वही० 3/9

पत्नी के पास नल का वर्णन करने के लिये प्रस्थान करता है यह दमयन्ती का उसकी सखियों से दूर ले जाकर नल की प्रशंसा करता है एवं दमयन्ती के मन में नल के प्रति अनुराग उत्पन्न करा देता है तत्पश्चात् वह नल के पास लौट आता है इस प्रकार यह विशेष प्रकार का हंस नल दमयन्ती को प्रेम सूत्र में बांधने में बड़ा सहायक होता है

मानव ने जब जब अपने को शांत एवं प्रसन्न वातावरण में पाया है तब-तब उसने कला का विकास किया है रानियों द्वारा भवन के हंसों के परों को रगन एवं पलगो पर धन हंसो को सफेद वस्त्र पहिनाने के वर्णन इस बात के प्रमाण हैं [27] कपड़ो पर हंसो के चित्रों के निर्माण का उल्लेख अनेक काव्यकारों ने यत्र-तत्र सवत्र किया है कुमार सम्भव में वधू के दुपट्टे को हंस के चिन्ह से पूर्ण बनाया है [28] काचन हंस से चिह्नित धनुष का उल्लेख किया गया है [29] प्रासाद छत्र के शिखर पर हंस के चिन्ह की उपस्थिति मानव के पक्षियों के प्रति प्रेम का प्रमाण है [30] एक बार कादम्बरी अपने भवन में कलहंस की ध्वनि को विरहावस्था में पसन्द नहीं करती वही कादम्बरी अन्यत्र हंसो को न मरने की बात कहती है एवं मरने से पूर्व उनकी विशेष चिंता करती है [31] एक स्त्री अपने का युद्ध में बहने वाली नदियों की तरंगों में क्रीड़ा का सुख अनुभव करने वाली राजहंसी कहती है [32] हर्ष चरित में एक दूत का नाम 'हंसवेग' रखा गया है जो सम्भवत हंस की भांति तीव्रगति से कार्य करने वाला रहा होगा 33 वासवदत्ता में एक राजा को हंस कहा है एवं उसे हंस होते हुए भी अपक्षपाती कहा है जबकि हंस (पक्षी) पक्षपाती होता है 34 कादम्बरी में एक गंधर्व को एवं दशकुमार चरित में एक राजा को हंस नाम से कहा गया है 35 महाराज इन्द्र को हंसा

27 भवनहंसा ह च पृ 277
मानसहंसकुलरचशयनीयस्तारामुक्ताफलोपचीयमानश्च —वही पृ 245
28 वधूदुकूल कलहंसलक्षणम —कुमार 5/67
29 दृष्टवाशुके कांचनहंसचिह्न —रघु च 6/59
30 विततपत्रेण हंसेन सनाथीकृताशिखरम —वही पृ 385
31 तस्माच्च भवनकलहंसरवमसहमाना प्रस्थिता' —कादम्बरी उ पृ 28
32 रणरुधिरतरंगिणीतरंगक्रीडादोहददुर्ललितराज हंसीम —ह च पृ 195
33 हंसवेगनामा दूतोतरंगतोरणमध्यास्ते —वही पृ 382
34 हंसेनाप्यपक्षपातिना —वासवदत्ता पृ 89
35 ज्येष्ठो हंसो नाम जगद्विदितो गन्धर्व —कादम्बरी पृ 412
राजहंसो नाम —प 5

का नरेश कहा गया है[36] हसो को राही के रूप मे वर्णित किया गया है[37] हसो को मानव द्वारा बाधे जाने एव स्त्रियो के निद्धुमा की ध्वनि सुनकर भागने के वणन भी मिलत है[38] इस प्रकार हसो का सम्बन्ध मानव से तो है ही साथ ही वे गधव एव देवा से भी सम्बन्धित किए गए है

क्रिया-कलाप—हस की विभिन्न क्रियाओ का विभिन्न काव्यकारो ने अत्यन्त सुन्दर ढग से विवचन किया है हम उनका अध्ययन करने का प्रयास करते हैं

हसा के भोजन के विषय मे दो बातें प्रमुख हैं कि वे पानी को छोडकर दूध का पान करत हैं एव मोती चुगते हैं पर ये दोनो बातें वज्ञानिक आधार पर असत्य सिद्ध हो चुकी हैं जिसका हम पूर्वोल्लेख कर आये हैं हसा द्वारा कमल-नाल खाने का वणन महाकवि ने किया है वे लिखते हैं कि मेघ के साथ कलाश पवत को जाने वाले हँस कमल के किसलयो को पाथेय के रूप मे ले जात हैं[39] विक्रमोवशीय मे राजहसी मणाल को खीचती है जिसका आगे का भाग टूट गया है[40] ऐसा वणन म है, कमलनाल को तोडने पर भीतर से एक सूत्र निकलता है अत निस्सदेह यह हसो द्वारा मणाल सूत्र भक्षण का सकेत है हसो के द्वारा कमल मधु (कमलनाल से प्राप्त दूध) पान का उल्लेख महाकवि ,बाण ने किया है कादम्बरी द्वारा नलिनिका से कहलवाया गया है कि वह हसो को कमलमधु दे[41] हषचरित म हसो द्वारा कमलमधु के पान करने का स्वाभाविक वणन करते हुए बाण लिखत हैं कि राजहसो का समुदाय कमला के मधुर मधु का सहपान करने से छककर मदन को कुण्डलित करके कोमल मृणाला द्वारा शरीर खुजलाते हुये पखों का फडफडाकर कमल सरोवर को हवा दते हुए ऊघ रहा है[42] यहा कवि ने मधुपान करने मदन को कुण्डलित करते, शरीर को खुजलाने, पखा को फडफडाने एव ऊघने की क्रियाओ का एक साथ वणन किया है कादम्बरी म भी कमलमधुपान कर मस्त हुए हसो का अनेकधा वणन किया है[42]

---

36 'चक्रागपतगशाक' —नयध 3/68

37 'हसपयिक साथसर्वातियो —ह च पृ 141

38 'मया बदघो मराल —द च पृ 110
'नूपुरमणिझकाराकृष्ट सर कलहसानि —कादम्बरी पृ 418

39 आकलासादिसकिसलयच्छेद' —मेघ पृ 11

40 मृणालादिवराजहसो —विक्रम 1/20

41 नलिनिके! पायय कमलमधुरसा भवनकलहसान —कादम्बरी पृ 532

42 दिवसावसान —ह च पृ 26

कमलहंस के बच्चों द्वारा निवार नामक अन्न को खाने का उल्लेख किया है। काक सप द्वारा हंसों की बलि मान का वर्णन भी मिलता है। वासवदत्ता में भी हंसों को मृणालांकुर देने की बात कही गई है।[44] अतः काव्यात्मक वर्णन के आधार पर कमलनाल, कमलमधु व निवार को ही हंसों का खाद्य-पदार्थ स्वीकार किया जा सकता है।

हंस के रंग के बारे में सभी काव्यकारों का एक मत है। उन्होंने हंस के रंग को 'श्वेत' कहा है। रघु के यश की धवलता का उल्लेख करते हुए कालिदास ने हंस समुदाय का सर्वप्रथम स्थान दिया है।[45] शिव पार्वती की शय्या को हंस के पंखों के समान शुभ्र बताया है।[46] बाण ने कादम्बरी में राजा तारापीड के शयनतल को 'हंसधवल' कहकर हंसों की धवलता का प्रमाण प्रस्तुत किया है।[47] हंसों के द्वारा नदियों के जलों को श्वेत बनाने एवं धवलपक्षधारी हंसों के कूजन से गुम्फित होकर दिशाओं का मेघों से शून्य होकर निर्मलता को प्राप्त कराने का वर्णन भी मिलता है। कादम्बरी में भवन कलहंसों से युक्त आंगन को श्वेत बतलाकर हंसों की श्वेतता की ओर संकेत किया है। हर्षचरित व ऋतुसंहार में कादम्बरी शब्द का प्रयोग श्याम हंस के वाचक के रूप में आया है। अतः काव्यात्मक वर्णन के आधार पर हंसों का श्वेत एवं श्याम होना सिद्ध होता है।

हंसों की प्रमुख क्रियाओं में उनकी ध्वनि प्रमुख है। हंसों की ध्वनि को मधुर कहा है।[48] नदियाँ एवं सरोवर हंसों के प्रमुख निवास हैं अतः वहां पर ही

---

43 'कलहंसानाम — कादम्बरी पृ 371
कवचिदरुण हंसोपारतकमलवनमकरन्दम — वही पृ 374
44 'कमहंसपातभुज्यमाननीवारवनिम — कादम्बरी पृ 120
राजहंसे न जिह्वे वि बलि याचितुम — ह च पृ 192
मकरिके! देहि मृणालांकुर राजहंसशावेभ्य — वासवदत्ता पृ 206
45 हंसश्रेणीषु — रघु 4/19
46 तत्रहंसधवला — कुमार 8/82
47 हंसधवलशयनतले — कादम्बरी पृ 286
48 'वाच तदीया परपीय मृद्वीं मृद्वीकया तुल्यरसां स हंस — नैषध 3/60
हंसमुखरतयाध्यासितमाननर्दयति — कादम्बरी पृ 377
भवनकलहंसमालाभिवलितांगनेन' — कादम्बरी पृ 273
'कवणितकादम्बे — ह च पृ 141
सोन्मादकादम्बविभूषितानि — ऋतु 4/9

उनकी ध्वनि सुनी जाना स्वाभाविक है अत काव्यकारों ने गगा वनवा एव शिप्रा नदियो एव पम्पासर म हसा के कलरव का उल्लेख किया है[49] महाकवि कालिदास ने शरद ऋतु म हसो की मधुर ध्वनि का वणन शरद ऋतु वणन करत समय ऋतुसहार मे किया है सम्भवत उन्ही क अनुकरण पर भारवि, माघ एव बाणभट्ट ने भी शरदऋतु वणन के समय पर इस बात को नहीं भुलाया है[50] इन सब बातो से यह सिद्ध होता है कि शरदऋतु म हसो की ध्वनि मधुर होती है एव शरदऋतु हसो के कूजन का काल होता है हसो की ध्वनि को कतिपय स्थानो पर तिरस्कृत भी किया है भगवान् कृष्ण की रमणियो की वाणी को सुनकर हसा का कमलो मे छपना एव अन्त पुर मे रमणियो के नपुर रव के समाप्त हो जाने से भवन के हसो का मूक एव मन्द होना इस बात के उदाहरण हैं[51] किरातार्जुनीयम एव हषचरित म हस को ब्रह्मा एव देवताओं के वाहन म वर्णित किया गया है[52]

हस के उडने के उल्लेख भी मिलत हे नल द्वारा पकडे गय हस के द्वारा उडन का प्रयास किया गया नल द्वारा मुक्त होने पर हस ने पखो को ठीक किया हस ने दमयन्ती के पास जमीन पर गिरने के समय पखो को फडफडाया प्रकाल म उडता हुआ एक कलहस आया–ये सभी वणन हस के उडने की क्रिया से सम्बन्ध

---

49 कलहसनादिनी' –किरात प 8/27
'उन्मदकलहसकलकोलाहल मुखरित–कूलया वेत्रवत्या –कादम्बरी प 17
यत्र समदकलहस सारसा –वासवदत्ता प 73
मदमुखरराजहसकुलकोलाहल मुखरितकूलपुलिनया वही प 74
'पम्पासर कलहसकोलाहले' –कादम्बरी पृ 81

50 कुर्वन्ति हस विरुत हसै सारसकुल प्रतिनादितानि ऋतु 3/8 16
श्रुति श्रयत्यु मदहसानि स्वन –किरात 4/25
शारदिहसरव पक्ष्मीकृतस्वनरमपूरमधू रमणीयताम' –शिशु 6/44
'शरदमिवोत्पादितमानसजन्मपक्षिरवापनीतनीलकण्ठमदान –कादम्बरी प 54 में

51 पतत्रिणां कुलानि –शिशु 8/12
'मन्दिर हंसेषु' –ह च प 300
'स्त्रीणां विहाय वदनेषु शशाक लक्ष्मी काम्य च हसवचने मणिनूपुरेषु –ऋतु 3/27
युवतिनूपुर –कादम्बरी पृ 300

52 'हसा वहन्त सुरसप्रवाहा –किरात 18/19

रखते हैं[53] भयभीत होकर हंसों द्वारा उड़ने का वर्णन महाकवि बाणभट्ट ने किया है[54]

अभिज्ञानशाकुन्तल के छठे अङ्क में जब मातलि इन्द्रजाल के प्रभाव से विदूषक को पकड़ लेता है तो विदूषक चिल्लाकर राजा से कहता है कि वह उसे शीघ्र बचावे उस अवसर पर अपने बाण की प्रशंसा में राजा कहते हैं कि उनका तीर उसी प्रकार शत्रु को मारकर विदूषक को बचा लेगा जिस प्रकार हंस जलयुक्त दूध में से दूध को ही ग्रहण करता है एवं पानी को छोड़ देता है[55] इस प्रकार महाकवि ने हंस के क्षीर-नीर-विवेक का संकेत किया है इसी प्रकार का संकेत शिशुपालवध के सोलहवें सर्ग में भी उपलब्ध होता है, जो कोरी कल्पना मात्र है

हंसों के स्वभाव से गद्‌गद् होने, खेलवाड़ करने एवं रोने के वर्णन भी कवि कल्पना के चूडान्त उदाहरण हैं[56]

शरदृऋतु में कामदेव का मयूरों को छोड़कर हंसों में प्रविष्ट होना इस बात को प्रमाणित करता है कि शरदृऋतु हंसों का गर्भाधान काल होता है[57] राजहंसी द्वारा स्नानान्तर जल में स्थित चन्द्रबिम्ब को राजहंस का चुम्बन करना उसकी कामुकता एवं अज्ञान का प्रमाण है महाकवि श्रीहर्ष ने सुरत खेद के कारण थक कर सोये हुए हंस का स्वभावोक्ति पूर्ण वर्णन करते हुए लिखा है कि हंस सुरत खेद के कारण आलस्य युक्त होकर पंखों से सिर ढककर गर्दन टेढ़ी करके तथा एक पञ्जे का आलम्बन लेकर क्षण भर सो रहा था,[58] हंस

---

53 पुनः पुनः प्रायसकुल्लवाय स —नैषध 1/125
अधुनीत खगः स नैकधा तनुमुत्फुल्लतनूरुहीकृताम् —वही 2/2
निवेदेशाततधूतपक्षः पपात भूमावुपभीः —हंस वही 3/1
नभसि नलिनि सु धमुग्धकलहंस —द च म 143

54 कलकूजितानुभयमानोत्रस्तहंसभार्योत्पतन व्यतिकरान —कादम्बरी उ प 60

55 'हंसो हि क्षीरमादत्ते तन्मिश्रा वर्जयत्यपः —शाकु 6/28

56 स्वभाव गद्गदेन भवन्कलहंसाना कलरवेण —कादम्बरी उ प 59
'मनोरम राजहंस कोविधितस्या तदुपकण्ठमरायत' —द च पृ 109
'पाप्पापर्याप्तनयन ताम्यति हंसोयुगलम —विक्रम 4/2

57 शिखिनो विहाय हंसानुपति मदनो मधुरप्रगीताम् —ऋतु 3/13

58 अयाकराण्य क्षणमेकपादिका तदा निद्रानुपपल्वल खग ।
स तिर्यगावर्जितकन्धरः शिर विधाय पक्षे रतिक्लमालस ॥

मिथुन के शयन का उल्लेख कादम्बरी में भी मिलता है[59]

उपमित हस—सस्कृत काव्यो म सादृश्य मूलकालकारो का अपना विशेष महत्व है हस तो साहित्य जगत का प्रमुख पक्षी रहा है फिर भला काव्यकार इसे उपमित करने मे पीछे कसे रह सकते थ सभी काव्यकारो ने यदा कदा सवदा हस की अनेक क्रियाओ को जीवाजीवो म उपमित कर पक्षी साहित्य म एक नया अध्याय जोडा है दमयन्ती, अवन्तीसुन्दरी उवशी, इन्दुमती एव अमरांगनाओ की चाल की समता हस की गति से की गई है[60] दमयन्ती को हस के समान गति स चलने वाली कहा है[61] अवन्ति सुन्दरी को उद्यान म भ्रमण करने वाली हसिनी कहा है[62] पुरुरवा अपनी प्रिया की गति को चुराने के आरोप मे हस को उपालम्भ देता है एव अपनी प्रिया की गति को 'हसगति' कहता है[63] रघुवश म अज प्रिया—विलाप करते समय उसकी गति का कलहसिनियो द्वारा लिया जाना बताता है[64] अमराङ्गनाओ के विलास मन्थर गमन के राजहसो की गति को जीतने का उल्लेख भारवि ने किया है[65] इस प्रकार हस की गति की तुलना स्त्रियो की चाल स की गई है

हस की ध्वनि से भी अनेक समतायें की गई है स्त्रियो के नुपुर[66] एव

---

59 सुप्तहसमिथुने' —कादम्बरी पृ 590

60 चिर निमज्जेह सत प्रियस्य भ्रमेण यच्चुमवती राजहसी —नैषध 22/120

61 हसोऽप्यसौ हसगते —नैषध 3/10

62 उद्यानवनदीर्घिकामरतमरालि द क च 101

63 'मदलेखपद कथ नु तस्या सकल चोरगत त्वया गृहीतम —विक्रम 4/33

हसगति वही 4/20 59

64 'कलहसीपु मदालस गतम' —रघु 8/59

65 'गत सहावै कलहसविक्रम —किरात 8/29

66 पदे पदे हसरुतानुकारिभिजनस्यचित्त क्रियते समन्मथ —ऋतु 1/5

सोन्मादहसरवनपुरनादरम्या —वही 3/1

चलत्पदाम्भोरुहनुपुरोपमा चुकूलकूले कलहसमण्डली —नैषध 1/17

कूजित राजहसाना नेद नूपुरशिञ्जितम —विक्रम 4/30

'भवनकलहस —कादम्बरी पृ 656

कलहसकलालापमधुररव प्रतिवाचमिव —वही उ पृ 10

67 क्वणितकनककाञ्चो मतहसस्वनेपु' —ऋतु 3/26

तत स कूजत्कल हसमेखलाम् —किरात 4/11

प्रकार कोई हंस को सरोवर में फेंक रहा हो।[88] यहाँ मुकुट के सौन्दर्य की तुलना हंस की सुन्दरता से की गई है।

हंस की धवलता की तुलना गंगा के उत्तरीय वस्त्र ज्योत्स्ना, सितपताका व यश की स्वच्छता से की है।[89] बुढ़ापे के बालों की सफेदी को हंस के पंख की धवलता से उपमित किया गया है।[90] धर्मोद्गन्धन की तुलना आकाश में पंख फैलाकर विश्राम करते हुये ब्रह्मा के वाहन हंस से की है।[91] चंवरों की तुलना हंसों से की है।[92] कुमार के वियोग में गौतमी को उस हंसी की तुलना दी है, जो हंस से वियुक्त हो गई हो।[93]

सम्पूर्ण काव्यों में हंस का वर्णन कुल मिलाकर २७७ बार आया है। महाकवि बाणभट्ट ने हंस का वर्णन ८३ बार किया है जबकि श्रीहर्ष ने ८६ व कालिदास ने ४२ बार। दण्डी, सुबन्धु, भारवि, माघ व अश्वघोष ने हंस का वर्णन क्रमश: २०, ११, ११, १० व ४ बार किया है। इस प्रकार कालिदास एवं कालिदासोत्तर काव्यों में हंस के वर्णन का अपना विशिष्ट महत्व है। हंस के वर्णन का विश्लेषण संलग्न तालिकाओं में द्रष्टव्य है।



---

88 सरसीव हंसम्' —बु च 6/57

89 'सरिदुत्तरीयमिव संहतिमत्स इतरंगरंगि कलहंसकुलम्' —किरात 6/6
'हंसधवलाधरण्याम्पतज्ज्योत्स्ना —कादम्बरी प 150
हंससार्थं सहैकीभूतरिव' वही उ पृ 57
सहंसमालमिव सितपताकाभि' —वही प 78
हंसश्रेणीषु'-यशसामिव 4/19

90 हंसशुक्लशिरोरुहे' —कादम्बरी

91 विश्रान्तमिक वितत पक्षतिना वियति पितामहविमानहंसयूथेन —ह च प 384

92 सहंसपाते इव लक्ष्यमाणे' —कुमार 7/42

93 हंसेन हंसीमिव वियुक्ता —बु च 9/27

## तालिका—१

### 'हस' के वर्णन का कालिदास के काव्यो में विश्लेषण (42)

| सख्या | काव्य | वणन का क्रम |
|---|---|---|
| ६ | रघु | ४।१९ ५।७५ ६।२६ ८।५९ १६ ५४ ५६ |
| ६ | कुमार | १।३७ ५।६७ ७।४२ १०।३३ १४।३३ १७।३४ |
| ५ | मेघ | १।११ २५, ६१ २।३, १६ |
| १२ | ऋतु | १।५ ३।१ २ ८ ११, १३, १६, २१, २६, २७ ४।४ ९ |
| २ | शाकु | ६।१७ २८ |
| १ | मालविका | २।१२ |
| १० | विक्रम | १।२० ४।२ ३, ६, २०, ३०, ३४, ४१, ५९, ७२, |

## तालिका–२

### 'हस' क वरान का कालिदासोत्तर काव्यों म विश्लेषरा (235)

| कवि | सख्या | काय | वणन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्वघोप | ३ | बु च | ६।५७ ५६ ६।२७ |
| | १ | सौ न | ४।२४ |
| भारवि | ११ | किरान | ४।१, ४ २५, ३०, ५।१३ ६।४ ६ ८।२७, २६ १०।२८ १८।१६ |
| माघ | १० | शिशु | ६।४४ ७।२३ ४५ ५४ ८।१२ १२।४४, ६१ १३।२१ १६।१६ १७।२६ |
| श्रीहप | ८६ | नपध | १।११७, २१ २५ से ३६, ४२ २।१ से १३ ३६, ५६ से ५८, ६० स ६५ ६७ स ७२, १०७ से ६ ३।१, ३ से १२, १६ स २२ ५७ ६०, ६८, ७६ से ७८, ६४ ६।७२ ८।३५ ६।१४ २७ ६६ १२८, ४४ ११।१५, ५०, ५४ १२।३५ १०२ १३।४० १४।६० १८।१६ २२।१६० |
| सुबधु | ११ | वासवदत्ता | पृ ७३ ७४ ८६, ६६ १११, ७६, २०६ १६ ५०, ५१, ५४ |
| बाराभट्ट | ३६ | ह च | पृ ३, १४ २४ २६, २६ ३१, ४८ ५३, ५३, ६५, १०१, २, ४१, ४१, ६२ ७२ ६२ ६६, २०६, ६ १३ १६, २६, २७ २६ ४५ ८६, ८६ ६० ६० ६० ६० ६० ६६, ३०० १४ ३१, ८२ ८४ |
| बाराभट्ट | ५४ | कादम्बरी | प ११ १७ २२, २७, ४१ ४२ ४६ ६८ ७८, ८१, १२० ३३ ३७ ४८, ५०, ५० ५१ ६४ ७३, ८३, ८४ ८८, ८६, ६६, १०८ २४२ ५३ ७२, ७३, ३०० ८ ७१, ७४ ७५ ७७ ६३, ६६, ४१२ १७, १८ ४५, ५३३, ४६ ६०, ६५६, उ० १०, १० १६ २८, ५७ ५६ ६०, ६८, १३८ |
| दण्डी | २० | द च | प ५, ६ १५ १८, २६ ५६, ६८, ८१, १००, १, ६ १०, ३२ ३६, ४३, २३७, ८२, ३६७, ४७४, ८५ |

# चक्रवाक
# THE RUDDY GOOSE

'चक्रवाकसवृत्तिमात्मन ।'
—कुमार० ८/५१

संस्कृत साहित्य मे चक्रवाक का वर्णन प्रमुख रहा है वैदिक साहित्य मे चकवा के लिए चक्रवाक शब्द का अनेक स्थानो पर प्रयोग हुआ है[1] वाल्मीकि रामायण मे भी चकवा के वर्णन मिलते हैं[2] अमरकोष मे चक्रवाक को कोक, चक्र, चक्रवाक एव रथाङ्गाह्व नामो से कहा गया है[3] शब्दकल्पद्रुम मे चक्रवाक के द्वन्द्वचर, भूरिप्रमा, रात्रिविश्लेषगामी, कान्त, कामुक इत्यादि नाम दिये गये हैं[4]

वैज्ञानिक की दृष्टि मे चकवा हसवर्ग के हस उपवर्ग के हस-परिवार का सदस्य है[5] संस्कृत साहित्य के वर्णनो में भी हस व चक्रवाक को अनेक स्थलो पर एक साथ वर्णित किया है[6] सामान्य लोग चक्रवाक को चकवा, चकई व सुरखाब नामो से भी पुकारते है

नामोल्लेख करने के बाद अब हम चकवे की सामान्य विशेषताओ पर विचार करेंगे चकवा राजहस से काफी साम्य रखने वाला पक्षी है इसकी चोच चपटी

---

1 ऋक् 2/39/3 मै० स० 3/14/3, 13, वा० स० 24/27 32 अ० वे० 24/2/64

2 'महानदीना पुलिनोपपातै क्रीडन्ति हसा सह चक्रवाक' वा०रा०कि०30/31 चक्रवाकगणाकीर्णा विभान्ति सलिलाशया'—वही० 30/51

3 कोकश्चक्रश्चक्रवाको रथाङ्गाह्वयनामक —इत्यमर (सिंहादिवर्ग)

4 शब्दकल्पद्रुम० 2/4/14

5 जीवजगत पृ० 355

6 वा० रा० कि० 30/31 63

होती है, जबकि राजहस की चोच चपटी नही होती[7] इसकी ध्वनि भी राजहस की ध्वनि से साम्य रखती है ऐसा वनानिको का मत है[8] चकवा लद्दाख, तिब्बत, मानसरोवर, द० यूरोप व एशिया माइनर म पाया जाता है[9] सर्दी के मौसम मे य सम्पूर्ण भारत मे फल जाते हैं इसके बाद कश्मीर, मानसरोवर व हिमालय की ओर प्रस्थान कर जाते हैं

चक्रवाक को बडी आसानी से पहचाना जा सकता है क्योकि यह सारस दम्पत्ति की भांति जोड मे रहता है किन्तु रात म यह एक साथ नही रहता यह दो फीट लम्बा पक्षी होता है नर का सारा शरीर भूरे या सुनहरे रग का होता है सिर व गला बादामी रग के होते हैं इसके गले पर एक काली धारी होती है मादा क गले मे कठा नही होता एव रग हल्का होता है इसकी चोच व पर काले होते हैं चकवे के पखो म पीले, नारगी, सुनहरी हरे एव काले रगो का साम्य होता है जो इस अनुपम बनाते हैं[10]

सुरखाब नदियो के किनारे पर निवास करत है रात को इनकी आवाज नदी के तटो की ओर से निरन्तर सुनी जा सकती है दिन मे चकवे के समुदाय नदियो की तटवर्ती रेत म आराम करते भी दखे गय हैं चकवे की मादा गर्मी मे ८ से १० तक अण्डे देती है जिसका रग लालाई लिए पीला या गदला सफेद होता है

चकवा भी हस व सारस की भाति अनेक पदार्थों का भक्षण करता है जिसमे प्रमुख हैं–घास पात अनाज जडें, सवार बीज, छोटी मछलिया व घोंघे[11] इसका प्रमुख भोजन जल स प्राप्त वस्तुयें ही हैं

चकवे के पालन का प्रचलन नही है चकवा व चकवी के अनेक आख्यान काव्य जगत म प्रचलित है चक्रवाक का दाम्पत्य प्रेम का आदश उदाहरण माना जाता है चक्रवाक की जोडी सदा एकसाथ रहती है जो उनके प्रगाढ प्रेम का प्रतीक है चकवा चकवी के विषय म एक बात बहुत विख्यात है कि दिन भर साथ साथ रहने के बाद रात को उनको बिछुडना पडता है साहित्य जगत् म इस विषय

---

7 पा० हैण्ड० आफ० इ० बर्ड स० पृ० 524

8 दि० इ० बड स० पृ० 109

9 वही० पृ० 109 ब० ओ० सौ० पृ० 103

10 वही० 101 जीवजगत् पृ० 356, भारत के पक्षी पृ० 184, कालिदास के पक्षी० पृ० 24

11 ब० ओ० सौ० पृ० 103 जीवजगत पृ० 356

पर काफी कुछ लिखकर साहित्यकारो ने चक्रवाक के प्रति अपनी सहानुभूति का प्रदर्शन किया है इस विषय मे अनेक किवदंतिया व कल्पनायें हैं जिनमे से कतिपय का उल्लेख करना यहा आवश्यक है ताकि हम वास्तविकता की ओर कदम बढा सकें

प्रथम किंवदन्ती यह है कि शाहजहा की मृत्यु के पश्चात औरगजेब से यह कहा गया कि उनके पिता श्री की यह इच्छा थी कि उनकी मृत्यु के बाद ताजमहल जसा ही एक मकबरा यमुना के दूसरी ओर बना दिया जाय इस पर औरगजेब ने उत्तर दिया कि उनके माता पिता कोई चकवा चकवी नही है जो कि उनकी समाधिया यमुना के दोनो किनारो पर हो

एक दन्तकथा म कहा गया है कि चक्रवाक दम्पत्ति को किसी अपराध के कारण शापग्रस्त होना पडा है इसी कारण रात को उनका वियाग हो जाता है क्योकि उनको यह शाप मिला है कि वे एक दूसरे को देखते तो रहे पर आपस मे न मिलें [12]

एक अन्य किंवदन्ती पर सत्य का पर्दा डालने के लिये कल्पना की गई है कि चक्रवाक की जो कोक-काक की तीव्र ध्वनि है वह चकवी की विरहपूर्ण ध्वनि है और यह कहती है– चकवा आऊ' किन्तु शाप के कारण चकवा उत्तर देता है– चकवी न आओ' इस प्रकार चक्रवाक दाम्पत्य रात भर विरह म व्याकुल होकर अपना समय व्यतीत करते हैं एव सूर्योदय की प्रतीक्षा करते हैं

परन्तु क्या यह वास्तविकता है या कोरी कल्पना मात्र है इसके बारे म सभी वज्ञानिक एक मत नही है व्हिलर महोदय ने अपनी पुस्तक 'ए पुलरहैण्ड बुक आफ इण्डियन वर्ड्स म लिखा है कि चकवा–चकवी दिन म एक साथ बठ रहते है या खडे रहते हैं किन्तु रात को भोजन की तलाश म इधर–उधर घूमते है[13] सभवत इसी कारण नशविरह' की कल्पना साहित्यकारो के मस्तिष्क म आयी

स्टुअर्ट बेकर महोदय ने लिखा है कि रात को भोजन की खोज मे चक्रवाक एक दूसरे को पुकारते हैं जिसे इस प्रकार समझा जाता है चकवा पूछता है–'चकवी आऊ ता चकवी कहती है– चकवा नहीं आओ [14]

रामाल महोदय ने अपने अनुभव के आधार पर लिखा है कि 'रात को ये

---

12 पा० हैण्ड० पृ० 525

13 यथोपरि

14 'डक्स एण्ड देयर ए–लाइज पृ० 146

होती है, जबकि राजहंस की चोंच चपटी नहीं होती[7] इसकी ध्वनि भी राजहंस की ध्वनि से साम्य रखती है ऐसा पक्षीविदों का मत है[8] चकवा मध्य एशिया, मानसरोवर, द० यूरोप व एशिया माइनर में पाया जाता है[9] गर्मी के मौसम में ये सम्पूर्ण भारत में फैल जाते हैं इसके बाद कश्मीर, मानसरोवर व हिमालय की ओर प्रस्थान कर जाते हैं

चक्रवाक को बड़ी आसानी से पहचाना जा सकता है क्योंकि यह सारस दम्पत्ति की भाँति जोड़े में रहता है किन्तु रात में यह एक साथ नहीं रहता यह ड़ा फीट लम्बा पक्षी होता है नर का सारा शरीर भूरे या सुनहरे रंग का होता है सिर व गला बादामी रंग के होते हैं इसके गले पर एक काली धारी होती है मादा के गले में कंठा नहीं होता एवं रंग हल्का होता है इसकी चोंच व पैर काले होते हैं चकवे के पंखों में चीनी, नारंगी सुनहरी हरे रंग काले रंगों का साम्य होता है जो इसे अनुपम बनाते हैं[10]

सुरखाब नदियों के किनारे पर निवास करते हैं रात को इनकी आवाज नदी के तटों की ओर से निरन्तर सुनी जा सकती है दिन में चकवे के समुदाय नदियों की तटवर्ती रेत में आराम करते भी देखे गये हैं चकवे की मादा गर्मी में ८ से १० तक अण्डे देती है जिसका रंग ललाई लिए पीला या मटमैला सफेद होता है

चकवा भी हंस व सारस की भाँति अनेक पदार्थों का भक्षण करता है जिसमें प्रमुख हैं—घास पात, अनाज जड़ें, सवार बीज, छोटी मछलियां व घोंघे[11] इसका प्रमुख भोजन जल से प्राप्त वस्तुयें ही हैं

चकवे के पालन का प्रचलन नहीं है चकवा व चकवी के अनेक आख्यान काव्य जगत में प्रचलित है चक्रवाक को दाम्पत्य-प्रेम का आदर्श उदाहरण माना जाता है चक्रवाक की जोड़ी सदा एकसाथ रहती है जो उनके प्रगाढ़ प्रेम का प्रतीक है चकवा चकवी के विषय में एक बात बहुत विख्यात है कि दिन भर साथ साथ रहने के बाद रात को उनको बिछुड़ना पड़ता है साहित्य जगत में इस विषय

7 पा० हैण्ड० आफ० इ० बड स० पृ० 524
8 दि० इ० बड स० पृ० 109
9 वही० पृ० 109 ब० ग्रो० सो० पृ० 103
10 वही० 101 जीवजगत पृ० 356, भारत के पक्षी पृ० 184, कालिदास के पक्षी० पृ० 24
11 ब० ग्रो० सो० पृ० 103 जीवजगत पृ० 356

पर काफी कुछ लिखकर साहित्यकारो ने चक्रवाक के प्रति अपनी सहानुभूति का प्रदर्शन किया है इस विषय म अनेक किंवदंतिया व कल्पनायें हैं जिनमे से कतिपय का उल्लेख करना यहा आवश्यक है ताकि हम वास्तविकता की ओर कदम बढ़ा सकें

प्रथम किंवदन्ती यह है कि शाहजहा की मृत्यु के पश्चात औरगजेब मे यह कहा गया कि उनके पिता श्री का यह इच्छा थी कि उनकी मृत्यु के बाद ताजमहल जसा ही एक मकबरा यमुना के दूसरी ओर बना दिया जाय इस पर औरगजेब न उत्तर दिया कि उनके माता पिता कोइ चकवा चकवी नही है जो कि उनकी समाधियां यमुना के दोनो किनारो पर हो

एक दन्तकथा म कहा गया है कि चक्रवाक दम्पत्ति को किसी अपराध के कारण शापग्रस्त होना पड़ा है इसी कारण रात को उनका वियोग हो जाता है क्योकि उनको यह शाप मिला है कि व एक दूसर को दखते तो रहे पर आपस में न मिलें [12]

एक अन्य किंवदन्ती पर सत्य का पर्दा डालने के लिय कल्पना की गई है कि चक्रवाक की जो कोक कोक की तीव्र ध्वनि है वह चकवी की विरहपूर्ण ध्वनि है और यह कहती है— चकवा आऊ' किन्तु शाप के कारण चकवा उत्तर देता है— चकवी न आओ इस प्रकार चक्रवाक दाम्पत्य रात भर विरह म व्याकुल होकर अपना समय व्यतीन करत हैं एव सूर्योदय की प्रतीक्षा करत हैं

परन्तु क्या यह वास्तविकता है या कोरी कल्पना मात्र है इसके बारे म सभी वज्ञानिक एक मत नही है ह्विसलर महोदय ने अपनी पुस्तक 'ए पुलरहैण्ड बुक आफ इण्डियन बर्ड स म लिखा है कि चकवा–चकवी दिन म एक साथ बठे रहत हैं या खडे रहत हैं किन्तु रात को भोजन की तलाश म इधर–उधर घूमत हैं[13] सभवत इसी कारण 'नशविरह' की कल्पना साहित्यकारा के मस्तिष्क मे आयी

स्टुअर्ट बकर महादय न लिखा है कि रात को भोजन की खोज म चक्रवाक एक दूसर को पुकारत हैं जिसे इस प्रकार समझा जाता है चकवा पूछता है— चकवी आऊ ता चकवी कहती है— चकवा नही आओ' [14]

रामोल महोदय न अपने अनुभव के आधार पर लिखा है कि 'रात को ये

---

12 पा० हैण्ड० पृ० 525

13 यथोपरि

14 'डक्स एण्ड देयर ए–लाइज पृ० 146

होती है, जबकि राजहंस की चोंच चपटी नहीं होती[7] इसकी ध्वनि भी राजहंस की ध्वनि से साम्य रखती है ऐसा वैज्ञानिकों का मत है[8] चकवा लद्दाख, तिब्बत, मानसरोवर, द० यूरोप व एशिया माइनर में पाया जाता है[9] गर्मी के मौसम मे ये सम्पूर्ण भारत मे फैल जाते हैं इसके बाद कश्मीर, मानसरोवर व हिमालय की ओर प्रस्थान कर जाते हैं

चक्रवाक को बडी आसानी से पहचाना जा सकता है क्योंकि यह सारस दम्पत्ति की भाँति जोड़े में रहता है केवल रात में यह एक साथ नही रहता यह दो फीट लम्बा पक्षी होता है नर का सारा शरीर भूरे या सुनहरे रंग का होता है सिर व गला बादामी रंग के होते हैं इसके गले पर एक काली धारी होती है मादा के गले में कंठा नही होता एवं रंग हल्का होता है इसकी चोंच व पैर काले होते हैं चकवे के पंखों में पीले, नारंगी सुनहरी हरे एवं काले रंगों का साम्य होता है जो इसे अनुपम बनाते हैं[10]

सुरखाब नदियो के किनारे पर निवास करते हैं रात को इनकी आवाज नदी के तटो की ओर से निरन्तर सुनी जा सकती है दिन में चकवे के समुदाय नदियो की तटवर्ती रेत में आराम करते भी देखे गये हैं चकवे की मादा गर्मी मे ८ से १० तक अण्डे देती है जिसका रंग ललाई लिए पीला या गदला सफेद होता है

चकवा भी हंस व सारस की भाँति अनेक पदार्थों का भक्षण करता है जिसमे प्रमुख हैं—घास पात, अनाज, जडें, सिवार बीज, छोटी मछलियां व घोंघे[11] इसका प्रमुख भोजन जल से प्राप्त वस्तुयें ही हैं

चकवे के पालन का प्रचलन नही है चकवा व चकवी के अनेक आख्यान आज जगत मे प्रचलित है चक्रवाक को दाम्पत्य-प्रेम का आदर्श उदाहरण माना जाता है चक्रवाक की जोड़ी सदा एकसाथ रहती है जो उनके प्रगाढ प्रेम का प्रतीक है चकवा चकवी के विषय में एक बात बहुत विख्यात है कि दिन भर साथ साथ रहने के बाद रात को उनको बिछुड़ना पडता है साहित्य जगत् मे इस विषय

7 पा० हैण्ड० आफ० इ० बड स० पृ० 524

8 दि० इ० बड स० पृ० 109

9 वही० पृ० 109 ब० ओ० सौ० पृ० 103

10 वही० 101, जीवजगत पृ० 356, भारत के पक्षी पृ० 184, कालिदास के पक्षी० पृ० 24

11 ब० ओ० सौ० पृ० 103 जीवजगत पृ० 356

पर काफी कुछ लिखकर साहित्यकारो ने चक्रवाक के प्रति अपनी सहानुभूति का प्रदर्शन किया है इस विषय मे अनेक किंवदन्तियां व कल्पनायें हैं जिनमे से कतिपय का उल्लेख करना यहा आवश्यक है ताकि हम वास्तविकता की ओर कदम बढ़ा सकें

प्रथम किंवदन्ती यह है कि शाहजहां की मृत्यु के पश्चात औरंगजेब से यह कहा गया कि उनके पिता श्री की यह इच्छा थी कि उनकी मृत्यु के बाद ताजमहल जसा ही एक मकबरा यमुना के दूसरी ओर बना दिया जावे इस पर औरंगजेब ने उत्तर दिया कि उनके माता पिता कोई चकवा चकवी नहीं है जो कि उनकी समाधियां यमुना के दोनो किनारो पर हो

एक दंतकथा म कहा गया है कि चक्रवाक दम्पत्ति को किसी अपराध के कारण शापग्रस्त होना पडा है इसी कारण रात को उनका वियोग हो जाता है क्योकि उनको यह शाप मिला है कि वे एक दूसरे को देखते तो रह पर आपस मे न मिलें[12]

एक अन्य किंवदन्ती पर सत्य का पर्दा डालने के लिये कल्पना की गई है कि चक्रवाक की जो कोक कोक की तीव्र ध्वनि है वह चकवी की विरहपूर्ण ध्वनि है और यह कहती है—चकवा आऊ' किन्तु शाप के कारण चकवा उत्तर देता है—चकवी न आओ' इस प्रकार चक्रवाक दाम्पत्य रात भर विरह म व्याकुल होकर अपना समय व्यतीत करते हैं एव सूर्योदय की प्रतीक्षा करत हैं

परन्तु क्या यह वास्तविकता है या कोरी कल्पना मात्र है इसके बारे म सभी वज्ञानिक एक मत नही है ह्विसलर महोदय न अपनी पुस्तक 'ए पुलरहैण्ड बुक आफ इण्डियन बड स मे लिखा है कि चकवा—चकवी दिन म एक साथ बठे रहत है या खड़े रहते हैं किन्तु रात को भोजन की तलाश म इधर—उधर घूमत हैं[13] संभवत इसी कारण निशाविरह' की कल्पना साहित्यकारो के मस्तिष्क मे आयी

स्टुअर्ट बेकर महोदय न लिखा है कि रात को भोजन की खोज म चक्रवाक एक दूसरे को पुकारत है जिसे इस प्रकार समझा जाता है चकवा पूछता है—'चकवी आऊ" तो चकवी कहती है— चकवा नही आओ'[14]

राओल महोदय न अपने अनुभव के आधार पर लिखा है कि 'रात को ये

---

12 पा० हैण्ड० पृ० 525

13 यथोपरि

14 'डक्स एण्ड देयर ए—लाइज पृ० 146

अनेक ऐसे स्थल मिलते हैं जहां मानव एवं चक्रवाक के सम्बन्ध की स्पष्ट झलक दिखलायी देती है तपस्या के लिए गए हुए अर्जुन द्वारा चक्रवाक की तलाश करने वाली चक्रवाकी को धीरज बधाने की बात किरातार्जुनीयम् में कही गयी है[23] हर्ष चरित में रथवपुरुष द्वारा चक्रवाक को आश्वासन देने की चर्चा है[24] विक्रम राजा अपनी प्रिया के बारे में चक्रवाक से पूछते हैं कि उनकी प्रिया कहाँ गयी[25] अभिज्ञानशाकुन्तल के तृतीय अंक में रात्रि की उपस्थिति होने पर चक्रवाक व चक्रवाकी के वियोग के साथ साथ दुष्यन्त व शकुन्तला के वियोग की ओर संकेत किया गया है[26] चौथे अंक में शकुन्तला की विदाई पर वह कमलिनी के पत्ते की ओट में छिपे चक्रवाक को न देख सकने के कारण घबराई हुई चक्रवाकी को देखकर अपनी सखियों से कहती है कि वह जिस कार्य के लिए प्रस्थान कर रही है वह पूरा होना कठिन है[27] उस समय अनसूया उसे ढाढस बधाती है कि चक्रवाकी सवेरे प्रियतम से मिलने की आशा में रात बिताती है और उसे प्रातः प्रियतम मिल जाते हैं, अतः उसे ऐसा विचार नहीं करना चाहिए शाकुन्तलम् के इस वर्णन से हमें शकुन्तला व दुष्यन्त के मिलने की बाधा के दर्शन तो होते ही हैं साथ ही शकुन्तला व दुष्यन्त के गाढानुराग एवं कार्यकारी के पक्षी प्रेम की झलक भी मिलती है कादम्बरी द्वारा थके चक्रवाकों के विश्राम हेतु पुलिन बनवाये जाने का उल्लेख मिलता है[28] साथ ही शाम को चक्रवाक व चकवी के वियोग से भीत कादम्बरी द्वारा चित्रलिखित चक्रवाक युगल का मृणालसूत्र से बाधकर वियोग को रोकने का वर्णन भी मिलता है[29] ये उल्लेख पक्षीप्रेम व वियोगी की दशा पर प्रकाश डालते हैं कामपीड़ा से

---

23 ॥ रथांगनामवनिता करुणैरनुबध्नतीमभिननन्द रुतैः –किरात० 6/8

24 भवनकमलिनीपाल कोकमाश्वासयझपरवक्त्रमुच्चरपठत– विहग ! कुरु दृढ मन स्वयं त्यज शुचमात्मस्व विवेकवत्मनि । सह कमलसरोजिनीश्रिया भवति सुमेरुशिरो विरोचन ।' ॥4॥ ह० च० पृ० 276

25 रथांगनामन वियुतो रथांगश्रोणिबिम्बया ।
अयं त्वां पृच्छति रथी मनोरथशतैर्वृत ॥ विक्रम० 4/37

26 'चक्रवाकवधुके आमन्त्रयस्व सहचरम । उपस्थिता रजनी'–शाकु० 3 गद्य

27 'हला' प्रेक्षस्व नलिनीपत्रान्तरितमपि सहचरमदृश्यमानातुरा चक्रवाक्यारटति दुष्कर खल्वहं करोमि –शाकु० 4 गद्य

28 रजनी जागरखिन्नस्य परिचितचक्रवाकमिथुनस्य स्वप्तुं क्रीडानदीषु कमल धूलिवालुकाभिर्विलिपुलिनानि कारयन्तीम–कादम्बरी० पृ० 544

29 दिवसावसानेषु विश्लेषभीता मृणालसूत्रैश्चित्रभित्तिविलिखितानि चक्रवाकमिथुनानि सघट्टयति –वही० उ० 31

पक्षी दाना चुगने के लिए एक दूसरे से दूर हो जाते हैं एव एक दूसरे का पुकारते हुए नात हाते हैं [15]

आर० एस० धमकुमारसिह जी ने लिखा है कि रात मे चकवे चिल्लाकर मगरमच्छ की सहायता करत हैं एव उसे यह चेतावनी देते है कि शिकारी कही आसपास है [16] अत यह ध्वनि अचानक निकलती है जिसे साहित्यकारो ने कल्पना मे ढाल दिया है

इन सभी विचारो के आधार पर हमारे सम्मुख चार बातें आती है —

१ चकवा रातिचर प्राणी है
२ यह रात को ध्वनि करता है
३ यह नदियो के किनारे निवास करता है
४ यह रात्रि को ही भोजन की तलाश म निकलता है एव दूर तक जाता है

इन सब विचारो के आधार पर यह कहना उचित एव सार्थक हागा कि चक्रवाक आंशिक रूप से रात्रि मे चकवी से दूर रहता है क्योकि उस समय वह भाजन की तलाश मे होता है और फिर कहा भी तो हैं 'भूखे भजन न होइ गोपाला' अत पेट भरने की चिन्ता मे पक्षी तो क्या मानव को भी घर बार छोडकर कमाना पडता है, विरह सहना पडता है इस प्रकार चक्रवाक की सामान्य विशेषताओ पर विचार करने के पश्चात हम इसकी काव्यगत विशेषताओ पर विचार करेंगे

## सस्कृत काव्यो मे चक्रवाक

सस्कृत काव्या म चक्रवाक के लिए चक्र [17], चक्राव्हय [18], रथागनामा [19], कोक [20], रथागाह्व [21] व रथाङ्ग [22] शब्दो का प्रयाग हुआ है ।

मानव एव चक्रवाक—चक्रवाक का पालन नही होता किंतु फिर भी मानव ने चक्रवाक के प्रति विशेष सहानुभूति प्रकट की है एव इसी कारण काव्यो म

15 स्मान गेम शूटिंग इन बगाल—(1899) पृ० 93
16 ब० ओ० सी० पृ० 102
17 नपच० 18/69
18 नाद्र० 3 गद्य ह० च० पृ० 81
19 विक्रम० 4/37 बु० च० 8/29
20 ह० च० पृ० 137
21 बु० च० पृ० 8/60
22 विक्रम० 4/37

अनेक एसे स्थल मिलते हैं जहा मानव एव चक्रवाक के सम्बन्ध की स्पष्ट झलक दिखलायी देती है तपस्या के लिए गए हुए अर्जुन द्वारा चक्रवाक की तलाश करने वाली चक्रवाकी को धीरज बधाने की बात किरातार्जुनीयम् म कही गयी है[23] हर्ष चरित मे राजपुरुष द्वारा चक्रवाक को आश्वासन देने की चर्चा है[24] विक्रम राजा अपनी प्रिया के बारे म चक्रवाक से पूछते हैं कि उनकी प्रिया कहा गयी[25] अभि-ज्ञानशाकुन्तल के तृतीय अक म रात्रि की उपस्थिति होने पर चक्रवाक व चक्रवाकी के वियोग के साथ साथ दुष्यन्त व शकुन्तला के वियोग का ओर सकेत किया गया है[26] चौथ अक म शकुन्तला की विदाई पर वह कमलिनी के पत्ते की ओट मे छिप चक्रवाक को न देख सकने के कारण घबराई हुई चक्रवाकी को देखकर अपनी सखियो स कहती है कि वह जिस काय के लिए प्रस्थान कर रही है वह पूरा होना कठिन है[27] उस समय अनसूया उसे ढाढस बधाती है कि चक्रवाकी सदव प्रियतम स मिलने की आशा मे रात बिताती है और उसे प्रात प्रियतम मिल जाते हैं अत उसे ऐसा विचार नही करना चाहिए शाकुन्तलम् के इस वणन से हमे शकुन्तला व दुष्यन्त के मिलने की बाधा के दशन तो होते ही हैं साथ ही शकुन्तला व दुष्यन्त के गाढानुराग एव कायकारो के पक्षी प्रेम की झलक भी मिलती है कादम्बरी द्वारा थके चक्रवाको के विश्राम हेतु पुलिन बनवाये जाने का उल्लेख मिलता है[28] साथ ही शाम को चक्रवाक व चकवी के वियोग से भीत कादम्बरी द्वारा चित्रलिखित चक्रवाक युगल को मृणालसूत्र स बाधकर वियोग को रोकने का वणन भी मिलता है[29] ये उल्लेख पक्षीप्रेम व वियोगी की दशा पर प्रकाश डालते हैं कामपीडा से

---

23 'स रथाङ्गनामवनिता करुणैरनुबध्नतीमभिननन्द रुत '—किरात० 6/8

24 'भवनकमलिनीपाल कोकमाश्वासयन्नपरवक्त्रमुच्चरपठत– विहग ! कुरु हृदमन स्वय त्यज शुचमास्स्व विवेकवत्मनि । सह कमलसरोजिनीभिया श्रयति सुमेरुशिरो विरोचन । ।।4।। हर्ष० च० पृ० 276

25 रथाङ्गनामन वियुतो रथाङ्गश्रोणिबिम्बया ।
अय त्वा पृच्छति रथी मनोरथशतैवृत ।। विक्रम० 4/37

26 'चक्रवाकवधुके आमन्त्रयस्व सहचरम । उपस्थिता रजनी –शाकु० 3 गद्य

27 'हला' प्रेक्षस्व नलिनीपत्रान्तरितमपि सहचरमपश्यन्त्यातुरा चक्रवाक्यारटति दुष्कर खल्वह करोमि'—शाकु० 4 गद्य

28 'रजनी जागरखिन्नस्य परिचितचक्रवाकमिथुनस्य स्वप्तु क्रीडानदिकासु कमल धूलिवालुकाभिर्बलिपुलिनानि कारयन्तीम –कादम्बरी० पृ० 544

29 दिवसावसानेषु विश्लेषभीता मृणालसूत्रैश्चित्रभित्तिविलिखितानि चक्रवाकमिथुनानि सघट्टयति –वही० उ० 31

व्याकुल सरस्वती चक्रवाकों के जोड़ों के विरहज य निःश्वास-धूम से स्पृष्ट न होने पर भी श्यामता को प्राप्त हुई[30] ऐसा वर्णन बाण ने किया है भवनवापी में निवास करने वाले चक्रवाकों का वर्णन भी मिलता है[31] 'प्रियतमा वियोगी चक्रवाक मधुर तथा करुण स्वर में चिल्लाकर चन्द्रापीड को कादम्बरी के पास जाने को कहता है 'पार्वती परस्पर क्रन्दन करने वाले चक्रवाक युगल का ढाढस बंधाती है।' ये वर्णन भी मानव को चक्रवाक से सम्बन्धित करने में सहायक है[32] दमयन्ती द्वारा चक्रवाक युगल की विरहावस्था देखकर दुःखी होना एवं दया प्रदर्शित करना मानव व चक्रवाक के सम्बन्धों को स्पष्ट करता है[33]

क्रिया-कलाप—विश्वपटल पर हर जीवधारी कुछ न कुछ क्रिया अवश्य करता है क्रिया करना जीवों की एक सामान्य विशेषता है चक्रवाक भी अनेक क्रियायें करता है

चक्रवाक व चक्रवाकी का विरह जगत प्रसिद्ध है काव्यकारों ने भी इस बात पर अधिक बल दिया है इसी कारण चकवे व चकवी के विरह से सम्बन्धित क्रियाओं का उल्लेख बाहुल्य मिलता है विरह होने पर व्याकुलता आती है एवं व्याकुल जीव आलाप-प्रलाप करता है चक्रवाक व चकवी के आलाप प्रलाप का सभी काव्यकारों ने वर्णन किया है चकवा-चकवी का नाम पुकारता है 'नदी के किनारे पर प्रियतम के विरह से व्याकुल होकर चकवी करुण विलाप करने लगी परस्पर अलग हुए चक्रवाक के समुदाय चीखें मारने लगे' परस्पर वियोगवश चक्रवाक दम्पत्तिगण शब्द कर रहे थे इत्यादि वाक्य चक्रवाक गणों के करुणक्रन्दन को प्रस्तुत करते हैं[34] दशकुमारचरित में

30 विघटमानचक्रवाकयुगलविमुक्तैरस्पृष्टानि श्यामतामाससाद विरहनिःश्वासधूम'
—ह० च० पृ० 53

31 भवनवापी० चक्रवाकमिथुन कूजितेन सेवते—कादम्बरी० उ० पृ० 29

32 'चक्रवाकेष्वपि सहचरी विरहविधुरेषु कादम्बरीसमीपगमनोपदेशादायासेव कलकरुणमुच्चमु [illegible] हर्म्याट्टरत्तु—कादम्बरी० उ० पृ० 40
'परस्पराक्रन्दनो चक्रवाकयो पुरा वियुक्ते मिथुने कृपावती—कुमार० 5/26

33 'शोकवेन कोकयोस्तवं मुदति —नैषध० 21/611 'अथ रथचरणौ विलोक्य रक्तावति विरहासहताविवाम —वही० 21/44, सख्य ! विलोक्य कोकयोर करयाम वही० 21/145

34 सहचरीनामग्राह रथांगविहंगमा —नैषध० 19/35, शाकुन्तलकोकशामिनी कूजितकरुणाम् तरंगणीतटीषु —ह० च० पृ० 137 समुपागमोर्हनिं च ह्यायोगशर्षविघर्मितमनसुषि विदग्नि विरहिनो चक्रवाकचक्रवाकं—कादम्बरी० पृ० 419, विरह-व्याकुल-चक्रवाक पुकारे तारे —वही० पृ० 590

चक्रवाक मिथुन के दयनीय शब्दो को सुनने की बात कही गयी है तो कुमारसम्भव मे वियोगावस्था के काल मे तालाब के पाट के बडे हो जाने का उल्लेख मिलता है[35] कालिदास व दशकुमारचरित मे भी विरह वेदना से सतप्त चक्रवाक युगो के विलाप का वर्णन किया गया है[36] महाकवि बाणभट्ट ने एक विशेष बात की ओर ध्यान आकर्षित किया है और वह यह कि उन्होने अनिवार्य विरह वेदना मे व्याकुल चक्रवाक के जोडे के क्रन्दन को करुण और मधुर कहा है[37] उन्होने करुण म भी माधुर्य को पाया है यद्यपि चक्रवाक विरह मे बोलता है पर उसकी ध्वनि मधुर है अच्छोद सरोवर, पम्पासरोवर, शिप्रानदी, यमुनानदी एव अन्य नदियो में चक्रवाको के कलरव की बात कही गयी है[38]

इन सब वर्णनो से हमारे समुख तीन बातें आती हैं —

१ चकवा व चकवी दोनो विरह मे आलाप प्रलाप करते हैं

२ इनकी ध्वनि करुण एव मधुर होती है

३ चक्रवाक नदी व तालाबो के किनारे रहते हैं

चक्रवाक-दम्पत्ति के वियोग का कारण बतलाते हुए कादम्बरीकार ने चकवा चकवी को राम के शाप से ग्रस्त बतलाया है तो नैषधीय चरित के प्रणेता ने ब्रह्मा की इच्छा बतलाया है[39] नदियो की लहरो का तरते हुए चक्रवाक पक्षी के तरने से दो

---

35 करुण चक्रवाकमिथुनरवमशृणवम –द० च० पृ० 213, चक्रवाकयोरःपमन्तरमनल्पता गतम — कुमार० 8/32

36 विरह वाचाल चक्रवाक युगले-तीरे —कादम्बरी० पृ० 590, चक्रवाकरव-व्याकुल —द० च० पृ० 100

37 अनिवार्यविरहवेदनो मध्यमानमानसाकुलेषु कलकरुणमुच्च र्पाहरत्सु चक्रवाकयुगलेषु —कादम्बरी० उ० पृ० 15

38 'विरुवति विरहिणी चक्रवाक चक्रवाले' —वही, पृ० 519, अत्राविमुक्तानि रथागनाम्नाम योर्यदत्तोत्पलकेसराणि रघु 3/3 कलक्वणितकलहसचक्रवाकचक्रवालाकातसरससुकुमारसक्तानि शिप्रातटायनुसरन्नातिदूरमिव चरणाभ्यामेव पश्राम —कादम्बरी० उ० पृ० 19, चक्रवाक मिथुनाभिनन्दिता सरित' - ह० च० पृ० 81, पश्य यमुना चक्रवाकिनीम'—रघु 15/20 महापुरुषमिव प्रकट-मीन मकर-कूर्म चक्रलक्षणम — कादम्बरी० पृ० 375

39 'मूर्तिमदाभशापप्रतानीव मध्यचारिणामालोक्यते चक्रवाकनाम्नां पक्षिणां मिथुनानि ।' कादम्बरी० पृ० 71, कालोऽय विधिना रथागमिथुन विच्छेतु मविच्छता । —नैषध० 21/148

भागों में विभक्त हो जाने, रात को चकवा-चकवी के जोड़े के अलग होने, प्रातःकाल में चक्रवाकी के एक किनारे से दूसरे किनारे पर आने एवं उज्जयिनी में कामिनियों के आभूषणों के प्रकाश से अन्धकार नहीं होने के कारण चक्रवाक दम्पति के वियुक्त न होने के वर्णन चक्रवाक की अनेक क्रियाओं पर प्रकाश डालते हैं।[40] महाकवि कालिदास ने रघुवंश में अज विलाप का उल्लेख करते समय 'देखो! चन्द्रमा को रात्रि फिर मिल जाती है, चकवा-चकवी भी प्रातः मिल जाते हैं' इस वाक्य में प्रातःकाल चकवा-चकवी के मिलन की बात कही है जो यथार्थतः सत्य है।[41] सूर्य व चक्रवाक के सम्बन्ध को भी काव्यकारों ने प्रस्तुत किया है। शाम को सूर्य द्वारा पृथ्वी को छोड़कर चक्रवाक पक्षियों के हृदय में समाविष्ट करने का वर्णन भारवि ने किया है।[42] सन्ध्याकाल में हो विरह से पीड़ित चकवी के कारण दुःखी होते हुए चकवे के द्वारा विनिर्गत बन्धूक के समान [illegible] की भांति सूर्य में अपनी डबडबाई आंखों के समान का उल्लेख हर्षचरित में किया गया है।[43] सुबन्धु ने चक्रवाक पक्षियों के हृदय में दुःख स्थापित करने के कारण शाम के समय सूर्य राग ही दिखलाया है।[44] जिससे सुबन्धु की पक्षियों के प्रति सहानुभूति प्रतीत होती है तभी तो उन्होंने पक्षियों को दुःखी करने वाले सूर्य को रक्तदीन कहा है।

अन्यत्र [illegible] तरंगों द्वारा चकवे को दूसरे किनारे पर भगाने की बात कही गयी है।[45] प्रातःकालीन वायु द्वारा चकवे के शब्द को फैलाने का उल्लेख है।[46] अतः चकवा रात का ही नहीं दिन को भी आवाज करता है यह बात सिद्ध होती है।

---

40 तरङ्गचक्रवाकीमनुगममानगोऽन्य । —ह० च० पृ० 226 'चक्रवाक मिथुनं विरहन्ते ।'—कुमार० 8/61, 'नदीरयान्तरतार्णा चक्रवाकी ।'—शिशु० 11/26, 'कामान्धकारनुरक्त-निमित्तशाखाविघटित चक्रवाक मिथुना ।'

—कादम्बरी० पृ० 164

41 'शशिनं पुनरेति शर्वरी दयिता द्वन्द्वचरं पतत्त्रिणम् ।' —रघु० 8/56

42 चक्रवाकहृदयान्यभिमन्य । —किरात० 9/4

43 [illegible] चक्रवाक [illegible] बन्धूक [illegible] । —ह० च० पृ० 314

44 [illegible] । —वासवदत्ता पृ० 150

45 [illegible] । —किरात० 8/55

46 [illegible] । —वासवदत्ता पृ० 37

नीलोत्पल वन के कारण चक्रवाक को अन्धकार का भ्रम होने का वर्णन है[47] यह वर्णन चक्रवाक के अज्ञान पर प्रकाश डालता हैं

चक्रवाक के भोजन विषयक उल्लेख भी काव्यो मे मिलते हैं 'चकवा आधी कुतरी हुयी नाल लेकर चकवी को भेंट करने लगा' 'चक्रवाक जोडे परस्पर मृणाल का आदान प्रदान कर रहे थे' 'कमलिनीके ! चक्रवाक शावकों को मृणाल एव क्षीररस देना'—ये वाक्य इस बात को स्पष्ट करते हैं कि चक्रवाक को कमलनाल प्रिय है[48]

चक्रवाको के प्रेम व्यापार पर भी काव्यकारों ने ध्यान दिया है बुद्धचरितकार स्त्रियो के महात्म्य को बताते हुए, चक्रवाक द्वारा चकवी के पीछे पीछे जाने की बात कही है वे लिखते हैं कि वह आज्ञाकारी चक्रवाक जल मे अपनी पत्नी के पीछे पीछे सेवक के समान जा रहा है[49] नयधकार ने चकवा चकवी के प्रेम को देखकर केवल उनको ही कामशास्त्र के रहस्य का ज्ञाता कहा है तो माघ ने चकवे द्वारा चकवी को चूमने की बात कही है[50] दमयन्ती के चकवीप्रेम से मग्न होने की चर्चा भी चक्रवाक के प्रेम-व्यापार पर प्रकाश डालती है[51]

उपमित चक्रवाक—चक्रवाक की विभिन्न क्रियाओ का काव्यकारो ने यत्र तत्र-सर्वत्र उपमित किया है सपत्नीक नन्द एव सपत्नीक दिलीप को चक्रवाक युगल से उपमित कर कवियो ने उनके गाढानुराग का परिचय दिया है[52] विलासवती एव

---

47 विकचनीलोत्पलकाननदर्शिताकाण्ड चक्रवाकतिमिरशङ्कभि ।'

—वासवदत्ता पृ० 194

48 अर्द्धोपभुक्तेन बिसेनजाया सभावयामास रथाङ्गनामा । —कुमार० 3/37, 'घटमानचञ्चुपुटमृणालकोटिभिरासन्नकमलिनीचक्रवाकमिथुन ।'–ह च पृ 385 'प्रामीकृत-सामान्यमृणाललता विवरसक्रामितानीव परस्परहृदयान्यादाय विघटमानेषु रथाङ्गनाम्ना युगलेषु ।' कादम्बरी० 449, 'कमलिनिके' ! प्रयच्छ चक्रवाकशावकेभ्यो मृणालक्षीररसम ।

—वही० पृ० 533

49 'दृश्यता स्त्रीषु माहात्म्य चक्रवाको ह्यसौ जले ।
पृष्ठत प्रेष्यवद्भार्यामनुवत्यनुगच्छति ।।

—बु० च० 4/50

50 जगति मिथुने चक्रावव स्मरागमपारगौ । नैषध० 19/34,
'मुग्धाया स्मरललितेषु चक्रवाक्या निःशङ्कदयिततमेन चुम्बिताया ।'

—शिशु० 8/13

51 'निजपरिवढ गाढप्रेमा रथागविहङ्गमी ।
स्मरशरपराधीनस्वान्ता वपस्यति सम्प्रति ।

—नैषध० 17/17

52 'रथांगनाम्नोरिव भावबन्धनम ।' रघु० 3/24, 'स चक्रवाक्येव हि चक्रवाकस्तया समेत प्रियया प्रियाह ।'

—सौ० न० 4/2

अन्य युवतियों के स्तन युगल को चक्रवाक युगल के सदृश बताया गया है [53] युवतियों के स्तन पास-पास रहते हैं एवं चक्रवाकों का जोडा भी पास पास रहता है अतः उपमा उचित है यक्षिणी का अपने साथी से बिछुडी हुई चक्रवाकी से साम्य बतलाया है [54] काषाय वस्त्रधारण किए हुए नन्द व सुगत को सुनहरे रंग वाले चक्रवाक युगल में उपमित किया है [55] यहा रंग के आधार पर तो उपमा ठीक बठती है किन्तु सुगत व नन्द दोनो नर हैं अतः एक के नारी न होने के अभाव में उपमा सुन्दर नही बन पडी है महाकवि कालिदास ने धारिणी को रात से उपमित करते हुए मालविका एव अग्निमित्र को चक्रवाक युगल से उपमित किया है [56] रात की उपस्थिति में चक्रवाक युगल का मिलना सभव नही, ठीक उसी प्रकार महारानी धारिणी की उपस्थिति में मालविका व अग्निमित्र का मिलना सभव नही अतः महाकवि की यह उपमा बिल्कुल ठीक है सार्थक है पुताई किए हुए भवन की दीवार पर थूके गये पान से निर्मित चिह्न को चक्रवाक युगल के समान बतलाया है [57] यहा तो केवल कल्पना मात्र ही प्रतीत होती है, वर्णन में औचित्य ज्ञात नही होता अश्वघोष ने बुद्ध के बारे में कहा है कि जिस प्रकार चक्रवाक किसी अन्य चक्रवाकी को नही चाहता वसे ही बुद्ध किसी अन्य स्त्री के अनुरागी नही हो सकते [58] गगा के किनारे बालू पर तपस्यारत पार्वती को चक्रवाकी के समान बताया है [59] वास्तव में चकवी नदी के किनारे ही बठी रहती है अतः उपमा उचित है शिव पार्वती से पूछते हैं कि क्या वे चकवे के समान सच्चे प्रेमी

---

53 नीलोत्पलयोरिव चक्रवाकयो ।'—कादम्बरी० पृ० 214, पूर्णकुम्भौ चक्रवाकानुकारी पयोधरौ ।' ह० च० पृ० 8 हारलतामृणाललोभनीयचक्रवाकाभ्याम ।' —वासवदत्ता० पृ० 43 'वपू रपीवमुष्टिच्छुरणपाशुलेनेव कान्तोच्चकुच चक्रवाकयुगलविपुलपुलिनेनोर स्थलेन स्थूलभुजायाम पुञ्जितम । ह० च० पृ० 40, द्वन्द्वचरा स्तनानाम' —रघु० 16/63

54 'दूरीभूते मयि सहचरे चक्रवाकीमिवकाम ।' —मेघ० 2/23

55 'सर प्रकीर्णाविव चक्रवाकौ ।' —सौ० न० 10/4

56 अहं रथाङ्गनामेव प्रिय सहचरीव मे अननुज्ञातसपर्कधारिणी रजनीव नौ ।।'० —मालविका० 5/9

57 'तत्रैव सुधाभित्तौ चक्रवाकमिथुन निरष्ठीवम ।' —द० च० पृ० 243

58 न स तस्यामन्यामवति ■ चक्रवाक्या इव चक्रवाक ।' —सौ० न० 6/22

59 'सा चक्रवाकाङ्कितसकतायास्त्रिस्रोतस कान्तिमतीत्य तस्थौ ।' —कुमार० 7/15

नही है ⁶⁰ यहाँ भी शिव व पार्वती को चक्रवाक युगल के समान बतलाने का प्रयास किया गया है कादम्बरी की विरहावस्था को बतलाते हुए उसे चक्रवाकी की तरह मनोरथो से विछुडने वाली कहा है एव रात्रि के जागरण को चक्वी के विरह से उपमित किया है ⁶¹ दु खी यशोधरा के विलाप को बाज के द्वारा घायल चक्रवाकी के विलाप से उपमित किया गया है एव उसमे धरती पर गिरने को चक्वे से वियुक्त चक्वी से दु खरूपी सागर मे व्रतो को तालाब के चक्रवाको से उपमित किया है चक्रवाको के हृदयानुराग को प्रात कालीन सूर्य के अनुराग (अरुणवर्ण) से उपमित किया गया है इस प्रकार चक्रवाक की विभिन्न क्रियाओ का काव्यकारो ने उपमित किया है

सम्पूर्ण काव्यो मे चक्रवाक का वर्णन कुल ८५ बार आया है महाकवि बाण ने चक्रवाक का वर्णन ४ बार किया है द्वितीय स्थान महाकवि कालिदास का है जिन्होने १७ बार चक्रवाक का उल्लेख किया है श्री हर्ष अश्वघोष, सुबन्धु, दण्डी, भारवि एव माघ ने चक्रवाक का वर्णन क्रमश ११,६ ५ ४,३ व २ बार किया है चक्रवाक के वर्णन का विश्लेषण प्रस्तुत तालिकाओ मे दर्शनीय है



60 चक्रवाकसमवृत्तिमात्मन ।' —कुमार० 8/51

60 चक्रवाक्मथा इव विघटन्ते मनोरथा ।' —कादम्बरी० उ० पृ०

60 'चक्राह्वरव्य इव निशया सहापतति प्रजागरश्वास । —वही० पृ० 31

61 'सा चक्रवाकीव भृश चुकूज श्येनाग्रपक्ष क्षतचक्रवाका —सौ० न० 6/30

ततो धरायामपतद् यशोधरा विचक्रवाकेव रथांगसाह्वया । बु० च० 8/66

## तालिका–१

'चक्रवाक' के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (१७)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| ५ | रघु० | २।२४ ८।३० १३।३१ १५।३०२ १६।६३ |
| ६ | कुमार० | ३।३७ ५।२६ ७।१५ ८।३२ ३७ ५१ |
| १ | मेघ० | २।२३ |
| २ | शाकु० | ३ गद्य व ४ गद्य |
| १ | मालविका० | ५।९ |
| २ | विक्रम० | ४।३७ व ७१ |

## तालिका–२

चक्रवाक के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (६९)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्व | ५ | बु० च० | १।७१ ४।५० ८।२९ ६० व १३।१३ |
| घोष | ४ | सौ० न० | ४।२ ६।२२ ३० व १०।४ |
| भारवि | ३ | किरात० | ६।८ ८।५६ व ९।४ |
| माघ | ३ | शिशु० | ८।१३ व ११।२६ ६४ |
| श्रीहर्ष | ११ | नैषध० | २।१११ १७।१७ १८।६९ १९।१७, ३४ ३५ २१।४२, ४४ ४५, ४८, १६१ |
| सुबन्धु | ५ | वासवदत्ता | पृ० ३९ ४३, १५० १९४ व २२६ |
| बाण भट्ट | ११ | हर्ष० च० | पृ० ४० ५३, ८१, १३७, ९९, २२६ ७६ ७६, ३१४ ८५ व ९१ |
| | २३ | कादम्बरी | पृ० ७१, ८२, १६४, ६६, २१४ ५३ ३७५, ४१९, ४९ ८२ ५१९ २३, ३३ ४४, ९०, ९० उ० १५, १९ २९ २९, ३० ३१, ४० |
| दण्डी | ४ | द० च० | पृ० ८, १०० २४३, ७९ |

# बलाका
# THE BAI AKA

'सेविष्यन्ते नयनसुभग खे भवत बलाका।
—मेघ० १/१०

सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य म बलाका का स्थान सर्वथा गौण रहा है वैदिक साहित्य मे बलाका शब्द का उल्लेख मिलता है[1] वाल्मीकि रामायण मे भी बलाका के उल्लेख उपलब्ध हैं[2] अत बलाका का वर्णन प्राचीन है अर्वाचीन नही अमर कोष म बलाका के दो नामो बलाका एव बिसकण्ठिका का प्रयोग मिलता है[3] वैज्ञानिको की दृष्टि म बलाका मेरुदण्डीय उपजगत के पक्षि श्रेणी के अन्तर्गत महाप्लक वर्ग (आर्डर सिरकानिफोरस) के महाबक उपवर्ग व बक परिवार का सदस्य है[4]

बलाका एक विशालकाय पक्षी है इसकी ऊचाई २ ५ फीट तक होती है बलाका अनेक रगो के सयोग से पूर्ण पक्षी है इसका सिर, गदन नीचे का कुछ हिस्सा एव कन्धे सामान्यत धवल वर्ण के होते हैं इसके सिर के बाल काले होते हैं इसकी चोच बडी तीखी एव आख के पास तक फली सी प्रतीत होती है[5] चोच का रग गदला पीला होना है मादा के रूप रग म कोई विशेष अन्तर नही होता

बलाका समुदाय मे उडने वाला पक्षी है यह उडने समय अपनी दोनो टागो को पीछे की ओर सीधा कर पख फलाकर अपने सिर को दोनो कन्धो के मध्य करके उडता है[6] बलाका एव बगुला दो ऐसे पक्षी हैं जिनको अनेक विद्वानो ने एक

---

1 तै० स० 5/5/16/1 मै० स० 3/14/3/14 वा० स० 24
2 दृष्टा बलाका घनमभ्युपति—वा० रा० कि० 28/25
3 'बलाका बिसकण्ठिका—इत्यमर (सिंहादिवर्ग)
4 जीवजगत' पृ० 325
5 इन० वड० भाग 8 पृ० 200
6 इन० वड० भाग 8 पृ० 200

भी माना गया है।[7] परन्तु वास्तव में ये दोनों एक ही परिवार के दो भिन्न भिन्न पक्षी हैं। इस सम्बन्ध में कतिपय प्रमाणों को प्रस्तुत करना उचित होगा।

१ अमरकोष में बलाकाबिसकण्ठिका तथा 'बक कह्व' ... इनको अलग अलग पक्षियों के नाम लिए गये हैं। यदि बक व बलाका एक होते तो नहीं मालूम होते।[8]

२ मनुस्मृति में भी बक और बलाका का पृथक परिगणन किया गया है अतः इन दोनों को एक नहीं माना जा सकता।

३ बक एक मूक पक्षी है एवं यह जल के मध्य एक टांग पर खड़ा रहता है यह सहनशील माना जाता है, किन्तु बलाका आकाश में उड़ने वाला गीत-गाता पक्षी है।

४ बक दिन में अकेला रहता है तथा रात को समुदाय में आराम करता है किन्तु बलाका सर्वदा समुदाय में उड़ती रहती है।

५ महाकवि हाल ने गाथा सप्तशती के प्रथम शतक के चतुर्थ श्लोक में 'पश्य निश्चलनिष्पन्द बिसिनी पत्रे राजते बलाका' कहा है। इस कथन से स्पष्ट होता है कि बलाका कोई छोटा पक्षी है जो कमल पर बैठ सकता है, किन्तु बक बड़ा पक्षी होता है, तब वह कमल पर नहीं बैठ सकता। अतः यह स्पष्ट है कि बक व बलाका दो भिन्न भिन्न पक्षी हैं एक नहीं।

सस्कृत काव्यों में बलाका—संस्कृत काव्यों में बलाका के लिए केवल बलाका शब्द का ही प्रयोग देखा गया है।[9]

मानव एवं बलाका—मानव एवं बलाका का सामान्यतः साथ नहीं है फिर भी मानव ने सदा-सदा बलाका के प्रति रुचि प्रदर्शित की है। कादम्बरी में स्फटिक निर्मित क्रमबद्ध बलाकाओं के मुख से निकलने वाली जलधारा का उल्लेख इस बात का प्रमाण है कि मानव ने बलाका की श्रेणी बद्धता एवं धवलता की ओर अपना ध्यान लगाया है।[10] महाकवि कालिदास ने मेघदूत के पूर्वार्द्ध में मेघ के साथ बलाकाओं के उड़ने की बात कहकर यात्रा के शुभ लक्षण के रूप में स्वीकार किया है।[11]

---

7 आप्टे ए० क्रेन०, मोनियर विलियम्स०–'ए कोर्डिड आफ क्रेन आर हेरन' कोलबुक–ए स्माल क्रेन

8 बकश्चैव बलाकाश्च'–मनुस्मृति 5/14

9 ऋतु० 3/12 मेघ 1/10

10 क्वचित स्फटिक० कादम्बरी० पृ० 613

11 सेविष्यन्ते नयन सुभग खे भवन्त बलाका —मेघ० पृ० 1/10

कार्य-कलाप—हर जीव की कोई न कोई विशेष क्रिया हुआ करती है बलाका की उड़ान के विशेष उल्लेख मिलते हैं बलाकाओं द्वारा पंक्ति बांधकर उड़ने की बात महाकवि कालिदास ने की है वर्षा काल में बलाकायें श्रेणी बांधकर उड़ती हैं एवं यह उनके गर्भाधान का काल माना जाता है[12] कतिपय विद्वान 'गर्भाधानक्षणपरिचय'नुनमावद्धमाला' का अर्थ गर्भ का आधान नामक उत्सव विशेष से लेते हैं अन्य विद्वान इसे गर्भग्रहण करने का अवसर मानते हैं[13] अधिकतर विचारकों के मत में वर्षाकाल को बलाकाओं का गर्भाधान काल ही स्वीकार किया गया है[14] कालिदास ने ही वर्षाकाल में उड़ती हुई बलाकाओं को एक-एक करके गिनती करने वाले सिद्धों की बात कही गई है एवं बलाकाओं के पंक्तिबद्ध होकर उड़ने की बात को पुनः दोहराया है[15] बलाकाओं का यह उड़ना वर्षाकाल में ही देखा गया है इसका प्रमाण कालिदास द्वारा दिये गये शरदऋतु के वर्णन है जहां इस ऋतु में बलाकाओं द्वारा पंखों की वायु से आकाश को प्रकम्पित न करने का उल्लेख किया गया है[16] इन वर्णनों के अध्ययन से हमारे सम्मुख निम्न तीन बातें आती हैं—

(१) बलाकाओं का गर्भाधान काल वर्षा ऋतु है

(२) बलाकायें वर्षाऋतु में श्रेणीबद्ध होकर आकाश में विचरण करती रहती हैं

(३) शीतकाल में बलाकायें आकाश में नहीं उड़ती

उपमित-बलाका—उमा शंकर के विवाह में कालिदास ने सात माताओं का वर्णन प्रस्तुत करते समय स्वच्छ खप्परों से शरीर को अलङ्कृत करके चमकने वाली काली मां को बलाकाओं से युक्त काली मेघघटा से उपमित किया है[17] यहां बलाकाओं की धवलता को खप्परों की उज्ज्वलता से एवं मेघ की श्यामलता को काली माता के कृष्णवर्ण से उपमित किया गया है ठीक इसी उपमा से साम्य रखती हुई उपमा रघुवंश में ताड़का वध के प्रसंग में दी गई है वहां कहा गया है

---

12 मेघ० पू० 1/10

13 गर्भाधान तदेव क्षण उत्सव तस्मिन परिचयात—मेघदूत टीका मल्लिनाथ 'गर्भाधाने गर्भग्रहणावसरे क्षण क्षणमात्र परिचय सगमस्तानाम—सुमतिविजय

14 का० के पक्षी—पृ० 106–107

15 श्रेणीभूत० मेघ० पृ० 23

16 नभो बलाका० ऋतु० 3/12

17 ता सा० च० कुमार० 7/39

कि कानों में मनुष्य के कपालों के कुण्डलों को शोभायमान करती हुई वह काली ताड़का भगवान राम के सम्मुख इसी प्रकार उपस्थित हुई जिस प्रकार बलाकाओं की पंक्ति से पूर्ण काले श्यामवर्ण मेघ घटा।[18] वासवदत्ता में मेघों के बीच के भाग में उड़ती हुई बलाका पंक्ति को शोभा से उपमित करते हुए लिखा है कि तीव्र प्यास के आवेग से नीरनिधि जल पीने के समय मेघ ने पानी के साथ स्थित शंखों का पान कर लिया हो एवं अब वमन कर उन्हीं को बगुलियों के रूप में बाहर निकाल रहा हो।[19] बलाकाओं की धवलता एवं शंखों की उज्ज्वलता में जो समता यहां प्रदर्शित की गई है, वह उचित है शंख व बलाकाओं दोनों का जल में निवास भी यहां प्रदर्शित किया गया है

सम्पूर्ण काव्यों में बलाका का कुल १६ बार वर्णन आया है महाकवि कालिदास ने बलाका का ६ बार उल्लेख किया है कालिदासोत्तर काव्यों में सुबन्धु व बाणभट्ट ने २ व एक बार बलाका का वर्णन किया गया है बलाका के वर्णन का विश्लेषण प्रस्तुत तालिका द्वय में देखा जा सकता है

18 'ताडकाचलकपालकुण्डला कालिकेव निबिडा बलाकिनी'—रघु० 11/15

19 'अति तृष्णावेगपीत जलनिधि जलशंखमाला बलाकाच्छलाद ० वासवदत्ता पृ 247

## तालिका—१

'बलाका' के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (6)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| १ | रघु | ११।१५ |
| १ | कुमार | ७।३९ |
| ३ | मेघ | १।१० १० २३ |
| १ | ऋतु | ३।१२ |

## तालिका—२

बलाका के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (3)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| सुबन्धु | २ | वासवदत्ता | पृ २४७ ४२० |
| बाणभट्ट | १ | कादम्बरी | पृ ६१३ |

# बक
# THE HERON

'आस्याननलिनी बकं'

कादम्बरी० पृ० ३३१

विशाल संस्कृत-साहित्य में बक का स्थान वर्णन की दृष्टि में गौण है अमर कोष में बक के लिए बक एवं कह्व नामों का उल्लेख है[1] वैज्ञानिकों की दृष्टि में बक मरु दण्डीय उपजगत के पक्षिश्रेणी के अन्तर्गत महाबक वर्ग का सदस्य है[2] बक भी यूरोप एशिया व अफ्रीका महाद्वीपों में सर्वत्र पाया जाता है[3]

बगुले की अनेकानेक किस्में विश्व-पटल पर विद्यमान हैं जिनमें निम्न लिखित प्रमुख हैं—१ माल्जल २ कछरिया ३ गाय ४ बगली

बगुले का सर्वप्रिय भोजन मछली है,जिसकी तलाश में वह अडिग एक टाँग पर खड़ा होकर ध्यान लगाता है इसकी इस क्रिया के कारण ही पाखण्डी धार्मिक लोगों को 'बगुला भगत' की उपाधि प्राप्त हो गई है जिस प्रकार 'काक चेष्टा' जगत् प्रसिद्ध है वैसे ही 'बक ध्यानम्' भी ख्याति प्राप्त कर गया है मछली के अतिरिक्त बक मेढक, घोंघे, केंचुयें व जल से छोटे बड़े सभी कीड़े बक की भोजन तालिका में हैं

बगुले पेड़ पर घोंसला बनाकर रहते हैं ये शिकार के समय अलग अलग रहते हैं किन्तु रात को इन्हें एक ही वृक्ष पर समुदाय के रूप में देखा गया है[4] इनकी ध्वनि 'काक-काक' होती है जो बड़ी कर्कश होती है जिस वृक्ष पर बगुला निवास होता है वह जल्दी ही नष्ट हो जाता है बगुले का घोंसला पेड़ों की टह-नियों और घास-फूस का बना होता है मादा एक बार में ६ तक अण्डे देती है

---

1 'अथ बक कह्व' —इत्यमर (सिंहादिवर्ग)
2 जीवजगत० पृ० 325
3 भारत के पक्षी० पृ० 210
4 इन० वद० भा० 8 पृ० 200

## सस्कृत काव्यों में बक

सस्कृत काव्यो मे बगुले के लिए बक शब्द का प्रयोग हुआ है [5]

काय-कलाप—शिशुपालवध मे माघ ने कमलो व स्त्रियो के मुख मे भेद बतलाते हुए बको को कमलो के सम्पर्क मे रहने वाला बतलाया है [6] तात्पर्य यह है कि बगुले पानी मे कमलो के पास निवास करते हैं

उपमित बक—नैषधीयचरितम मे चन्द्रमा को शकर के मस्तक पर निवास करने वाली गगा के तट पर स्थित वन में बेंता के खेत म रहने वाला बगुला कहा है [7] यहा बक की श्वेतता एव चन्द्रमा की धवलता मे साम्य प्रदर्शित किया गया है राजाओ को सभारूपी कमलिनी के बगुले कहा है [8] राजाओ को बगुले कहना उनके प्रधान व दुष्टत्व का प्रतीक है, क्योकि सस्कृत-साहित्य मे 'न शोभते सभा मध्ये हसमध्ये बको यथा'—कहकर असस्कृत व्यक्तियो के प्रति विचार प्रदर्शित किये हैं दशकुमारचरित मे धूर्त मन्त्रियो को बगुला कहते हुए लिखा है कि वे मन्त्री रूपी बगुले आपके पास से चोरी द्वारा प्राप्त धन को वेश्याओ के निवासो मे भरते हुए आनन्द लूटते है [9] वास्तव मे बक भी धूर्ततापूर्ण ढग से बेचारी भोली-भाली मछलियो का अपहरण करता है अत विचार साम्य है

इस प्रकार सम्पूर्ण कालिदास एव कालिदासोत्तर काव्यो में बक का कुल ४ बार वर्णन आया है कालिदास के काव्यो मे बक का उल्लेख नही कालिदासोत्तर काव्यो मे माघ श्रीहर्ष, बाण व दण्डी ने बक का एक-एक बार वर्णन किया है बक के वर्णन का विश्लेषण प्रस्तुत तालिकाओ मे देखा जा सकता है



5 कादम्बरी० पृ० 331 नैषध० 22/138
6 क्वचिद् वियोकैबक०-शिशु० 8/29
7 नैषध० 22/138
8 'आस्थाननलिनी बक — कादम्बरी० पृ० 331
9 तस्पभिमन्त्रिबक —द० च० पृ० 17

## तालिका–१

'बक' के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (X)

## तालिका–२

'बक' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (4)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| माघ | १ | शिशु | ८।२६ |
| श्रीहर्ष | १ | नैषध | २२।१३८ |
| बाणभट्ट | १ | कादम्बरी | पृ ३३१ |
| दण्डी | १ | द च | पृ ८।१७ |

——

# क्रौंच
## THE COMMON CRANE

'मनोहरक्रौंचनिनादितानि ।'

—ऋतु० ४/८

संस्कृत साहित्य में क्रौञ्च का वर्णन अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा है। वैदिक साहित्य में क्रौञ्च को क्रुञ्च, क्रुञ्च व क्रौञ्च कहा गया है[1] वाल्मीकि रामायण का क्रौञ्च का वर्णन तो सुविख्यात है[2] अमरकोष में क्रौञ्च के क्रुङ् व क्रौञ्च दो नाम मिलते हैं[3]

क्रौञ्च वैज्ञानिकों के अनुसार मेरुदण्डीय उपजगत् के अन्तर्गत पक्षी श्रेणी के क्रौञ्च वर्ग व क्रौञ्च परिवार का सदस्य है[4] परन्तु क्रौञ्च कौनसा पक्षी है, इस विषय में सभी विचारक एक मत नहीं आधुनिक कोषकारों में मोनियर विलियम्स ने क्रौञ्च का अर्थ 'कुरलेव' तथा 'हेरन' (Heron) कहा है[5] मैक्डानल व कीथ ने इसे 'स्नाइप (Snipe) कहा है[6] आप्टे ने भी इसे 'कुरलेव' या 'हेरन' ही माना है[7] अत इन सब के अनुसार क्रौञ्च, कुरलेव, स्नाइप या हेरन एक ही पक्षी हैं कुरलेव को सामान्य भाषा में 'गुलिन्ग' कहा है जो टिटहरी परिवार का सदस्य है[8] यह समुद्र तट पर रहने वाला पक्षी है जो दल दल में

---

1 मै० स० 3/11/6, वा० स० 19/73 त० स० 2/6/2/1

2 यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्'—वा० रा० 2/15

3 क्रुङ् क्रौञ्च'—इत्यमर (सिंहादिवर्ग)

4 जीवजगत पृ० 398

5 A Sanskrit English Dictionary 1959 P 323

6 वै० इ० भाग–1 पृ० 198–199

7 स० इ० डि० आप्टे पृ० 169

8 जीवजगत् पृ० 421

सडा होकर कीडे-मकोडो का खाता रहता है क्रौञ्च का जो साहित्यिक वर्णन प्रस्तुत काव्यो मे मिलता है वह पुलिन की विशेषताओ से बिलकुल भिन्न है अत इसे पुलिन्दा मानना न्याय सगत प्रतीत नहीं होता क्रौञ्च 'कॉमन क्रेन' ही प्रतीत होता है, जो राजस्थानी कू ञ (कुरजां) गुजराती 'कुञ्ज' व पजाबी कू ज का शुद्ध रूप है अत कू ज को ही क्रौञ्च माना गया है[9]

क्रौञ्च लगभग एक मीटर लम्बा पक्षी होता है इसके शरीर का रग मलेटी होता है एव इसके नीचे का भाग कलछौंह राखी होता है इसके पख कुछ काले मे और गर्दन के नीचे का भाग गन्दा लाल होता है इसकी चोच कलछौंह व हरे रग की होती है इसके पर काले रग के होते हैं इसका आकार करकरा से साम्य रखने के कारण यदा कदा विवाद का विषय बनता है

क्रौञ्च का निवास स्थाई नही वह पाकिस्तान अफगानिस्तान उत्तरी यूरोप व चीन मे क्रौञ्च देखे गये हैं भारत म यह थोडे समय क लिये आता है एव पुन प्रस्थान कर जाता है क्रौञ्च जलाशयो के निकट रहना पसद करता है समुदाय बनाकर उडना इसे अधिक प्रिय है ये एक सीधी पक्ति बाधकर उडते हैं एव देखन मे अभिराम लगते हैं इसकी आवाज सारस की भाति कर्कश होती है जिसे बडी सरलता से पहिचाना जा सकता है क्रौञ्च प्रात एव साय खेतो म समुदाय के रूप मे चरते हैं जिस खेत मे क्रौञ्च चरने लगते हैं वह खेत तो बर-बाद हो जाता है यह हरी घास को बडे चाव से खाते हैं इसके अतिरिक्त इसकी भोजन तालिका म घोघे मछलिया व कीडे मकोडे हैं क्रौञ्च के एक समुदाय मे २०० से ३०० सदस्य होते हैं इसकी मादा किसी दलदल वाले प्रदेश के निकट सूखी टहनियो के बीच दो अण्डे देती है अण्डो का रग हरछौंह भूरा होता है

राजस्थानी लोकगीतो मे क्रौञ्च का वर्णन प्राप्त होता है एक युवती द्वारा क्रौञ्च के पख मागकर प्रियतम के पास जाने एव बाद मे पख वापस कर देने की बात कही गई है एक अन्य गीत मे अपने प्रियतम के आने की प्रतीक्षा मे पुन-पुन माग देखने से एक नायिका की गर्दन के लम्बे हो जाने का उल्लेख भी मिलता है

## सस्कृत काव्यों में क्रौञ्च

सस्कृत-काव्यो मे क्रौञ्च का वर्णन अत्यन्त विरल है महाकवि कालिदास ने अपनी रचना ऋतुसहार म तीन बार क्रौञ्च का वर्णन किया है हेमन्त ऋतु

---

9 'वैसे इसका शुद्ध सस्कृत नाम क्रौञ्च है जो हमारे यहा सारस की जाति के प्रसिद्ध पक्षी हैं'—जीवजगत पृ० 398

का उल्लेख करते हुये क्रौञ्च की ध्वनि का उल्लेख किया है[10] कालिदास के इन वर्णनों से क्रौञ्च का पानी के खेतों में रहना सिद्ध होता है महाकवि बाण ने कालिन्दी के परिसर में सुनाई देने वाले क्रौञ्च दैत्य-पत्नियों के विलाप की तुलना अच्छोद सरोवर में ध्वनि करने वाले पक्षियों से की गई है[11] इस वर्णन से क्रौञ्च पक्षियों का जल के पास रहना सिद्ध होता है

धनुष की टंकार की समता क्रौञ्च की ध्वनि से करते हुए माघ ने लिखा है कि शरदऋतु में मदोन्मत्त बहुत से क्रौञ्च पक्षियों के कलरव के समान धनुष उच्च ध्वनि से टङ्कार करने लगा इन सभी वर्णनों से हमारे सम्मुख ये बातें आती हैं-

(१) क्रौञ्च जलचर पक्षी है

(२) क्रौञ्च की ध्वनि बड़ी तीखी होती है

इस प्रकार प्रस्तुत काव्यों में क्रौञ्च का उल्लेख कुल मिलाकर ६ बार हुआ है महाकवि कालिदास ने क्रौञ्च का तीन बार वर्णन किया है माघ सुबन्धु एवं बाणभट्ट ने क्रौञ्च का एक एक बार वर्णन किया है क्रौञ्च के वर्णन का विश्लेषण निम्नलिखित तालिकाओं में अवलोकनीय है

10 'मनोहर कौञ्चनिनादितानि'—ऋतु० 4/8
'कौञ्चनादोपगीत'—वही० 4/19
'कौञ्चनिनादराजितम —यथोपरि० 5/1
'प्रकुञ्जित कौञ्च सञ्चारे —वासवदत्ता पृ० 249

11 'पम्पुलपरितमिव श्रूयमाण कौञ्चवनिताप्रलापम —कादम्बरी० पृ० 375

## तालिका—१

'क्रौञ्च के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (३)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| ३ | ऋतु | ४।८ १९ ५।१ |

## तालिका—२

क्रौञ्च' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों मे विश्लेषण (3)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| माघ | १ | शिशु | २०।१६ |
| सुबन्धु | १ | वासवदत्ता | प २४६ |
| बाणभट्ट | १ | कादम्बरी | प ३७५ |

## सारस
## THE CRANE

'दीर्घीकुर्वन्पटु मदकल कूजित सारसानाम् ।
—मेघ० १।३१

सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य म सारस का स्थान सवत्र गौण रहा है वाल्मीकि रामायण म सारस स सम्बन्धित अनेक प्रकरण मिलते है [1] अमरकोष मे सारस के लिये पुष्कराह्व एव सारस शब्दो का प्रयोग हुआ है [2] सारस, हस, चक्रवाक ये सभी शब्द अनेकधा एक अर्थ म प्रयुक्त होते रहे हैं [3] सारस के अन्य पर्यायवाची भी संस्कृत साहित्य के शब्द कोशो मे उपलब्ध होते हैं [4]

वज्ञानिको के अनुसार सारस क्रौंच–वग के क्रौंच परिवार का सदस्य है [5] सारस भारत, चीन बर्मा साइबेरिया, तिब्बत एव रूस के स्टेपीज प्रदेशों में पाया जाने वाला पक्षी है इसे बडी आसानी से पहचाना जा सकता है क्योकि इसकी गदन व टागे लम्बी लम्बी होती है यह ककशध्वनि से बोलता है सारस की लम्बाई ५ फीट से ५ ५ फीट तक होती है इसके सिर गदन व पर धूसर रग के होते हैं गदन का ऊपरी भाग सफेद होता है इसके पख भूरे होत हैं किंतु नीचे की ओर सफेदी लिये हुये होत हैं चोच सीग के रग की होती है

सारस सरोवरा क पासवर्ती भागो म निवास करते हैं यह बरसात के दिनों म किसी द्वीप पर घोसला बना लेते हैं सारस का घोसला यदि अधिक ऊचे स्थान

---

1 हस सारसचक्रोहव कुररश्च समेतत '—वा० रा० कि० 30/63
हससारसनादिता ' वही० सु० 14/24

2 पुष्कराह्वस्तु सारस —इत्यमर (सिंहादिवर्ग)

3 'चक्राग सारसो हस —शब्दार्णव '—किरात० 8/31
की मल्लिनाथ कृत टीका

4 सरसि भव सारस '—इति शब्दकल्पद्रुम

5 देखिये–जीवजगत–पृ० 40

पर होता है तो इसका अर्थ यही वर्षा की सम्भावना समझना चाहिये क्योंकि अधिक वर्षा होने पर ही यह अपने ऊंचे स्थानों पर बनाता है ताकि अपने अण्डों की आसानी से रक्षा कर सके

सारस सर्वभक्षी जीव है सामान्यत यह मछलियां, घोंघे, मटर, कंगुन, गेहूं, कमलनाल इत्यादि खाते पाया गया है[6]

बचपन में पाले जाने पर यह मानव का साथी बन जाता है एवं अत्यन्त सहायक होता है[7] पालतू सारस मनुष्य के पीछे-पीछे घूमते देखे गये हैं यह अजनबी व्यक्ति को देखकर चंचु प्रहार भी कर देता है[8]

सारस एक पत्नी-व्रत पक्षी है यह अपनी मादा के साथ खेतों में घास डाले बैठा रहता है जीवन के हर क्षेत्र में दोनों सदा साथ रहते हैं यदि एक को मार दिया जाय तो दूसरा भी प्राणों की बाजी लगा देता है यह मृतक की लाश को बड़ी मुश्किल से हटाने देता है यह मृतक के लिये बहुत दुःख करता है एवं रोता भी है[9]

मादा वर्षा काल में एक से तीन अंडे देती है अण्डों का रंग लालिमा लिये सफेद होता है एवं कुछ अंडे बादामी चित्तियों वाले भी होते हैं[10]

सारस भारतीय समाज में बड़े ही आदर के साथ देखा जाता है सारस का दर्शन शुभ शकुन माना गया है इसी कारण भारतीय लोग सारस को नहीं मारते एवं उसका सम्मान करते हैं भारत के अनेक भागों में सारस से सम्बन्धित गीत गाये जाते हैं राजस्थान में पुत्रोत्पत्ति पर एक लोकगीत गाया जाता है जिसमें सारस को बुलाकर भात खिलाने की बात कही गयी है[11] इस सम्मान के कारण ही सारस एक निर्भीक पक्षी बन गया है एवं जब तक इसके अत्यन्त करीब कोई व्यक्ति नहीं चला जाता, यह उड़ता नहीं सारस उड़ने से पहले 'कें-कें' की आवाज कर भल्लाता

---

6 भारत के पक्षी० पृ० 215

7 पा० हैण्ड० 445

8 भारत के पक्षी-पृ० 215

9 गेम बर्ड्स ग्राफ इंडियन एम्पायर-स्टुवर्ड बेकर भारत के पक्षी पृ० 215
भा० के पक्षी पृ० 162

10 जीवजगत पृ० 403

11 भा० के पक्षी पृ० 163
'जा ए रे दाई माई सारस न बुलाम्रो रे
लाम्रो रे चोखा चांवल सारस के जिमाम्रो रे ॥ —एक राजस्थानी लोकगीत

है और जोड़े मे उड़ जाता है यह आकाश मे अधिक दूर न जाकर कम ऊंचाई तक ही उडना पाया गया है सारस की आयु काफी होती है सौ वर्ष तक जीवित रहने वाले सारसों के उल्लेख भी मिलते हैं[12] सारस की निम्न लिखित प्रमुख जातियां भू-पटल पर देखने में आती है —

(१) सारस (२) कूंज (३) करकरा

संस्कृत साहित्य मे इनमे से किस सारस का उल्लेख है यह सिद्ध करना कठिन है सभी विद्वान इस विषय मे एक मत नही काव्यो मे किये गये अनेक वर्णन इन सभी प्रकार के सारसो की सामान्य विशेषताओ के वर्णन है अतः उनको किसी एक श्रेणी मे रखना सभव नही अतः सारस शब्द का अर्थ सम्पूर्ण क्रौंच परिवार के पक्षियों से ही लिया जाना अधिक उपयुक्त होगा, क्योंकि संस्कृत-साहित्य के काव्य काल में पक्षी विज्ञान इतना विकसित नहीं था एवं काव्यकारों ने इनके विभाजन को प्रमुख न मानकर प्रसगानुसार वर्णन को प्रमुख माना है

**संस्कृत-साहित्य में सारस**—संस्कृत काव्यों मे सारस के लिए लक्ष्मण[13] एवं सारस[14] शब्दो का ही प्रयोग हुआ है

**मानव व सारस**—सारस पाले जाने वाले पक्षियों मे से रहा है अतः इसका मानव से सम्पर्क रहा है कादम्बरी के उज्जयिनी वर्णन में कहा गया है कि सारस का स्वर मधुर होता है[15] महारानी यशोमती के अन्तःपुर में लड़ खड़ाकर गिरने वाली प्रतिहारी की कमर से बंधी करधनी के बजने से उसी आवाज में गृहसारसियों के चिल्लाने का वर्णन इस बात का प्रमाण है कि सारस राजमहल में यत्र तत्र-सर्वत्र घूमा करते थे[16] अत्यन्त शीतल चन्दवृक्षों की छाया में बैठे गृह सारसों का वर्णन भी सारस को मनुष्य के करीब लाता है[17]

**सारस के क्रिया-कलाप**—सारस के क्रिया-कलापों का मनोहर वर्णन काव्यकारों की लेखनी से बन पड़ा है सभी काव्यकारों ने सारस की क्रियाओं का उल्लेख करते हुये उसकी ध्वनि पर विशेष ध्यान दिया है सारसों की मधुर ध्वनि

12 देखिये—भारत के पक्षी, पृ० 215

13 शिशु० 4/59

14 रघु० 1/41, ऋतु० 1/19 कादम्बरी पृ० 68, किरात० 6/4

15 'गृहसारस-स्वरामृतेन'—कादम्बरी पृ० 165

16 स्खलित विशाल —ह० च० पृ० 282

17 प्रतिशिशिरचन्दन-विटपिच्छाया-निषण्ण-निद्रायमाणगृहसारसम्'

—कादम्बरी पृ० 272

पर विशेष ध्यान दिया है सारसों की मधुर ध्वनि सरोवरों व नदियों से आती हुई बतलायी गयी है 'सारसों की ध्वनि पम्पासर व शिप्रानदी की ओर से आ रही थी' ऐसे उल्लेख मिलते हैं पम्पासरोवर में सारस 'कें-कें' की ध्वनि कर रहे थे शिप्रा नदी तट पर मदोन्मत्त कलहंस एवं सारस शब्द कर रहे थे, सारसों के मधुर-शब्दों से शरद ऋतु में सरोवर सुन्दर प्रतीत हो रहे थे 'सारस मधुर-मधुर कूजन कर रहे थे'[18] इस प्रकार के उल्लेख काव्यकारों ने किये हैं इन उल्लेखों से हमारे सम्मुख दो बातें आती हैं प्रथम तो यह कि सारस सरोवर एवं नदियों के तट पर बहुतायत से निवास करते हैं एवं द्वितीय यह कि सारसों की ध्वनि मधुर होती है

शरद् ऋतु के अतिरिक्त वर्षा ऋतु में भी सारस द्वारा मधुर कूजन करने का उल्लेख करते हुये मेघदूत में लिखा है कि शिप्रा नदी का वायु कामोन्माद के कारण मधुर सारस रव को प्रसारित करता हुआ सम्भोग से थकी हुयी स्त्रियों के श्रम को दूर करता है[19] शरद ऋतु में सारसों द्वारा नदी तट पर भ्रमण करने का उल्लेख ऋतुसंहार में भी किया गया है[20]

कादम्बरी में शुक द्वारा सारस का अस्फुट शब्द सुनकर सरोवर के कहीं दूर स्थित होने की बात कही गयी है[21] लोक में भी मानव द्वारा सारस की ध्वनि सुनकर सरोवर की स्थिति का अनुमान लगाने के उदाहरण मिलते हैं सरोवर में सारसों का पंक्तिबद्ध होकर रहना वर्णित किया गया है[22] इन्द्रनील पर्वत पर सारसों के कूजन का वर्णन किया गया है एवं इसे अर्जुन के लिये मंगलकारी भी स्वीकार किया है[23] सारसों के हाथी के द्वारा डरकर भागने की बात कही गई है[24] सारस डरकर भागना अधिक पसन्द करते हैं क्योंकि वह उड़ने में अपने आपको

18 सारसित-समद-सारसम - कादम्बरी, पृ० 68
'प्रचसमदकलहंस सारस रसित -वासवदत्ता पृ० 73
'सरस सारसरसितसारकासोर -वही पृ० 250
सारसकुल प्रतिनादितानि -ऋतु० 3/16

19 दीर्घीकुर्वन्पटु मदकलं कूजितं सारसानाम् -मेघ० पू० 1/31

20 कादम्बसारसकुलाकुलतीरदेशा -ऋतु० 3/8

21 अस्फुटानि श्रूयन्ते सारस रसितानि -कादम्बरी पृ० 108

22 'सारसश्रेणीशेखरस्य'-ह० च० पृ० 47

23 स्फुट हससारसविरावयुज -किरात० 6/4

24 'द्रुतभीतसारसम -ऋतु० 1/19

कष्ट म पाते हैं सारसा से टकराने वाली तरगमालाम्रा का उल्लेख सारसो के किनारो पर तरने का प्रमाण है[25] इस प्रकार कवियों ने सारस की विभिन्न क्रियाम्रों का सुन्दर वणन प्रस्तुत कर पक्षी समाज के प्रति म्रपनी रुचि का प्रदशन किया है

उपमित सारस—सारस की विभिन्न क्रियाम्रा को काव्यकारा ने उपमित किया है मेखला (करधनी) के मधुर शब्द स सारस के कूजन की तुलना की गयी है[26] शख की ध्वनि को तत्काल जगन वाने गृह सारसों की ऊची म्रावाज स उपमित किया गया हैं[27] म्राकाश म पक्ति बनाकर उडने वाले सारस एस प्रतीत हो रहे थे माना बिना खम्भा क सहारे कोइ बन्दनवार टगी हो[28] यहा बन्दनवार व सारसा की पक्ति को समान बनाया गया है भगवान् राम के विमान की म्रोर पक्तिबद्ध म्राने वाली सारस श्रेणी ऐसी प्रतीत होती है माना सीताजी की म्रगवानी करने म्रा रही हा[29] यहाँ सारस पक्ति की समता म्रगवानी करने वाला से की गयी है क्योकि म्रगवानी करने वाले भी वाहन के सम्मुख म्राकर उपस्थित होते हैं एव शुभ लक्षण वाले भी होते हैं एकमात्र म्रवशिष्ट तालाब से सारसों के म्रलंकृत हाने की तुलना कीर्तिमात्र म्रवशिष्ट रहन पर रसिकता के विनिष्ट हाने से की है[30] यही रसिकता व सारसा की उपस्थिति की समता बतलायी गयी है इस प्रकार सारस का उपमित किया गया है

सम्पूर्ण काव्या म सारस का उल्लख कवल २४ बार हुम्रा है सबसे म्रधिक वणन महाकवि बाण ने किया है उन्होने कादम्बरी म ६ बार एव हर्षचरित मे सारस का वणन २ बार, कुल ६ बार सारस का वणन किया है महाकवि कालिदास ने सारस का वणन ७ बार किया है जबकि भारवि सुबन्धु दण्डी व माघ ने क्रमश ३, ५ २ बार एव १ बार किया है सारस के ये सभी वणन काव्यकारो की पक्षियो के प्रति सहानुभूति के प्रमाण हैं सारस क वणन का विश्लेषण प्रस्तुत तालिकाम्रो में दर्शनीय है

---

25 विभिदयमाना विससार सारसानुदस्य तीरषु तरगसहति –किरात० 8/31
26 रशना–रवाहूत–गहसारस रसित सम्भिन्न –कादम्बरी, प० 254
'परिक्वणत्सारसपंक्तिमेखल'–किरात० 8/9
27 'तत्क्षणप्रतिबोधिताना गहसरोजिनीसारसानामनुवत्यमान इव
—कादम्बरी उ० पृ० 59
28 'श्रेणीव पाद्वितय दभिरस्तम्भां तोरणस्रजम ।
सारस कलनिहाद क्वचिदुन्नमिताननौ । –रघु० 1/41
29 प्रत्युद्व्रजन्तीव खमुत्पतन्त्यो गोदावरी सारसपक्तयस्त्वाम –रघु० 13/33
30 (सा) रसवत्ता विहता–सरसीव कीर्तिशेष गतवति भुवि विक्रमादित्ये
–वासवदत्ता पृ० 5

करीब १७ इंच होती है[7]

कोयल का निवास स्थान गहरे वृक्षों के निकुञ्ज होते हैं निकुञ्जों में बैठ कर कूजना इसे अधिक प्रिय है कोयल अपना घोंसला नहीं बनाती, वह तो अपने अण्डों को किसी अन्य पक्षी के घोंसले में रखकर अपने बच्चों का पालन करवाती है अतः इसे अत्यन्त चतुर पक्षी माना है नर कौवों के पास जाकर उत्पात मचाता है एवं कौवों को मादा सहित इधर-उधर उड़ाता है, तब मादा कोयल अण्डा रख देती है इसके साथ ही वह कौवे के अण्डों को दूर फेंक कर एक ध्वनि करती है और नर कोयल कार्य की सफलता को समझ कर वहीं दूर उड़ जाता है कौवे शत्रु को भागा हुआ समझकर घोंसले पर लौट आते हैं कौवे अण्डों की पूर्ण रक्षा करते है एवं जब कोयल के बच्चे उड़ने योग्य हो जाते हैं तो वे किसी भी समय उड़ जाते है पालन काल में यदि भाग्यवश कोई कौवे का बच्चा घोंसले में होता है तो *कोयल का बच्चा अक्सर उसे नीचे गिरा देता है* बेचारा कौवा पूरा ध्यान रखकर उनका पालन करता है एवं उनके उड़ जाने पर दुःख भी प्रकट करता है अपनी मूर्खता के कारण इस रहस्य को समझ नहीं पाता है[8] कोयल का यह चातुर्य जन्मजात होता है एवं इसके बच्चे कौवा के बच्चों से अधिक नाटनवर होते है यही कारण है कि यह कौवे जैसे धूर्त पक्षी को भी धोखा देने में सफल होती है

कोयल एक बार में २ से ७ तक अण्डे देती है विलायती कोयल २०-२५ अण्डे तक भी देती देखी गयी है अण्डे नीलापन लिये हरे रंग के होते हैं, जिनपर कत्थई चित्तियां पड़ी होती है[9]

कोयल के मुख्य खाद्य पदार्थ—आम, जामुन एवं विभिन्न कीड़े पतंगे आम व जामुन खाना इसे अधिक प्रिय है कोयल की बोली नर व मादा के आधार पर भिन्न होती है नर की बोली कुहू-कुहू एवं मादा की किक् किक् किक् होती हैं नर की ध्वनि बड़ी तेज होती है जो वसन्तागम से शरदागम तक सुनी जाती है[10] कोयल को कूजन वर्षाकाल मे भी जारी रहता है किसी कवि का यह कथन 'अब तो दादुर बोलि हैं भये कोकिला मौन" सत्य नहीं

कोयल के मुख्य भेद दो है —

---

7 जीवजगत पृ० 456, भारत के पक्षी पृ० 39

8 देखिये—भारत के पक्षी पृ० 40-41 जीवजगत पृ० 456

9 देखिये—वही० 456 भारत के पक्षी पृ० 40 इन० वड० भाग 3 पृ० 940

10 देखिये—भारत के पक्षी पृ० 39

(१) काली चोंच वाली कोयल
(२) पीली चोंच वाली कोयल

ये दोनों ही बड़े शर्मीले जीव हैं किन्तु इनकी ध्वनि इनको पहिचानने में प्रमुख है इन दोनों में भेद यह होता है कि काली चोंच वाली कोयल की आँखों पर लाल रंग के घेरे बने होते हैं एवं पीली चोंच वाली कोयल की पूंछ पर लाल निशान होते हैं[11]

## संस्कृत-काव्यों में कोकिल

संस्कृत काव्यों में वर्णित पक्षी-वर्ग में कोकिल का प्रमुख स्थान रहा है काव्यों में कोयल को कोकिल, पिक, परभृत नामों से कहा गया है नर कोकिल को पुंस्कोकिल व मादा को अन्यभृता, अन्यपुष्टा परपुष्टा नामों से कहा है[12]

मानव एवं कोयल—मानव ने सदा से पक्षियों से सम्पर्क बनाये रखा है अन्य मानव की रचनाओं में मीठे स्वर से साध्वी स्त्रियों के भी अधीर होने की बात कही गयी है[13] भगवती-सरस्वती को कोयल का तिरस्कार करने वाली कहा है वास्तव में देववाणी के सम्मुख कोकिल वाणी का महत्त्व ही क्या होना है? शकुन्तला के पतिगृह-गमन के समय कोयल की वाणी से वन के साथियों द्वारा जाने की आज्ञा दी जाने की कल्पना महाकवि की एक उत्तम सूझ है[14]

एक तरफ कोयल की ध्वनि आनन्ददायी कही गयी है, दूसरी ओर वही कोयल की ध्वनि कादम्बरी को कामपीडा काल में व्याकुल बना देती है[15] अन्यत्र स्त्रियों द्वारा कोयल के कूजन से वशीभूत न होकर दिन में ही पतियों को प्राप्त करने की बात कही गयी है[16] कामपीडा से व्याप्त दमयन्ती को सखी कहती है कि वह कोयल का क्या नहीं चाहती जबकि वह तो उसको तप्त करने वाले इन्दु को न चाहती हुयी अमावस्या (कुहू) की मुक्तकण्ठ से कामना करती है[17] यहा

---

11 इन० बड भाग 3 पृ० 940

12 शिशु 6/70, नैषध० 21/156, बु० च० 20/3 कादम्बरी उ० पृ० 29 नैषध० 20/89, विक्रम० 4/24, शाकु० 4/10 ऋतु० 6/23 रघु० 8/59, ऋतु० 6/27 सौ० न० 7/7 वासवदत्ता० पृ० 92, कादम्बरी० पृ० 533, बु० च० 4/51,

13 'पुंस्कोकिले'–ऋतु० 6/23

14 'परभृतविरुत–शाकु० 4/10

15 पिकवृन्द कलकलेनाकुलीक्रियते—कादम्बरी पृ० 29

16 कोकिले स्त्री—शिशु० 6/70

17 'न किं पुनरिच्छसि कोकिलाम'—नैषध० 4/107

प्रति कोयल को चन्द्र का विरोधी बनाती है, फिर वह दमयन्ती को अच्छी क्या नहीं लगती परन्तु कोयल की वाणी भी विरहणियों के ताप को उत्कट करने वाली होती है अन्यत्र दमयन्ती की वाणी का अनुकरण करने वाली कोयला का उल्लेख करते हुए श्री हर्ष ने कहा है कि कोयलें दमयन्ती की वाणी को भलीभांति उच्चारण नहीं कर पाती एवं इस कारण वे आम के बगीचे में बठकर पुन पुन कण्ठस्थ करने का अभ्यास कर रही है[18] मालविकाग्निमित्र' में पुरुरवा कोयल को पक्षियों में समझदार जाति कहता है एवं अपनी प्रिया के बारे में उससे पूछता है[19]

इन सब बातों से यह स्पष्ट होता है कि मानव पशु पक्षियों को अपने सुख मे प्रसन्न एवं अपने दुःख मे दुःखी देखता है साथ ही पक्षी भी मानव के सम्पर्क मे रह कर उसकी भावनाओं के पारखी हो जाते हैं एवं समयानुसार व्यवहार करते हैं

क्रिया-कलाप—हर पक्षी मे अपनी रुचि, वातावरण एवं शारीरिक संरचना के आधार पर भिन्नतायें होती हैं यहां हम साहित्यिक वर्णनों के आधार पर कोयल के विभिन्न क्रिया-कलापों का वर्णन करेंगे।

मधुर स्वरा—कोयल की वाणी को अत्यन्त मधुर माना गया है महा कवि कालिदास ने विक्रमोर्वशीय 'मालविकाग्निमित्र' एवं 'कुमारसम्भव' में कोयल को मजुस्वना मधुर प्रलापिन, मधुर स्वरा एवं मधुरलापनिसर्ग पण्डिता आदि नामों से पुकारा है ये सब नाम कोयल के मधुरालाप के कारण ही दिये गये हैं[20] कोयल की बोली उसकी एक मुख्य विशेषता होने के कारण सभी काव्यकारों द्वारा यदा-कदा सर्वदा वर्णित की गयी है बुद्धचरित में आम के कुंज में कूकने वाली कोयल का उल्लेख करते हुये उसे हेममय पिंजड़े में बन्द बताया है[21] मत्तकोयल कूजने को सुनने की बात कही गयी है[22] कोयल की कूक का एक सुनिश्चित समय एवं स्थान होता है जेतवन विन्ध्याटवी, जाबल्याश्रम इत्यादि वन प्रदेशों मे

---

18 परभृतयुवतीना—नवध० 21/156

19 परभृता विहगमेषु पण्डिता जातिरेषा—विक्रम० 4 गद्य यथोपरि० 4/24

20 'एवगतेऽपि प्रियेव मे मजुस्वनेति न मे कोपोऽस्याम्' विक्रम०4 गद्य,
'परभृते ! मधुरप्रलापिनि—वही० 4/24
मधुरस्वरा परभृता—मालविका० 4/2
रतिदूतिपदेषुकोकिला मधुरालापनिसर्ग पण्डिताम'—कुमार० 4/16

21 हेमपजररुद्धो वा कोकिलो यत्र कूजति—बु० च० 4/44

22 'मत्तस्य परपुष्टस्य स्वत श्रूयतां ध्वनि'—वही० 4/51

कोयल का कूकना इस बात को भी सिद्ध करता है कि कोयल वन प्रदेशो मे अधिक निवास करती है[23] अन्यत्र वृक्षा पर कोयल का बोलना भी इसी बात का प्रमाण है[24] नैषधकार ने वावडी के किनारे कोयल के गाने की बात कही है[25] पवन को कोयल की आवाज को यत्र-यत्र-सवत्र फलान मे प्रमुख माना है[26] कोयल की मीठी वाणी के उल्लेख विक्रमोवशीय व दशकुमारचरित मे भी है[27] बालको द्वारा बारम्बार कुहू कुहू शब्द का उच्चारण करने पर कुपित कोयल के बोलने का उल्लेख किया गया है जो नि सन्देह सूक्ष्म अवलोकन का परिणाम है[28]

वसन्त व कोयल—वसन्त ऋतु व कोयल की कुहू-कुहू बोली का चोली दामन का साथ है इसका प्रमुख कारण है–वसन्त ऋतु मे कोयल का कामपीडित होना जिसका उल्लेख हम कर आये हैं वसन्त को कोयल की कूक से जी लुभाने वाला कहा गया है[29] कालिदास की भाँति बाण का ध्यान भी पु स्कोकिल की ध्वनि की ओर गया है[30] राजा दुष्यन्त के द्वारा वसन्त न मनाने के कारण पु स्कोकिल के गले में आकर उसकी आवाज का रुक जाना का वणन किया गया है[31] इस प्रकार वसन्त ऋतु के साथ कोयल का सम्बन्ध रहा है

शुक-काक-कोयल—कोयल, काक व शुक का एक साथ वणन यत्र-कदा साहित्यकारो ने किया है कोयल व कौए का तो रग भी एक सा कहा गया है

---

23 कूजितकोकिलम'—बु० च० 20/3
कोकिलकुल कल प्रलापिनी'—कादम्बरी० पृ० 59
उन्मदकोकिल-कुल-कलालाप कोलाहलिभि –वही० पृ० 117
'पदपद कोकिल कूजितम वनस्थलीय —रघु० 9/26

24 'नानामनोज्ञकुसुमद्रु मभूषिता ताहृष्टान्य पुष्टानिनदाकुलसानुदेशान' ऋतु 6/27
'पु स्कोकिलनिनादित पादपानि – बु० च० 3/1

25 विलासवापीतटवीचिवादनात्पिकालिगीते –नैषध० 1/102

26 'विस्तारय परभृतस्य वचासि'—ऋतु० 6/24

27 'मदकलकोकिल कूजितरव झकारमनोहरे'—विक्रम० 4/56
कलकण्ठिका कलालापमाधुर्येण'—द० च०

28 'कुतूहलेनेव मुहु कुहूरव विडम्ब्य डिम्भेन पिक प्रकोपित —नैषध० 9/38

29 'कोकिलालापरम्य –ऋतु० 6/37
कोकिलरुताय –वासवदत्ता० पृ० 26, ऋतु० 3/23

30 पु स्कोकिल काकुवकणितेषु –ह० च० पृ० 401

31 'कण्ठेषु स्खलितगतेऽपि शिशिरे पु स्कोकिलानांरुते'–शाकु० 6/4

कौए व कोयल के भेद को भर्तृहरि ने प्रस्तुत करते हुये लिखा है —

काकः कृष्णः पिकः कृष्णः को भेदः पिककाकयोः ।
वसन्तसमये प्राप्ते काकः काकः पिकः पिकः ॥

अतः कोयल व काक में रंगभेद नहीं, शब्द भेद ही प्रमुख हैं कौए एवं कोयल की बोली का सुन्दर साहित्यिक वर्णन नैषधकार ने किया है कि काक अपनी वाणी में प्रश्नवाचक सर्वनाम 'किम्' का द्विवचन में 'कौ कौ' कहता है जिसका तात्पर्य 'कौन से दो ?' होता है वह कोयल से मानो यह प्रश्न करता है तो कोयल उसका उत्तर 'तुही' कह कर देती है, कारण कि महाभाष्य में 'तातङ' का आदेश 'तु' व 'ही' दो रूपों में होता है[32] वृक्षों द्वारा कोकिल व कौओं को जीवनवृत्ति देने का वर्णन मिलता है[33] एक स्थान पर कोयल व तोता के समुदाय की उपस्थिति बतायी है तो अन्यत्र कोयल द्वारा टेसू के फूलों को शुक समझकर उनको मारने दौड़ने की बात कही है[34] ये दोनों बातें विपरीत मालूम होती हैं किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है, कारण कि बिना सम्पर्क एवं सहवास के वैरभाव भी पनप नहीं सकते

कोयल का परभृतत्व—जैसा कि हम कह आये हैं कोयल पक्षी जगत् का एक बुद्धिमान् जीव है अतः उसमें चातुर्य का पाया जाना उचित ही है कोयल का अन्य पक्षियों द्वारा अण्डों का पालन करवाना तो सर्व विदित है महाकवि कालिदास भी इस बात के जानकार थे तभी तो उन्होंने महाराज दुष्यन्त से शकुन्तला की बात की तुलना परभृत व्यवहार से करवायी है एवं स्त्रियों को चतुर बताया है[35]

कोयल का भोजन—अपने जीवन को बनाये रखने के लिये आहार की बड़ी आवश्यकता होती है कोयल भी अपने जीवन के लिये विभिन्न पदार्थों का भक्षण करती देखी गयी है आम एवं जामुन कोयल के प्रिय खाद्य पदार्थ हैं बसन्त में आम की मंजरी खाने से मस्त कण्ठवाली कोयल के कूजन का वर्णन किया है[36] कादम्बरी द्वारा पिंजरे में कोयल को आम की मंजरी देने की बात कही

---

32 नैषध० 19/60
33 'स्तुल्योपनीतपिककाकफलोपभोगा -वही० 11/25
34 यत्कोकिल पुनरयं मधुरवचोभिर्यूनां मनः सुवदनानिहितं निहन्ति–ऋतु० 6/22
35 'परभृताः खलु पोषयन्ति,–शाकु० 5/22
36 'चूताङ्कुरास्वादकषायकण्ठः पुंस्कोकिलो यन्मधुरं चुकूज'–कुमार० 3/32

है[37] वही कोयल के नख से विदीर्ण सहकार वृक्ष का वर्णन मिलता है[38] मालविकाग्निमित्र मे कोयल एव भ्रमर को आम की मजरी वाले स्थानो मे एक साथ रहने वाला बताया गया है[39] विक्रमोर्वशीय मे जामुन के रस के पीने से मस्त कोयल का उल्लेख मिलता है[40]

प्रजनन—काव्यकारो ने कोयल के प्रजनन का स्पष्ट उल्लेख तो नही किया है किन्तु यदा कदा काम पीडित एव मस्त कोयल का उल्लेख अवश्य किया है आम मजरी के रस मे मदमस्त कोयल द्वारा अपनी प्रियतमा को प्यार से प्रसन्न होकर चूमने की बात कही है[41]

इन सब क्रियाओ के अतिरिक्त काव्यकारो ने एक साथ अनेक क्रिया कलापो का उल्लेख भी किया है दूसरी सखी मत्त कोकिल को लेकर उसके पीछे गई जो हाथ मे टेढे रखे हुए स्फटिक दण्ड पर बैठी थी वह गा रही थी और कृष्णपक्ष की अपेक्षा काली भी थी उसमे कुछ शब्द और उसका अर्थ आपस के सम्बन्ध से स्पष्ट हो गये हैं' इस वर्णन मे एक साथ कोयल के बैठन उसके गायन एव रग का उल्लेख किया गया है[42] कादम्बरी मे कोयल के चक्षुराग का वर्णन मिलता है[43] मत्त कोकिलो द्वारा लवली लताओ के फूलो के मधुकणो को उडाकर उत्कट दुर्दिन बनाने का उल्लेख महाकवि बाण ने किया है[44]

उपमित कोकील—कुकवियो की तुलना वृथा प्रलाप करने वाले कोयल से की है जिस प्रकार कोकिल वाचल एव कामोद्दीपक होती हैं उसी प्रकार कुकवि रागयुक्त दृष्टि वाले एव असम्बद्ध प्रलापी होते हैं[45] कदपकेतु की वाणी को कोयल

37 चूतलतिके ! देहि पञ्जरपु स्कोकिलेभ्यश्चूतकलिकाकुराहारम'——
—कादम्बरी० पृ० 533

38 परभृत—वही० पृ० 417

39 मधुरस्वरा परभृता भ्रमरी च विबुद्धचूतसगिन्यौ—मालविका० 4/2

40 विक्रम० 4/27

41 'पु स्कोकिलश्चूतरसासवन मत्त प्रिया चुम्बति रागहृष्ट'—ऋतु० 6/16

42 नषध० 21/121

43 'चक्षुराग कोकिलेषु—कादम्बरी० पृ० 125

44 'उत्फुल्ल पल्लव-लवली लीयमान मत्त-कोकिलोल्लासितमधु शीकरोदयामर्दुदिनेषु
——वही० पृ० 4

45 'कोकिला इव जायन्ते वाचाला कामकारिण —हे० च० 4/4

वाणी से सम्बन्धित किया है।[46] कोयल की कूक को कामदेव का आदेश कहा है।[47] एक स्थान पर स्थिर न रहने वाली दुष्ट स्त्रियों को कोयल से उपमित किया है।[48] वास्तव में ये दोनों ही चपल एवं स्थिर होती हैं। स्मरणीय तुलना इन्दुमती-पार्वती कल्पसुन्दरी-कामिनी व वधुओं की मधुर वाणी को ही नहीं अपितु गायकाओं, धन्याओं तथा मुग्धाविवाहिताओं की वाणी को भी कालिदास ने कोयल की मधुर वाणी से उपमित कर उसके मधुरत्व का प्रमाण दिया है।[49] परन्तु पक्षी मालविका के समाचार बताते हुए चतुरी उसकी दशा किन्तु ... में यहाँ कोयल के समान बताते हैं।[50] कामदेव के पाँचों बाणों की तुलना कोयल के पञ्चम स्वर से की है।[51] कोयल को वसन्त ऋतु की दुन्दुभि कहा गया है यानी उसकी वाणी वसन्तागमन का प्रतीक है।[52] कलियों की वाणी को कोयल की बोली से बजने वाली वस्तु पर कोयल व पक्षी का वाणीसाम्य प्रदर्शित किया गया है।[53] व्यवहार में भी दोनों मन को लुभाने वाले होते हैं। अतः सादृश्य सम्यक् है। सुन्दर है कोयल की नीली एवं गुलाबी आभा से जामुन के रंग की समता की है।[54] ...

---

46 इत्येरकलिका—पातवदत्ता० 27

47 परभृताभिरितीव निवेदिते स्मरमते रमते स्म वधूजन'—रघु० 9/47

48 'कोकिलया काका इव चापुरुषा हृततलवया विप्रलभ्यमानमात्मान न चेतयते —ह० च० पृ० 335

49 'प्रातरालपति कोकिले कले—नैषध० 18/151, कोकिलमञ्जुवाविनीम—रघु० 12/39, 'कलमन्यभृतासु भाषितम'-वही० 8/59, 'स्वरेण तस्याममृतस्रुतेव प्रजल्पितायामभिजातवाचि। अप्यन्यपुष्टा प्रतिकूलशब्दा श्रोतुर्वितन्त्रीरिवताड्यमाना' कुमार०1/25 (45), परभृतमतिमञ्जुल प्रलापं -द० च० पृ० 283 सोत्कण्ठा कलरुठत्वेन मन्दमन्दमुरमलिरभावत' वही० पृ० 59, 'क न क 5 5 5 5 5 वही० पृ० 21, 'गायकीपुतवनकल कोकिला मञ्जुलध्वनिषु—वही० पृ० 125, कोकिला इव मदकलारावली कोमला लापिन्यो'-ह० च० पृ० 224

प्रथममन्यभृताभिरुदीरिता प्रविरला इव मुग्धवधूकथा —रघु० 9/34

50 'यो विडाल गहीताया परभृतिकाया —मालविका० 4 गद्य

51 'पिकस्वर एव स पञ्चम —नैषध० 4/94

52 तरुणपरभृत स्वन रागिणामततुरतये वसन्तानक '—शिशु० 6/67

53 वाद्यमान परभृततूर्ये'—विक्रम० 4/12

54 ग्रामरतकोकिल लोचनच्छविर्नीलपाटल कषायमधुरा प्रकाममापीतो जम्बूफलरस '—कादम्बरी० पृ० 53

प्रकार स"या को कोयल के नेत्रो के समान पिंगल वण वाली कहा है[55] कोम्रो स पालित कोकिल के समान वेश्याम्रो को धनादि से म्रत्यन्त परिपुष्ट बताया है म्रत कोयल व वश्या से साम्य प्रदर्शित किया है

इस प्रकार कोयल को म्रनेक काव्यकारो से विभिन्न प्रकार स उपमित किया है किन्तु उसकी वाणी का सभी काव्यकारो ने उपमित कर एकपक्षीयता को म्रप नाया है जो नवीनता से परे हैं म्रत उपमानो म म्रधिक सौन्दय नहीं म्रा पाया है जो कि म्राना चाहिये था

सम्पूण काव्या मे कोकिल का उल्लेख कुल १०५ बार हुम्रा है कालिदास ने कोयल का वणन ३३ बार, श्रीहर्ष ने २३ बार एव बाणभट्ट ने २२ बार किया हैं इसके म्रतिरिक्त दण्डी सुबन्धु म्रश्वघोष व माघ ने क्रमश ९ ७, ६ व ५ बार कोयल का वणन किया है वणन का विश्लेषण निम्नलिखित तालिकाम्रो में दशनीय है

---

55 कोकिल विलोचनच्छविभ्र शिचालयति साध्येभुवमर्चिषि'-काद० पृ० 512

## तालिका—१

'कोकिल के वणन का कालिदास के काव्यो में विश्लेषण (३३)

| सख्या | काव्य | वणन का क्रम |
|---|---|---|
| ५ | रघु० | ८।५६ ९।२६ ३४, ४७ व १२।३९ |
| ६ | कुमार० | १।४५ ३।३२ ४ १४ १६, १६, व ६।२ |
| १० | ऋतु० | ६।१६ २१ से २४ २६ २७, २६ ३४, ३५ व ३७ |
| ४ | शाकु० | ४।१० ५।२२ ६ गद्य व ६।४ |
| २ | मालविका० | ४गद्य व ५।१ |
| ६ | विक्रम० | १।३ ४।१२ गद्य, २८ ५६ व ७२ |

## तालिका–२

'कोकिल' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (७२)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्वघोष | ४ | बु० च० | ३।१ ४।४४ ५१ व २०।३ |
| " | २ | सौ० न० | ७।७ व ११ |
| माघ | ५ | शिशु० | २।११६ ६।८६७ ७० १९।५० |
| श्रीहर्ष | २३ | नैषध० | १।९ ९० १०० २, २।४५ ४।९४, १०७ ७।४८ ८।६४ ६५ ९।०८ १०६ १०।१२९ ११।१२५ १२।१४ १८।१७ १५१ १९।६० २०।८९, १२४, ५६ व २२।३, १२३ |
| सुबन्धु | ७ | वासवदत्ता | पृ० २६, २७, ९२ ११० १११, १७७ व २३३ |
| बाणभट्ट | ५ | ह० च० | पृ० ४, २२४, ३३४, ४०१ व २० |
| " | १७ | कादम्बरी | पृ० ५३ ५९, ११७, २५, ७२, ३८३, ४१५ १७ ५४, ५१२, ३३, ३८ उ० २२ २९, ९७, १०० व १०१ |
| दण्डी | ९ | द० च० | पृ० २२, ५९, ९७, १००, १, ३, २१, २५ २८३ |



# चातक
# THE CUCKOO

अम्भोविन्दुग्रहणचतुराश्चातका वीक्षमाणा ।
—मेघ० १/२३

संस्कृत साहित्य में चातक का वर्णन गौण है वदिक साहित्य में चातक शब्द का प्रयोग कहीं भी नहीं हुआ है वदिक साहित्य में कपिञ्जल शब्द का प्रयोग हुआ है जो चातक, पपीहा, तीतर आदि का वाचक है श्री आप्टे ने अपनी संस्कृत डिक्शनरी में कपिञ्जल का अर्थ चातक व पपीहा किया है[1] अमरकोष में चातक सारङ्ग (शारङ्ग) व स्तोकक शब्दों को चातक के पर्यायों के रूप में लिखा गया है[2]

वनस्पतिकी की दृष्टि में चातक मेरुदण्डीय उपजगत के शुकगण वर्ग के पिक परिवार का जीव है इस परिवार में कोयल महोख व पपीहा आते हैं चातक भी एक प्रकार का पपीहा ही है किन्तु इसके स्वभाव में पपीहा के स्वभाव में भिन्नता है[3] साहित्य में पपीहा व चातक में कोई भिन्नत्व प्रदर्शित नहीं किया गया है इस निबन्ध में हम पपीहा एवं चातक को एक ही मानते हुए अध्ययन करेंगे इससे पूर्व कि हम चातक का काव्यात्मक अध्ययन करें इससे पूर्व चातक व पपीहे के सामान्य भेद पर विचार करेंगे

१ पपीहा शिकरे से मिलता-जुलता पक्षी है इसके पर धूसर एवं सफेद चोंच हरी टांग पीली एवं आंख की पुतली पीलापन लिये होती है दूसरी ओर चातक के पर काले आंख लाल, चोंच काली एवं पर नीले होते हैं इसके सिर पर चोटी होती है

---

1 तै० सं० 2/5/1/1 मै० सं० 3/14/1 का० सं० 12/10 वा० सं० 24/20/38

2 अथ शारङ्गः स्तोककश्चातकः समाः—इत्यमरः (सिंहादिवर्ग)

3 भारत के पक्षी पृ० 47, का० के० पक्षी पृ० 83

२ पपीहा भारत म सदा निवास करता है जबकि चातक मौसमी पक्षी है वह वर्षा ऋतु के बाद यहा नही रहता

३ पपीहा गर्मी वसन्त व वर्षा तीनो ऋतुओं म पीऊ-पीऊ या पी पी करता है जबकि चातक केवल पावस म ध्वनि करता है

४ पपीहा आकाश म उडते समय गाता है जबकि चातक किसी पाम की डैर की ओट म

५ पपीहा लजीला पक्षी है जबकि चातक नही

संस्कृत साहित्य मे वर्णित चातक को श्री हरिदत्त वेदालङ्कार ने तार्किक ढग से समझाते हुए चोटीदार पपीहे को ही चातक स्वीकार किया है उनका विचार सुन्दर है सार्थक है[4]

चातक की मादा एक बारगी कई अण्डे देती है यह भी कोयल की भांति अन्य पक्षियों के घोसलें म अण्डे को रखकर आराम करता है चातक की ध्वनि को विभिन्न विचारकों ने पी पी 'पियु पियु व 'पियु-पियु पी पी-पियु पी-पी-पियु कहा है[5] चातक का प्रमुख भोजन चीटी मछलिया, इल्लिया भौंरे व अन्य कीट-पतगें हैं यह कई पक्षिया का पीछा करता हुआ देखा गया है चातक को पालने के उल्लेख तो नही मिलत परन्तु चिडियाघरा म इसे पाला जाता है

भारतीय साहित्य मे चातक के कई आख्यान व लोकगीत मिलत है[6] भर्तृहरि ने इसके बारे म लिखा है कि यह स्वाभिमानी पक्षी वन म निवास करता है एव या तो प्यासा ही मरता है या पुरदर से पानी माग कर ही पीता है[7] चातक को हर बादल स पानी मागने मे मना भी किया गया है कारण कि मेघ जल देने वाला नही होता[8] चातक क मेघ जल मात्र पीने की बात वास्तव म सही नही यह केवल कवि कल्पित है कहते हैं कि वर्षा का जल पीने के बाद चातक नही बोलते क्योकि उनको इस जल से तृप्ति मिलती है किन्तु कतिपय

4 देखिये—का० के० पक्षी पृ० 82

5 भारत के पक्षी पृ० 48 दि० इ० वडस पृ० 50

6 'ऊ ची जात पपीहरा पियत न नीचो नीर ।
कै जाच घनश्याम से, क दुख सहे सरीर ॥ —तुलसीदास
'रुत आयी रे पपीहा ! थारी बोलण री रुत आयी रे —राजस्थानी लोकगीत

7 एक एव खगो मानी, वने वसति चातक ।
पिपासितो वा म्रियते याचते वा पुरदरम ॥

8 नीतिशतक० 51

विद्वानों का मत है कि चातक काम पिपासा म चिल्लाता है एव प्रणयोपरान्त भी यह कुछ समय तक कूजता रहता है [9]

## सस्कृत काव्यों में चातक

सस्कृत काव्यो म चातक के लिए कपिञ्जल एव चातक शब्दों का प्रयोग हुआ है [10]

मानव एव चातक—राजकुल म चातको क युद्ध की बात कही है एव चातक का बाई ओर बोलना यात्रा के लिये शुभलक्षण स्वीकार किया गया है[11] इन दोनों वर्णनो स मानव व चातक क सामीप्य की एक झलक सामन आती है

क्रिया कलाप—हर पक्षी की कोई न कोई क्रियात्मक विशेषता हुआ करती है चातक की मेघजल मात्र पीन की क्रिया उसकी प्रमुख विशेषता है जिस कालिदास न 'चातकव्रत की सज्ञा दी है विक्रमोवशीय मे विदूषक द्वारा राजा को जो कि उवशी के प्रति अनुरक्त हैं, चातकव्रत करन वाला कहा है [12] चातक केवल जलवाल मेघ स ही पानी मागता है बिना जलवाले मेघो से नही [13] चातक को पिऊ पिऊ कर मेघो से प्यासे होने पर जल मागने वाला कहा है [14] चतुर चातक उडते उडते ही मेघो स जल क कण ग्रहण कर लेते हैं [15] बादलों क जल देकर चातकों के आतनाद से बचाने वाला एव बिना मागे जल देने वाला कहा है [16] चातको की उपस्थिति वर्षाकाल के आरम्भ की सूचक होती है कालिदास न चातको द्वारा मेघ को माग की सूचना देने वाला कहा है [17] चातक की इन क्रियाओं से दो बातें ध्यान म आती है पहली तो यह कि चातक वर्षा काल म ही भारत मे आता है और दूसरी यह कि चातक मेघ को देखकर जल की माग करता हुआ ध्वनि करता है शरदऋतु म चातक आतकित हो उठते

---

9 भारत के पक्षी पृ० 47

10 कादम्बरी० पृ० 84 मेघ० पृ० 10 उ० 57

11 आबद्धमेघ-कुक्कुट-कुरर-कपिञ्जल-कादम्बरी० पृ० 271

12 अत खलु भवता '—विक्रम० 2 गद्य

13 'अम्बुगर्भोहि जीमूतश्चातकरभिनन्द्यते'—रघु० 17/60

14 'तृषाकुलश्चातक पक्षिणा—ऋतु० 2/3

15 'अम्भोबिन्दुग्रहणचतुराश्चातका वीक्षमाणा '—मेघ० पृ० 23

16 'शमित चातकार्तस्वरा'—शिशु० 4/24

17 सारङ्गास्ते जललवमुच सूचयिष्यन्ति मार्गम्—मेघ० पृ० 22

है[18] कादम्बरी एव हषचरित मे चातक की ध्वनि का वणन मिलता है[19] एक स्थान पर भ्रम मे पडे चातक का वणन करते हुए कहा गया है कि तमाल वृक्ष को जलद समझकर चातक चिल्लाने लगे[20] अभिज्ञान शाकुन्तलम के सातवें अक मे चातक द्वारा रथ के अरो मे से निकलने की बात कही है[21] वास्तव मे चातक जसे पक्षी का रथ के अरा म से निकलना सम्भव नही जान पडता अत जमन विद्वान पिशेल द्वारा सम्पादित अभिज्ञान शाकुन्तलम मे किये गये–'अयमराविवरेभ्यश्चातक निष्पातदभि पाठ को सही मानते हुए चातको को पवत गुफा के छेदो से निकलना अथ मानना उचित जान पडता है

उपमित चातक—मालविकाग्निमित्र म विदूषक की इच्छा को चातक की इच्छा से उपमित किया है[22] अकुलीन लोगो को चातका से उपमित किया गया है[23] भगवान् शकर की शरण म आने वाले देवताओ को चातक एव शकर को मेघ से उपमित करते हुए कहा गया है कि जिस प्रकार प्यास से चातकगण मेघो से जल की बूदो को मागते हैं वस ही शत्रुओ से सताये गये देवगण, शकर से पुत्र उत्पन्न करवाना चाहते है[24] यहा चातकगण व देवगण को एव मेघ व शकर को उपमित किया गया है प्यास को शत्रुओ द्वारा दिये गये कष्ट से उपमित किया गया है जल व स्क-- की तुलना की गई है यह पूर्णोपमा का एक उत्तम उदाहरण है

सम्पूण का॒यो म चातक का २० बार वर्णन आया है कालिदास ने चातक का १२ बार वर्णन किया है बाणभट्ट न ६ बार एव माघ व सुबन्धु ने एक एक बार चातक का वणन किया है भारवि, श्रीहष एव दण्डी चातक के बारे म चुप हैं चातक के वणन का विश्लेषण प्रस्तुत तालिकाओ म देखा जा सकता है

---

18 'चकित चातक'–वासवदत्ता पृ० 250

19 'कपिञ्जल-कुल-कल-कूजितम्'–कादम्बरी० पृ० 84

20 'जलधर-जल-सुघ ०–कादम्बरी० पृ० 384

21 शाकु० 7/7

22 मालविका० 2 गद्य

23 वासवदत्ता० हू० क० पृ० 235

24 कुमार० 6/27

## तालिका–१

**'चातक' के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (12)**

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| २ | रघु | ५।१७ १७।६० |
| २ | कुमार | ६।२७ १२।१ |
| ४ | मेघ | १।१० २२, २३, २।५७ |
| १ | ऋतु | २।३ |
| १ | शाकु | ७।७ |
| १ | मालविका | २ गद्य |
| १ | विक्रम | २ गद्य |

## तालिका–२

**'चातक' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (9)**

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| माघ | १ | शिशु | ४।२४ |
| सुबन्धु | १ | वासवदत्ता | पृ २५० |
| बाणभट्ट | ३ | ह च | पृ ११०, ४१, २३५ |
| , | ४ | कादम्बरी | पृ० ८४, २७१ ३८४, उ ११६ |

# गरुड़
# THE EAGLE

उभयपक्षभाजौ द्विजराजौ हरिणाश्रितौच ।'

—नैषध २२/८६

संस्कृत साहित्य में वर्णित पक्षी जगत् में गरुड़ का स्थान मध्यम रहा है वैदिक साहित्य से लेकर आधुनिक नवीन संस्कृत-साहित्य तक गरुड़ के वर्णन की धारा अविरल रूप से प्रवाहित होती रही है वैदिक साहित्य में गरुड़ को महासुपर्ण[1] सुपर्ण[2], श्येन[3] व तार्क्ष्य[4] नामों से सम्बोधित किया गया है महाभारत व वाल्मीकि रामायण में गरुड़ विषयक अनेक कथायें मिलती हैं महाभारत के आदि पर्व में गरुड़ की उत्पत्ति उनका सर्पों के साथ वैर माता से अन्ना व विनता की दासीपन से मुक्ति विषयक कथायें दी गयी हैं[5] गरुड़ की उत्पत्ति सापों के साथ वैर, गरुड़ से गीध की उत्पत्ति व गरुड़ के वेग विषयक वर्णन वाल्मीकि रामायण में भी मिलते हैं[6] अमरकोष में गरुड़ के नौ नामों का उल्लेख है वे हैं—गरुत्मान् गरुड़ तार्क्ष्य, वैनतेय खगेश्वर, नागान्तक विष्णुरथ सुपर्ण एव पन्नगाशन[7]

---

1 श० ब्रा० 12/2/3/7

2 ऋग्० 1/164/20 2/42/2, अ० वे० 1/24/1 22/7/2, तै० स० 7/5/8/5 मै० स० 4/9/19

3 ऋग्० 1/3 /14 अ० वे० 3/3/4 तै० स० 2/4/7/1

4 ऋग् 1/3/93

5 महाभारत-आदि० 20 34

6 विनतायस्तु गरुडोऽरुण एव च —वा० रा० अर० 14/31
'अभ्यायाम गरुडो गरुड पन्नगाशित —वही० युद्ध० 67/35
वैनतेयश्च नो जन्म सर्वेषां वानरपुंगवा —वही० कि० 58/29
वैनतेय गति परां—वही० कि० 58/27

7 गरुत्मान् गरुडस्तार्क्ष्यो वैनतेय खगेश्वर ।
नागान्तको विष्णुरथ सुपर्ण पन्नगाशन' ॥ —अमर (स्वर्ग वर्ग)

शब्दकल्प द्रुम मे गरुड के २१ नामो का उल्लेख है[8]

वनानिको के मत म गरुड मेरुदण्डीय उपजगत् के ग्रन्तगत श्येन वग के श्येन उपवग क श्येन परिवार का मदस्य है[9] गरुड विश्व के ग्रनक भागो में पाया जाने वाला पक्षी है मुख्यत उत्तरी ग्रमेरिका यूरोप एशिया, ग्रफ्रीका व दक्षिणी ग्रमेरीका के सभी देशो म गरुड पाया जाता है भारत म गरु" काफी पाये जाते हैं[10]

गरुड शक्ति एव वीरता का प्रतीक माना जाता है इसी कारण यह ग्रनक देशो के साम्राज्यो का प्रतीक रहा है व सिक्का तक म इसके चित्रो का प्रयोग किया गया है इण्डोनेशिया की वायु सेना का नाम गरुड इण्डोनेशियन-एयर-वज' है इण्डोनेशिया के राष्ट्रपनि के वायुयान का नाम 'गरुड है प्राचीन राम व ग्रीक के खडहरो म गरुड के चित्र बन पदक मिले हैं[11] ग्रत गरुड का विश्व म ग्रच्छा सम्मान रहा है भारतीय साहित्य म इसे विष्णु का वाहन कहा है[12]

गरुड की सामा य विशेषताग्रो पर विचार करने स पूव गरुड के प्रकारो पर सक्षिप्त विचार करना ग्रावश्यक है ग्रत गरुड के प्रकारा पर विचार करेंगे वड बुकइन'साइक्लोपीडिया म गरु" के ७ प्रकारा के नाम दिय हैं किन्तु सामा यत गरुड का माटे तौर पर २ प्रकार का ही मान कर वणन किया गया है ग्रौर वे हैं –

१ गरुड या पक्षीराज गरुड  २ उकाब या छोटा गरुड

(१)पक्षीराज गरुड —पक्षीराज गरुड बडे ग्राकार का हाना है इसकी लम्बाई ३५ इच के लगभग होती है एव वजन ८ पौंड के करीब मा'' ४२ इच तक लम्बी हाती है एव वजन म १२ पौंड तक होती है[13] इसके पखा का रग उकाब की ग्रपेक्षाकृत ग्रधिक भूरा हाना है इसके पख पीछे का ग्रोर काफी दूर तक फले हाते है

(२) उकाब —वह बडा भयकर जीव है इसकी शारीरिक सरचना चील से काफी साम्य रखती है इसकी पूछ गालाई लिये होती है इसकी लम्बाई करीब

---

8 शब्दकल्पद्रुम० 2/509

9 देखिये-जीवजगत प० 363

10 इन० वि० भाग 7 प० 822 इन० वड भाग 2 पृ० 4
भारत के पक्षी० प० 149, द० स० ए० भाग 2 प० 165

11 इन वि भाग 7 पृ 822, भारत के पक्षी प 151

12 महाभारत ग्रादि 33/13–16

13 इन वड भाग 2 प 4

२५ इच व मादा की २८ इच तक होती है इसका रग बादामी एव भूरे का सम्मिश्रण होता है उकाब का सिर चपटा होता है एव इसके पर परो को ढके रहते हैं उकाब इतना बहादुर पक्षी है जो खरगोश, बतख व भेडा तक को उठा ले जाता है[14]

गरुड आसमान का पक्षी है यह सदा आकाश म तीव्रता म उडता फिरता है ऊचे-ऊचे पवतो व पेडो पर यह यदा-कदा बैठा देखा जा सकता है इसके घोसले ऊचे पेडो पर होते हैं इसके घोसला म अनेक छोटे बडे जीवो के अस्थिपजर घास फूल, टहनिया इत्यादि देखे जा सकते हैं[15]

गरुड के खाद्य पदार्थों के बारे म एक लम्बी तालिका विचारको ने प्रस्तुत की है वे हैं —साप मास, मछली, छिपकली मेढक, भेड ममना, बन्दर भेडिया खरगोश चूहे, बतख तीतर, कुररी एव सभी छोटे बडे जीव एव सरीसृप[16]

गरुड का पालन सभव नही यह विशुद्ध गगनचर पक्षी है इसकी आवाज केक-केक केक की' या कुक-कुक-कीर-कीर' ध्वनि से साम्य रखती है[17]

गरुड की मादा नवम्बर से जून के मध्य अण्डे देती है अण्डे १ स ३ तक हो सकते हैं अण्डे का रग हल्के राख जमा या सफेद होता है इसमे कभी कभी नीली या बगनी भाइ भी देखने को मिलता है[18] गरुड का अण्डा पर ३४ ३५ दिन बठे रहना आवश्यक होता है मादा व नर दोनो बारी-बारी से अण्डो का गर्मी पहुचाते हैं गरुड के बच्चे दो सप्ताह मे उडने योग्य हो जाते हैं[19]

---

14 जीवजगत प 366,
भारत के पक्षी प 150

15 वही वही

16 का के पक्षी प 116–117
भारत के पक्षी प 149–50
जीवजगत–प 365–66
इन ब्रि भाग 7 पृ 822
इन वड भाग 2 प 4
द स ए भाग 2 पृ 168
ब ऑ सो पृ 25
पा हैण्ड पृ 366

17 वही पृ 365–66, दि इन वडस–स 6 पृ 69

18 का के पक्षी पृ 116, जीवजगत–प 366

19 इन वड भाग प 4

## संस्कृत काव्यों मे गरुड

काव्यकारों ने गरुड को सुपर्ण,[20] वनतेय[21] अहिशत्रु[22] तार्क्ष्य,[23] गरुत्मान्[24] गरुड[25] अरुणानुज[26] विनतातनूज[27] व पन्नगारि[28] शब्दों से कहा है

गरुड व मानव —मानव भूपटल पर रहने वाला जीव है तो गरुड नभ मे विचरण करने वाला पक्षी अत इन दोनों का सम्पर्क तो कठिन है किन्तु फिर भी मानव ने गरुड के बारे मे रुचि प्रदर्शित की है और इसी कारण मानव ने उसका वर्णन किया है भगवान् कृष्ण के ध्वज मे मानव ने गरुड का चिह्न रक्खा है एव कृष्ण को गरुडध्वज कहा है[29] विक्रमोर्वशीय मे राजा अपने रथ के तीव्र वेग को देखकर गरुड को जीतने की बात कहता है[30] अत मानव व गरुड का सम्बन्ध स्वीकार किया जा सकता है भले ही वह पास का न हो

क्रिया कलाप —काव्यकारों ने गरुड के क्रिया-कलापो का काफी वर्णन किया है नयचकार ने गरुड की क्रियाओ पर प्रकाश डालते हुए उसे दोनों पक्षो से युक्त पक्षीराज एव भगवान् विष्णु के आश्रित कहा है[31] गरुड व इन्द्र के युद्ध का उल्लेख मिलता है जो युद्ध अमृत की प्राप्ति के लिये किया गया था[32] किराता-र्जुनीय मे भगवान शकर द्वारा उपस्थित करवाये गये गरुडो द्वारा आकाश में व्याप्त होकर वनस्पति एव पवनो का प्रकम्पित करने के उल्लेख मिलते है[33]

---

20 कादम्बरी प 7
21 ह च पृ 333
22 ह च प 343
23 रघु 6/49
24 बु च 13/54
25 रघु 11/27
26 कादम्बरी प 95
27 नवच 3/37
28 शिशु 3/23
29 'पयासि भक्त्या गरुडध्वजस्य ध्वजानिवोच्चैर्निपिरे फणीन्द्रा'—शिशु 3/77
30 'वैनतेयमप्यासादयेयम –विक्रम 1 गद्य
21 उभयपक्षभाजौ द्विजराजो हरिराश्रितौ च –नवच 22/89
32 'गरुडामहेन्द्रसमर'—वही 21/160
33 गरुत्मतां सहनिभिविहाय क्षणप्रकाशाभिरिवावतेने'–किरात 16/43

किन्तु ये सभी उल्लेख कल्पनाप्रसून है सत्य नही रघुवश मे गर्भवती रानियो को स्वप्न म गरुड आकाश म ले जाता हुआ वर्णित किया गया है[34] सर्पों को वश मे करने वाली विद्या को गारुडी विद्या कहा है इस विद्या से मनुष्य का विषरहित करने के उल्लेख मिलते है[35] कादम्बरी में उज्जयिनी के निवासियो के लिए कहा गया है कि वे गारुडी विद्या जानते हुये भी भुजग सगम (गणिकादि सगम) मे डरते थे[36]

गरुड व सापो का वर माना है[37] कृष्ण के पास निवास करने वाले गरुड द्वारा सापो को भयभीत करने की बात कही गयी है[38] रघुवश म गरुड भय से कालिय नाग के द्वारा यमुना जल म निवास की बात कही है[39] राम व लक्ष्मण के सपबधनो को काटकर मुक्त करने मे गरुड का हाथ रहा है इस प्रकार काव्य कारो द्वारा गरुड की विभिन्न क्रियाओ का काल्पनिक एव वास्तविक दोनो प्रकार का वर्णन प्रस्तुत किया गया है

उपमित गरुड —सस्कृत काव्यकारो ने गरुड की विभिन्न क्रियाओ को सजीव व निर्जीव वस्तुओ स उपमित किया है विनतापुत्र गरुड से कुबेर शूद्रक एव प्रथपति को उपमित किया गया है काव्यकार तीनो के बारे म लिखते हैं कि गुरु म पक्षपात करने वाले कुबेर नामक द्विज विनता क पुत्र गरुड के समान हुए गरुड ने अपनी माता को जिस प्रकार आनन्दित किया उसी प्रकार शूद्रक ने अपने अधीनो को आनन्दित किया एव अथपति कुबेर से उसी प्रकार उत्पन्न हुये जिस प्रकार विनता के गर्भ से पक्षियो के अधिपति गरुड[40] राजा चिन्तामणि के पुत्र चन्द्रकेतु को विनता पुत्र की भाति आनन्दित करने वाला बतलाते हुए गरुड स

---

जस्तरुणामीव वियन्निनाय वनस्पतीनां गहनानि वायु —वही 16/44
'हिमाचल क्षीव इवावकम्पे'—वही 16/46

34 उह्यन्ते स्म सुपर्णेन वेगाकृष्टपयोमुचा —रघु 10/61
35 पितेन च मया वैनतेयनागतेन निर्विषीकृतम्'—ह च प 333
36 सगृहीत गारुडेनापि भुजगभीरुणा'—कादम्बरी प 157
37 परागवतस्त्रासयितु रमायास्तल विवर्क्ष नवपन्नगारि —शिशु 3/23
38 'त्रस्तेन तार्क्ष्यात्किल कालियेन मणि विसृष्ट यमुनौकसो य —रघु 6/49
39 गरुडापातविश्लिष्टमेघनादास्त्रबन्धन —वही 12/76
40 'क्रमेण कुबेरनामा वनतेय इव गुरुपक्षपाती द्विजो जन्म लेभे —ह च प 72
वैनतेय इव विनतानन्दजनन —कादम्बरी प 13
अमूनमुपर्णो विनतोऽरादिव—वही पृ 7

उपमित किया गया है[41] तपोवन से स्वामी जाबालि की तुलना अपने प्रभाव के स्वामी—गरुड से की है[42] शबर सेनापति की समता प्रतक सापो के दांतों को ताडन वाले गरुड से की है[43] राजवधन एव हषवधन का अरुण (गरुड का भाई) एव गरुड के समान एक ही बतलाया है[44] पांडवा के पराक्रम को याद कर नत मस्तक होने वाले सुयोधन को गरुड के पराक्रम स नतमस्तक होने वाले साप से उपमित किया गया है[45] यहा पाण्डवा का गरुड व सुयोधन का उनके पराक्रम से भीत सप कहा गया है बडे बडे राक्षसा से युद्ध करने वाले राम को बडे-बडे सापो के हनन करने वाले गरुड से उपमित करते हुए कहा है कि बड सर्पों पर आक्रमण करने वाला गरुड क्या कभी जल के छोटे छोटे सापा पर आक्रमण करता है ?[46] भरवाचाय के नाक की तुलना गरुड के नाक स करत हुए नाक के अग्रभाग को भुका हुआ कहा है[47] भगवान् शकर द्वारा गरुड का आविर्भाव करके सर्पों को नष्ट करने की तुलना नेता द्वारा शत्रुजन राष्ट्र के भेद निवारण से की है[48] मुनि की तुलना गरुड स करते हुए कहा है कि वह मुनि राक्षसा से न डरा न सिकुडा जसे कौए के शब्द से गरुड न डरता है, न सिकुडता है[49] कुमार द्वारा राजाओं को सुरग माग स स्त्रियो के समीप लाने की समता गरुड द्वारा सापा का लान से की गयी है[50] चन्द्रापीड के अश्व इन्द्रायुध तल के अश्व एव बुद्ध के अश्व—कन्थक के वेग की समता गरुड के वेग से की गयी है[51] ये सभी वणन वास्तविक हैं क्योकि गरुड का वेग काफी तेज होना है एव अश्व का वेग भी यदि गरुड को नम का

41 वैनतेयमिव स्वप्नभावोपारतसकल द्विजाधिपरयम्—वही 134

42 तार्क्ष्य इव विनतासूनुरक्षर'—वासवदत्ता प 23

43 अरुणानुजमिवोदयतानेक महानाग-दशनम्—वही प 95

44 'अरुण,गरुडाविव हरिवाहन विभक्त शरीरौ—ह च पृ 232

45 'तवाभिधानाद् व्यथते नतानन —किरात 1/24

46 कि महोरगविसर्पिविक्रमो राजिलेषु गरुड प्रवर्तते —रघु 11/27

47 'तार्क्ष्य तुण्डकोटिकुब्जाग्रघोणम —ह च प 176

48 'तमाशु चक्षु श्रवसा समूह मन्त्रेण तार्क्ष्योदयकारणेन —किरात 16/42

49 मुनिन तत्रास न सचुकोच राव गरुत्मानिव वायसानाम् —बु च 15/34

50 ह च पृ 324

51 'आकृष्य च तमहिमिवाहिशत्रु स्फुरतमुनवभितिरभ्युपयेन स्त्रण सनिघिम नपम्—ह च प 343

राहु की तुलना करते हुए लिखा है कि जिस प्रकार गरुड ब्राह्मणो को खाने से गले मे लगी जलन के कारण उन्हे छोड देता है उसी प्रकार समवत यह राहु चन्द्रमा को छोड देता है क्योकि इसके भक्षण से उसका गला जलने लगता है[53] आकाश मे विचरण करने वाले गरुड की समता समुद्र म विद्यमान सुमेरु पवत से की है[54] जब रामचन्द्र अपने भाइयो सहित विवाह कर लौट रहे थे उस समय तीव्र वायु के कारण धूल उडी एव उसने सूय के चारो ओर एक मण्डल सा बना लिया वह मण्डल गरुड के द्वारा मारे गये सप के समान एव सूय सप मणि के समान प्रतीत हो रहा था[55] विष्णु युक्त गरुड की मूर्ति की सुदरता से उज्जयिनी की मनोहरता को उपमित किया गया है[56] गरुडरत्नो को गरुड-पखो से समता बतलाते हुये कहा है कि छनो म गरुडरत्न पिरोये गये थे जसे विष्णु के नाभि कमलो मे गरुड पख लगे रहते हैं[57] इस प्रकार काव्यकारो ने गरुड की क्रियाओ को उपमित किया है

सम्पूण काव्यो म गरुड का उल्लेख कुल ४६ बार हुआ है, सबसे अधिक गरुड का वणन बाणभट्ट के काव्यो म मिलता है उन्होने गरुड का १३ बार वणन किया है महाकवि माघ, श्री हष भारवि श्री कालिदास, अश्वघोष दण्डी व सुबन्धु ने क्रमश ७ ६, ६ २ २ व १ बार गरुड का वणन किया है इस प्रकार सभी काव्यकारो ने गरुड के प्रति अनुराग प्रदर्शित किया है इसका प्रमुख कारण कवियो का ईश्वर के प्रति विशेष प्रेम रखना है पन्नगाशन के वणन का विश्लेषण प्रस्तुत तालिकाओ मे स्पष्ट किया गया है

अश्व एव अश्व कारती का गरुड भी कहे तो अनुचित न होगा[52] गरुड एव

---

52 'गरुड सम जव इन्द्रायुधनामा तुरगम —कादम्बरी प 237
'जव प्रति पक्षमिव गरुत्मत —वही प 242
विना पतत्र विनता तनूज '—नषध 3/37
'उपेयिवास प्रतिमल्लता रयस्यते जितस्य प्रसभ गरुत्मत —वही 1/63
तार्क्ष्योपमजव तुरगम—बु च 6/>
53 गरुड वदद्विजवासनमोज्झित —नषध 4/71
54 गगनार्णवमन्तरा० —शिशु 20/54
55 वनतेनशमितस्य भोगिनो भोगवेष्टित इव च्युतो मणि ' —रघु 11/59
56 'गरुड मूर्तिरिवच्युतस्थितिरमणीया—कादम्बरी प 161
57 'नारायणनाभिपुण्डरीकरिवश्लिष्ट गरुड पक्ष '—ह च प 100

## तालिका—१

'गरुड' के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (6)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| ५ | रघु० | ६।४९ १०।६१ ११।२७ ५९ १२।७६ |
| १ | विक्रम० | १ गद्य |

## तालिका—२

'गरुड' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (40)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्वघोष | २ | बु० च० | ६।५ १३।५४ |
| भारवि | ६ | किरात० | १।२४ १६।४२ से ४६ |
| माघ | ९ | शिशु० | ३।२३, ७७, ५।१३, २०।५४ से ५९ |
| श्रीहर्ष | ७ | नैषध० | १।३२ ६३ ३।३४, ३७ ४।७१ २१।१६० २२।८९ |
| सुबन्धु | १ | वासवदत्ता | पृ० २३ |
| बाणभट्ट | ५ | ह० च० | पृ० ७२, १००, १७६, २३२ ३२४ |
|  | ८ | कादम्बरी | पृ० ७, १३ ९५, १३४, ५७ ६१, २३७ ४२ |
| दण्डी | २ | द० च० | पृ० २३३ ३४३ |

# गृध्र
## THE VULTURE

गृध्रपक्षपवनरितध्वजम ।[1]

—रघु० ११/२६

संस्कृत-साहित्य में गृध्र का वर्णन बहुत कम देखने में आया है वैदिक-साहित्य में गृध्र व सुपर्ण शब्द गृध्र के वाचक रहे हैं[1] वीरकाव्य साहित्य में गृध्र के जो वर्णन मिलते हैं उनमें रामायण का 'जटायुरभियोग' नामक सर्ग प्रसिद्ध है[2] अमरकोष में गीध के दो नाम गृध्र व दाक्ष्य मिलते हैं[3] वैज्ञानिकों के मत में गीध मेरुदण्डीय उपजगत के अन्तर्गत श्येन वर्ग के श्येन उपवर्ग के गृध्र परिवार का सदस्य है[4]

गृध्र शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत के गृध्र (लालच करना) धातु से मानी जाती है जो आंग्लभाषा के Greedy का पर्याय है

गीध परिवार एक छोटा परिवार है किन्तु इसमें भी अनेक किस्में हैं जिनमें चमरगीध राजगीध एवं गोबरगीध प्रमुख हैं गीध भारत चीन मिश्र यूरोप व अमरीका के अनेक देशों में पाया जाता है[5] यह एक भयानक पक्षी है जिसका आकार विशाल है इसकी लम्बाई ३५ इन्च के करीब होता है यह काले व सफेद पंखों से युक्त होता है गीध की आँखें भूरी चोंच काली एवं डेने सफेद होते हैं जिनमें काले रंग की छाया होती है राजगीध के शरीर में कालापन अधिक एवं चमरगीध में धवलता अधिक होती है

गीध की मादा आकार में गीध के समान ही होती है एवं देखने में खूबसूरत

---

1 ऋक्० 1/118 अ० वे० 7/95/1 ऋक्० 1/164/20 अ० वे० 1/24/1

2 'जटायुरिति मां विद्धि ०–वा० रा० अ० 14/32

'गध सम्पतते शीघ० महाभारत–भीष्म 3/31

3 दाक्षाय्य गृध्रौ —इत्यमर (सिंहादिवर्ग)

4 जीवजगत० पृ० 378

5 इन० ब्रि० भाग 23 पृ० 269

नही होती गीध का प्रमुख खाद्य है—मृत जीव एक जीव के मरते ही अनेक गीध मिलकर उसे बहुत जल्दी ही चट कर जाते हैं[6] यह दृश्य भारतीय देहातो मे अत्यन्त सुलभ है गीध खाते समय जमकर खाते हैं यहा तक कि हड्डियो को भी चबा डालते हैं मुर्दों का भक्षण करने से इसके शरीर से उत्कट दुर्गन्ध निकलती रहती है इसका प्रमुख निवास मुर्दालय है अर्थात जहा अधिक मुर्दे मिल सकें उसी प्रान्त मे गीधो को पेडो पर बैठे देखा जा सकता है शिकारी लोग पेडो पर गीध की उपस्थिति से शेर व चीते के निवास का आसानी से पता लगा लेते हैं शेर आदि हिंसक पशुओ द्वारा खाने के बाद अवशिष्ट मुर्दों पर रात्रि मे इनका पूर्ण अधिकार रहता है[7] गीध शुद्ध जगली जीव है इसका पालन नही होता क्योकि यह एक गन्दा पक्षी है जिस प्रकार जानवरों मे लकडबग्घा भगी है उसी प्रकार पक्षि-समाज मे गीध भारतीय समाज मे गीध को अशुभ पक्षी माना गया है गोबरगीध गोबर एव मल खाता है

राजगीध के अण्डे देने का समय दिसम्बर से अप्रैल तक है गोबर गीध की मादा फरवरी से अप्रैल एव चमर गीध की मादा सर्दी मे अण्डे देती है गीधो के घोसले पेडो पर ही होते हैं जिनमे तिनके, ऊन, लकडिया व बाल आदि का सम्मिश्रण होता है[8]

गतिशील गीधो का रतिकार्य आकाश मे ही अनेक कलाबाजियो के माध्यम से होता है[9] गिद्ध की दृष्टि सब पक्षियो से तीक्ष्ण होती है यह तीन चार मील तक आसानी से देख सकता है यह देख कर ही अपने भोजन की तलाश करता है[10] गीध आकाश मे काफी उडता है एव केवल सूर्य स्नान ही करता है सूर्य-स्नान से इसके शरीर से बदबू कम आने लगती है[11]

## संस्कृत काव्यो में गृध्र

संस्कृत काव्यों मे गीध के लिए गृध्र शब्द का ही प्रयोग हुआ है[12]

मानव एव गीध—यद्यपि मनुष्य ने सदा सवदा गीध को हीन भाव से ही

---

6 पा० हैण्ड० पृ० 45
7 यथोपरि ए० किग० पृ० 439 व 551
8 ब० ओ० सौ० पृ० 46 पा० हैण्ड० पृ० 357
9 ब० ओ० सौ० पृ० 39
10 भारत के पक्षी पृ० 159 इन० ब्रि० भाग–23 पृ० 262
11 भारत के पक्षी पृ० 160
12 रघु० 1/54 शिशु० 18/22 हृ० च० पृ० 456

देखा है किन्तु फिर भी साहित्य जगत म मानव व गीध के आपसी सम्बन्ध के कतिपय उदाहरण उपलब्ध होते है गीध क पख से युक्त बाण का उल्लेख मिलता है[13] क्षत्रिय कुमार द्वारा गीध को मारने का वणन कालिदास ने किया है जबकि अश्वघोष एक पवत का वणन करत है जिसका नाम गृध्रकूट' है[14]

गध विशेष जटायु—गृध्रराज जटायु का नाम भारतीय साहित्य मे अमर रहेगा जटायु एक गृध्र विशेष है जिसके मन म मानवता क लिय दया एव दानवता के लिये क्रोध की भावना स्थित है रघुवश क बारहवें सग म राक्षसराज रावण सीताजी का चुराकर ले जाता है इस प्रसग म जटायु का वणन आता है कि वह रावण के साथ भयकर युद्ध करता है एव उसका मार्गावरोध करता है[15] राम व लक्ष्मण सीता की खोज मे पख कटे जटायु से मिलते हैं[16] यह मरणासन्न जटायु राम व लक्ष्मण को यह सूचित करता है कि लकाधिराज दशानन जानकी का हरण कर ले गया है जटायु के रक्त से सने हाने का वणन इस बात को स्पष्ट करता है कि वह जी जान से रावण के साथ लडा है[17] इसके पश्चात जटायु के देह-त्याग व राम द्वारा पिता की मृत्यु के समान जटायु की मृत्यु पर दु ख प्रकट करने का वणन कवि न किया है तदनन्तर कवि जटायु क दाह सस्कार का भी उल्लेख करत है[18] इस प्रकार जटायु एक नेक गीध क रूप म हमारे सम्मुख आता है इन सभी वणनो म यदि सत्य का अन्वेषण करें तो यही विचार आता है कि सम्भवत काव्यकारों ने पक्षी प्रेम को प्रदर्शित करने मात्र क लिय ये वणन किये हो हो मानव या दानव के साथ गीध की झडप सम्भव है किन्तु यह बात कुछ कम समझ म आती है कि क्या उस समय वहा जटायु मात्र ही उपस्थित था ? दूसरे गीध नही ? यदि दूसरे गीध वहा उपस्थित थे तो वे सीता को रावण से अवश्य छुडा सकत थे एक ही गीध का एक स्थान पर रहना ठीक जान नही पडता क्योकि यह एक सामुदायिक पक्षी है दूसरे जटायु मे जो दया के भाव व मानव के प्रति सहायता का दृष्टि कोण प्रदर्शित किया गया है वह गीध में सम्भव नही अत जटायु

---

13 शिशु० 18/22
14 क्षत्रियकुमार०—विक्रम गद्य 5
15 जहार सीतां पक्षीन्द्र०—रघु 12/53
16 'तौ सीतान्वेषणौ गृध्र'० —वही 12/54
17 'स रावण हृता'० —यथोपरि 12/55
18 यथोपरि 12/56

विषयक यह आख्यान कपोल कल्पित है साहित्य का विषय है, सत्य नही जटायु के भाई सम्पाति से राम के मिलने का भी वर्णन मिलता है [19] इस प्रकार मानव व गीध के सम्बन्धो को कवि कालिदास ने वर्णित किया है यह सम्पूर्ण आख्यान रामायण पर आधारित है

गीध के क्रिया-कलाप—गीध के क्रिया कलापो का कवियो ने सुन्दर वर्णन प्रस्तुत किया है मास का टुकडा समझकर मणि को लेकर भागने वाले गीध का वर्णन मिलता है [20] यहा गीध के मूर्खत्व का प्रमाण प्रस्तुत किया गया है अनेक गीधो द्वारा सापो को चोच मे दबाकर आकाश मे चक्कर लगाने का भी उल्लेख मिलता है [21] चिता के धूम से मलिन यमराज की पताकाओ पर गीधो द्वारा दृष्टि डालने का वर्णन मिलता है [22] कुमार सम्भव मे तारक व उनके साथियो के ऊपर गीधो के बारम्बार मण्डराने का वर्णन किया गया है रघुवश मे रावण की सेना की पताकाओ का गीध के पखो की फडफडाहट से हिलने का वर्णन उपलब्ध है [23] शाकुन्तलम मे चोरो को प्राणदण्ड देने की कल्पना करते हुए सिपाही मछियारे से कहते हैं कि वह गीधो का भाजन बनेगा [24] इन सभी वर्णनो मे हमारे सम्मुख दो बातें आती है—

१ गीध मास प्रेमी जीव है जो मास की तलाश मे इधर-उधर उडता रहता है

२ गीध का सिर पर उडना अशुभ लक्षण है तारक के सिर पर गीधो का मण्डराना उसकी मृत्यु का सदेश था

उपमित गीध—मालविकाग्निमित्र मे राजा को गीध से उपमित किया गया है मालविका को चाहने वाले राजा को विदूषक उस गीध के समान बतलाया है जो बूचड खाने पर मास के लोभ से मण्डराता है पर उसे भय है [25] यहा राजा का गीध, मालविका को मास एव रानी को भय का कारण बतलाया है जिस

---

19 तस्या सम्पातिदर्शनात — यथोपरि 12/60

20 'मणिरामिषाभिलाषगृध्रेणाक्षिप्त' — विक्रम 5 गद्य

21 गधश्च बहव द च पृ 126

22 बहुचिताधूमधूसरित' ह च प 456

23 अपाति गृध्र — कुमार 15/29

'गृध्रपक्षपवनेरित ध्वजम' — रघु 11/26

24 'गध्रबलिभविष्यसि' — शाकु० 6 गद्य

25 'भवानपि

प्रकार फूत्कारने से मांस का टुकड़ा प्राप्त करना गीध के लिए कठिन है उसी प्रकार राजाधिराज के लिये महारानी धारिणी की कन्या से मालविका को प्राप्त करना दुष्कर है राजाओं का धारणी प्राप्त करने वाले गीध कहा है[26] आकाश में मणि लेकर उड़ने वाले गीध को घने बादल में मण्डल में उपमित किया है एवं मणि को मंगल तारे से[27] गीध काले रंग का पक्षी है एवं बादल भी दोनों ही नभचर हैं इसी प्रकार मणि लाल होती है एवं मंगल तारा भी [अत उपमा सुदर है, सार्थक है

दो किरात सेनाध्यक्षों के युद्ध को दो गृध्रों के युद्ध से उपमित किया गया है[28] वास्तव में गीध व किरात दोनों ही कृष्णवर्ण के एवं लड़ाकू प्राणी हैं कवि की कल्पना साकार है

सम्पूर्ण संस्कृत काव्यों में गीध का कुल मिलाकर १६ बार उल्लेख मिलता है गीध का सबसे अधिक वर्णन महाकवि कालिदास ने किया है उनके काव्यों में १२ बार गीध का वर्णन आया है बाणभट्ट ने गीध को तीन बार याद किया है जबकि अश्वघोष, सुबन्धु एवं दण्डी ने एक एक बार ही गीध पर कृपा की है श्रीहर्ष गीध के प्रति मौन धारण किये हुये हैं गीध के वर्णन का विश्लेषण संलग्न तालिका–द्वय में दर्शनीय है

---

26 धन पिशित ग्रास गृध्र' –कादम्बरी पृ 331

27 गृध्रयो तयो –वासवदत्ता पृ 253

28 नवत–मिवलोहिताग–विक्रम 5/4

## तालिका—१

'गृध्र के वर्णन का कालिदास क काव्यों में विश्लेषण (12)

| सख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| ६ | रघु० | ११।२६ १२।३५ से ५६, ६० |
| १ | कुमार० | १५।२६ |
| १ | शाकु० | ६ गद्य |
| १ | मालविका० | १ गद्य, |
| ३ | विक्रम० | ५ गद्य ४, ग |

## तालिका—२

'गृध्र के वणन का कालिदासोत्तर काव्यो म विश्लेषण (7)

| कवि | सख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्वघोष | १ | बु० च० | २१।४१ |
| माघ | १ | शिशु० | १८।२२ |
| सुबन्धु | १ | वासवदत्ता० | पृ० २५३ |
| बाणभट्ट | २ | ह० च० | पृ २८२, ४५६ |
| , | १ | कादम्बरी | पृ ३३१ |
| दण्डी | १ | द च | पृ १२६ |

# श्येन
# THE FALCON

'आद्दाना भृश पादं श्येनाव्यानशिरेनभ ।'
—कुमार० १६/२८

संस्कृत-साहित्य मे श्येन का वर्णन गौण रहा है वदिक साहित्य म बाज को श्येन एव तीव्रगामी बाज को क्षिप्र श्येन नामो से कहा गया है [1] बौद्धकाव्य साहित्य मे बाज विषयक वृतात मिलते है श्येन व कबूतर का सम्बध महाराजा शिवि की कथा स है [2] अमरकोष मे बाज के लिये पत्री एव श्येन शब्दो का प्रयोग हुआ है [3] वर्गानिवा के अनुसार बाज मरु दण्डीय उपजगत् के अतगत पक्षि श्रेणी के श्येन वग श्येन उपवग के श्येन परिवार का पक्षी है [4]

श्येन विश्व के अनेक भागो मे निवास करने वाला पक्षी है यह मुख्यत उत्तरी अमेरिका यूरोप फिलीपाइन्स अफ्रीका, मलाया बर्मा लका एशिया-माइनर मध्य एशिया एव भारत क विभिन्न भागो मे पाया जाता है [5]

श्येन का आकार गृह काक से बडा होता है यह लम्बाई म २० इन्च का पक्षी है मादा व नर एक रग रूप के होते हैं श्येन के पखो का ऊपर का भाग गहरा सलेटी पूर्ण भूरा होता है व सिर व गदन के भाग काल होते है इसकी आख काली होती हैं इसकी चोच घुमावदार होती है एव सिलेटी रग की होती है टाग पीली या नारगी रग की होती है बाज के पख बडे मजबूत होते हैं [6]

---

1 ऋक० 1/32/4 अ० वे० 7/41/2 त० स० 2/4/7/1 मै० स० 3/11/11 श० ब्रा० 10/5/2/10

2 श्येन क्पोतानत्तीति स्थितिरेषा सनातनी —महाभारत (वन पर्व) 31/20

3 पत्री श्येन —अमर (सिंहादिवर्ग)

4 जीवजगत० पृ० 366

5 इन० वइ० भाग 6 पृ० 15, ए विग पृ 958 द स ए पृ 168–69

6 ब ओ सो पृ 54 भारत के पक्षी पृ 147, जीवजगत पृ 367

बाज की मादा को जुर्रा कहते हैं जो बड़ी चतुर होते हुए भी शीघ्र पालतू बना ली जाती है[7]

बाज मांसाहारी पक्षी होने के नाते छोटे–बड़े जानवर, चिड़िया सरीसृप, कबूतर वनमुर्गी खरगोश, कुररी, उल्लू, मैना, चूहे, छिपकली व टिड्डी इत्यादि को खाकर अपना पेट पालता है[8] यह तीव्रगामी से तीव्रगामी पक्षी को आकाश में झपट लेता है एवं अपनी तीक्ष्ण चोंच से उसे चीरकर खा जाता है

श्येन की मादा माघ से जून के बीच पेड़ की टहनियों में घोंसला बनाकर ३–४ अण्डे देती है इसके अण्डे सफेद रंग के होते हैं एवं उन पर चित्तियाँ भी होती हैं

बाज अन्य पक्षियों के लिए बड़ा ही डरावना पक्षी है छोटे छोटे पक्षी तो इसको देखते ही होश खो बैठते हैं बाज एक लड़ाकू पक्षी रहा है इसे अनेक राजा-महाराजा अपने हाथ पर लिये घूमा करते थे जिनमें प्रमुख हैं–अकबर गुरु गोविंद-सिंह, सम्राट फ्रेडरिक–द्वितीय (जर्मनी), महारानी एलिजाबेथ–प्रथम इटली के साहित्य में भी ऐसे वर्णन मिलते हैं जिनमें वहाँ के सम्राटों द्वारा बाज को लेकर घूमने के वर्णन प्रमुख हैं राजस्थानी कहावतों में बाज की शान को 'रजपूती शान' कहा है[9]

बाज की बोली की' की की लम्बी आवाज होती है

बाज के अनेक प्रकार इस भू–पटल पर विद्यमान हैं उन सबका यहाँ वर्णन करना सम्भव नहीं अतः उनका नामोल्लेख मात्र करते हैं–

| | |
|---|---|
| (१) लगर | (२) सकेर |
| (३) बहरी | (४) शाहीन |
| (५) शिकरा | (६) बाशा |

संस्कृत साहित्य में श्येन शब्द का प्रयोग इन प्रकारों के अर्थ में सदैव होता रहा है अतः प्रस्तुत प्रबन्ध में श्येन शब्द इन सभी पक्षियों की विशेषताओं को सामान्य रूप से प्रदर्शित करने में सहायक हो सकेगा

## संस्कृत काव्यों में श्येन

संस्कृत काव्यकारों ने बाज के लिए श्येन शब्द का ही प्रयोग किया है[10]

---

7 भारत के पक्षी पृ 148
8 ब ग्री सो पृ 56 भारत के पक्षी पृ 147
9 बाज झपट कर वास रजपूती सो राजिया–राजिया के दोहे
10 रघु० 7/46–कादम्बरी० पृ० 115

श्येन व मानव के पारस्परिक सम्बन्धों के विषय में संस्कृत काव्यकार मौन हैं

क्रिया-कलाप—कालिदास ने रघुवंश में श्येन के क्रिया कलापों का वर्णन करते हुए उन्हें युद्ध से सम्बन्धित बताया है अज के विवाहोपरान्त उनके विरोधी राजाओं के साथ होने वाले युद्ध में राजाओं के कटे हुए सिरों का बहुत देर तक भूपटल पर न गिरने का कारण बतलाते हुए महाकवि ने लिखा है कि राजाओं के सिर युद्ध स्थल से उडने वाले बाजों के पंजों में फंस जाते थे अतः वे देर में पृथ्वी पर गिरते थे[11] दूसरे स्थान पर शिव के धनुष भंग के बाद परशुराम के आगमन पर अपशकुनों का वर्णन करते हुए बाज के कारण मटमैली दिशाओं का उल्लेख किया गया है[12] कुमारसम्भव में भी देवासुर-संग्राम के प्रसंग में बाजों द्वारा पंजों में राजाओं के सिरों को लेकर आकाश में भ्रमण करने का वर्णन किया गया है[13] कादम्बरी में हारीत एवं अन्य कुमार से शुक के विषय में कहता है कि वह (शुक) किसी बाज के मुख से छूटकर आ गिरा है[14] बाज के झपटने का वर्णन दण्डी ने किया है[15] इन वर्णनों के आधार पर हम निम्न निष्कर्षों पर पहुंचते हैं

(१) श्येन युद्ध स्थल मे उडते हैं
(२) इनके पंख मटमैले होते हैं
(३) श्येन कटे हुए सिरों को लेकर आसानी से गगन में उड सकते हैं
(४) यह छोटे छोटे पक्षियों का कट्टर शत्रु है

उपमित श्येन—आग के जलने से वन के नष्ट होने की समता बाज के द्वारा विनष्ट पक्षियों के घोसले से की गई है[16] रोती हुई स्त्री की समता बाज के द्वारा घायल चकवाकी से की है[16] मन्द की तुलना बाज के भय से अलग हुए पक्षी से की है[17] युद्ध के कारण आकाश में अनेक तीर व्याप्त होने लगते हैं एवं उससे जो ध्वनि निकलती है उस ध्वनि को बाज पक्षी के रोने की ध्वनि से उपमित किया गया है[18] इस प्रकार विभिन्नावसरों में काव्यकारों ने श्येन को उपमित किया है

---

11 हृतान्यपि श्येननखाग्रकोटिव्यासक्तकेशानि चिरेणपेतु' —रघु० 7/46
12 श्येनपक्ष परिधूसरालका —यथोपरि 11/60
13 श्येन मुख-परिभ्रष्टेनवाऽनेन भवितव्यम —कादम्बरी पृ 115
14 श्येनपातोत्क्रोशपातादानि —द० च० पृ० 8/46
15 क्वचित् शकुनिकुलकुलायपातिन श्येना —हृ० च० पृ० 87
16 'कूजश्येनाग्रपक्षभग्न चक्रवाका —सौ० न० 6/30
17 अवश खलु ० —यथोपरि० 8/20
18 रराम विरस व्योम श्येन प्रतिरवछलात —कुमार० 16/12

वह साल भर अण्डे ही देती है तो अधिक उचित होगा कबूतर एक पत्नीव्रती पक्षी है जो अपना सारा समय अपनी मादा के पास में ही व्यतीत करता है यह अण्डों पर बैठकर बराबर अपनी मादा की सहायता करता है यह अपनी मादा को बहुत प्रेम करता है एवं किसी प्रकार की लज्जा का अनुभव न करता हुआ अपने सच्चे प्रेम का आदर्श प्रस्तुत करता है

कबूतर पक्षी-जगत में सम्भवत एक मात्र पक्षी है जो शाकाहारी है यह फसलें बीज, अनाज, फल, जड़ें, इत्यादि खाकर अपना जीवन यापन करता है [8] यह दाना को एक तीव्रगति के साथ अपने गले में भर लेता है एव बाद में अपने बच्चों को एक-एक करके दाना खिलाता है

कबूतर का पालन काफी पुराना है एक स्थान से दूसरे स्थान तक सन्देश ले जाने में इसका प्रमुख स्थान रहा है इसके पर में पत्र बाँध देने पर यह निश्चित स्थान पर पत्र पहुँचा देता है प्राचीन समय में जगत प्रसिद्ध सुन्दरी रानी क्लियो-पेट्रा ने अपना प्रेम-पत्र कबूतर के साथ ही भेजा था [8] बादशाह अकबर के यहाँ भी अनेक कबूतरों का सचय था कबूतर को शान्ति का प्रतीक माना है हमारे प्रधानमंत्री स्वर्गीय प० नेहरू को सफेद कबूतरों से विशेष प्रेम था वे अपने जन्म दिवस' पर सफेद कबूतर उड़ाया करते थे

कबूतर की आवाज बड़ी ही अच्छी गुटर-गूँ गुटर गूँ' की ध्वनि होती है जिसे गाँव में सुबह शाम सुना जा सकता है रात को कबूतर एक बड़े समुदाय में मकान के छज्जे पर या बिजली व टेलीफोन के तारों पर विश्राम

# कपोत
# THE PIGEON

ता यस्याचिद् भवनवलभौ सुप्तपारावतायाम्
—मेघदूत पृ० ४२

संस्कृत साहित्य मे कपोत का स्थान सर्वथा गौण रहा है वैदिक साहित्य म कपोत के उल्लेख मिलते हैं[1] वीरकाव्य साहित्य म भी कबूतर के उल्लेख मिलते हैं[2] अमरकोष म कबूतर के लिये तीन नाम—पारावत, कलरव व कपोत मिलते हैं[3]

कबूतर विश्व के अनेक भागो म पाया जाने वाला पक्षी है यह मुख्यत एशिया अमरीका एव यूरोप के देशो म निवास करता है[4]

कबूतर देखने मे बडा ही सुन्दर पक्षी है इसके शरीर का रग सिलेटी होता है इसकी गर्दन पर एक सुनहरे रङ्ग का चमकीला कण्ठा होता है इसके डैनो पर गहरे रङ्ग की दो-तीन पट्टियां बनी होती हैं इसके पैर हल्के गुलाबी होते हैं आख की पुतली नारगी होती है चोंच की जड पर एक सफेद रग का निशान होता है मादा व नर मे कोई विशेष अन्तर नही होता

कबूतर मानव का निकटवर्ती साथी है यह खण्डहरो मन्दिरो मस्जिदो व घरो मे सब जगह देखा जा सकता है कबूतर मकान म किसी छज्जे पर या किसी ऊंची आड वाले स्थान म रहना पसद करता है यह अपना कोई घोसला नही बनाता गर्भाधानकाल म कुछ कूडा करकट एकत्रित करके अण्डो की रक्षा करता है कबूतर की मादा साल के किसी भी भाग म अण्डे दे देती है बल्कि यो कहे कि

---

1 ऋक० 1/30/4 अ० व० 29/135/12
मै० स० 3/14/4 वा० स० 25/23/38

2 श्येन कपोतानत्तीति स्थितिरेषा सनातनी ।। –महाभारत ।

3 पारावत कलरव कपोत'—इत्यमर (सिहादिवर्ग) वन 31/20

4 इन० बट० भाग 14, पृष्ठ 410

वह साल भर अण्डे ही देती है तो अधिक उचित होगा कबूतर एक पत्नीव्रती पक्षी है जो अपना सारा समय अपनी मादा के पास में ही व्यतीत करता है यह अण्डों पर बैठकर बराबर अपनी मादा की सहायता करता है यह अपनी मादा को बहुत प्रेम करता है एवं किसी प्रकार की लज्जा का अनुभव न करता हुआ अपने सच्चे प्रेम का आदर्श प्रस्तुत करता है

कबूतर पक्षी-जगत मे सम्भवत एक मात्र पक्षी है जो शाकाहारी है यह फसलें, बाज, अनाज, फल, जड़ें इत्यादि खाकर अपना जीवन यापन करता है[5] यह दाना को एक तीव्रगति के साथ अपने गले म भर लेता है एव बाद में अपने बच्चों को एक-एक करके दाना खिलाता है

कबूतर का पालन काफी पुराना है एक स्थान से दूसरे स्थान सन्देश ले जाने में इसका प्रमुख स्थान रहा है इसके पैर म पत्र बाँध देने पर यह निश्चित स्थान पर पत्र पहुंचा देता है प्राचीन समय म जगत प्रसिद्ध सुन्दरी रानी क्लियोपेट्रा ने अपना प्रेम-पत्र कबूतर के साथ ही भेजा था[6] शाहशाह अकबर के यहा भी सदेशवाहक कबूतरो का समय था कबूतर को शांति का प्रतीक माना है हमारे भूतपूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय प० नेहरू को सफेद कबूतरो से विशेष प्रेम था वे अपने जन्मदिन 'बाल दिवस' पर सफेद कबूतर उड़ाया करते थे

कबूतर की आवाज बड़ी ही अच्छी 'गुटर-गू, गुटर गू' की ध्वनि होती है जिसे हमारे घरो म सुबह शाम सुना जा सकता है रात को कबूतर एक बड़े समुदाय में किसी मकान के छज्जे पर या बिजली व टेलीफोन के तारो पर विश्राम करते हैं

कबूतर की कई किस्में होती हैं जिनमे निम्नलिखित प्रमुख हैं—

| | |
|---|---|
| १ लक्का | ४ गिरहबाज |
| २ बगदादी | ५ लोटन |
| ३ मुक्खी | ६ शीराजी |

कबूतर का मास खाने के काम आता है लकवे के बीमार को लक्का कबूतर का माँस खिलाया जाता है और कबूतरो के पंखो की हवा म रखा जाता है

## संस्कृत काव्यो मे कपोत

कालिदास एव कालिदासोत्तर काव्यो म कपोत के लिए कपोत[7] पारावत[8]

---

5 इन० ब्रि० भाग 14 पृष्ठ 410 इन० ब्रिटे० भाग 19 पृष्ठ 920

6 भारत के पक्षी० पृ० 81

7 ह० च० पृ० 81 —नपच०3/41

8 कुमार० 10/6 सौ० न० 6/30 —कादम्बरी० पृ० 79

पारापत [9] कलरव,[10] व विट [11] नामों का उल्लेख मिलता है

मानव व कपोत—मानव व कबूतर का साथ बहुत प्राचीन है प्रसिद्ध द्वारा कबूतर पकड़कर शिव पार्वती के शयन कक्ष में जाने का वर्णन कुमार सम्भव में मिलता है [12] बुद्धचरित में भी नगर विलाप के प्रसंग में स्त्रियों द्वारा पालतू कपोतों के लम्बी तान जोड़ने का वर्णन किया गया है [13] नौषधनाथ में भार्याविलाप के प्रसंगत यशोधरा को कबूतरों के कूजन में हाय करते पाया गया है अत मानव व कबूतर का सम्बन्ध रहा है

प्राय प्रलाप—कबूतर की क्रियाओं का वर्णन भी काव्यों में उपलब्ध होता है महाकवि कालिदास ने कुमार सम्भव के नवम सर्ग के आरम्भ में भगवान शंकर के शुरतवक्ष में उपस्थित कबूतर की विभिन्न क्रियाओं के बारे में लिखा है कि वह कबूतर सुन्दरियों की भांति मीठा बोलता था लालरंग की आंखों को इधर-उधर घुमाता था कभी कंठ ऊंचा कर लेता था तो कभी मुका लेता था और बार-बार अपनी पूंछ को सिकोड़ता था [14] श्री हर्ष ने नैषधीय चरित में कबूतर के बोलने को बड़े ही सुन्दर ढंग से प्रस्तुत करते हुये लिखा है कि कबूतर पाणिनि के व्याकरण का अध्ययन करने वाला है इसकी गर्दन पर भूषण का एक चिह्न है जो शब्दों की सिद्धि के लिए एकत्रित की गई खड़ियाओं में से अवशिष्ट भाग के समान है इसने जो कुछ पढ़ा था वह अब यह भूल बैठा है एवं सिर हिलाता हुआ घु सत्ता को दोहराता है जो इस पाठ की स्लेट पर बार-बार लिखने के कारण इस पर अमर कर गई थी एवं वर्तमान से याद आ गई है [15] यहीं व्याकरण के अंतिम अंश घु सत्ता की समता को कबूतर की हुंकार के तुल्य बतलाने का प्रयास किया गया है वन भाग में आने वाली कबूतर की हुंकार का वर्णन श्री हर्ष ने किया है [16]

---

9 नैषध० 19/12

10 नैषध० 18/22

11 कादम्बरी पृ० 264

12 'पारावत वपु प्राप्य ।'—कुमार० 10/6

13 प्रसक्तपारावतदीर्घनिस्वना ' बु० च० 8/37

14 'मुक्तातका तामलिनानुकारम । कूजतमाघूर्णितरक्तनेत्रम ।।
प्रस्फारितोन्नम्रविनम्रकण्ठम । मुहुर्मुहुर्न्यञ्चितचारुपुच्छम ।। कुमार० 9/2

15 नैषध० 19/61

16 'कपोतहुंकारगिरा वनाली ।।' वही० 3/14

हृपचरित म कबूतर के प्रातस्वर का उल्लेख मिलता है[17] कबूतर रात को महलों के छज्जा पर बठते है मेघदूत म यक्ष उज्जयिनी नगरी के छज्जो पर कबूतरो के साथ मेघ को विश्राम करने का आदेश देत है[18] मालविकाग्निमित्र म गर्मी से तप्त महलो के छज्जो पर कबूतरो के न बठने का उल्लेख किया गया है[19] काद म्बरी म प्रभात वर्णन करते हुये महाकवि बाणभट्ट ने कबूतरो द्वारा महलो पर बठन का वर्णन किया है[20] नल के महल पर भी कबूतरो की कान्तिमय पक्ति के उडने का वर्णन किया है[21] राजमहलो म कबूतरो के बठन व दडबो की उपस्थिति बतलाई गई है[22] दशकुमार चरित म कबूतरो की सुरत क्रीडा का भी वर्णन मिलता है[23] इन वर्णनो के आधार पर हमारे सम्मुख निम्नलिखित बातें आती हैं—

१ कबूतर घु घु की ध्वनि करता है
२ कबूतर मकान के ऊचे भागो म बठना पसन्द करता है
३ यह एक समुदाय म रहने वाला पक्षी है
४ प्राचीन लोगो को कबूतर से प्रेम था अत वे उनके बठन के लिये दडबे बनवात थे
५ कबूतर का मादा से पक्का प्रेम होता है कलह करने वाले एव यौवन मद स मस्त कबूतरो क पेडो पर बठने से फूलो के झड कर गिर जाने के वर्णन भी काव्यकारो न किये हैं[24] इस प्रकार कवियो ने कबूतर की विभिन्न चेष्टाओ को साहित्य म स्थान दिया है

उपमित कपोत—संस्कृत साहित्य म सादृश्यमूलक अलकारो का अपना

---

17 कातरकपोतकूजितानुबन्धबधिरितविश्वे' हृ० च० पृ० 81
18 ता कस्याञ्चिद्भवनवलभौ सुप्तपारावतायां मेघ० 1/42
19 सौधाग्रप्रत्ययतापाद वलभिपरिचयद्वेषिपारावतानि ।' –मालविका० 2/12
20 तरूणा शिखेरषु पारावतमालायमानासु । –कादम्बरी पृ० 79
21 उच्चलत्कलरवालिकतवादवजय तविजयार्जिता जगत् ।।' नषध० 18/22
22 विटक वेदिका ।'–कादम्बरी० पृ० 264
हाटकविटकमकितम । नषध 18/24
23 प्रवत्तवृन्दपारावतत्रासना ।' द० च० पृ० 230
24 अन्योन्यकलहकुपित कपोत पोत-पक्ष पाती पातित कुसुमे ।
—कादम्बरी पृ० 384
आलोयमाननव यौवन मद मत्त पारावत-पक्ष क्षेप पर्यस्तकुसुमस्तवक ।'
—वही० पृ० 384

स्थान है कपोत को भी काव्यकारों ने अनेक सन्दर्भों में जीवों व निर्जीवों से उपमित किया है कबूतर की मीठी बोली का समाग मे समय वानी गई गुन्धरिया की वाणी से उपमित किया गया है[25] तारो का कबूतरो से उपमित करते हुये कहा गया है कि प्रात चन्द्रमा के अस्त हो जाने पर तारे रूपी कबूतर भी उड गए[26] वास्तव में सवेरा होने पर तारे दिखलाई नही देते एवं कबूतर भी उड जाते हैं अत उपमा उचित है कबूतर की समता उज्ज्वल चन्द्रमा से की है[27] अन्दर के लाल कपाटो से कबूतर के लाल पंख की सम्बद्धता प्रदर्शित की गई है[28] इसी प्रकार समुद्र कुण्ड की नई फेन के पिंड म कबूतर का साम्य बतलाया गया है[29] महलो पर विद्यमान रहने वाले बन्दरो को महलो म निवास करने वाले कपोतो से उपमित किया गया है[30] कबूतरो से युक्त प्रान्तरिक महलो को कमलो से युक्त वन (कमल वन) के समान बताया है अर्थात् कबूतरो को कमलो के समान माना है[31] मिट्टी की समता बूढे कबूतर की गर्दन के रोमो से की है[32] आकाश के रंग व कबूतर के पखो के रंग का साम्य वर्णित है[33] इसी प्रकार कबूतरो के पखो के रंग से राख की समता भी की गई है[34] कई स्थानो पर धुये के रज्जु से कबूतर को उपमित करते हुय सूने प्रदेश मे डालियो पर बठे हुये सफेद कबूतरो की पंक्ति ऐसी प्रतीत हो रही थी मानो आज भी उनमे तपस्वियो के अग्निहोत्रो से उठे हुये धुये की रेखायें प्रकट हो छतो से बाहर की ओर निकलती हुई टाड मे बठे कबूतरो और उनके (टाडो के) छेदो से निकलने वाले धुये इन दोनो म यह निश्चित करना कठिन था कि

---

25 'शुकान्तकान्तामणितानुकार ।' —कुमार० 9/2
'पारावत कूजनलोलकण्ठ ।' —सौ० न० 6/30

26 'तदधिगमनात् तारापारापतरुड्डीयत ।' —नैषध 19/12

27 शुभ्राशुवरण ।' कुमार 9/3

28 'शबलितप्ररूढप्रसरा इव कपिपोतकपोल कपिलपक्षतय कानन कपोता पेतु ।
—हू० च० पृ० 356

29 त वीक्ष्य फेनस्य चय नवोत्थमिवाम्बनन्द त्सरणिमिन्दुमौलि ।'–कुमार० 9/4

30 प्रासादैरिव सपारावत । —कादम्बरी० पृ० 386

31 सौध शिखरावतीर्णप्रचलित पारावत-कुलतया
स्थलोत्पालिनीनवनशोभितेनेव । —वही० पृ० 273

32 'जरठकपोतकन्ध रातनूरुहप्रकर विपाण्डुरद्युति । शिशु० 17/52

33 'जरत्पारावत-पक्षधूसरे नभसि । —कादम्बरी० पृ० 202

34 'तदिद कणशो विकीयते पवनभस्मजपोतकबु रम । —कुमार० 4/27

कौन धुआ है और कौन कबूतर, कोयन से परिपूर्ण कामदेव की चिता आकाशरूपी सौध मे स्थित श्वेत कबूतर सा अलङ्कृत हो रहा था, इत्यादि वाक्य कहे गये हैं[35] अगरु के धुये की कबूतर के रग से समता बाण ने की है[36] शाम को अस्त होने वाले सूर्य के रग की समता कपोत के रक्त स की गई है[37]

इस प्रकार काव्यकारो ने कपोत को अनेक प्रकार से उपमित किया है इन वर्णनो म काफी सत्यता है इसके आधार पर हम निम्नलिखित बातें ज्ञात होती हैं—

१ कबूतर सामान्यत राखी या सफेद रग के होते हैं

२ कबूतर के पर लाल रग के होते है

३ कबूतर ऊचे स्थानो, जिनम प्रासाद पेड व टाडे प्रमुख हैं, बठना है

सपूर्ण सस्कृत काव्यो म कपोत का वर्णन ३६ बार आया है बाणभट्ट ने कपोत का १३ बार वर्णन किया है कालिदास ने १० बार कपोत का वर्णन कर तृतीय स्थान पाया है श्रीहर्ष ने ५ बार, माघ ने ४ बार, अश्वघोष ने एक-एक बार कपोत का वर्णन किया है वर्णन का विश्लेषण सलग्न तालिकाओ मे अवलोकनीय है



35 'चिरशुष्केऽथापि यत्र शाखानिलयचिरनिभृतपाण्डुकपोतपक्षपोलग्नतापसाग्निहोत्र-
धूमराज्य इव लक्ष्यन्ते तरव ।' —कादम्बरी० पृ० 64
श्वेत पारावत इव अम्बरमहाप्रासादस्य । —वासवदत्ता० पृ० 178
'धूपजालविनि सृतवलभय सदिग्ध पारावता ।' —विक्रम० 3/2

36 कृष्णागुरुधूमरक्तैरिव पारावत ।' —कादम्बरी० पृ० 184

37 पारावत पाद पाटलरागो रविरम्बर तलादलम्बत ।' —वही० पृ० 147

## तालिका—१

'कपोत के वर्णन का कालिदास के काव्यो म विश्लेपरा (10)

| सख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| ७ | कुमार० | ४।२७ ६।१ से ४ १०।६ व ७ |
| १ | मेघ० | १।४२ |
| १ | मालविका० | २।१२ |
| १ | विक्रम० | ३।२ |

## तालिका—२

'कपोत' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यो म विश्लेपरा (27)

| कवि | सख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्वघोष | १ | बु० च० | ८।३७ |
| ,, | १ | सौ० च० | ६।५० |
| माघ | ४ | शिशु० | ३।५१, ५५ ४।३२ १७।५२ |
| श्रीहर्ष | ५ | नपध० | ३।१४ १८।२२ २४ १६।१२ ६१ |
| सुबन्धु | १ | वासवदत्ता | पृ० १७८ |
| बाणभट्ट | ५ | ह० च० | पृ० ८१, २४८ ५५६ व ४२४<br>उ० पृ० ३२ |
| | ६ | कादम्बरी | पृ० ६४, ७६ १४७, ८४, २०२, ७³, ३८४, व ८४ ८६ |
| दण्डी | १ | द० च० | पृ० २३० |

— — —



# हारीत
# THE GREEN PIGEON

मारीचोद्भ्रान्तहारीता मलयाद्रेरुपत्यकाः ।
—रघु० ४।४६

सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य में हारीत का स्थान सर्वथा गौण रहा है अमरकोष में नभचर पक्षियों का उल्लेख करते समय हारीत का नाम लिखा गया है[1] वैज्ञानिकों के मत में हारीत मेरुदण्डीय उपजगत के अन्तर्गत पक्षी श्रेणी के कपोत उपवर्ग के कपोत परिवार का पक्षी है[2]

हारीत के अनेक भेद हैं अतः यह विश्व के अनेक भागों में पाया जाता है जिनमें भारत, बर्मा, स्याम लंका चीन मलाया, जावा, बार्नियो फिलिपाईन, थाईलैण्ड व इण्डोनेशिया प्रमुख हैं[3]

हारीत की लम्बाई १३ इञ्च से १८ इञ्च तक होती है यह कबूतर के बराबर का पक्षी है इसके सिर का ऊपरी भाग धूसर आँख की पुतलियाँ नीली एवं आँख के चारों ओर गुलाबी धारी होती है इसकी चोंच आगे से मुड़ी होती है चोंच का अगला हिस्सा सफेद होता है पर नारंगी व पीले रंग के होते हैं इसके पर हरे रंग के होते हैं[4] इस प्रकार हारीत एक विभिन्न वर्णात्मक लक्षणों वाला पक्षी होता है इसकी मादा भी आकार प्रकार में प्राय ऐसी ही होती है

हारीत का प्रमुख निवास पेड़ है यह पीपल वट सेमल पाकड़ इत्यादि ऊँचे ऊँचे पेड़ों पर रहता है वास्तव में इसे वृक्षों पर रहना ही प्रिय है यह धरती

1 तेषां विशेषा हारीतो मद्गु कारण्डव प्लव'—इत्यमर (सिंहादिवर्ग)

2 जीवजगत० पृ० 453

3 भा० के पक्षी० पृ० 81, 96–97 भारत के पक्षी० पृ० 84, द० सं० टा० की पृ० 324

4 भा० के पक्षी० पृ० 82 व० ओ० सी० पृ० 228 जीवजगत पृ० 454

पर बहुत कम देखा गया है यदि यह धरती पर आता भी है तो लकडी की किसी टहनी को निर तर पंरो में दबाये रखता है[5] कुछ विचारक इस मत का खण्डन करते हुए कहते हैं कि यह बात सही नही हारीत पृथ्वी पर भी विचरण करता है[6] जो लोग यह कहते हैं कि हारीत पथ्वी पर नही उतरता, वे इसके दो कारण बतलाते हैं प्रथम तो यह कि हारीत एक फलाहारी जीव है अत इसे नीचे आने की आवश्यकता ही नही होती क्योकि फल तो इसे पेडों पर मिल ही जाते हैं पानी पीने की इसे आवश्यकता ही नही रहती कारण कि यह रसीले फल खाता है दूसरे अधिक फल खाने से यह मोटा हो जाता है एव इसे उडकर पथ्वी तक आने म कष्ट होता है

हारीत का प्रमुख भोजन फल है फलों मे अञ्जीर, बड, पीपल, सेमल इत्यादि प्रमुख हैं[7] पालतू हारीत सत्तू व भात भी खाते हुए देखे गये हैं

हारीत का घोसला पेडा पर काफी ऊचाई पर होता है यह हरी पत्तिया व पेडो की टहनियो की सहायता से बनाया जाता है एव इसके पैदे म मुलायम घास भरा होता है मादा एक बार म सामान्यत दो अण्डे देती है जो कि चमकीले सफेद रग के होते हैं[8] अण्डे देने का समय फरवरी स अप्रेल के मध्य होता है कौआ हरियल (हारीत) के घोसले का प्रमुख शत्रु है जिसका निवारण हारीत बडी वीरता से करता है हरियल बडा शर्मिला जीव है जो मानव की उपस्थिति पर या तो चुप हो जाता है यह कोयल की भाति तीव्र ध्वनि नही करता इसकी ध्वनि वुह-वुह 'गुर गुर या 'गुम-गुम के समान होती है हारीत का कूजन बडा मधुर एव कर्णप्रिय होता है

## संस्कृत काव्यों में हारीत

संस्कृत काव्यो म हरियल के लिए केवल हारीत शब्द का प्रयोग हुआ है[9]

**मानव व हारीत**—मानव व पक्षियो का तो सदा सदा का साथ रहा है अत हारीत मानव के सम्पर्क मे क्यो नहीं आता ? कादम्बरीकार ने तो जाबालि

---

5 जीव जगत पृ० 453 भारत क पक्षी० पृ० 82 83 भा० क पक्षी० पृ० 95, द० ब० ट्रा० को० पृ० 324 ब० ग्रो० सो० पृ० 230

6 यथोपरि पृ० 230 पा० हैण्ड पृ० 389

7 भा० के पक्षी० पृ० 95 ब० ग्रो० सो पृ० 230 जीवजगत पृ० 453 भारत के पक्षी पृ० 85

8 यथोपरि प० 84 द० ब० ट्रा० को० प० 324 ब० जीव जगत पृ० 454 ग्रो० सो० प० 230

9 रघु० 4/46 कादम्बरी प० 587

के पुत्र का नाम ही 'हारीत' रखा है[10] यह उल्लेख इस बात को स्पष्ट करता है कि हारीत दक्षिण भारत म पाया जाता है क्योंकि कालीमिच के पेड दक्षिण भारत म अधिक हैं एव वनानियो ने भी हारीत का दक्षिण भारत मे पाया जाना स्वीकार किया है भवन म रहने वाले हारीत को खान क लिए मिच देने का उल्लेख मिलता है[11]

क्रिया-कलाप—काव्यकारो ने हारीत की क्रियाओ का सम्यक वणन किया है कालिदास ने रघुवश के चौथ सग म रघु की दिग्विजय के प्रसग मे मलय पवत का वणन किया है यहा कालीमिच की भाडियो म हारीत पक्षियो के उडने का उल्लेख किया है[12] यह वणन हारीत द्वारा कालीमिच खाने एव उसके दक्षिण भारत म पाय जान पर प्रकाश डालता है राजकुल एव वना म हारीत के निवास करने एव कूजन करने के वणन मिलत हैं[13]

उपमित हारीत—वृद्ध हारीत पक्षी के रग म सूय के घोडो की तुलना करते हुए उन्ह हरे (श्याम) रग का बतलाया है[14] हारीत पक्षी के रग से अधोवस्त्र की समता प्रदर्शित की गई है[15]

सम्पूण काव्यो म हारीत का पुन न बार वर्णन आया है कालिदास के काव्यो म हारीत का केवल एक बार उल्लेख आया है कालिदासोत्तर काव्यो में केवल बाणभट्ट ने ७ बार हारीत का वर्णन किया है अन्य कालिदासोत्तर काव्यकारो ने हारीत का वर्णन नही किया हारीत के वर्णन का उल्लेख प्रस्तुत तालिकाओ म दशनीय है

— — —

10 हारीतनामा मुनिकुमारक । कादम्बरी प० 109
11 पल्लविक ! भोजनमरिचाग्रपल्लव वलानि भवन हारीतम' —यथोपरि पृ०5३3
12 'मारीचोद्भ्रान्त हारीता मलयाद्रेरुपत्यका —रघु० 4/46
13 हारि-हारीत-रुचि रमणीय ।' —कादम्बरी० प० 383
'उद् कूजित चकोर-कादम्ब हारीत कोकिलम' —वही० प० 272
पञ्जर हारीत रुत श्रवण कृत दुष्टस्मित । —यथोपरि० प० 545
14 'जरठ हारीत हरित हये हरितवाजिनि । —यथोपरि० पृ० 587
15 हारीत हरितातिनिविडनिपीडितेनाधरवाससा ।' —हृ० च० पृ० 40

तालिका (१)

'हारीत' के वर्णन का कालिदास काव्यों में विश्लेषण (1)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| १ | रघु० | ४।४६ |

तालिका (२)

'हारीत' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (7)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| बाणभट्ट | १ | हु० च० | प० ४० |
| " | ६ | कादम्बरी | पृ० १०१ २७२ ३८३, ५४५, ८७ उ १६ |

# कुररी
# THE TERN

प्रनष्टपोता कुररीव दु खिता ।'

—बुद्धचरितम् ८/५१

संस्कृत साहित्य में कुररी का उल्लेख विरल है वैदिक साहित्य में कुररी का उल्लेख नही मिलता पौराणिक साहित्य में कुररी के उल्लेख मिलते हैं [1] अमरकोष में कुररी का नाम नही मिलता संस्कृत के विचारक कुररी एवं कुरर को एक ही पक्षी मानते हैं कुररी आंग्ल 'Tern का पर्याय एवं कुरर Osprey का पर्याय है [2] कालीदास में पक्षी नामक पुस्तक के रचयिता श्री हरिदत्त वेदालंकार ने कुरर एवं कुररी को एक ही माना है आधुनिक कोषकारों में मानियर विलियम्ज ने कुरर को Osprey कहा है आप्टे ने कुरर को Osprey व कुररी को मादा आस्प्रे कहा है परन्तु इन विचारकों के मत सर्वमान्य नही कहे जा सकते अमरकोष में कुरर व उत्क्रोश दो शब्द मिलते हैं जो समानार्थक हैं [3] आयुर्वेद के ग्रंथों में कुरर शब्द का अनेकधा प्रयोग हुआ है [4] यहां हम कुररी (टर्न) व कुरर (आस्प्रे) की सामान्य विशेषताओं पर विचार करना उचित समझते हैं ताकि विचारों में स्पष्टता व प्रामाणिकता आ सके

कुररी—वैज्ञानिकों ने कुररी को दो प्रकार का बतलाया है पहली–बड़ी कुररी एवं दूसरी–कलपटी कुररी बड़ी कुररी १६ इञ्च लम्बी चिड़िया है जिसमें उसकी दो फंकी दुम भी शामिल है इसके सारे शरीर का रंग हल्का सलेटी होता

---

1 'वेपती कुररीमिव ।'—वा० रा० यु० 49/9
'क्रोशन्ती कुररीमिव०'—महाभारत० 1/64/12,
भागवत पुराण० 10/10/15

2 जीवजगत० पृ० 438 व 483

3 'उत्क्रोशकुररौ समौ'—इत्यमर

4 चरक-संहिता० 27/36 सुश्रुत संहिता० 7/9

है जो कहीं हल्का एवं कहीं गहरा होता है। निचला हिस्सा गले में भी हल्का रहता है। सर्दियों में इसकी कनपटी व सिर के ऊपर का भाग चमकीला काला हो जाता है। कनपटी कुछ धानी होती है। इसका रंग हल्का सिलेटी होता है। इसके नीचे का भाग दुम तक काला रहता है।[5]

(२) कुरर (मछारंग)— यह लगभग २० इन्च का पक्षी है जिसमें नर व मादा एक ही रंग रूप के होते हैं। इसके शरीर का ऊपरी हिस्सा गाढ़ा भूरा और नीचे का सफेद रहता है। इसका सिर सफेद मायल रहता है जिस पर दोनों ओर एक एक काली पट्टी पड़ी रहती है। मछारंग भारत का मौसमी पक्षी है जो यहाँ जाड़े में आकर गर्मी आने पर वापस चला जाता है। आकार में यह भारतीय शिकारी चिड़ियों से साम्य रखता है और मछलियाँ खाकर अपना पेट पालता है।[6]

## संस्कृत काव्यों में कुररी

संस्कृत साहित्य में कुररी के लिए कुररी, कुरर व उत्क्रोश शब्दों का प्रयोग हुआ है।[7]

कार्य कलाप—संस्कृत काव्यकारों ने कुररी के कतिपय कार्य कलापों का वर्णन किया है। विन्ध्याटवी वर्णन करते हुए बाणभट्ट लिखते हैं कि वहीं कुरर की मतवाली टोलियाँ मिर्च के पत्तों को नोच नोच कर खाती थीं।[8] पेड़ पर कुररी व कुरर पक्षियों के कलरव करने के उल्लेख किरातार्जुनीयम्, हर्षचरित व कादम्बरी में मिलते हैं।[9] राजकुल में रहने वाले अनेक पक्षियों के नामों के साथ बाणभट्ट ने कुरर का उल्लेख किया है एवं आपसी युद्ध का वर्णन किया है।[10] दण्डी ने कुरर के चहकने का उल्लेख किया है।[11] इस प्रकार संक्षिप्त में काव्यकारों ने कुरर व कुररी की क्रियाओं का वर्णन किया है।

उपमित कुररी—कुररी की विलाप करने की क्रिया मात्र को कवियों ने उपमित किया है। रघुवंश के चौदहवें सर्ग में जब लक्ष्मण श्री रामचन्द्र के आदेश

---

5 जीवजगत० पृ० 438

6 यथोपरि पृ० 383

7 किरात० 5/25 बु० च० 8/51, रघु० 14/68, द० च० पृ० 8/46, कादम्बरी० पृ० 84

8 'मदकल-कुररकुल दश्यमान मरिच-पल्लवा ।' —कादम्बरी० पृ० 55

9 कुररी गण० किरात० 5/25 कुरर कुलक्वणितम् । —कादम्बरी० पृ० 271

10 'आबद्ध मेष कुक्कुट-कुरर कपिञ्जल वर्तिका युद्धम्' —कादम्बरी० पृ० 84

11 'कुररीणामिवाक्रोशो शब्द श्रूयते' — विक्रम० 1/3

से सीताजी को वाल्मीकि आश्रम के निकटवर्ती निजन वन म छोड आते हैं उस समय सीता डरी हुई कुररी के समान बहुत जोर म विलाप करती है यहा सीता के रोन की तुलना कुररी के रोने स को गई है विक्रमोर्वशीय के प्रथम अक म कालिदास ने उवशी के अपहरण की चर्चा की है कि स्वग से लौटती हुई उवशी को माग म ही राक्षसो न जब बन्दी कर लिया तो अप्सरायें उसकी सहायता क लिए चिल्लाने लगी उनका चिल्लाना एसा प्रतीत हो रहा था माना कुररी पक्षियो का एक समूह अकस्मात् चिल्ला उठा हो[12] इसी से साम्य रखता हुआ वणन बुद्धचरित म भी मिलता है गौतम क निष्क्रमण क पश्चात् गौतमी जो विलाप करती है वह एसी मालूम होती है मानो कुररी क बच्चे कहीं खो गय हो एव वह उसके दुख म रो रही हो[13] इन सभी वणनो के आधार पर हमारे सम्मुख निम्नांकित बातें उपस्थित होती है—

(१) कुरर मिष खान वाला पक्षी है

(२) कुरर व कुररी दोनो ही पक्षो पर कलरव करत है

(३) कुरर युद्धशील बहादुर पक्षी है

(४) कुररी विलापशील पक्षी है

(५) कुररी भयभीत होने वाला डरपोक पक्षी है

अत काव्यात्मक वणनो क आधार पर भी कुरर व कुररी भिन्न भिन्न जाति के पक्षी ह, एक ही पक्षी के नर व मादा रूप नहीं

इस प्रकार सम्पूण काव्यो में कुरर व कुररी का कुल ६ बार वर्णन आया है बाणभट्ट न कुररी का ४ बार व कालिदास ने २ बार वर्णन किया है जबकि अश्वघोष, भारवि व दण्डी ने एक एक बार ही कुररी के वर्णन का विश्लेषण प्रस्तुत तालिकाओ म देखा जा सकता है



12 प्रनाष्टपोता कुररीव दु खिता —बु० च० 8/51

## तालिका–१

'कुररी' के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (2)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| १ | रघु | १४।६८ |
| १ | विक्रम | १।३ |

## तालिका–२

'कुररी' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (7)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्वघोष | १ | बु च | ८।५१ |
| भारवि | १ | किरात | ५।२५ |
| बाणभट्ट | १ | ह च | प ८२ |
| , | ३ | कादम्बरी | पृ ५५ ८४ २७१ |
| दण्डी | १ | द च | पृ ८।४६ |

— —.—



# शुक
# THE PARROT

*नीवारा शुकगर्भकोटरमुखभ्रष्टास्तरूणामध*[1]

—शाकुन्तलम् १/१४

सम्पूर्ण-संस्कृत-साहित्य में शुक का मध्यम स्थान रहा है वाल्मीकि रामायण मे तो एक सर्ग का नाम ही शुक-सर्ग है[1] अमरकोष में शुक के लिए कीर एवं शुक केवल दो नामों का उल्लेख है[2]

वैज्ञानिकों की दृष्टि में शुक मेरुदण्डीय उपजगत् के पक्षी-श्रेणी के शुक उपवर्ग के शुक-परिवार का सदस्य है[3]

शुक विश्व के अनेक भागों में पाया जाने वाला पक्षी है मुख्यतः न्यूजीलैण्ड, अफ्रीका, लंका, बर्मा भारत मलेशिया जावा, दक्षिणी अमेरिका आस्ट्रेलिया, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका व फिलीपाइन्स में शुक-परिवार की अनेक जातियां निवास करती हैं[4]

शुक छोटे-बड़े कई कदों का होता है तोते की लम्बाई ३६ इन्च से १'-७' तक देखी गयी है[5] इसके पंखों में भी कई भिन्नताएँ होती हैं इनकी चोंच छोटी, मजबूत, तीखी एवं आगे से हुक के समान मुड़ी होती है चोंच के ऊपर का भाग नीचे के भाग पर काफी दूर तक चढ़ा रहता है इसका सिर बड़ा होता है इसके पंजे बड़े उपयोगी होते हैं इनमें से प्रथम व चतुर्थ पंजा पीछे की ओर मुड़ा होता है जबकि द्वितीय व तृतीय आगे की ओर इनकी सहायता से यह टहनियों

---

1 वा० रा० शुकसर्ग (25)

2 'कीरशुकौ' इत्यमर: (सिंहादिवर्ग)

3 जीवजगत् पृ० 462

4 इन० ब्रि० भा० 17 पृ० 335 इन० चेम्बर० भा० 5 पृ० 429 इन० यंग बुक भा० 14 पृ० 160, एनीमल किंगडम पृ० 1043

5 जीवजगत पृ० 462

को आसानी से एव मजबूती से पकड सकता है, शुक के रंग के विषय में भिन्नमत हैं किंतु सामान्यतः इसकी चोंच लाल होती है इसकी पूंछ हरी नीली व डैन नीले होते हैं इसके नीचे का भाग हरा लाल रंग का होता है एवं नर की गर्दन के चारों ओर काली लाल या गुलाबी पट्टी (कंठी) होती है

शुक पक्षी जगत् का सम्भवतः सबसे बुद्धिमान् जीव है[6] यह मानव की बोली की नकल करने में बडा चतुर होता है इस विषय में अनेक कथायें प्रचलित हैं सिखलाने पर यह अनेक प्रकार के तमाशे करते हुए देखा गया है शहरों में ज्योतिष के चमत्कार दिखलाने वाले शुक के सम्मुख कई लिफाफे रखते हैं एवं तोता इशारे पर उनमें से एक लिफाफा उठाकर देता है शुक चिढने पर अपने पंजे से हाथ को पकड कर बुरी तरह काट खाता है यदि पिंजडे का दरवाजा खोलकर पिंजडे में हाथ डालकर शुक के पर को छूआ जावे तो वह हाथ को बडे ही सुंदर ढंग से पकडता है मानो वह हाथ से हाथ मिला रहा हो अपनी इन विशेषताओं के कारण उसे भारतीय समाज में बडा ऊंचा स्थान मिला हुआ है तोते की सामान्य ध्वनि टर टर होती है घरों में शुक को राम राम सीताराम राधेश्याम', इत्यादि शब्दों के पाठ पढाये जाते हैं चोरों के घर में घुसने पर काका ! घर में चोर घुस गये ऐसा वाक्य तोते के मुख से सुना गया है

एक कथा बडी प्रचलित है एक बार पंडित मण्डनमिश्र से शास्त्रार्थ करने के लिए शंकराचार्य पधारे कहते हैं जब वे गांव की पनघट पर एक बाला से मिश्रजी के घर का पता पूछ रहे थे तो उस बाला ने संस्कृत में उत्तर दिया—

जगद्ध्रुवस्यात् जगद्ध्रुवस्यात्
शुकांगना यत्र गिरो गिरन्ति
द्वारस्थनीडान्तरसन्निरुद्धा
जानीहि तं मण्डनपंडितौकः ।

इस सुनकर शंकराचार्य ने बडा आश्चर्य किया कि जिस घर में शुक के इतने उच्च विचार हैं उस घर का स्वामी तो पता नहीं कितना बुद्धिमान् होगा। इस प्रकार भारतीय गृहों में शुक की उच्च स्थिति रही है

अपनी तीखी चोंच की सहायता से शुक अनेक पदार्थों का रसास्वादन करता है इनके मुख्य खाद्य पदार्थ हैं—वनस्पति बीज, फल फूल गन्ना, ताजे, मिर्च, नारियल छिपकली मेढक एवं अन्य कीडे मकोडे यह कडी से कडी चीज को खा सकता है इसी कारण इस लोहनिर्मित पिंजडे में बन्द किया जाता है तोते बगीचा

---

6 भारत के पक्षी पृ० 99

एव खेनो म ग्रनाज को वहुत नुकसान पहु चाते है ¯ पिजडे से निकलने के बाद तोता कभी पीछे नही लौटता, उसे पिंजडे का बन्धन कदापि प्रिय नही भले ही उसे द्राक्षा खिलायें, मधु पिलायें, हाथ से सहलायें या प्रेम व्यवहार करें तोता चचलता के कारण कभी किसी का नही होता—

द्राक्षा प्रदेहि मधु वा वदने विधेहि ।
देहे विधेहि किमु वा करलालतानि ।
जातिस्वभावचपल पुनरेष कीर—
स्तत्रव यास्यति कृशोदरि मुक्तबध ।।

—सुभाषित रत्नभाण्डागार–२२७

शुक की स्वामीभक्ति पर आधारित एक औपदेशिक एव लोकप्रिय कथा 'शुकसप्तति' नामक ग्रन्थ मे मिलती है जिस मे एक मदनसेन नामक स्त्री में आसक्त व्यक्ति का वणन है एक बार वह विदेश गया हुआ था, इसी बीच उसकी पत्नी ने व्यभिचार करने का विचार किया किन्तु उसके घर मे एक शुक था उसने मदनसेन की पत्नी को ७० दिन तक कहानिया सुनाकर व्यभिचार करने से रोके रक्खा और इसी बीच उसका पति वापस आ गया

शुक के द्वारा वाणी का अनुकरण किये जाने के कारण जगत् मे ऐसा करने वाले को "तोता रटत करने वाला कहा जाता है शुक की बोली बडी तेज तीखी एव कर्कश होती है जिसे एक बार सुनने के पश्चात् सरलता से पहचाना जा सकता है

## सस्कृत काव्यों मे शुक

कालिदास एव कालिदासोत्तर काव्यो मे तोते के लिये शुक [8] व कीर [9] नामो का प्रयोग हुआ है

मानव व शुक —मानव व शुक का साथ रहा है मानव ने इसकी बुद्धिमानी एव चातुर्य को समझा एव इसे पालतू बनाया काव्या म मानव एव शुक से सम्बन्धित अनेक कथायें मिलती हैं कादम्बरीकार महाकवि बाणभट्ट ने एक मन्त्री का नाम 'शुकनास' रक्खा है [10] (यहा शुकनास का अथ बुद्धिमान् व्यक्ति से है जिसकी नाक शुक के समान सुन्दर हो) वह चन्द्रापीड को एक उपदेश देता है जिसे

---

7 अतिवृष्टिरनावृष्टि मूषिका शलभा शुका ।
प्रत्यासन्नाश्च राजन षडेता ईतय स्मृता ।।

8 शाकु० 1 14 रघु० 5–74, कादम्बरी पृ० 125

9 नवप० 21–22

10 'अमात्यो ब्राह्मण शुकनासोत नामासी'। कादम्बरी० पृ० 178

'शुकनासोपदेश' कहा गया है महाकवि बाणभट्ट ने अपनी कृति कादम्बरी म दो विचित्र तोतो का उल्लेख किया है, जो मानव समाज से सम्बन्धित थे अत उनका सक्षिप्त परिचय देना यहां अनुचित न होगा

शुक विशेष वशम्पायन —वशम्पायन एक विचित्र शुक के रूप म उपस्थित होता है, वास्तव म कादम्बरी म तीन जन्मो की कहानियां है अत वशम्पायन के तीन रूप हमारे सम्मुख आते हैं वतमान शुक प्रथम जन्म म राजा पुण्डरीक हैं द्वितीय जन्म म वे वशम्पायन (मत्री शुकनास) के रूप म पदा होते हैं एव उसी जन्म म किसी मुनि के शापवश वे तृतीय बार वशम्पायन शुक (तोता) के रूप म उपस्थित होते हैं वशम्पायन-नामक यह शुक चाण्डाल कन्या द्वारा शूद्रक के दरबार मे उपस्थित किया जाता है [11] चाण्डाल कन्या राजा शूद्रक से कहती है कि यह चमत्कारी एव सम्पूण भूतल का एक उत्कृष्ट रत्न है जिसे वह प्रस्तुत करना चाहती है [12] राजा के सम्मुख उस शुक को प्रस्तुत करते हुए उसे सम्पूण शास्त्रो विद्याओ, कलाओ से पूण बतलाया जाता है [13] वह तोता अपना दाहिना पर ऊचा करके शुद्ध सस्कृत म राजा का अभिवादन करता बतलाया गया है [14] राजा इसकी इन विचित्र क्रियाओ को देखकर आश्चय करता है तो उसका मत्री कहता है कि यह आश्चय का विषय नही, क्योकि शुक-सारिका द्वारा रटी रटाई बातो को पुनरुक्त करना तो प्रसिद्ध है [15] वास्तव म प्राचीन काल मे वे मनुष्यवत् बोला करते थे किन्तु अग्निदेव के शाप से इनकी वाणी से स्पष्टता नष्ट हो गयी है [16] तदनन्तर शूद्रक शुक को अन्दर प्रवेश कराने का आदेश देता है [17] भोजनानन्तर वे वशम्पायन को लाने की आज्ञा प्रदान करते हैं [18] पिंजडे म बन्द शुक को वहा

11 चाण्डालकन्यका पजरस्थ शुकमादाय देव विज्ञापयति—कादम्बरी० पृ० 23

12 विहगमश्चायमाश्चय्यभूतो निखिल-भुवनतलरत्नमिति—वही० पृ० 36

13 देखिये — देव ! विदित सकलशास्त्राय राजनीतिप्रयोगकुशल सकल भूतलरत्नभूतोऽय वशम्पायनो नाम शुक । वही० पृ 36—37

14 दक्षिण चरणमतिस्पष्टवण स्वर सस्कारया गिरकृत जयशब्दो राजानमुद्दि *श्यार्यामिमा पपाठ— स्तनयुगमश्रुस्नात अकतो रिपुस्त्रीणाम ।*
—वही० पृ० 38

15 शुकशारिकाप्रभृतयो विहग विशेषा यथाश्रुता वाचमुच्चारयन्तीत्यधिगतमेन देवेन। वही० 39

16 अग्निशापात्स्वरस्फुटालापता शुकनामुपजाता—वही० पृ० 40

17 वशम्पायन प्रवेशयताममभ्यन्तरम—वही० पृ० 43

18 अन्त पुराद् वशम्पायनमादायागच्छ—वही० पृ० 51

लाया जाता है तत्पश्चात् राजा उससे बातचीत करते हैं सर्वप्रथम वे उसके भोजन की तृप्ति के बारे में पूछते हैं उसका उत्तर देते हुए वैशम्पायन अंगूर, जामुन ग्रामला व ग्रनार के रसास्वादन की बात कहता है इसी मध्य वह राजा से एक मजाक भी करता है कि जब सब खाद्य सामग्रियां देवियों ने अपने हाथों से लाकर दी थी तो वे अमृततुल्य क्यों नहीं होतीं[19] इस पर राजा 'अच्छा अच्छा' कहकर बात का क्रम भंग कर देता है वह राजा को अपने जन्म, पिता व माता की मृत्यु, उसका बचना, जाबालि मुनि के पुत्र द्वारा उसका जाबालि आश्रम में जाना इत्यादि का पूरा पूरा विस्तृत वर्णन प्रस्तुत करता है[20] अन्त में कहानी समाप्त होने पर शुक का देहान्त हो जाता है एवं उसके स्थान पर पुण्डरीक आकाश मार्ग से उतर आता है इस प्रकार महाकवि बाणभट्ट ने बड़े ही सुन्दर ढंग से वैशम्पायन का सहारा लेकर शुक की क्रियाओं (नकल करना), पिंजड़े में बन्द होना, जामुन अंगूर, अनार आमला इत्यादि खाना (कोटरे में निवास करना) का सम्यक प्रदर्शन किया है जो उनके सूक्ष्मनिरीक्षण एवं परिपक्व अनुभव का परिणाम है

एक अन्य शुक परिहास — कादम्बरीकार ने शुक वैशम्पायन के अतिरिक्त एक अन्य शुक का भी वर्णन प्रस्तुत किया है[21] यह शुक मनोरंजन का कारण बनता है इसे कालिन्दी नामक सारिका ने ठुकरा दिया है कालिन्दी व परिहास के वार्तालाप का विस्तृत वर्णन किया गया है

कादम्बरी के अतिरिक्त अन्य काव्यों में भी मानव व शुक से सम्बन्धित बातों का वर्णन मिलता है रघुवंश में राजा द्वारा राज्याभिषेक के समय तोतों को मुक्त करने की बात कही गयी है[22] सज्जन मनुष्यों को तोतों द्वारा मधुर-मधुर बातें

---

19 देव ! किं वा नास्वादितम ? जम्बूफलरस दाडिमबीजानि, द्राक्षफल प्राचीनामलकी फलानि । सवमेव देवीभि स्वयं करतालोपनीयमानममृतायते इति'—वही० पृ० 53

20 'एकस्मिनश्च जीर्णकोटरे जायया सह निवसत परिणते वयसि वर्तमानस्य कथमपि पितुरहमेवको विधिवशात् सुनुरभवम् वही० पृ० 76 प्रसववेदनया जननी मे लोकान्तरमगमत् वही० पृ० 76, तातमपगतासुमकरोत्—वही० पृ० 103 पुञ्जितस्य महत शुष्कपत्रराशेरुपरि पतितमात्मानमपश्यम । अङ्गानि येन मे नाशोष्यन्त वही० पृ० वही० मा गृहीत्वातपोवनाभिमुख शनै शनैरगच्छन् वही० पृ० 116

21 'परिहासनामा शुको मदनपरवशो'—वही० पृ० 56

22 पञ्जरस्था शुकादय । सद्यभोक्षास्तपा देशाद्ययेप्टगतयोऽभवन'

—रघु० 17/20

करके भुलावे मे डालने, तोतो को बुद्ध धर्म व संघ की शरण में जाने एवं शबर युवकों द्वारा कान में शुक के पंखों को धारण करने के उल्लेख भी मानव व शुक के पारस्परिक सम्पर्क को स्पष्ट करते हैं[23]

क्रिया-कलाप —अभिज्ञानशाकुन्तलम में आश्रम की पहिचान करवाते हुए महाकवि कालिदास ने लिखा है कि पेड़ों के नीचे शुकों के कोटरों से गिरे हुए इंगुदी के धान के दाने बिखरे पड़े हैं[24] इस वर्णन से हमारे सम्मुख तीन बातें आती हैं प्रथम तो यह कि शुक पेड़ों के खोखलों में निवास करते हैं दूसरी यह कि नीवार या इंगुदी नामक धान विशेष का वे भक्षण करते हैं तृतीय बात यह है कि वे खाद्य पदार्थों का दुरुपयोग करते हैं तभी तो उनके कोटरों से बाहर निवार के दाने बिखरे पड़े हैं इसी प्रकार के वर्णन महाकवि बाण ने भी किए हैं शुकों के द्वारा फलों व अनार दानों को कुतर-कुतर कर डालने से पृथ्वीतल के गीले होने के वर्णन कादम्बरी में मिलते हैं[25] हर्ष चरित में शरीफे व कटहल के कच्चे फलों को निठुरता से कुतर कर गिराने का वर्णन किया गया है[26] इन सब वर्णनों से तोतों द्वारा खाद्यपदार्थों का विनष्ट करने की आदत प्रमाणित होती है जो वस्तुतः सत्य है

तोतों द्वारा बातों को दोहराने का वर्णन काव्यकारों ने अनेकधा किया है रघुवंश में इन्दुमती स्वयंवर में जाने वाले राजाओं को प्रातः जगाये जाने पर पिंजड़े में बन्द तोते ने राजभवन में सीखों के वचनों का अनुकरण किया[27] वासवदत्ता में शुक द्वारा वचनों के अनुकरण का वर्णन करते हुए लिखा है कि रमणियां पालतू शुकों के द्वारा सुरतकाल के प्रियवचनों का उच्चारण सुनकर लज्जित हो गयी थी[28] वास्तव में शुक के कानों में जो भी पड़ता है वह उसी की पुनरावृत्ति करता

---

23 विररीभजित्रामनितमाधुर्यैरोष्ठमात्रप्रकटितराग राजशुकालाप शिशोरिव मुग्धविसोभ्यभानरय' ह० च० पृ० 397 कुर्वाणिति सरलप[illegible] रमोपानक शुकरपि वही० पृ० 423 मवनसिनशुकपक्षप्रभाहरित यमानेन। वही० पृ० 413

24 'नीवारा शुकगर्भकोटरमुखभ्रष्टास्तरूणामध शाकु० 1–14

25 'शुक-शत-मुख नख शिखर-शकलित-फलरसैन' कादम्बरी० पृ० 354, शुकचुञ्चु-दलितदाडिमफलरसकोदृत तल वही० पृ० 56

26 'शलाटुकटकवल्लिविकीर्णानि शुकशुकशुम्भस्तालिनशमानि —ह० च० पृ० 420

27 अनुकरोति शुकस्ते मञ्जुवाक् तवार्य । रघु० 5–74

28 'सुरतान्तशुकस्य[illegible]वचनमात्रमुखचापल्यादुन्निद्रलज्जितनिभृतरामासु।
—वासवदत्ता० पृ० 37

है निद्रा म कहे गये शब्दो तक को नकल तोत कर लेते हैं [29] अत शुक वास्त विकता को उद्घाटित करने म बडे सहायक होते हैं शुक द्वारा पराशर के चरित का गान करना, प्रात काल म शुक सारिका द्वारा मगलगीतो को गाना एव शुक का पानी मागना—ये सब वर्णन शुक के वाक चातुय के ज्वलन्त उदाहरण हैं [30] आश्रमवासी शुको द्वारा आहुतिया तक दन का वर्णन किया गया है [31] कादम्बरी म शुक की चोंच का लाल रग का बतलाया है [32]

इन सब वर्णनो से शुक की बुद्धिमत्ता एव वाक चातुय पर तो प्रकाश पडता ही है साथ ही काव्यकारो के विलक्षण सूक्ष्म निरीक्षण का भी ज्ञान होता है

उपमित शुक —सभी काव्यकारो ने शुक की दो विशेषताओ का यत्र तत्र सवत्र उपमित किया है प्रथम तो शुक के शरीर का हरितवर्ण एव द्वितीय उसके चचु की लालिमा कालिदास ने महारानी की चोली के रग को शुक के उदर के समान श्याम बताया है [33] अभिज्ञानशाकुन्तल म भी महाकवि ने शकुन्तला द्वारा प्रणय पत्र लिखे जाने वाले कमलिनी के पत्ते को सुग्गे के पेट के समान कोमल बतलाया है [34] कादम्बरी म सनापति के उत्तरीय को शुक के पखो के समान हरे रग का बतलाया गया है [35] शाक द्वीप पर उत्पन्न होने वाले शाक नामक वृक्ष के पत्तो के रग को तोते के पख के समान बतलाया है [36] अगस्त्याश्रम के चारो ओर कदली वृक्ष से निर्मित बाड को सुग्गे के समान हरितवर्ण का कहा है [37] आकाश मार्ग म उडती हुई शुक श्रेणी को सुन्दर हरे हरे पत्तो से निर्मित पल्लवो वाली

---

29 अन्तस्यद्गुरुस्वापगिरस्तद्वक्त्रा पठद्भिरत्रासि शुकवनेऽपि स '—नयघ० 12–25

30 कालदेशविपया सहान् स्मरान्तसुक शुकपितामह शुक वही० 18-25 यस्याञ्च निशावसाने प्रबुद्धस्यतारतमपि पठत पजरभाज शुक सारिकासमूहस्याभिमूत कादम्बरी० प० 165, क्रीडा वेश्मनि चय पजरशुक क्लान्तो जल याचते। विक्रम ० 22 2

31 अनवरतश्रवस गहीत-वषटकार वाचाल शुककुलम्।' कादम्बरी० पृ० 119

32 मुखराग शुकेषु। वही० पृ० 125

33 शुकोदरश्याममिद स्तना शुकम। विक्रम० 4–17

34 'एतस्मिञ्छुकोदरसुकुमार नलिनीपत्रे।' शाकु० 3 गद्य

35 'एषोऽस्य शुक पक्षित हरित रागोत्तरीयाशुकप्रान्तेन बलाहक।' कादम्बरी० पृ० 261

36 शाक शुकच्छदसमच्छविपत्रमालभारी हरिष्यति तरुस्तव तत्र चित्रम।' — नयघ० 11–38

37 दिशि दिशि शुकहरितश्च कदलीवन श्यामलीकृत परिसरम कादम्बरी० पृ० 63

माला से उपमित किया गया है[38] किरातार्जुनीयम् म महाकवि भारवि इन्द्र धनुष से शुकावलि की समता करते हुये लिखते हैं कि तोतो की पंक्ति प्रवाल के टुकडा के समान अरुणवर्ण चंचुओं म पीतवर्ण धान की फलसयुक्तशिखा धारण करती हुई प्रस्फुटित शिरीष के पुष्प सवर्णा इन्द्र के धनुष का अनुसरण कर रही है[39] यहा शुक की रक्त चोच पीतवर्णा धान की बाली, हरित शरीर एव अनेक रगो वाली गले की रेखाओ की उपस्थिति मे आकाश म उडने के कारण अनेक रगो की साम्यावस्था होन स शुक को इन्द्र धनुष से उपमित किया गया है, कारण कि इन्द्र धनुष म भी अनेक वर्णों की साम्यावस्था होती है अत उपमा सुन्दर एव सार्थक है

श्रीकण्ठनामक जनपद का उल्लेख करते हुये बाणभट्ट ने अनार के दाना की लालिमा को शुक की चोच के रक्तवर्ण से उपमित किया है[40] नैषधकार ने तोते की चोच को उसी के द्वारा भक्षित बिम्ब फल के समान लाल एव परो को कच्चे बिम्बफल के समान हरा बतलाया है[41] यहा पक्के बिम्ब व चोच एव कच्चे बिम्बफल व शुक के परो का साम्य प्रदर्शित किया गया है हस व मनुष्य की वाणी म तोते की वाणी का साम्य प्रदर्शित किया गया है[42] इस प्रकार सभी काव्यकारो का ध्यान शुक की चोच के रक्त व शरीर के हरे रग पर गया है या यो कहे कि सभी काव्यकारो ने एक दूसरे का अनुकरण कर पुन पुन शुक की विशेषताओ का वर्णन किया है तो अनुचित न होगा

इस प्रकार कालिदास एव कालिदासोत्तर काव्यकारो ने शुक का कुल ६० बार वर्णन किया है बाणभट्ट ने तोते का सबसे अधिक बार यानी ३१ बार वर्णन किया है कालिदास श्रीहर्ष, भारवि दण्डी, माघ एव सुबन्धु ने शुक का वर्णन क्रमश ६ ६ १ १ १-१ बार किया है अश्वघोष के काव्यो म शुक का वर्णन नहीं मिलता शुक के वर्णन का विवरण प्रस्तुत तालिकाओ म अवलोकनीय है

---

38 हरितपत्रमयीव मरकतण
 स्यन्दनद्रुमनारमय सवा ।
 शतावलि ।

— शिशु॰ 6-51

39 'शुकावलिव्यक्तशिरीषकोमला धियं गतामिरोऽनुगच्छति ।' किरात॰ 4 36

40 'कीरशकासामिव —ह॰ च॰ पृ॰ 161

41 तामायकान्त बिम्बाधरशकला स्पन्द तामपरिणतापुष्टिमत्स्वदरस्य । कारस्य ।।

—नैषध॰ 21 122

42 'स कारवमनुस्यात्वारान् ।' वही॰ 3-12

## तालिका-१

'शुक' के वर्णन का कालिदास के काव्यो में विश्लेषण (६)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| २ | रघु० | ५।७४ १७।२० |
| २ | मालु० | १।१४ ४।ग |
| २ | विक्रम० | २।२२ ४।१७ |

## तालिका-२

'शुक' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यो मे विश्लेषण (४०)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| भारवि | १ | किरात० | ४।३६ - |
| माघ | १ | शिशु० | ६।५३ |
| श्रीहर्ष | ६ | नैषध० | २।१५ ३।१२ ११।१८ १२।२५ १८।२६ २१।१२२ |
| सुबन्धु | १ | वासवदत्ता | पृ० ३७ |
| बाणभट्ट | ६ | ह० च० | पृ० १६१, २२७ ३६७, ४१३ २३ ५६६ |
| , | २४ | कादम्बरी | पृ० २३ ३६ स ४० ४३, ५१, ५३ ५६, ६३ ७६, १०३, ३ १६ १९ २५ ६४ ७८ २६१, ३८४, ५६२ उ० पृ० ११२ |
| दण्डी | १ | द० च० | पृ० १०० |

## उलूक
## THE OWL

दिवाकर स्फुटलक्ष्यपमालोकतालोकमुलूकनाथ ।'

—नैषध० २२।३७

संस्कृत साहित्य में उलूक का वर्णन अल्प स्थान रहता है यद्यपि साहित्य में उलूक का उल्लेख मिलता है [1] बौद्धकाव्य साहित्य में भी उलूक का वर्णन उपलब्ध हैं रामायण में गधे व उलूक की आपसी बातचीत का वर्णन मिलता है [2] अमरकोष में उल्लू के लिए उलूक, वायसाराति पेचक व घूक नामों का उल्लेख है [3] वैज्ञानिकों के अनुसार उलूक पक्षि श्रेणी के उल्लू उपश्रेणी के उल्लू उपवर्ग के उल्लू परिवार का सदस्य है [4]

उल्लू एक बड़ा ही डरावना पक्षी है यह रात्रि को अपना कार्य क्षेत्र रखता है एवं इसी कारण इसे रात का राजा की उपाधि से विभूषित किया गया है उल्लू के अनेक प्रकार विश्व पटल पर विद्यमान हैं इसकी आँखें मनुष्य की भाँति सामने की ओर होती हैं, अगल-बगल में नहीं, जिससे यह केवल सामने की ओर देख सकता है उल्लू की गर्दन व पंख दोनों में कोमलता होती है यह अपनी गर्दन को बड़ी सरलता से इधर उधर घुमा सकता है इसके उड़ते समय पंखों की आवाज नहीं होती [5] सामान्यत उल्लू चितले रंग के होते हैं इनमें प्रकारों के आधार पर कुछ कुछ अंतर होता है उल्लू के कान बड़े-बड़े होते हैं जिसकी सहा

---

1 ऋग्० 10/165/4 वा० सं० 24/23 मै०सं० 3/14/4 अ०वे० 6/19/2 तै० सं० 5/5/18/1

2 'गधोलूकविवाद त पृच्छति स्म रघूत्तम —वा रा० 3/29

3 उलूकेतु वायसारातिपेचकौ घूकस्य —इत्यमर (सिंहादिवर्ग)

4 जीवजगत पृ० 477

5 ब० ग्रो० सो० पृ० 241–252 इन० ब्रि० भाग–16 पृ० 979 इन० बड० भाग–13 प० 673

यता से यह हल्की से हल्की आवाज भी आसानी से सुन सकता है इसकी आँखें बडी-बडी होती हैं जिनसे यह रात को कम प्रकाश म भी आसानी से देख सकता है दिन म उल्लू बाई आख को बन्द रखता देखा गया है

उल्लू एशिया माइनर, रूस अफ्रीका, पश्चिमी एशिया, द० प० एशिया यूरोप व दक्षिणी एव उत्तरी अमेरिका मे पाया जाने वाला प्राय विश्वव्यापी पक्षी है

उल्लू खण्डहर, कब्र व श्मशान वाले स्थानो पेडो व पवत की गुफाओं मे एव बिजली के खम्भो पर बठा देखा जा सकता है यह शाम होने पर ही बाहर निकलता है दिन म यह सामान्य रूप से किसी गाढान्धकार मय झाडी या गुफा म विश्राम करता है[6]

उल्लू एक शिकारी पक्षी है यह अनेक जीव-जन्तुओं को खाकर अपना पेट भरता है उल्लू की भोजन-तालिका म चूहे, मढक खरगोश मछली छछूदर, गिलहरी, टिड्डी गोबरला व अनेक छोटे पक्षी है[7] मोर की भाति यह भी सव भक्षी पक्षी है

भारतीय समाज मे उल्लू का घर म निवास करना अशुभ माना जाता है एव इसका बोलना किसी अप्रिय घटना का प्रतीक माना जाता है इतना ही नहीं इसे मूखता का प्रतिरूप माना जाता है एव मूर्खों को काठ का उल्लू' और उल्लू का पट्ठा' कहा जाता है एक ओर उल्लू को इतना अपमानित एव नीच पक्षी माना है तो दूसरी ओर इसे 'लक्ष्मी' का वाहन कहा है तात्पय यह है कि यदि अधिक धन से प्रेम हो मूखता की ओर प्रवृति होने लगती है ऐसा कायकारों का मत हैं परन्तु वास्तव मे उल्लू के साथ अन्याय किया गया है उल्लू जितना निडर और पराक्रमी पक्षी शायद ही कोई हो इसकी शक्ल देखते ही रोगटे खडे हो जाते हैं जातकों म एक कथा मिलती है कि एक बार पक्षियो की एक सभा हुई जिसमे सवसम्मति से उल्लू को राजा स्वीकार किया गया किन्तु यह मन कौवे को नही भाया और उसने काव काव करके इसका विरोध किया भला उल्लू इसको कब सहन करने वाला था, वह भगा और कौवे का पीछा करने लगा कहते हैं कि उसी दिन से उल्लू-परिवार व काक परिवार म वर पनप गया जो निरन्तर चलता आ रहा है कुछ भी हो अपनी वीरता व अद्भुत गुणो के कारण उल्लू आज भी रात का राजा बन बठा है, भले ही कौवा उसका कितना भी विरोध करे

---

6 दि० इ० वड स० प० 62

7 इन० ब्रि० भाग–16 पृ० 979, इन० बड० भाग–12 पृ० 873 ब०ओ०सो० पृ० 241–252

पञ्चतन्त्र म भी एक प्रकरण कौवे व उल्लू म सम्बन्धित है, जिसे 'काको लूकीयम्' कहते हैं जिसम कथाओ का सग्रह है जो सख्या म १६ हैं हितोपदेश म भी कौवे व उल्लू से सम्बन्धित कथायें उपलब्ध हैं एक स्थान पर आधी रात को उल्लू द्वारा कौवे को मारे जाने का वर्णन किया गया है [8] वास्तव मे उल्लू का ईश्वर न रात को देखन की जो शक्ति दी है वह बचारे कौए के लिए अभिशाप बन गई है क्योकि वह ता रात को देख नही सकता और उसे उल्लू का भोजन बनना पडता है इसी कारण उल्लू को वायसाराति नाम दिया गया है

प्राचीन यूनान मे उल्लू को सरस्वती का वाहन माना जाता था[9] प्रसिद्ध कवियो मे कीटस, टेनिसन व ई एच रिचाड स ने उल्लू की बडी प्रशसा की है उल्लू को अनेक देशो मे बुद्धिमत्ता का प्रतीक माना है [10]

उल्लू की मादा एक बारगी २ से १२ तक अण्डे देती है जो किस्मो के अनुसार विभिन्न रगो के होते है एव गोल होते है उल्लू की ५२५ किस्मो का होना बताया गया है [11] यहा हम उल्लू की कतिपय किस्मो का नामोल्लेख मात्र करना उचित समझते हैं –

१ बान आउल
२ दी राक इगल आउल
३ ग्रेट हार्न्ड आउल
४ दीर्घकर्ण उल्लू (लाग इयड आउल)
५ पिग्मी उल्लू
६ चित्तीदार उल्लू
७ लघुकर्ण उल्लू (शाट ईयड आउल)
८ लाज मोटैल्ड वुड आउल
९ भूरा मत्स्य उल्लू (ब्राउन फिश आउल)

## सस्कृत काव्यो म उलूक

सस्कृत का यो म उलूक को कौशिक उलूक निशाचर व दिवाभीत नामों से कहा गया है [12]

---

8 कौशिकेन हतज्योतिर्निशीथ इव वायस —हितोपदेश (सन्धि 4/51)
9 भारत क पक्षी॰ पृ॰ 1<8
10 इन्न॰ वड॰ भाग–13 प॰ 673
11 वर्मोवरि॰ भाग 13 पृ॰ 673
12 नवप॰ 22/35 कादम्बरी॰ प॰ 98 ह॰ च॰ पृ॰ 424 ह॰च॰पृ॰ 22/37 वासवदत्ता॰ प॰ 219 कादम्बरी॰ पृ॰ 58 कुमार॰ 1/12

मानव व उल्लू—यद्यपि मानव व उल्लू का को॰ सीधा सम्बन्ध प्रतीत नही होता किन्तु काव्यकारो ने यदा कदा मानव को उल्लू से सम्बन्धित करने के प्रयास किये हैं इन्द्र व विश्वमित्र को कौशिक की उपाधि से अलंकृत किया गया है तथा कणाद को उलूक कहा है[13] नैषधीयचरित के बाइसवें सर्ग मे नल दमयन्ती को अन्धकार की परिभाषा के सम्बन्ध मे बतलाते हुए वशेषिको के मत का प्रतिपादन करते हैं वे तर्क देते हैं कि वशेषिक दर्शन के प्रणेता कणाद (औलूक या उल्लू) है एवं उलूक का नेत्र (दर्शन) ही अन्धकार के तत्त्व का निरूपण करने में समर्थ हो सकता है[14] शबरो के लिए उल्लुओं को ही उपदेशक माना है[15] अत मानव व उलूक का सम्बन्ध अवश्य है

कार्य—कलाप—उलूक की विभिन्न क्रियाओं का काव्यकारो ने वर्णन किया है महाकवि श्रीहर्ष ने उल्लुओं द्वारा दिन के प्रकाश को अन्धकार समझने की बात कही है[16] तात्पर्य यह है कि दिन उलूका के लिए ता रात के ही समान है क्योकि वे दिन को देख नही सकते बाणभट्ट ने उल्लुओं द्वारा सर्वदा जातक कथाओं को सुनकर आलोक ग्रहण करने की बात कही है[17] बाण का यह वर्णन वास्तविक नहीं जान पडता क्योकि उलूक जातक कथायें कभे सुन सकता है क्योकि एक तो वे दिन को बाहर ही नही निकलते एवं दूसरे वे मानव से दूर ही रहते हैं अत बाणभट्ट का यह वर्णन कथा—साहित्य की बात है, कोरी कल्पना है शाम के समय पुराने वृक्षों के कोटरो से निकलकर उल्लुओं के बाहर आने के वर्णन सुबन्धु व बाण ने किये हैं[18] श्मशान व विन्ध्याटवी मे उल्लुओं के विचरण करने का भी वर्णन मिलता है[19] इन सब वर्णना पर हमारे सम्मुख तीन बातें आती है

१ उलूक अन्धकार मे रहने वाला पक्षी है

२ उलूक शाम के समय ही बाहर निकलता है

३ उलूक श्मशान, खण्डहर एवं पडो के खोखला मे निवास करते हैं

13 नैषध॰ 5/64 22/35

14 नैषध॰ 22/35

15 दिवान्धकार स्फुटलब्ध रूपमालोक—नैषध॰22/17

15 ,उपदेष्टार सदसता कौशिका —कादम्बरी प॰ 98

17 ह॰ च॰ प॰ 424

18 कटुम्बिनि कौशिककुले' —ह॰ च॰ प॰ 138

19 उलूकद्रोणशकुनि॰ —वासवदत्ता प॰ 21

उपमित उलूक—संस्कृत साहित्य में कल्पना एवं उपमा दो मुख्य विशेषतायें हैं जो हर वर्णन में विद्यमान रहती है फिर भला उल्लू काव्यकारों द्वारा उपमित क्यों नहीं किया जाता अन्धकार व उल्लू की समता करते हुए कालिदास ने कुमारसम्भव के प्रथम सर्ग में हिमालय वर्णन करते हुए कहा है कि हिमालय की लम्बी गुफाओं में निवास में भी अन्धकार रहता है वह ऐसा प्रतीत होता है मानो अन्धकार भी दिन से डरने वाले उल्लू के समान गुफाओं में आकर छिप गया हो[20] ग्राम को विचरण करने निकले हुए उल्लू की समता नन्दनवन में विचरण करने वाले इन्द्र से की गई है[21] अन्यत्र उल्लू व इन्द्र को उपमित करते हुए कहा है कि जिस प्रकार अस्थिर नेत्र दृष्टि उल्लू सूर्य के तेज के सम्मुख देखने में असमर्थ रहता है उसी प्रकार इन्द्र भी रावण को न देख सकने के कारण अमरावती को छोड़कर हिमालय की गुफा को अपनाता है[22] श्रीहर्ष लिखते हैं कि नल के सौंदर्य को देखकर व स्वयं को देखकर इन्द्र अपने आप को उल्लू समझने लगे[23] यहां वास्तव में नल के सौन्दर्य की प्रशंसा मात्र करने के लिए इन्द्र को नीचा दिखलाया गया है अन्यत्र अन्धकार की मलिन एवं अग्राही सम्पत्ति को त्रिशंकु की मलिन राज्य समृद्धि से समता करते हुए विश्वामित्र को उल्लू से उपमित किया गया है[24]

इस प्रकार सम्पूर्ण काव्यों में उलूक का कुल चौदह बार वर्णन आया है बाणभट्ट ने उलूक का पांच बार वर्णन किया जबकि श्रीहर्ष, सुबन्धु माघ व कालिदास ने क्रमशः चार दो दो व एक बार, अश्वघोष, भारवि एवं दण्डी उलूक के विषय में कुछ नहीं कहते उलूक के वर्णन का विश्लेषण संलग्न तालिकाओं में अवलोकनीय है

---

20 दिवाकराद्रक्षति •  —कुमार० 1/12

21 न दनवनमिव सचरत्कौशिकम  —वासवदत्ता पृ 163

22 शिशु० 1/53

23 नैषध० 5/64

24 नैषध० 22/37

## तालिका—१

'उलूक' के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (1)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
| --- | --- | --- |
| १ | कुमार० | १।१२ |

## तालिका—२

'उलूक के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (13)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
| --- | --- | --- | --- |
| माघ | २ | शिशु० | १।५३, ११।६४ |
| श्रीहर्ष | ४ | नैषध० | ५।६४, १६।४०, २३।३५ से ३७ |
| सुबन्धु | २ | वासवदत्ता० | प० १५६ व १६३ |
| बाणभट्ट | ३ | ह० च० | पृ० १३८, २१६ व ४२४ |
| " | २ | कादम्बरी | पृ० ५८ व ६८ |





# कलविंक
## THE SPARROW

'कलविंककधरावूसरासु तारकासु।'

—ह० च० पृ० २६६

संस्कृत-साहित्य मे गौरया का वर्णन अत्यन्त विरल है गौरया को वैदिक साहित्य मे कलविङ्क कहकर पुकारा गया है[1] अमरकोष म इसे चटक व कलविंक नामो से कहा गया है एव मादा को चटका नाम दिया गया है[2] वनानिको के अनुसार यह तूती परिवार का सदस्य है[3]

गौरया हमारा जाना पहिचाना पक्षी है जो हमारे घर के आगन मे आसानी से देखा जा सकता है नर का रग गहरा भूरा होता है इसकी चोच पर काली धारियाँ होती हैं इसका सिर भूरा एव सिलेटी रग का होता है मादा गर्दन से लेकर नीचे तक का भाग नर से मिलता जुलता होता है इसके पखो पर काली एव सफेद धारिया होती हैं नर व मादा दोनो की आख के ऊपरी भाग म बादामी रग की एक तिरछी रेखा होती है

गौरया दुनिया के सभी भागों म पाया जाने वाला पक्षी है इसका मानव से शताब्दियो का साथ रहा है यह कबूतरो की भाति घर म किसी आड वाले स्थानो म अपना घोंसला बनाकर रहती है गौरया बडा ही चचल एव भगडाल पक्षी है यह १०–१५ के समुदाय म सदा सवदा ची ची चू-चू करता रहता है एव जमकर झगडा करता है कबूतरो की भाति इनका भी कोई अण्डे देने का खास समय नहीं साल मे किसी भी भाग म यह अण्डे दे देती है गौरया का धूल म नहाना देखी गई है जो वर्षा आने का प्रतीक माना गया है पाघ व भड्डरी के ग्रंथो म इसके उल्लेख मिलते हैं घर म लगे शीशे म देखकर यह छोटा सा पक्षी अपने प्रतिबिम्ब पर बारम्बार प्रहार करता देखा गया है[4] गौरया

---

1 तै० स० 2/5/1/2 मै० स० 3/14/1 का० स० 12/10

2 चटक कलविङ्क स्यात् तस्य स्त्री चटका —अमरकोष (सिंहादिवर्ग)

3 कोषग्रन्थ० पृ० 510

4 व० घो० सो० पृ० 383

अनेक प्रकार के कीडे मकोडे खाना है यह अनाज व बीज भी खाते हुए देखा गया है[5] मानव के अत्यन्त निकट होने पर भी गौरया के प्रति कोई विशेष साहित्यिक वर्णन नही हो पाये हैं

## संस्कृत काव्यो में कलविङ्क

संस्कृत काव्यो में गौरया के लिए चटक व कलविङ्क नामो का उल्लेख मिलता है[6]

काय-कलाप—कलविंक के द्वारा चू चू की ध्वनि करने के उल्लेख मिलते हैं[7] केवल इसी एक क्रिया का उल्लेख काव्यकारो ने किया है

उपमित कलविङ्क—बाणभट्ट ने अपनी कृति हर्षचरित में प्रातःकालीन तारो की समता कलविंक के धूसर वर्ण वाले कन्धरा से की है[8] यहा प्रातःकाल तारो के मन्द हो जाने से उनका धूसर वर्ण होना स्वाभाविक है, अतः उपमा सुन्दर है साथक है

सम्पूर्ण कालिदास एव कालिदासोत्तर काव्यो में कलविंक का कुल तीन बार ही वर्णन आया है कालिदास के काव्य व नाटको मे कही भी चटका का उल्लेख नही हुआ कालिदासोत्तर काव्यो म बाणभट्ट के कलविंक का दो बार एव सुबन्धु ने एक बार वर्णन किया है कलविंक के काव्यात्मक वर्णन का विश्लेषण प्रस्तुत तालिका द्वय म देखा जा सकता है

---

5 इन० बड० प० 594

6 वासवदत्ता प० 232 हृ० च० प० 211

7 चटका सचायमाणवाचाटचाटकरनियमरणचाटव' —हृ० च० प० 419

वासवदत्ता प० 332

8 कलविंक कन्धराधूसरासु तारकासु हृ च प 299

---

तालिका—१

'कलविंक के वर्णन का कालिदास के काव्यों मे विश्लेषण (X)

तालिका—२

'कलविंक के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यो म विश्लेषण (3)

| कवि | सख्या काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| सुबन्धु | १ वासवदत्ता० | प २३२ |
| बाणभट्ट | २ हर्षचरित० | पृ २११ व ४१९ |

# सारिका
## THE MYNA

'पृच्छन्ती वा मधुरवचना सारिका पंजरस्थाम् ।'
—मेघ० २।२५

भारतीय साहित्य मे सारिका का स्थान गौण रहा है वन्दिक-साहित्य म सारिका के लिए शारि शब्द का प्रयोग देखा गया है[1] वीरकाव्य साहित्य म भी सारिका के उल्लेख मिलते हैं[2] पौराणिक साहित्य म भी यत्र तत्र सारिका के वर्णन उपलब्ध होते हैं[3]

शब्द कल्पद्रुम मे सारिका के १५ नामो का उल्लेख किया गया है वे है– पीतपादा गोराटी गोकिराटिका शारिका सारी, शारी चित्रलोचना, मधुरालापा पूती, मेधाविनी, गोराष्टिका, गोकिराटी, गोरिका व कलहप्रिया ये सभी नाम सारिका की स मान्य विशेषताओ के आधार पर रखे गये हैं वज्ञानिको की दृष्टि म सारिका मेरु दण्डीय उपजगत् के अ तगत पक्षि श्रेणी के मैना परिवार की सदस्या है[4]

सारिका की अनेक जातियां भू मण्डल पर विद्यमान हैं मुख्यत यह बर्मा थाईलण्ड, मलाया, लका सयुक्त राष्ट्र अमेरिका अफ्रीका हवाई द्वीप हगरी, स्विटजरलण्ड यूरोप के अनक भाग पाकिस्तान, अफगानिस्तान व भारत के अनक भागो मे निवास करती है[5]

सामान्य मैना का ऊपरी भाग मटियाला एव भूरा होता है इसका सिर एव गदन नीलापन लिए होते है इसकी चोच पीली एव आखो के पासवर्ती भाग चमकीले पील होते हैं इसकी आखें गहरी लालिमा से पूण भूरी होती हैं इसके

---

1 त० स० 5/5/12/1 मै० स० 3/14/14 वा स 24/33

2 मम प्रीति विशिष्टा सा मत्तो लक्ष्मण सारिका' —वा० रा० अर० 53/22

3 'महाभारत ० 13/54/11

4 जीवजगत्० प० 5/9

5 इ० ब० ट्रा० को० पृ० 146 ब० ऑ० सौ० पृ० 392

पर पीले होते हैं[6] इसकी लम्बाई ६ इन्च के लगभग होती है[7]

मादा व नर म विशेष अन्तर नही होता[8] यह समुदाय मे रहने वाला पक्षी है जो भारतीय घरो मे फिरता हुआ आसानी से देखा जा सकता है यह बडा ही वाचाल पक्षी होता है शुक की भाति सारिका भी मनुष्य की नकल तो करती ही है साथ ही इसे अन्य पक्षियों की नकल करते हुए भी देखा गया है भारतीय घरों मे शुक के साथ-साथ सारिका का भी पालन होता है, परन्तु यह शुक की भाति अधिक लोकप्रिय नहीं सारिकायें बाहरी दुश्मन का डटकर सामना करती हैं वैसे ये आपस म भी बहुत झगडती देखी गई हैं परन्तु दुश्मन से मुकाबले के समय सब एक हो जाती हैं मैनायें रात्रि मे बिजली के तारो व मकानो के छज्जो पर विश्राम करती हैं यदा-कदा ये रात को भी चिल्ला उठती हैं[9]

सारिका मोर की भाति सर्वभक्षी पक्षी है यह कीड मकोडे मरी हुई छिपकलिया, टिड्डी, झींगुर फल-फूलो का रस अन्न व विभिन्न बीजो को खाकर खेती के लिए कौए की भाति अत्यन्त सहायक है[10]

सारिका का घोंसला सामान्यत पेडो पर ही होता है परन्तु यह घरो में भी घोसले बना लेती है इसके घोसले मे साप की केचुली छिपकली काठ के टुकडे, कागज चिथडे व रुई का बाहुल्य होता है[11] मैना एक बार मे विभिन्न जातिया के अनुसार २ से ६ तक अण्डे देती है अण्डे देने का समय मई से अक्टूबर तक होता है[12]

विश्व म मैना की अनेक जातिया हैं जिनम पहाडी, देसी किलहडा, दरिया, तलिया अबलखा गुलाबी एव पवई प्रमुख हैं

## संस्कृत काव्यो में सारिका

संस्कृत-काव्यो म सारिका का स्थान गौण रहा है संस्कृत काव्यकारो ने

---

6 ब० ग्रो० सी० प० 392 ब० ब० ट्रा० को० पृ० 146

7 यथोपरि यथोपरि

8 ब० ग्रो० सी० पृ० 392 ब० व० ट्रा० को० प० 146

9 भारत के पक्षी प० 102

10 यथोपरि पृ 103 ब० ग्रो० सी० पृ० 394 ब० ब० ट्रा० को० प० 146

11 भारत के पक्षी प० 103 ब० ब० ट्रा० को० पृ० 146 ब० ग्रो० सी० पृ० –393

12 यथोपरि० ब० ब० ट्रा० को० पृ० 146

13 नषध 6/60

इसे सारी,[13] सारिका[14] शारिका[15] शब्दों से कहा है।

मानव एवं सारिका—मानव एवं सारिका के सम्बन्ध को प्रकट करने वाले अनेक वर्णन काव्यकारों ने किये हैं। मेघदूत में यक्ष मेघ को अपनी प्रिया के विषय में बतलाते हुए कहता है कि उसकी गृहिणी पिंजड़े में विद्यमान सारिका से पूछ रही होगी कि क्या उसे कभी भी अपने स्वामी की याद आती है? वह तो उसको अतिप्रिय थी।[16] यहाँ विरहावस्था में सारिका को सहारा देने वाली माना गया है। नैषधकार ने सारिका के द्वारा भी नल के गुणों के वर्णन का उल्लेख किया है।[17] मैना को दूत बनाने का भी वर्णन मिलता है।[18] मुनि द्वारा मैना व तोते को वन में विद्या पढ़ाने का उल्लेख अश्वघोष ने किया है।[19] सारिकाओं द्वारा अभिसारिकाओं का मधुर वचन बोलकर जगाने एवं हरिणिका द्वारा सारिकाओं को उपदेश दिये जाने के वर्णन भी उपलब्ध हैं।[20]

सारिका विशेष कालिन्दी—कादम्बरीकार ने शुक की भांति सारिका विशेष का भी वर्णन किया है। बाणभट्ट ने कादम्बरी 'शुकसारिकाभ्यां पुनरुक्तवचन' ११ के अन्तर्गत कालिन्दी नामक सारिका एवं परिहास नामक शुक के वार्तालाप का वर्णन किया है। कालिन्दी प्रधानतः उपस्थित होती है एवं साथ ही शुक परिहास। वह सारिका क्रोध में भरकर कादम्बरी से शिकायत करती है कि एक बदमाश तोता उसका पीछा करता है अतः उसे उसका (शुक) का निवारण करना चाहिए। वह शुक को मिथ्याभिमानी, अधम एवं दुर्विनीत भी कहती है।[21]

---

14 मेघ उ 25 नैषध 1/103 कादम्बरी प 300

15 बु च 21/32 च प 389 423

16 पृच्छन्ती वा मधुर वचनां सारिकां पञ्जरस्थां
कच्चिद्भर्तुः स्मरसि रसिके त्वं हि तस्य प्रियेति ॥ —मेघ उ 25

17 'सारिकास्तथैव तत्पौरवगायनीकृता —नैषध 1/103
श्रुत्वा स नारीकरयति शारीमुखात स्वभार्यकृत यत्र हृत्ठम' —वही 6/60

18 'पञ्जरस्थ शुकसारिका दूती करोति' —कादम्बरी प 661

19 शारिकां च शुकं चैव विद्या शेतवके वने।
मुनि प्रपाठ्यामास– 11, बु च 21/32

20 कलप्रलापपरागबोधितचकिताभिसारिकासुसारिकासु —वासवदत्ता प 62
हरिणिके! देहि पञ्जर शुकसारिकाणामुपदेशम —कादम्बरी पृ 533

21 सारिका सक्रोधमवादीत–भर्तृ दारिके! — कादम्बरि!
कस्मान्ननिवारयस्येनमलीकसुभगाभिमानिनमतिदुर्विनीत मामनुबध्नन्तं विहगा
पसदम्–वही प 561

सारिका आगे कहती है कि यदि वे इस शुक का निवारण न करेगी तो वह आत्म-हत्या कर लेगी[22] तदनन्तर महाश्वेता के पूछे जाने पर मदलेखा सारिका का वृतान्त बतलाती है कि कादम्बरी ने परिहास नामक शुक से इस कालिन्दी नाम सारिका का पाणिग्रहण करवाया है[23] किन्तु आज प्रात सारिका ने शुक को तमालिका से वार्तालाप करते देखा अत यह रुष्ट हो गई है एव 'परिहास' से न वार्ता करती है, न स्पर्श करती है एव न ही उस पर दृष्टिपात ही करती है[24] तदनन्तर चन्द्रापीड सारिका की कठिनाई को कादम्बरी के सम्मुख रखता हुआ सारिका का पक्ष लेता है दूसरी ओर शुक परिहास सारिका की तीव्रबुद्धि, राज भवन म रहने से वाक् पटुता एव धूर्तता की ओर सकेत करता है इस प्रकार सारिका एव शुक क मनोमालिन्य का एक दृश्य महाकवि ने प्रस्तुत किया है इस वर्णन मे सारिका की बुद्धिमत्ता, चपलता एव वाकपटुता पर प्रकाश डालने का सफल प्रयास किया गया है कवि ने इस वर्णन को कुतूहल वर्णन कहा है अत यह मानव के मनोरञ्जन से सम्बन्धित है इस वर्णन म नारी व नर की सामान्य विशेषताओं पर भी प्रकाश डाला गया है कादम्बरी के उत्तरार्ध मे कालिन्दी व परिहास क पिंजडे से मुक्त करने का वर्णन मिलता है[25] अत शुक सारिका पालन अत्यन्त प्राचीन है आज का ही नहीं

इन वर्णनो स स्पष्ट है कि मानव व सारिका का सम्बन्ध रहा है जिसे अस्वीकार नही किया जा सकता

काय-कलाप—हर जीवधारी की कुछ न कुछ क्रियात्मक विशेषता होती है सारिका की सबसे बडी क्रिया है-वाणी का अनुकरण सारिका भी शुक की भांति मानव वाणी एव अन्य पक्षियो की वाणी की नकल करने म अत्यन्त पटु है शयनगृह म निवास करन वाली सारिका द्वारा सम्भोग समय के विस्रम्भालाप को अन्य लोगो के सम्मुख प्रकाशित कर अन्त पुर की कामनियो को लजान का वर्णन

---

22 यदि मामनेन परिभूयमानामुपेक्षसे ततोऽह नियतमात्मानमुत्सृजामि
—वही पृ 561

23 'कालिन्दीति नाम्ना सारिका, एतस्य परिहासनाम्न शुकस्य भत दारिकयैव पाणिग्रहणपूर्वक जायापदे ग्राहिता—वही पृ 561

24 तत प्रभति सजातेर्ष्या कोपपराड मुखी नैनमुपसर्पति—न स्पृशति, न विलोकयति, सर्वाभिरस्माभि प्रसाद्यमानापि न प्रसीदतीति ।
—वही प 562

25 पजरबन्ध वु ल्लाब्दवराकोकालिन्दी सारिका शुकश्च परिहासोत्तावपि भोक्तव्यौ
—वही ड प 138

मिलता है[26] सारिकाओं द्वारा युद्ध के वीरों को उपदेश देने, मैत्र व सुभाषित पाठ करने एवं छात्रों की गलतियों पर उनको टोक कर गुरुओं को विश्राम देने के वर्णन विभिन्न काव्यकारों ने किए हैं[27] तोता और मैना की आपसी प्रेम एवं वृक्षों पर निवास सम्बन्धी उल्लेख भी मिलते हैं। वासवदत्ता में सारिका द्वारा देर से घर आने वाले शुक पर क्रोध करने एवं "क्या किसी अन्य सारिका के पास गया था'? इस प्रकार का प्रश्न पूछने का वर्णन है[28] जामुन के वृक्ष पर एवं राजकुल में शुक सारिका के आलाप प्रलाप करने का उल्लेख मिलता है[29] घरों व ग्राम की शाखाओं व हाथी दांत की खूंटी पर सारिका के बैठने का वर्णन किया गया है[30]

इस प्रकार सम्पूर्ण काव्यों में सारिका का कुल मिलाकर २६ बार वर्णन हुआ है सारिका का सबसे अधिक वर्णन बाणभट्ट ने कुल १८ बार किया है श्रीहर्ष, सुबन्धु व अश्वघोष ने सारिका का उल्लेख क्रमशः ३, ३ व १ बार किया है कालिदास के काव्यों व नाटकों में सारिका का केवल एक बार उल्लेख है भारवि, माघ व दण्डी के काव्यों में मैना का वर्णन नहीं भी नहीं है काव्यों में सारिका के ये उल्लेख कवियों के पक्षी प्रेम के सुन्दर उदाहरण हैं

---

26 'शुक-सारिका प्रकाशित-सुरत विस्रम्भालापलज्जितावरोध-जनेन -वही पृ 273

27 'शारिकाभिरिव धर्मदेशाना -ह च पृ 423

'अनेक सारिकोद्घुष्यमान-सुब्रह्मण्यम -कादम्बरी पृ 119

'बहुसुभाषित जल्पाकजिह्वाश्च शुकसारिका प्रभृतीन्पक्षिणः ?'-वही पृ 388

शुक-सारिकाध्यापकध्यमना दीयमानोपाध्यायविश्रान्ति सुखानि' -वही प 79

जपु गहेऽभ्यस्तसमस्तवाङ्मय

स सारिके पञ्जरवर्तिभि शुक ।

निगृह्यमाणा बटव पदे पदे

यजूंषि सामानि च यस्य शंकिता ॥ कादम्बरी प 6

28 शारिका काचिच्चिरादागत शुक प्रकोपतरलाक्षरमुवाच –कितव !

शारिकान्तरभाविष्य सभागतोऽसि । कथमन्यथा रात्रिरियती तव इति ।

–वासवदत्ता प 85

29 तत्र जम्बूतरुशिखरे मिथ कलहायमानयोशुकसारिकयो कलकलम –वही पृ 85

'लाल्यमान शुक सारिकम । –कादम्बरी पृ 272

30 कुसुमरजोराशिशार सारिकाश्रित शिखर –वही 384

भवनसंस्कार-शाला वलम्बितपञ्जरेषु शुकसारिका निवहेषु –वही पृ 300

'यत्र पुस्पशरशास्त्रकारिसारिकाध्युषितनागदन्तका' –नैषध 18/15

## तालिका—१

'सारिका' के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (1)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
| --- | --- | --- |
| १ | मेघ० | २/२५ |

## तालिका—२

सारिका' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों मे विश्लेषण (25)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
| --- | --- | --- | --- |
| अश्वघोष | १ | बु च | २१/३२ |
| श्रीहर्ष | ३ | नैषध | १/१०३ ६/६० १८/१५ |
| सुबन्धु | ३ | वासवदत्ता | पृ ३२ ८५, ८५ |
| बाणभट्ट | ३ | ह च | पृ ७६ ३८८, ४२३ |
| बाणभट्ट | १५ | कादम्बरी | पृ ६, ७६, ११६, २७२, ७३, ३०० ८४, ८८,५३३, ६१, ६१, ६१, ६२, ६६१ उ०—१३८ |

———

# काक
## THE CROW

'नीडारम्भैग् हवलिभुजामाकुलग्रामचैत्या ।'
—मेघ० १/२५

भारतीय–साहित्य म कौवे के वरणन गौण रहे हैं, फिर भी वदिक साहित्य स अब तक के साहित्य म काक का उल्लेख यत्र तत्र–सवत्र व्याप्त रहा है वदिक साहित्य म काक को ध्वांग व भुपीतक नामा से कहा गया है[1] रामायण म कौवे को वायस करक व दात्युह श ो स कहा है[2] अमरकोष म कौवे क लिए काक करट अरिष्टि, बलिपुष्ट सत्कृत्प्रजा ध्वाक्ष आत्मघोष, बलिभुज, वायस नामा का उल्लेख किया गया है[3] वणानिको की दृष्टि म कौआ मेरु–दण्डीय उपजगत के अन्तगत पक्षि–श्रेणी के शाखाशायी वग में काक–परिवार का सदस्य है[4]

कौआ विश्व के अनेक भागो में पाया जाता है न्यूजीलण्ड के अतिरिक्त शायद ही कोई ऐसा देश हो जहा कौवे न पाये जाते हा[5] दक्षिण भारत मे कोडाई केनाल पवतीय भागो मे (पल्ली पवत श्रेणी) कौआ नही पाया जाता कहा जाता है कि इस स्थान पर कोई कौआ आ भी जाता है तो उसका देहावसान हो जाता है सम्भवत इस स्थान का प्राकतिक वातावरण कौवे के लिए अनुकूल नही भुपटल पर कौवे की अनेकानेक किस्म देखी गई हैं उनम से कतिपय निम्नलिखित हैं—

१ भारतीय गह काक
२ अफ्रीकी पाइट काक

---

1 ऋ० वे० 11/9/9 12/4/8 त० स० 5/5/13/1

2 वायस पादमगत प्रहृष्टमभिकूजित—वा० रा० कि० 1/55 'दात्युहशुकस घुष्टा—यथोपरि उ 42/1

3 'काक तु करटादिष्टबलिपुष्टसकृत्प्रजा '—इत्यमर (सिंहादिवग )

4 जीवजगत पृ 554

5 इन० ब्रि० भाग 3 पृ 924

३ फिश कौश्रा
४ जवेरिंग कौश्रा
५ द्रोण काक

इनम से प्रथम जिसे हम भारतीय गृह काक कहेंगे हमारे देश म पाया जाने वाला कौश्रा है जो भारतीय बस्तियो मे आसानी से देखा जा सकता है द्वितीय प्रकार का कावा अफ्रीका मे पाया जाता है उसे अफ्रीकी पान्ड कौश्रा कहते हैं फिश कौश्रा सयुक्त राज्य अमेरिका म पाया जाने वाला पक्षी है जेवरिंग कौश्रा जमिका के पर्वतीय भागा म होता है द्रोणकाक बडे आकार का कौवा है जो विश्व के अनेक भागो मे देखा गया है

कौवे का रग काला या सलेटी होता है कौवे की लम्बाई १८ इन्च से १६ इन्च तक होना है इसके पख काले होते हैं एव चोच मजबूत व तीखी होती है[6] इसका सिर गोल व आखें छोटी छोटी होती हैं इसकी आखें सदव इधर-उधर घूमती हैं कौवे की आख के बारे म एक कहावत है कि इसकी एक आख को भगवान राम ने तीर मारा था अत अब इसकी एक आख की पुतली ही बारी–बारी से एक दूसरी आख म घूमती रहती है पर इसमे सत्यता नही कौवे की मादा कौवे से आकार मे कुछ ही छोटी होती है इसके पख भी कम होते हैं तथ रग कुछ हल्का होता है कौवे का प्रमुख निवास पेडो से घिरे भाग हैं यह घनी झाडियो या पेडो की चोटी पर घासले बनाते पाये गये हैं[7]

कौश्रा मासहारी जीव है यह छोटी चिडिया, अण्डे कीडे मकोडे, अनाज एव रोटी खाता देखा गया है कौश्रा किसान का अनाज खाकर तो उसे हानि पहुचाता है किन्तु वह इतने अधिक कीडे मकोडो को खा जाता है जो कि फसल को अधिक हानि पहुचाने वाले होते हैं वनानिका का अनुमान है कि एक सामान्य खेत से एक ऋतु म कौवे १६ बुशल कीडे मकोडों को खा जाते हैं[8]

सामान्यत कौश्रा एक जगली पक्षी है अत इसका पालन नही किया जाता है यह अजायबघरो म पाला जाता है मादा एक बार म चार से छ अण्डे देती है जो नीली आभायी पूर्ण हरे होते हैं एव उन पर भूरे धब्बे पडे होते हैं[9]

---

6 इन० बड० भाग 3 पृ 924
7 वही० भाग 3 पृ 924
8 यथोपरि
9 इन० ब्रिटे० भाग 6 पृ० 759 इन० बड० भाग 3 पृ 924, जीवजगत्

कौआ बहुत ही चालाक पक्षी माना गया है इसकी चेष्टायें बड़ी चंचल होती हैं तभी तो 'काक-चेष्टा' की चर्चा हो पाई हैं कौवे की बोली कांव-कांव बड़ी ही भद्दी एवं बनावटु होती है राजस्थानी लोकगीत साहित्य में कौवे को बड़ा महत्व मिला है प्रेमी की याद करने वाली युवती कौवे के उड़ने से अपने प्रेमी के आने की सूचना का अनुमान लगाती है वह कौवे को सम्बोधन कर उड़ने को भी कहती है[10] वह कौवे के गुणों को गाने सोने की चोंच मढ़वाने, गले में हार पहनाने एवं घुंघरू पहनाने की बात करती है एवं उसे कहती है कि यदि उसके प्रियतम आ रहे हों तो वह उड़ जावे[11] बाहर जाते समय कौवे का बोलना अनिष्टकारक माना जाता हैं कौवे द्वारा मनुष्य को छूना भी बुरा माना जाता है एवं कौवे का पालन करने वाले भीलों को हेय दृष्टि से देखा जाता रहा है

कौवे से मानव को कोई उपयोगी वस्तु प्राप्त नहीं होती इसके मरने से खेतों को खाद अवश्य मिलता है हां, प्राचीन समय में इसके पंखों का उपयोग तीर बनाने में अवश्य होता रहा है कौवे के विषय में बावेरु जातक में एक प्रसंग आता है एक बार एक कौआ किसी व्यापारी जहाज पर पुनः पुनः आ जाता समुद्र में और जाता भी कहां ? जहाज के कप्तान को इस पर बड़ा क्रोध आया कि यह कौवा कहां से जहाज पर आ गया परन्तु जहाज जब बेलीलोन पहुंचा और वहां के लोगों ने जब इस कौवे को देखा तो वे कौतूहल में पड़ गये कि यह कितना सुन्दर काले चमकीले पंखों वाला सुन्दर पक्षी है जो उनके देश में नहीं पाया जाता उन्होंने काफी रुपया देकर उसे खरीद लिया तब कप्तान को कौवे की महिमा का ज्ञान हुआ

## संस्कृत काव्यों में काक

प्रस्तुत काव्यों में कौवे के लिए काक, द्रोण, दात्युह, वायस एवं बलिपुष्ट शब्दों का प्रयोग हुआ है[12]

मानव व कौआ—मनुष्य एक बुद्धिमान जीव है अतः उसका सभी पशु-पक्षियों पर सदा से प्रभुत्व रहा है कादम्बरी में एक सुन्दर वर्णन उपलब्ध होता है

---

10 उड उडरे म्हारा काला रे कागला कद म्हारा पीऊजी घर आवे।'

—राज० लोकगीत

11 'थारा जनम जनम गुण गाऊ रे कागा, सोना री चाच मण्डाऊ गल मे हार पहनाऊ घूघरा बन्धाऊ'

—राज लोकगीत

12 ह च पृ 245 वासवदत्ता पृ 132 ह च पृ 138, वासवदत्ता पृ 76, कादम्बरी पृ 642, ह च पृ 444, शिशु 2/116

कि लोग कौवे को पुत्र प्राप्ति के लिए दधि मिश्रित भात की बलि देते हैं[13] चाण्डाल बालक एवं भीलों द्वारा कौवे के पंखों को धारण करने के उल्लेख मिलते हैं[14] बुद्धचरित में लोहे के कौवे का भी वर्णन है मानव ने यदा-कदा अपने बुद्धिबल से पशु-पक्षियों को चित्रों व मूर्तियों में ढाला है एवं अपना मनोरञ्जन किया है

क्रिया कलाप—हर जीवधारी इस भूपटल पर कुछ न कुछ क्रिया अवश्य करता है कौवे की भी कुछ ऐसी ही क्रियायें हैं जिनका काव्यकारों ने उल्लेख किया है कौवे की काव-काव से परेशान होकर क्षीणपुण्य व्यक्ति कहता है कि कौआ दुधारे वृक्ष पर बैठकर व्यर्थ काव-काव कर रहा है[15] कौआ काव-काव करके देवी की आराधना में प्रवृत्त होना महाकवि बाण की सूझ है[16] उपवन के वृक्षों पर नींद से अलसाए कौए खेतों में काव-काव करने लगे यहाँ कौओं की नींद व ध्वनि का एक साथ वर्णन किया गया है[17] राजमहल के ऊपर फहराती हुई चञ्चल पताका की झालर पर बारम्बार पञ्जा रखने में प्रयत्नशील कौवे का वर्णन महाकवि श्रीहर्ष के अतिसूक्ष्म अवलोकन का परिणाम है[18] क्या ये कौवे मेरे ऐसे बाज को पकड़ सकते हैं[19] इस प्रकार का वाक्य कहकर बाज की शक्ति के सम्मुख बेचारे कौवे का बड़ा मजाक उड़ाया है तीरवर्ति वेतस-लताओं में छिपे हुए कृष्णकाक रति समय उत्तप्त हो कुह-कुह शब्द किया करते थे उनके इन शब्दों से आकृष्ट हो सुर मिथुन उनकी सुरत क्रीडा की प्रशंसा किया करते थे[20] इस विशाल वाक्य में कौवे की सुरत क्रीडा एवं उसकी सहायक क्रियाओं का उल्लेख किया गया है इसी वाक्य में कौवे के काले होने एवं उसके निवास-स्थल के बारे में भी जानकारी प्राप्त होती है अन्त पुर के ऊपर-ऊपर उड़ते हुए कौवों की काव काव के क्षण भर भी बन्द न होने का उल्लेख किया गया है[21]

उपमित काक—उपमा संस्कृत साहित्य का प्राण है उपमालङ्कार पर सभी

---

13 रजतपात्र-परिगहीत-वायसेभ्योदध्योदनबलिमदात्'—कादम्बरी पृ 201

14 काकपक्षधर —यथोपरि पृ 94

वायसरसरिव' —बु० च० 1/14

16 सवत कठोरवायस गणेन' —कादम्बरी पृ 642

17 निद्राविद्राणद्रोण ह च पृ 138

18 यादेव सौधाग्रनटे ०—नवध 12/21

19 किमेते काक द च पृ 245

20 तीरप्ररूढवेतसलताभ्यन्तरलीन दात्यूह ०—वासवदत्ता पृ 75

21 'ध्वाङ्क्षोद्गायसानाम'—ह च, पृ 281

काव्यकारों ने लेखनी चलाई है अपराह्न के आतप की समता नवजात कौए के मुख से की है[22] उड़ते हुए कौवों की मण्डली को भस्म की काल लोहे की किरणों से उपमित किया गया है[23] राजा लोगों द्वारा कौवों के समूह से कायलों के समूह के समान शिशुपाल से शीघ्र ही अलग हो जाने की बात कही है[24] यहाँ शिशुपाल को कौआ व राजाओं को कोयलों के समान बतलाया गया है एक स्थान पर द्रोणाचार्य से जय की कामना करने वाले कौरव सैनिकों की भांति कृष्ण काक (द्रोणकाक) द्वारा वासवदत्ता प्राप्ति की कामना करने की बात कही गई है[25] यहाँ द्रोणाचार्य एवं कृष्ण काक एवं वासवदत्ता व विजयकांक्षा की समता की गई है कौवों की जीवों से एवं गरुड़ व मुनियों की समता बताते हुए कहा है कि कौओं के डर से गरुड़ न डरता है न सिकुड़ता है, ठीक उसी प्रकार जीवों के कांपने पर भी मुनि से डरे न सिकुड़े[26]

इस प्रकार सम्पूर्ण काव्यों से कौवों का उल्लेख कुल मिलाकर ३० बार हो पाया है यद्यपि महाकवि कालिदास के काव्यों व नाटकों में कौए का कहीं स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता किन्तु फिर भी कौए के वर्णन की एक झलक कवि के कतिपय वर्णनों में स्पष्ट है प्रथम तो पूर्वमेघ के २३वें श्लोक में 'गृहबलिभुक्' शब्द का जो प्रयोग किया गया है वह सभी बनानिकों व विचारकों की दृष्टि में कौवा ही है[27] द्वितीय वर्णन रघुवंश के बारहवें सर्ग में जयन्त का उल्लेख है, यहाँ भी वाल्मीकि रामायण की पूर्व कथा के प्रसंग में 'ऐन्द्रिः किल नखैस्तस्या विददार स्तनौ द्विज' वाक्य का अर्थ कौए के अर्थ में ही ठीक बैठता है अतः यदि 'गृहबलिभुक्' एवं 'ऐन्द्रि' को कौए का वाचक मान लें तो अनुचित न होगा

कालिदासोत्तर काव्यों में बाणभट्ट ने कौए का १० बार वर्णन किया है इनके अतिरिक्त सुबन्धु श्रीहर्ष दण्डी अश्वघोष व माघ ने क्रमशः सात चार, तीन, तीन व एक बार कौवे का वर्णन किया है

---

22 'काकवायसाम्याऽरुणेऽपराह्णातपे —ह च पृ 95
23 'उपरि कालमहिप० —यशोपरि पृ 263
24 'वनिपुष्टकुलान्दिवायपुष्ट० —शिशु 2/116
25 'सनिका इव द्रोणाशामुकस्य —वासवदत्ता, पृ 132
26 मुनिन तत्रास न सञ्चुकोच —बु च 13/54
27 'नीडारम्भैर् गृहबलिभुजामाकुलग्रामचैत्या —मेघ० पू 23
देखिये का के पक्षी पृ 178 व 79

## तालिका—१

'काक के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (2)

| सख्या | काव्य | वणन का क्रम |
|---|---|---|
| १ | मेघ | १।२३ |

## तालिका—२

'काक के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (1)

| कवि | सख्या | काव्य | वणन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्वघोप | ३ | बु च | १।१४ १३।५८ १४।१४ |
| माघ | १ | शिशु | ७।११६ |
| श्रीहर्प | ४ | नपध | ११।१२५ १२।२१ १६।१२ ६१ |
| सुबन्धु | ७ | वासवदत्ता | पृ ५६ ७५, ६२, १३२, ५४ ६२, २१६ |
| बाणभट्ट | ६ | ह च | पृ ६५ १३८ २६८, ८१, ३३५, ४४४ |
| बाणभट्ट | ४ | कादम्बरी | पृ ३०, ६४, २०१, ६४२ |
| दण्डी | ३ | द च | पृ ४६ २४५, ४१० |

## कुक्कुट
## THE COCK

'ताम्रचूडो युद्धकोलाहलो महानासीत् ।'
—द० च० पृ ३६४

भारतीय साहित्य मे मुर्गे का स्थान गौण रहा है वदिक साहित्य म मुर्गे को कृकवाकु, कुक्कुट व कुटरु नामो से कहा है [1] अमरकोष मे मुर्गे को कृकवाकु ताम्रचूड, कुक्कुट व चरणायुध नामो से कहा है [2] वैज्ञानिको के मत क अनुसार मुर्गा मयूर वग के मयूर-उपवग के मयूर परिवार का सदस्य है [3]

मुर्गा भारत स्पेन लटिन अमेरिका इत्यादि अनेक देशो म पाया जाता है मुर्गा देखने मे बडा ही सुन्दर पक्षी होता है नर दो से ढाई फीट लम्बा एव चमक दार पोशाक वाला होता है मादा डेढ फीट के करीब होती है नर का सिर व गदन सुनहरी या पीली, कमर गहरी भूरी व डने कत्थई काले व नीले रगो से युक्त होते हैं मुर्गे के सिर पर लाल रग की चोटी होती है जो इसकी सुन्दरता को बढाने मे प्रमुख स्थान रखती है मुर्गा बहुपत्नीक पक्षी है अत अत यह राजा महाराजाओ की तरह बड ठाठ से रहता है एव इसकी चाल मे राजसी अकड होती है

भारत के घर घर मे मुर्गी पालन होने लगा है इसक अण्डे बहुतायत म खाये जाते हैं मुर्गी का मास बडा स्वादिष्ट बनाया जाता है

मुर्गे के विषय म कई कथायें प्रचलित हैं एक दन्तकथा म कहा गया है कि एक व्यापारी के पास एक मुर्गी थी जो नित्य सुबह एक अण्डा देती थी व्यापारी उस बेचकर काफी पसा प्राप्त करता था एक बार उसके मन म लालच आया

---

1 अ वे 5/31/2 मै स 3/14/15 वा स 24/35 वा स, 1/16 तै स 5/5/17/1

2 कृकवाकुस्ताम्रचूड कुक्कुटश्चरणायुध —इत्यमर (सिंहादिवग)

3 'जीवजगत' पृ 388

और उसने सोचा कि रोज रोज मुर्गी एक एक अण्डा देती है, क्यो नही एक ही दिन इसका पेट चीरकर सब अण्ड निकाल लू और एक साथ बहुत सा सपा प्राप्त कर लू उसन छुरी लेकर मुर्गी । पेट चीर डाला मुर्गी मर गयी और व्यापारी अपनी मूर्खता पर बड़ा दु खी हुआ इसी प्रकार मुर्गी द्वारा सोने का अण्डा दने की कथायें भी प्रचलित हैं एक बुद्धिमत्तापूण प्रश्न भी यदा कदा पूछा जाता है प्रश्न है कि एक टेढे छप्पर पर एक मुर्गा बठकर अण्डा देता है वह दाहिनी ओर गिरेगा या बायें ओर उत्तरदाता यदि समझदार है तो सोच समझकर उत्तर देगा है–'मुर्गा अण्डा दे ही नही सकता अण्डा तो मुर्गी देती है पर तु यदि जल्दबाजी म उत्तरदाता उत्तर दगा तो अवश्य दाय या बाये कह डालेगा

'अकबर बीरबल विनोद' म भी एक रोचक कथा आती है एक बार बादशाह ने सब मन्त्रियो को एकत्रित कर कहा कि सामने जो पानी का छोटा सा कुण्ड है उसमे एक मुर्गे का अण्डा पडा है उसे जो मन्त्री निकालकर लायेगा उसे भारी इनाम दिया जायेगा एक-एक करके सभी मत्रियो ने डुबकी लगा कर अण्डे को निकालने का प्रयास किया परन्तु सभी असफल रहे अन्त मे बीरबल का नम्बर आया उसने पानी के पास जाकर डुबकी न लगाकर तज आवाज म कहा कुकडू कू बादशाह ने पूछा बीरबल क्या बात है ? बीरबल ने उत्तर दिया—'जहापनाह ! सब मुर्गिया पानी मे स निकल गयी हैं अब मुर्गा निकला है उसके पास अण्डा कहा ? बादशाह बीरबल की बुद्धिमत्ता पर दग रह गये

पालतू मुर्गे झुण्डो मे रहते है एव बडे झगडालू प्रवृति के होते हैं मुर्गों की लडाई मानव मनोरञ्जन का साधन सा बन गया है वन मुर्गे बडे शांतिप्रिय एव एकान्त सेवी होते है [4]

मुर्गे सामान्यत प्रात काल मे बोलत हैं जो सुबह होने की सूचना के रूप मे माना जाता है लोगो की ऐसी धारणा है कि मुर्गे प्रात काल म ही बोलते हैं महाकवि तुलसीदास ने भी 'उठे लखनु निसि बिगत सुनि अरुण शिखा धुनि कान कह कर इस बात की पुष्टि भी की है वास्तव मे यह धारणा धारणा ही है, सत्य नही मुर्गे के बोलने का कोई निश्चित समय नही होता रात के बारह बजे भी मुर्गो की ध्वनि सुनी गयी है प्रात काल में तो हर पशु पक्षी ही बोलता है अत मुर्गे के प्रात काल बोलने व बाद में चुप रहने की बात सत्य नही है

मुर्गे से प्राप्त हाने वाली वस्तुओ मे उसका मास सबसे प्रमुख है मुर्गी के

---

4 हिन्दी विश्व कोश भाग 3 पृ 600

अण्डे भी बहुत मात्रा म खाये जाते हैं मुर्गी के अण्डा का व्यापार एक विश्व-व्यापी व्यापार है

राजस्थानी लोकगीतो म मुर्गों को अमृत के समान मीठा बोलने वाला कहा है बोल्यो बोल्यो कूकडो र बोल्यो अमृत वण'—लोकगीत अत्यन्त प्रचलित है

## सस्कृत काव्यो मे कुक्कुट

सस्कृत काव्या म मुर्गे के लिये कुक्कुट, ताम्रचूड एव कृकवाकु शब्दा का प्रयोग हुआ है [5]

मानव व कृकवाकु—मानव व मुर्गे का सदा सदा का साथ रहा है क्योकि मानव ने इसे पालतू बनाकर अपने सम्पक म रखा है भीला के घरा मे मुर्गों के एकत्रित होने का उल्लेख मिलता है [6] मानव ने पशु पक्षियों को एक मनोरञ्जन के साधन के रूप म भी पाया है कादम्बरी मे राजकुल मे युद्ध करने वाले मुर्गों का उल्लेख है दशकुमार चरित म मुर्गों के युद्ध का सुन्दर वणन प्रस्तुत करते हुये महाकवि दण्डी ने लिखा है कि वणिको की एक विशाल बस्ती मे एक लोग एकत्रित होकर मुर्गों का युद्ध करा रह थे एव इस कारण वहा अत्यन्त कलरव हो रहा था [7] एक व्यक्ति का मत था कि पूवदेशीय नारिकेल जाति के कुक्कुट के साथ पश्चिमी देशीय बलाका जाति के कुक्कुट का युद्ध कराना मुखता की प्रधानता है क्योकि पश्चिमी देशीय कुक्कुट बडे आकार का एव बलवान् होता है [8] इसी प्रसग म मुर्गों क घाव म आकर अपनी तेज चोच व पजो से लडने एव पश्चिमी देशीय मुर्गे के पराजित होने के वणन किये गये है [9] इन सभी वणनो से हम इस निष्कष पर पहुँच सकते हैं कि मुर्गे व मानव का सामीप्य सम्बन्ध रहा है

ग्राम-कलाप—हषचरित व कादम्बरी म कुक्कुटो की ध्वनि को सुनकर बस्ती का अनुमान लगाये जाने का वणन है [10] इससे पता चलता है कि मुर्गे गावो म निवास करते हैं शोक म व्याकुल होकर मुर्गे के गला भाडन एव सिप्रा नदी के किनारे घोसलो म कुक्कुटो के घू घू शब्द करने के वणन मिलते हैं [11] लोभी

---

5 वासवदत्ता पृ 157 कादम्बरी पृ 271 द च पृ 365 ह च पृ 299
7 'समासादित कुक्कुटेषु किरात-गृह निष्कुटेषु' —वासवदत्ता पृ 157
7 ताम्रचूडयुद्धकोलाहलोमहानासीत्' —द च पृ 364
8 प्रबल च कथमिव नारिकेल जाते —द च पृ 365
9 यथोपरि पृ 366
10 कुक्कुटटितानुमीयमानसनिवेश ० —ह च पृ 411
11 तत मुचेद —ह च पृ 299

मुर्गों द्वारा रक्त वर्ण गजमुक्ताओं को अन्न समूह समझकर खाने एवं जलमुर्गों के बली खाने के उल्लेख बाणभट्ट ने किये हैं[12] अशोक वृक्ष की छोटी छोटी शाखाओं में कुत्ते के भय से छुपने वाले मुर्गों का उल्लेख मिलता है[13] मुर्गों के घोसलों में रहने का वर्णन वासवदत्ता में मिलते हैं[14] इन वर्णनों के आधार पर हमारे सम्मुख निम्नलिखित बातें आती है —

(१) मुर्गे बस्तियों में काफी मात्रा में रहते हैं

(२) मुर्गों की आवाज तेज होती है

(३) कुत्ता मुर्गों का निकटतम शत्रु होता है

(४) मुर्गे घोसला बनाकर भी रहते हैं

उपमित कुक्कुट—नैषधीयचरित में शाम का वर्णन करते हुये 'प्रिये! मुर्गों की शिखाओं से क्या पश्चिम दिशा अकस्मात् लाल हो गयी है—वाक्य कहकर शाम की लाली का मुर्गे की चोटी की लालिमा से साम्य बतलाया गया है[15] हर्षचरित में वत्स के विमलवंश की प्रशंसा में उन्हें कुक्कुट व्रत करने वाला बतलाया है एवं कुक्कुट भक्षण के निषेध का वर्णन किया गया है[16]

सम्पूर्ण काव्यों में कुक्कुट का कुल अठारह बार वर्णन आया है कालिदास के काव्यों मे कुक्कुट का कही भी उल्लेख नही है कालिदासोत्तर काव्यकारों मे बाण भट्ट, दण्डी, सुबन्धु व श्री हर्ष ने क्रमश आठ, पाच, चार व एक बार मुर्गे का वर्णन किया है मुर्गे के वर्णन का विश्लेषण सलग्न तालिकाओं में अवलोकनीय है



12 विदलित-वन-करि —कादम्बरी पृ 639

'अरण्यकुक्कुटोपभुज्यमान वैश्वदेव-बलि पिण्डम —यथोपरि पृ 120

13 शाखान्तराल-निरन्तर-विलीन-रक्त-कुक्कुट-कुल' —यथोपरि पृ 638

14 कतिपय दिवसप्रसूतकुक्कुटीकुटीकृत —वासवदत्ता पृ 232

15 ' किकुक्कुट पेटकस्य । —नैषध 22/35

16 'धृतकुक्कुटव्रता अप्यवडालवृतय' —हर्षचरित पृ 69

## तालिका (१)

'कुक्कुट' के वर्णन का कालिदास के काव्यों में विश्लेषण (×)

## तालिका (२)

'कुक्कुट' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (18)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| श्रीहर्ष | १ | नैषध० | २२।५ |
| सुबन्धु | ४ | वासवदत्ता० | पृ० ७६, १५७, २३१ व ३२ |
| बाणभट्ट | ३ | ह० च० | पृ० ६६, २६६ व ४११ |
| ,, | ५ | कादम्बरी | पृ० १२०, २७१, ६३४, ३८, ३६ |
| दण्डी | ५ | द० च० | पृ० १६०, ३६४, ६५, ६६, ६६, ६६ |

******

# कङ्क
# THE KANKA

'वामेतरस्तस्य कर प्रहर्तु नखप्रभाभूषितकंकपत्रे ।'
—रघु० २/३१

भारतीय वाङ्मय में कंक के वर्णन बहुत ही न्यून हैं वैदिक साहित्य एवं वीरकाव्य साहित्य में कंक के उल्लेख विद्यमान हैं[1] विभिन्न संस्कृत कोषों में कंक का नामोल्लेख किया गया है जहां इसे लोहपृष्ठ, वाणपत्राह्व पक्षव, दीर्घपाद, सदेश वदन, खर, रणालङ्करण, क्रूर, आमिषप्रिय मल्लक, कर्कटस्कन्ध, पकट, कमलच्छद व प्रियापत्य नामों से कहा गया है[2] वैज्ञानिकों की दृष्टि में कंक बक परिवार का प्राणी है

कंक भारत के सभी भागों में पाया है यह बगुले के आकार का प्राणी है जिसकी चोंच बड़ी पैनी होती है[3] इसके पक्षों का रंग लाल होता है इसके शरीर पर बगनी रंग के निशान होते हैं सीना व गर्दन लाल व भूरे रंग की धारियों से होता है यह देखने में बड़ा मनोहर होता है यह नदियों झीलों, धान के खेतों, नहरों के किनारों व दलदल वाले भागों में विचरण करता देखा गया है कंक तालाबों

---

1 त० स 5/4/11/1 वा० स 24/31 मै० स० 3/1/12 सा० स० 2/9/6/1
'कंक पत्र परिच्छन्ना महेन्द्राशनि सन्निभा —वा० रा० कि० 8/23
यथोपरि 60/26 यथोपरि० उ० 58/31 महाभारत० 11/6/5

2 लोहपृष्ठस्तु कंकः स्यात्'—इत्यमर
कंकस्तु कर्कटस्कन्ध पकट कमलच्छद
दीर्घपाद प्रियापत्या लोहपृष्ठस्य मल्लक ॥—वै० कोष
'डल्हणाचार्य' (सुश्रुत टीका) सूत्रस्थान अ० 46
राजनिघण्टु (19/17) व भा० के पक्षी० पृ० 153 से 155

3 प्रा० हैंड० पृ० 515

व झीलो म होने वाले मेढक, मछली, कीडे, मकोडे एव जल म उत्पन्न होने वाले सभी जीवो को खाता है इसकी मादा वर्षा काल मे अण्डे देती है मादा देखने मे विशेष सुन्दर नही होती

सस्कृत-काव्यो में कक—सस्कृत का या मे कक का उल्लेख विरलतम है महाकवि कालिदास ने रघुवश के द्वितीय सग मे कक का उल्लेख करते हुये कहा है कि राजा दिलीप ने जब सिंह पर बाण चलाना चाहा तो उसकी अगुलिया कक प०ी के परो वाले बाण के निम्न भाग म चिपक गयी[4] यहा कालिदास ने कक के पखो स निर्मित बाण मात्र का उल्लेख किया है उसके स्वरूप के बारे म कुछ नही कहा कालिदास के अतिरिक्त सुबन्धु ने वासवदत्ता मे कक का दो बार नाम लिया है श्मशान म मानव क मास को खाने वाले ककी के भ्रमण का उल्लेख किया है एव अन्यत्र पकमय तालाबो मे ककी की अनुपस्थिति बतलायी है एव सारस व कक का एक साथ नाम लिया है इन दो वणना से हमारे सम्मुख तीन बातें आती हैं —

(१) कक एक मास भक्षी पक्षी है
(२) कक सारस की जाती मे साम्य रखता है
(३) कक का निवास जल पूण तालाब होते हैं

प्रस्तुत काव्यो म कक के वणन का विश्लेषण तालिका द्वय म दशनीय हैं

---

4 'वामेतरतस्य कर प्रहतु नखप्रभाभूषित कङ्क-पत्रे'॰ रघु॰ 2/31

तालिका—१

'कक' के वर्णन का कालिदास क काव्यों में विश्लेषण (1)

| सख्या | काव्य | | वणन का क्रम |
|---|---|---|---|
| १ | रघु॰ | २।३१ | |

तालिका—२

'कक' के वणन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (2)

| कवि | सख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| सुबन्धु | २ | वासवदत्ता | १ २।१३ |

## कारण्डव
## THE COOT

'तप्त वारि विहाय तीरनलिनी कारण्डव सेवते।'
—विक्रमोर्वशीयम २/२२

भारतीय साहित्य मे कारण्डव का स्थान सर्वथा गौण रहा है वीर-काव्यो मे कारण्डव के उल्लेख मिलते हैं[1] अमरकोष म पक्षियो के विभिन्न नामो को बतलाते हुये कारण्डव का भी नाम लिया गया है[2] कारण्डव पक्षी का नाम अनेक कोशो म प्राप्त होता है किन्तु उसके स्वरूप के बारे मे कही कुछ भी नही कहा गया है अत कारण्डव का श्रेणी विभाजन करना कठिन है सर्वप्रथम कतिपय वर्णनो के आधार पर कारण्डव के स्वरूप निर्धारण का प्रयास करते हैं हलायुध कोष मे कारण्डव का नाम कारण्डव के साथ आया है मोनियर विलियम्स ने अपने कोश म कारण्डव को एक प्रकार की बतख कहा है कारण्डव के बारे में निम्नाकित तथ्य विचारणीय हैं —

(१) हस उपवग के अधिकाश पक्षी पानी म ही रहते हैं परन्तु कारण्डव सामान्यत पानी के किनारे पाये जाते हैं

(२) हस उपवग के पक्षियो के पैर लम्बे नही होते एव शरीर के अनुपात में छोटे होते हैं परन्तु कारण्डव के पर शारीरिक अनुपात म बडे होते हैं[3]

(३) हस-उपवग के पक्षियो मे काले रग का अभाव रहता है जबकि कारण्डव मे काले रग का बाहुल्य होता है

अत कारण्डव हस-परिवार का पक्षी नही हो सकता हा इतना अवश्य है कि इसे देखकर बतख का भ्रम अवश्य हो सकता है

जीव शास्त्र के ग्रथो का सम्यक् अध्ययन करने पर एक अन्य पक्षी जिसे

---

1 'रथाङ्गहसानत्यहा कारण्डवा परे' —वा० रा० 2/103/43

2 'तेषा विशेषा हारीतो मद्गु कारण्डव प्लव —इत्यमर (सिंहादिवग)

3 का० के० पक्षी० पृ० 169

टिकारी (Coot) कहते हैं हमारे साहित्यकारों द्वारा वर्णित कारण्डव की विशेषताओं से अत्यन्त साम्य रखता है यह पक्षी बनमा से साम्य तो रखता ही है साथ ही इसके डैने पार्श्वें व सिलेटी रंग से युक्त होते देखा गया है[4] रामायण की तिलकाख्या टीका में कारण्डव को 'जलकुक्कुट' कहा है इसी प्रकार वैद्यक निघण्टु में 'जलकुक्कुट कारण्डवे' कह कर कारण्डव का जल-कुक्कुट-परिवार से सम्बन्ध बताया है[5] हमारा टिकारी पक्षी भी वर्गानिका की दृष्टि में जल कुक्कुट परिवार का पक्षी है[6] अतः कारण्डव व टिकारी एक ही प्रतीत होते हैं इसका हंस उपवर्ग के पक्षियों से सम्बन्ध जोड़ना सार्थक एवं तार्किक बात नहीं होता

## संस्कृत काव्यों में कारण्डव

संस्कृत काव्यों में कारण्डव शब्द अनेक स्थानों पर आया है रामायण में कारण्डव शब्द मिलता है

काव्य कलाप—महाकवि कालिदास ने दो स्थानों पर कारण्डव के कार्यों का वर्णन किया है शरद् ऋतु के प्रसंग में कारण्डवों की चोंचों के प्रहारों से नदियों की तरंगों में विक्षोभ उत्पन्न होने का वर्णन मिलता है[6] विक्रमोर्वशीय में ग्रीष्म ऋतु की दोपहर में प्राणियों पर पड़ने वाले प्रभाव को बतलाते हुये कारण्डव के द्वारा धूप से तप्त जल का त्याग कर तट पर उगी हुयी कमलिनी का सेवन करने की बात कही गयी है[7] दशकुमार चरित में कारण्डव के द्वारा सारस, चक्रवाक व कलहंस के साथ कलरव करने का उल्लेख मिलता है[8] कारण्डव द्वारा कमलों को हिलाने का उल्लेख दण्डी ने किया है[9]

इस प्रकार संस्कृत काव्यों में कारण्डव का केवल चार बार वर्णन हुआ है महाकवि कालिदास ने कारण्डव का दो बार वर्णन किया है एवं दण्डी व अश्वघोष ने एक एक बार कारण्डव के वर्णन का विश्लेषण प्रस्तुत तालिकाओं में दर्शनीय है



4 जीव जगत पृ 408 व श्री सौ० पृ० 1̊9
5 यथोपरि पृ० 160
6 'कारण्डवाननविघट्टितवीचिमाला —ऋतु० 3/8
7 'तप्तं वारि विहाय तीरं नलिनीं कारण्डवः सेवते० विक्रम० 2/22
8 केलिलोलकलहंस० द० च० पृ० 100
9 'पद्मानि कारण्डव घट्टितानि० —सौ० न० 10/38

३६१०

## तालिका—१

'कारण्डव' के वर्णन का कालिदास के काव्यो में विश्लेषण (2)

| संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|
| १ | ऋतु० | ३।८ |
| १ | विक्रम० | २।२२ |

## तालिका—२

'कारण्डव' के वर्णन का कालिदासोत्तर काव्यों में विश्लेषण (2)

| कवि | संख्या | काव्य | वर्णन का क्रम |
|---|---|---|---|
| अश्वघोष | १ | सौ० न० | १०।३८ |
| दण्डी | १ | द० च० | पृ० १०० |

# खञ्जन
# THE WAG TAIL

संस्कृत साहित्य में खंजन का वर्णन अत्यन्त विरल है अमरकोश में खंजन व खञ्जरीट शब्द मिलते हैं[1] वर्गानिरा के मत में खंजन मांसाहारी वर्ग के खंजन परिवार का सदस्य है[2]

खंजन चितकबरे रंग का एक बड़ा ही सुहावना एवं चपल पक्षी है खंजन को खंजरीट व रिडलिच भी कहते हैं खंजन भारत में मौसमी चिड़िया है जो अगस्त व सितम्बर में हमारे आंगनों में देखी गयी है खञ्जन समय समय पर रंग बदलने वाला पक्षी है अत इसके रंग का ठीक-ठीक वर्णन करना सम्भव नहीं इस रंग के आधार पर चार प्रकार का बतलाया गया है —

(१) चितकबरा खंजन

(२) सफेद खंजन

(३) भूरा खंजन

(४) पीला खंजन

खंजन घने वनों मे रहने वाला पक्षी नहीं है यह तो जलाशयों के किनारे, घर व आंगन में गोशालाओं मे या फिर खेत-खलियानों में इधर उधर फुदकता देखा गया है

इसकी मादा मई से जुलाई के मध्य जमीन पर लकड़ियों के बीच या फिर घास फूस में चार पांच अण्डे देती है इसके अण्डे खाकी रंग के होते हैं जिन पर बादामी रंग की बुंदकियां होती है हिन्दी साहित्य में खञ्जन के विषयक उल्लेख मिलते हैं[3]

### संस्कृत काव्यों में खञ्जन

संस्कृत काव्यों में खंजन को खंजन व खञ्जरीट शब्दों का प्रयोग हुआ है[4]

---

1 खञ्जरीटस्तु खञ्जन —इत्यमर (सिंहादिवर्ग)

2 जीव जगत० पृ० 504

3 'खंजन नैन रूप रस माते",—सूरदास०

'निरख सखी, ये खञ्जन आये'—मैथिलीशरण गुप्त०

मानव व खजन—खजन पक्षी के दशन के शुभा शुभ फल पर विचार करने का उल्लेख वासवदत्ता में मिलता है [5]

काय कलाप—खजन पक्षियो के इधर-उधर विहार करने का वणन किया है [6] वासवदत्ता मे मकरन्द कामपीडित कन्दपकेतु को समझाते हैं इसी सन्दभ में राजकुमार की प्रशसा में कहा गया है कि उन जस लोग ही मित्रा का उसी प्रकार सर्ग के प्रारम्भ में खञ्जन पक्षी लोगो को खुश करते हैं [7]

उपमित खजन—दमयन्ती के नयनो की समता खजन के नेत्रा से करते हुये खजन के समान सुदर नेत्रा वाली कहा है [8]

सम्पूण संस्कृत काव्यो में खजन का कुल ६ बार वणन आया है खजन का सुबन्धु एव श्री हष न ३ ३ बार वणन किया है कालिदास के काव्यो म व नाटको में खजन का वणन नही मिलता खञ्जन के वणन का विश्लेषण प्रस्तुत तालिकाम्रो में दशनीय है

---

4 वासवदत्ता० पृ० 128 नषध० 11/13 वासवदत्ता० पृ० 249

5 'केचित्खजना इव सबरतरफलदर्शिन'—वासवदत्ता० पृ० 128

6 अनन्तरमखजनखजरीटे।'—यथोपरि० पृ० 249

7 सुख जना०' वासवदत्ता० पृ० 61

8 'खजन मञ्जु नेत्रे' —नैषध 11/113

'दृशावित खेलतु खजनद्वयी'—यथोपरि० 9/112

---

## तालिका—१

'खजन' के वणन का कालिदास के काव्यो में विश्लेषण (X)

## तालिका—२

'खजन' के वणन का कालिदासोतर काव्यो में विश्लेषण (6)

| कवि | सख्या | काय | वणन का क्रम |
|---|---|---|---|
| श्री हष | ३ | नषघ | ६।११२ १०।११६ ११।११३ |
| सुबन्धु | ३ | वासवदत्ता | पृ० ६१ १२८ व २४७ |

# उपसहार

# उपसंहार

हमने पिछले अध्यायों मे काव्य, काव्यकार, काव्यों में प्रकृति चित्रण एव पशु-पक्षियों का विवेचनात्मक वर्गीकि एव साहित्यिक अध्ययन किया हमारा यह अध्ययन निम्नलिखित बातो से सम्बंधित होगा —

(१) किसी पशु या पक्षी का किस काव्य म कितने बार वर्णन हुआ

(२) कितने काव्यो मे किसी पशु या पक्षी का वर्णन है

(३) किस पशु या पक्षी का सबसे अधिक वर्णन किस कवि ने किया है और क्या किया है ?

(४) आधुनिक युग म पशु-पक्षियो का मानव जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा एव उनका आपसी सम्बन्ध क्या है ?

(५) पशु-पक्षि किस प्रकार राष्ट्र की अमूल्य धरोहर हैं ?

(६) पशु पक्षियो के वर्णन में काव्यकार कहा तक सफल हो पाए हैं एव कहा तक उनके विचार सत्यासत्य हैं

कालिदास एव कालिदासोत्तर काव्यो म कुल २२ पशुओ का वर्णन आया है उनके कुल उल्लेख १७०५ बार हुये हैं इसी प्रकार इन काव्यो मे २५ पक्षियों के उल्लेख कुल मिलाकर ९८२ बार आये हैं इस प्रकार सम्पूर्ण काव्यो में पशु-पक्षियों का सम्मिलितोल्लेख २६८७ बार हो पाया है प्रस्तुत काव्यों मे जिन पशुओं के वर्णन हैं व हैं—गज, गण्डक, अश्व खर उष्ट्र, धेनु, वृषभ, महिष, अज, मेष, मृग सिंह व्याघ्र, मार्जार, ऋक्ष, तरक्षु, शृगाल, वृक श्वान, शश, सूकर, एव शाखामृग जिन पक्षियो का वर्णन हैं उनके नाम इस प्रकार हैं—मयूर, चकोर, हस, चक्रवाक, बलाका बक, क्रौञ्च, सारस, कोकिल, चातक, गरुड, गृध्र, श्येन कपोत, हारीत, कुररी शुक, उलूक, कलविङ्क सारिका, काक, कुक्कुट, कक, कारण्डव व खजन कालिदास के काव्यो में सत्रह पशुओं का वर्णन आया है एव कालिदासोत्तर काव्यो म २२ का कालिदास के काव्यो म पशुओ का ४७६ बार

वणन प्राया है एव कालिदासोत्तर काव्यों म १२२६ वार कालिदास के काव्यों म २१ पक्षियों का वणन है जबकि कालिदासोत्तर काव्यों म २५ का कालिदास के काव्यों मे पक्षियों का २०८ वार वणन प्राया है तथा कालिदासोत्तर काव्यों म ७७२ वार

सामान्य रूप स वणन का विश्लेषण करने के पश्चात प्रब हम काव्यकारो व काव्यो के प्राधार पर पशु पक्षियो के वणन का विश्लेषण करते हैं—

## कालिदास के काव्यो में पशु-पक्षियों के वणन का विश्लेषण (1705)

महाकवि कालिदास ने गज, प्रश्व खर उष्ट्र धेनु वृषभ महिष मेष मृग सिंह, व्याघ्र, मार्जार ऋक्ष, शृगाल श्वान शूकर व शाखामृग इन १७ पशुओं का प्रपने काव्यो मे वणन किया है उनके काव्यो म गण्डक प्रज तरक्षु वृक एव शश— इन ५ पशुओं के वणन नहीं मिलते कालिदास ने रघुवंश म १३ (गज प्रश्व, खर, उष्ट्र, धेनु वृषभ महिष मृग सिंह, व्याघ्र शृगाल शूकर व शाखा मृग), कुमारसम्भव म १३ (गज प्रश्व खर धेनु, वृषभ महिष, मेष मृग, सिंह व्याघ्र, शृगाल, श्वान व सूकर), मेघदूत मे ४ (गज प्रश्व वृषभ व मृग), ऋतुसंहार मे ६ (गज, धेनु, वृषभ महिष, मृग व्याघ्र, ऋक्ष शूकर व शाखामृग) शाकुन्तल में ७ (गज प्रश्व, महिष मृग सिंह मार्जार व शाखामृग) एव विक्रमोवशीय में ४ (गज, प्रश्व, मृग व सिंह) पशुप्रो के वणन किये हैं

कालिदास के रघुवंश मे ६ (गण्डक प्रज मेष मार्जार ऋक्ष, तरक्षु वृक, श्वान व शश) कुमार सम्भव मे ६ (गण्डक उष्ट्र प्रज, मार्जार ऋक्ष तरक्षु वृक, शश व शाखामृग), मेघदूत मे १८ (गण्डक खर उष्ट्र, धेनु महिष, प्रज मेष सिंह व्याघ्र, मार्जार ऋक्ष तरक्षु, शृगाल, वृक, श्वान शश, सूकर व शाखामृग) ऋतुसंहार मे १३ (गण्डक, प्रश्व खर, उष्ट्र प्रज मेष, व्याघ्र मार्जार, तरक्षु शृगाल, वृक, श्वान एव शश), शाकुन्तल मे १५ (गण्डक, खर उष्ट्र धेनु, वृषभ प्रज मेष, व्याघ्र ऋक्ष तरक्षु शृगाल, वृक श्वान शश व शाखामृग), मालविकाग्निमित्र मे १६ (गण्डक खर उष्ट्र धेनु महिष प्रज मेष व्याघ्र, ऋक्ष तरक्षु शृगाल, वृक, श्वान शश व सूकर) व विक्रमोवशीय मे १८ (गण्डक खर, उष्ट्र धेनु वृषभ महिष प्रज, मेष व्याघ्र, मार्जार, ऋक्ष तरक्षु शृगाल वृक श्वान शश सूकर व शाखामृग) पशुप्रो के वणन नहीं मिलते

कालिदास के काव्यो के प्राधार पर पशुप्रो के इस वणन का विश्लेषण प्रस्तुत तालिकाप्रो में देखा जा सकता है

"कालिदास के काव्यों के आधार पर पशुओं का विश्लेषण" (479)

| क्र सं | काव्यों का नाम<br>पशुओं के नाम | रघु० | कुमार | मेघ | ऋतु | शाकु | मालविका | विक्रम | योग |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| १ | गज | ७६ | ५० | १२ | ६ | ४ | ४ | १३ | १६५ |
| २ | गडक | — | — | — | — | — | — | — | — |
| ३ | अश्व | ५० | १६ | १ | — | ४ | ३ | १ | ७८ |
| ४ | खर | ४ | १ | — | — | — | — | — | ५ |
| ५ | उष्ट्र | १ | — | — | — | — | — | — | १ |
| ६ | धेनु | ४३ | १ | — | १ | — | — | — | ४५ |
| ७ | वृषभ | ५ | ८ | १ | १ | — | १ | — | १६ |
| ८ | महिष | १ | १ | — | १ | १ | — | — | ४ |
| ९ | गज | — | — | — | — | — | — | — | — |
| १० | मेष | — | १ | — | — | — | — | — | १ |
| ११ | मृग | ३१ | १४ | ५ | ६ | १८ | २ | ५ | ८१ |
| १२ | सिंह | ४४ | ७ | — | २ | ५ | १ | २ | ६१ |
| १३ | व्याघ्र | २ | १ | — | — | — | — | — | ३ |
| १४ | मार्जार | — | — | — | — | १ | २ | — | ३ |
| १५ | ऋक्ष | — | — | — | १ | — | — | — | १ |
| १६ | तरक्षु | — | — | — | — | — | — | — | — |
| १७ | शृगाल | [illegible] | २ | — | — | — | — | — | ५ |
| १८ | वृक | — | — | — | — | — | — | — | — |
| १९ | श्वान | — | २ | — | — | — | — | — | २ |
| २० | शश | — | — | — |  | — | — | — | — |
| २१ | सूकर | २ | १ | — | १ | १ | — | — | ५ |
| २२ | शाखामृग | १ | — | — | १ | — | १ | — | ३ |
|  |  |  |  |  |  |  |  |  | कुल योग ४७९ |

महाकवि कालिदास ने काव्या म मयूर चकोर, हस, चक्रवाक, बलाका, क्रौञ्च, कोकिल चातक गरुड, गृध्र श्येन, कपात, हारीत, कुररी, शुक, उलूक, सारिका काक, कङ्क व कारण्डव इन २१ पक्षियो के वणन मिलत हैं उनक काव्यो मे बक कलविक, कुक्कुट व खजन इन चार पक्षियो क वणन नही मिलत

कालिदास के रघुवश म १६ (मयूर, चकोर, हस, चक्रवाक, बलाका, सारस, कोकिल, चातक, गरुड, गृध्र, श्येन, हारीत, कुररी, शुक, काक व कारण्डव) कुमारसम्भव म १० (मयूर हस, चक्रवाक, बलाका, कोकिल, चातक, गृध्र, श्येन कपोत व उलूक) ऋतुसहार मे ८ (मयूर हस, बलाका क्रौञ्च, सारस कोकिल, चातक व कारण्डव), शाकुतल म ७ (मयूर, हस चक्रवाक, कोकिल, चातक, गृध्र व शुक) मालविकाग्निमित्र मे ७ (हस, चक्रवाक, सारस कोकिल, चातक, गृध्र व कपोत) एव विक्रमोवशीय मे ११ (मयूर हस, चक्रवाक कोकिल, चातक, गरुड, गृध्र, कपोत, कुररी, शुक, कारण्डव) पक्षियो का वणन उपलब्ध होता है

कालिदास के रघुवश मे ६ (बक क्रौञ्च, कपात, उलूक, कलविक सारिका, कुक्कुट, कारण्डव व खजन) कुमार सभव म १५ (चकोर बक क्रौञ्च, सारस, गरुड, हारीत, कुररी, शुक, कलविक, कक कारण्डव व खजन,, मेघदूत मे १६ (चकोर, क्रौञ्च, कोकिल, गरुड, गृध्र, श्येन, हारीत कुररी शुक उलूक, कलविक, कुक्कुट, कक, कारण्डव व खजन) ऋतुसहार मे १७ (चकार, चक्रवाक, बक, गरुड, गृध्र, श्येन कपोत, हारीत कुररी, शुक, उलूक, कलविक, सारिका, काक, कुक्कुट कक व खजन), शाकुन्तल मे १८ (चकोर, बलाका, बक, क्रौञ्च, सारस, गरुड श्यन, कपोत, हारीत, कुररी, उलूक, कलविक, सारिका, काक, कुक्कुट, कक कारण्डव व खजन), मालविकाग्निमित्र म १८ (मयूर, चकोर बलाका, [बक, क्रौञ्च, गरुड श्येन, हारीत, कुररी, शुक, उलूक, कलविक, सारिका, काक, कुक्कुट, कक, कारण्डव व खजन) एव विक्रमोवशीय मे १४ (चकोर बलाका, बक क्रौञ्च, सारस, श्येन, हारीत, उलूक, कलविक, सारिका, काक, कुक्कुट, कक व खजन) पक्षिया के वर्णन नहीं मिलते कालिदास के का या के आधार पर पक्षियों के वर्णन का यह विश्लेषण प्रस्तुत तालिका म देखा जा सकता है

## कालिदास के काव्यों के आधार पर पक्षियों का विश्लेषण (208)

| क्र स | काव्यों का नाम<br>पक्षियों का नाम | रघु | कुमार | मेघ | ऋतु | शाकु | माल | विक्रम | योग |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| १ | मयूर | ११ | ३ | ५ | ६ | ३ | — | १० | ३८ |
| २ | चकोर | २ | — | — | — | — | — | — | २ |
| ३ | हंस | ६ | ६ | ५ | १२ | २ | १ | १० | ४२ |
| ४ | चक्रवाक | ५ | ६ | १ | — | २ | १ | २ | १७ |
| ५ | बलाका | १ | १ | ३ | १ | — | — | — | ६ |
| ६ | बक | — | — | — | — | — | — | — | — |
| ७ | क्रौञ्च | — | — | — | ३ | — | — | — | ३ |
| ८ | सारस | २ | — | १ | ३ | — | १ | — | ७ |
| ९ | कोकिल | ५ | ६ | — | १० | ४ | २ | ६ | ३३ |
| १० | चातक | २ | २ | ४ | १ | १ | १ | १ | १२ |
| ११ | गरुड | ५ | — | — | — | — | — | १ | ६ |
| १२ | गृध्र | ६ | १ | — | — | १ | १ | ३ | १२ |
| १३ | श्येन | २ | २ | — | — | — | — | — | ४ |
| १४ | कपोत | — | ७ | १ | — | — | १ | १ | १० |
| १५ | हारीत | १ | — | — | — | — | — | — | १ |
| १६ | कुररी | १ | — | — | — | — | — | १ | २ |
| १७ | शुक | २ | — | — | — | २ | — | २ | ६ |
| १८ | उलूक | — | १ | — | — | — | — | — | १ |
| १९ | कलविंक | — | — | — | — | — | — | — | — |
| २० | सारिका | — | — | — | — | — | — | — | १ |
| २१ | काक | १ | — | १ | — | — | — | — | २ |
| २२ | कुक्कुट | — | — | — | — | — | — | — | — |
| २३ | कंक | १ | — | — | — | — | — | — | १ |
| २४ | कारण्डव | — | — | — | १ | — | — | १ | २ |
| २५ | खञ्जन | — | — | — | — | — | — | — | — |

कुलयोग २०८

## कालिदासोत्तर काव्यों में पशु पक्षियों के वर्णन का विश्लेषण (982)

अश्वघोष—महाकवि अश्वघोष के काव्यों में गज, अश्व, खर, धेनु वृषभ महिष, मेष, मृग सिंह, व्याघ्र ऋक्ष, तरक्षु, श्वान एवं शाखामृग इन १४ पशुओं का वर्णन आया है उनके काव्यों में गण्डक, उष्ट्र अज, मार्जार शृगाल, वृक, शश व सूकर इन ८ पशुओं का वर्णन नहीं आया है अश्वघोषरचित बुद्धचरित में १४ (गज, अश्व, खर, धेनु वृषभ, महिष, मेष, मृग सिंह व्याघ्र, ऋक्ष, तरक्षु, श्वान व शाखामृग) एवं सौंदरनन्द में ८ (गज अश्व, धेनु वृषभ, मेष मृग सिंह व व्याघ्र) पशुओं का वर्णन मिलता है बुद्धचरित में ८ (गण्डक, उष्ट्र, अज, मार्जार शृगाल, वृक शश व सूकर) व सौंदरनन्द में १४ (गण्डक, खर, उष्ट्र महिष, अज, मार्जार, ऋक्ष, तरक्षु, शृगाल वृक, श्वान शश सूकर व शाखामृग) पशुओं का वर्णन नहीं मिलता

अश्वघोष के काव्यों में मयूर हंस, चक्रवाक कोकिल गरुड, गृध्र, श्येन, कपोत कुररी, सारिका काक व कारण्डव—इन १२ पक्षियों का वर्णन आया है एवं चकोर, बलाका बक क्रौञ्च सारस चातक हारीत, शुक, उलूक कलविंक कुक्कुट, कंक व खजन इन ११ पक्षियों का वर्णन नहीं मिलता

बुद्धचरित में १४ (गज, अश्व, खर, धेनु, वृषभ, महिष, मेष, मृग, सिंह व्याघ्र, ऋक्ष तरक्षु, श्वान व शाखामृग) एवं सौंदरनन्द में ८ (गज अश्व, धेनु, वृषभ, मेष, मृग, सिंह व व्याघ्र) पशुओं के वर्णन मिलते हैं जबकि बुद्धचरित में ८ (गण्डक उष्ट्र अज मार्जार, शृगाल, वृक, शश व सूकर) एवं सौन्दरनन्द में १४ (गण्डक खर उष्ट्र महिष, अज, मार्जार, ऋक्ष तरक्षु शृगाल वृक, श्वान, शश, सूकर व शाखामृग) पशुओं का वर्णन नहीं मिलता बुद्धचरित में ११ (मयूर हंस चक्रवाक, कोकिल, गरुड गृध्र, कपोत, कुररी, सारिका काक व कारण्डव) एवं सौंदरनन्द में ६ (मयूर, हंस, चक्रवाक, कोकिल, श्येन व कपोत) पक्षियों का वर्णन उपलब्ध है जबकि बुद्धचरित में १४ (चकोर, बलाका बक, क्रौञ्च, सारस, चातक, श्येन, हारीत, शुक, उलूक कलविंक, कुक्कुट, कंक व खजन) एवं सौंदरनन्द में १६ (चकोर, बलाका, बक क्रौञ्च सारस, चातक गरुड, गृध्र, हारीत, कुररी शुक उलूक, कलविंक, सारिका, काक कुक्कुट, कंक, कारण्डव व खञ्जन) पक्षियों के वर्णन नहीं मिलते

भारवि—जैसा हम पहले कह आये हैं भारवि की एक मात्र रचना है—किरातार्जुनीयम् इस काव्य में उन्होंने १३ पशुओं का वर्णन किया है जिनके नाम इस प्रकार हैं—गज, अश्व खर धेनु वृषभ, महिष मृग सिंह शृगाल, वृक,

शश, सूकर व शाखामृग एव ६ पशुओ का वणन नही किया गया है वे, है-गण्डक उष्ट्र, अज मेष, व्याघ्र, मार्जार, ऋक्ष, तरक्षु एव श्वान

किरातार्जुनीयम् म ८ पक्षियो क वणन मिलत हैं और वे हैं-मयूर, चकोर हस चक्रवाक, सारस गरुड कुररी व शुक जिन पक्षियो के न म किरातार्जुनीयम् म नहीं मिलते वे हैं-बलाका, बक, कोकिल चातक गरुड, गृध्र श्येन कपोत, हारीत, शुक कलविक सारिका, काक, कुक्कुट कक, कारण्डव व खजन

माघ—भारवि की भाति माघ की भी एक ही रचना प्राप्त होती है-शिशुपालवधम् महाकवि ने अपनी इस कृति म १३ पशुओ का वणन किया है जिनके नाम इस प्रकार हैं—गज अश्व, खर, उष्ट्र धेनु वृषभ महिष मेष मृग, सिंह, शृगाल, श्वान व शश माघ ने ६ पशुओ का वणन नही किया है व हैं—गण्डक, अश्व व्याघ्र मार्जार, ऋक्ष, तरक्षु, वृक, सूकर व शाखामृग

शिशुपालवध म १५ पक्षियो क वणन उपलब्ध हैं मयूर, चकोर हस चक्रवाक, बक, क्रौञ्च सारस कोकिल चातक गरुड गृध्र कपोत शुक उलूक व काक जिन पक्षियो के वणन माघकाव्य मे नही मिलते वे हैं—बलाका श्येन, हारीत, कुररी कलविक सारिका, कुक्कुट, कक कारण्ड व खजन

श्रीहर्ष—श्रीहर्ष की एक मात्र काव्य कृति है—नषधीय चरितम श्रीहर्ष ने इस मे १२ पशुओ का वणन किया है और वे हैं—गज, अश्व खर, उष्ट्र धेनु, महिष अज मष, मृग सिंह शश व शाखामृग श्रीहर्ष ने १० पशुओं का वणन नही किया है व हैं—गण्डक वृषभ व्याघ्र मार्जार ऋक्ष तरक्षु शृगाल वृक, श्वान व सूकर

श्रीहर्ष ने १५ पक्षियो का वणन किया है और वे हैं—मयूर, चकोर हस चक्रवाक, बक कोकिल, गरुड श्येन कपोत शुक, उलूक सारिका, काक कुक्कुट व खजन जिन १० पक्षियो का उल्लेख श्रीहर्ष ने नही किया वे हैं-बलाका, क्रौञ्च सारस चातक, गृध्र हारीत कुररी कलविक कक व कारण्डव

सुबन्धु—गद्य कवि सुबन्धु की एक मात्र कृति है— वासवदत्ता इस काव्य मे ११ पशुओ के वणन मिलते हैं-गज, गण्डक अश्व धेनु अज मृग, सिंह मार्जार ऋक्ष, शृगाल एव श्वान खर उष्ट्र वृषभ महिष मष व्याघ्र, तरक्षु वृक शश, सूकर, एव शाखामृग-इन ११ पशुओं का वणन सुबन्धु ने नहीं किया

पक्षियों में सुबन्धु ने २० पक्षियों का वणन किया है, वे हैं-मयूर, चकोर, हस, चक्रवाक, बलाका, क्रौञ्च सारस कोकिल चातक गरुड, गृध्र, कपोत

उलूक, कलविंक, सारिका, काक, कुक्कुट, ररु व खञ्जन वाल्मीकि ता म वक, यचक, हारीत, कुररी एव कारण्डव इन ५ पक्षियो का उल्लेख नही मिलता

बाण भट्ट—बाण भट्ट ऐसे कवि हैं जिन्होने गज से लेकर शाखामृग तक सम्पूर्ण पशुओ यानी २२ पशुओ का वर्णन किया है महाकवि ने अपने काव्यो म २२ पक्षियो का वर्णन किया है वे हैं—मयूर, चकोर, हस, चक्रवाक, बलाका, बक क्रौञ्च सारस कोकिल, चातक, गरुड, गृध्र श्येन, कपोत, हारीत, कुररी, शुक, उलूक कलविंक, सारिका, काक व कुक्कुट
शुकर, कारण्डव व खञ्जन इन तीन पक्षियो के वर्णन बाण ने नही किये

बाण ने हर्ष चरित म सूकर व शाखामृग के अतिरिक्त सभी २० पशुओ के वर्णन किये हैं कादम्बरी में १९ पशुओ (गज गण्डक, अश्व खर उष्ट्र धेनु, वृषभ महिष अज, मृग, सिह, व्याघ्र ऋक्ष, शृगाल, वृक, श्वान, शश सूकर व शाखामृग के वर्णन किये हैं मेष, मार्जार व तरक्षु इन पशुओ के वर्णन कादम्बरी मे नही मिलते

हर्ष चरित मे १९ पक्षियो (मयूर, चकोर हस चक्रवाक, सारस कोकिल चातक गरुड, गृध्र श्येन कपोत हारीत, कुररी शुक, उलूक कलविंक, सारिका काक व कुक्कुट) के वर्णन मिलते हैं जबकि ६ (बलाका बक, क्रौञ्च कक कारण्डव व खजन पक्षियो के वर्णन नही मिलते कादम्बरी मे कलविंक, कक कारण्डव व खञ्जन इन चार पक्षियो के अतिरिक्त सभी २१ पक्षियो के वर्णन मिलते हैं

दण्डी—दण्डी की एक मात्र काव्य कृति दशकुमार चरित है दण्डी के इस काव्य मे गज अश्व, महिष, मृग सिह व्याघ्र शृगाल वृक व श्वान इन ९ पशुओ के वर्णन मिलते है एव गण्डक खर उष्ट्र धेनु वृषभ, अज, मेष, मार्जार, ऋक्ष तरक्षु शश, सूकर व शाखामृग इन १३ पशुओ के वर्णन नही मिलते

पक्षियो म मयूर, चकोर, हस चक्रवाक, बक, सारस, कोकिल गरुड, गृध्र, श्येन कपोत कुररी शुक काक कुक्कुट व कारण्डव का वर्णन दण्डी ने किया है ये सब मिलाकर १६ हैं बलाका क्रौञ्च, चातक हारीत, उलूक कलविंक, सारिका, कक व खञ्जन इन ९ पक्षियो के वर्णन नही किये

कालिदासोत्तर काव्यो म पशु पक्षियों के वर्णन का यह विश्लेषण प्रस्तुत तालिकाओं मे देखा जा सकता हैं

## कालिदासोत्तर काव्यों के आधार पर पशुओ का विश्लेषण (१७०५)

| | कवि का नाम | अश्वघोष | | भारवि | माघ | श्रीहर्ष | सुबन्धु | बाणभट्ट | | दण्डी | योग |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| क्रम | पशु का नाम | बु च | सौ न | किरात | शिशु | नैषध | वासवदत्ता | ह च | का | द च | — |
| १ | गज | ५५ | १६ | ५५ | १०३ | १३ | ३१ | ४५ | ८९ | १० | ४१७ |
| २ | गन्धर्व | — | — | — | — | — | १ | — | ५ | — | ६ |
| ३ | अश्व | ४२ | ८ | ९ | २३ | २३ | १३ | १७ | ४५ | ८ | १७८ |
| ४ | खर | २ | — | १ | ३ | २ | — | २ | [illegible] | — | १३ |
| ५ | उष्ट्र | — | — | — | ६ | १ | — | ११ | १ | — | १९ |
| ६ | धेनु | १० | ५ | ४ | ३ | २ | २ | १० | १ | — | ३७ |
| ७ | वृषभ | ६ | २ | २ | ५ | — | — | २ | ३ | — | २० |
| ८ | महिष | १ | — | १ | ३ | २ | — | ६ | १२ | १ | २६ |
| ९ | अज | — | — | — | — | १ | १ | — | २ | — | ४ |
| १० | मेष | १ | १ | — | १ | १ | — | १ | — | — | ५ |
| ११ | मृग | ११ | ५ | १५ | २० | ६३ | १६ | ४२ | ८९ | ८ | २६९ |
| १२ | सिंह | २० | ४ | ६ | १८ | ५ | १० | ३३ | १२ | १८ | १२६ |
| १३ | व्याघ्र | १ | २ | — | — | — | — | ५ | ५ | ५ | १८ |
| १४ | मार्जार | — | — | — | — | — | १ | १ | — | — | २ |
| १५ | ऋक्ष | १ | — | — | — | — | १ | २ | २ | — | ६ |
| १६ | तरक्षु | १ | — | — | — | — | — | १ | — | — | २ |
| १७ | शृगाल | — | — | १ | १ | — | २ | ३ | २ | २ | ११ |
| १८ | वृक | — | — | २ | — | — | — | १ | १ | १ | ५ |
| १९ | श्वान | २ | — | — | १ | — | १ | ४ | ६ | १ | १५ |
| २० | शश | — | — | २ | १ | ५ | — | ६ | २ | — | १६ |
| २१ | शूकर | — | — | ३ | — | — | — | ३ | ४ | — | १० |
| २२ | शाखामृग | २ | — | ३ | — | १ | — | ७ | ८ | — | २१ |

कुल योग १२२६

कालिदास के काव्यों का योग ४७९

बृहद योग १७०५

## कालिदासोत्तर काव्यों के आधार पर पक्षियों के प्रयोग का विश्लेषण (९८०)

| क्रम | पक्षी का नाम / काव्य का नाम / कवि का नाम | अश्वघोष बु. | सौ. | भारवि किरात | माघ शिशु | श्रीहर्ष नैषध | सुबन्धु वासव | बाणभट्ट हर्ष | कादं | दण्डी दश | योग |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| १ | मयूर | २ | ३ | ८ | १३ | १ | ५ | १८ | ३६ | १ | ९८ |
| २ | चकोर | – | – | १ | १ | ८ | २ | ४ | ४ | १ | २१ |
| ३ | हंस | ३ | १ | ११ | १० | ८६ | ११ | ३९ | ५४ | ३० | २४५ |
| ४ | चक्रवाक | ५ | ४ | ३ | ३ | ११ | ५ | ११ | २० | ४ | ६६ |
| ५ | बलाका | – | – | – | – | – | १ | – | १ | – | २ |
| ६ | बक | – | – | – | १ | १ | — | — | १ | १ | ४ |
| ७ | क्रौंच | – | – | – | १ | – | १ | – | १ | – | ३ |
| ८ | सारस | – | – | ३ | १ | – | ३ | २ | ६ | २ | १७ |
| ९ | कोकिल | ४ | २ | – | ५ | २३ | ७ | ५ | १७ | [illegible] | ७२ |
| १० | चातक | – | – | – | १ | — | १ | ३ | ४ | – | [illegible] |
| ११ | गरुड | २ | – | ६ | ९ | ७ | १ | ५ | ८ | २ | ४० |
| १२ | गृध्र | १ | – | – | १ | – | १ | २ | १ | १ | ७ |
| १३ | खगन | – | २ | – | – | १ | – | १ | १ | १ | ६ |
| १४ | कपोत | १ | १ | – | ४ | ५ | १ | ५ | ९ | १ | २७ |
| १५ | हारीत | – | – | – | – | – | – | १ | ६ | – | ७ |
| १६ | कुररी | १ | — | १ | – | – | – | १ | ३ | १ | ७ |
| १७ | शुक | – | – | १ | १ | ६ | १ | ७ | २४ | १ | ४१ |
| १८ | उलूक | – | – | – | २ | ४ | २ | ३ | २ | – | १३ |
| १९ | कलविंक | – | – | – | – | – | १ | २ | – | – | ३ |
| २० | सारिका | १ | – | – | – | ३ | ३ | ३ | ५ | – | २५ |
| २१ | काक | ३ | – | – | १ | ४ | ७ | ६ | ४ | ३ | २८ |
| २२ | कुक्कुट | – | – | – | – | १ | ४ | ३ | ५ | ५ | १८ |
| २३ | चक | – | – | – | – | – | २ | – | – | – | २ |
| २४ | कारण्डव | १ | – | – | – | – | – | – | – | १ | २ |
| २५ | खञ्जन | – | – | – | – | ३ | ३ | – | – | – | ६ |
| | | | | | | | | | | कुल योग | ७७२ |
| | | | | | | | | | | कालिदास के काव्यों का योग | २०८ |
| | | | | | | | | | | बृहत् योग | ९८० |

इस प्रकार यदि हम कालिदास एवं कालिदासोत्तर काव्यों में वर्णित पशु-पक्षियों के संख्यात्मक विवरण पर ध्यान दें तो निम्नलिखित बातें हमारे सम्मुख आती हैं —

(क) सभी काव्यकारों ने अल्पाधिक पशु पक्षियों का वर्णन किया है

(ख) पशुओं का वर्णन करने वालों में बाणभट्ट, कालिदास, अश्वघोष, भारवि एवं माघ का प्रमुख स्थान रहा है इन्होंने २२ में से क्रमशः २२, १४ १४, १३ व ११ पशुओं का वर्णन किया है

(ग) पक्षियों का वर्णन करने वालों में बाणभट्ट, कालिदास एवं सुबन्धु का प्रमुख स्थान है इन्होंने २५ में से क्रमशः २२, २१, व २० पक्षियों का वर्णन किया है

(घ) बाणभट्ट ऐसे कवि हैं जिन्होंने सबसे अधिक पशुओं (२२) व पक्षियों (२२) का वर्णन किया है

(ङ) इस प्रकार पशु पक्षियों के वर्णन में संख्यात्मक दृष्टि से बाणभट्ट कालिदास एवं सुबन्धु का क्रमशः प्रथम, द्वितीय व तृतीय स्थान रहा है

(च) वर्णन के आधार पर पशुओं में गज, मृग व अश्व का क्रमशः प्रथम, द्वितीय व तृतीय स्थान है

(छ) वर्णन के आधार पर पक्षियों में हंस मोर व कोकिल का क्रमशः प्रथम द्वितीय व तृतीय स्थान रहा है

(ज) वर्णन के आधार पर पशु-पक्षियों में गज, मृग व हंस का क्रमशः प्रथम द्वितीय व तृतीय स्थान रहा है

सम्पूर्ण काव्यों एवं काव्यकारों के आधार पर वर्णित पशु पक्षी के वर्णन का विश्लेषण प्रस्तुत तालिकाओं में अवलोकनीय है



## काव्यकारो के आधार पर पशुओ के वर्णन का विश्लेषण (१७०५)

| क्र स | कवि का नाम / पशु का नाम | कालिदास | अश्वघोष | भारवि | माघ | श्रीहर्ष | सुबन्धु | बाण भट्ट | दण्डी | योग |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| १ | गज | १६५ | ७१ | ५५ | १०३ | १३ | ३१ | १३४ | १० | ५८२ |
| २ | गडक | — | — | — | — | — | १ | ५ | — | ६ |
| ३ | अश्व | ७८ | ५० | ९ | २३ | २३ | ३ | ६२ | ८ | २५६ |
| ४ | खर | ५ | २ | १ | ३ | २ | — | ५ | — | १८ |
| ५ | उष्ट्र | १ | — | — | ६ | १ | — | १२ | — | २० |
| ६ | धेनु | ४५ | १५ | ४ | ३ | २ | २ | ११ | — | ८२ |
| [illegible] | वृषभ | १६ | ८ | २ | ५ | — | — | ५ | — | ३६ |
| ८ | महिष | ४ | १ | १ | ३ | २ | — | १८ | १ | ३० |
| ९ | अज | — | — | — | — | १ | १ | २ | — | ४ |
| १० | मेष | १ | २ | — | १ | १ | — | १ | — | ६ |
| ११ | मृग | ८१ | १६ | १५ | २० | ६३ | १६ | १३१ | ८ | ३५० |
| १२ | सिंह | ६१ | २४ | ६ | १८ | ५ | १० | ४५ | १८ | १८७ |
| १३ | व्याघ्र | ३ | ३ | — | — | — | — | १० | ५ | २१ |
| १४ | मार्जार | ३ | — | — | — | — | १ | १ | — | ५ |
| १५ | ऋक्ष | १ | १ | — | — | — | १ | ४ | — | ७ |
| १६ | तरक्षु | — | १ | — | — | — | — | १ | — | २ |
| १७ | शृगाल | ५ | — | १ | १ | — | २ | ५ | २ | १६ |
| १८ | वृक | — | — | २ | — | — | — | २ | १ | ५ |
| १९ | श्वान | २ | २ | — | १ | — | १ | १० | १ | १७ |
| २० | शश | — | — | २ | १ | ५ | — | ८ | — | १६ |
| २१ | शूकर | ५ | — | ३ | — | — | — | ७ | — | १५ |
| २२ | शाखामृग | ३ | २ | ३ | — | १ | — | १५ | — | २४ |
| | | | | | | | | | कुल योग | १७०५ |

## काव्यकारों के आधार पर पक्षियों के वर्णन का विश्लेषण (९८०)

| क्र सं | पक्षी का नाम | कालिदास | अश्वघोष | भारवि | माघ | श्रीहर्ष | सुबन्धु | बाण भट्ट | दण्डी | योग |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| १ | मयूर | ३८ | ५ | ८ | १३ | ९ | ५ | ५७ | १ | १३६ |
| २ | चकोर | २ | — | १ | १ | ८ | २ | ८ | १ | २३ |
| ३ | हंस | ४२ | ४ | ११ | १० | ८६ | ११ | ९३ | २० | २७७ |
| ४ | चक्रवाक | १७ | ९ | ३ | ३ | ११ | ५ | ४४ | ४ | ९६ |
| ५ | बलाका | ६ | — | — | — | — | १ | १ | — | ६ |
| ६ | बक | — | — | — | १ | १ | — | १ | १ | ४ |
| [illegible] | क्रौंच | ३ | — | — | १ | — | १ | १ | — | ६ |
| ८ | सारस | ७ | — | ३ | १ | — | ३ | ८ | २ | २४ |
| ९ | कोकिल | ३३ | ६ | — | ५ | २३ | ७ | २२ | [illegible] | १०५ |
| १० | चातक | १० | — | — | १ | — | १ | ७ | — | २१ |
| ११ | गरुड | ६ | २ | ६ | ९ | ७ | १ | १३ | २ | ४६ |
| १२ | गृध्र | १२ | १ | — | १ | — | १ | ३ | १ | १९ |
| १३ | श्येन | ४ | २ | — | — | १ | — | २ | १ | १० |
| १४ | कपोत | १० | २ | — | ४ | ५ | १ | १४ | १ | ३७ |
| १५ | हारित | १ | — | — | — | — | — | ७ | — | ८ |
| १६ | कुररी | २ | १ | १ | — | — | — | ४ | १ | ९ |
| १७ | शुक | ६ | — | १ | १ | ६ | १ | ३१ | १ | ४७ |
| १८ | उलूक | १ | — | — | २ | ४ | २ | ५ | — | १४ |
| १९ | कलविंक | — | — | — | — | — | १ | २ | — | ३ |
| २० | सारिका | १ | १ | — | — | ३ | ३ | १८ | — | २६ |
| २१ | काक | २ | ३ | — | १ | ४ | ७ | १० | ३ | ३० |
| २२ | कुक्कुट | — | — | — | — | १ | ४ | [illegible] | ५ | १८ |
| २३ | मक | १ | — | — | — | — | २ | — | — | ३ |
| २४ | कारण्डव | २ | १ | — | — | — | — | — | १ | ४ |
| २५ | खञ्जन | — | — | — | — | ३ | ३ | — | — | ६ |
| | | | | | | | | कुल योग | | ९८० |

काव्य व काव्यकारों के आधार पर पशु पक्षियों के वर्णन का विश्लेषण (2687)

| क्र० स | पशु/पक्षी का नाम | कालिदास | | | | | | | अश्वघोष | | भारवि | माघ | श्रीहर्ष | सुबन्धु | बाणभट्ट | | दण्डी | योग |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | रघु० | कु० | मे० | ऋ० | मा० | मा० | वि० | बु० | सौ० | कि० | शि० | नै० | वा० | ह० | का० | द० | |
| १ | गज (The Elephant) | ७६ | ५० | १२ | ६ | ४ | ४ | १३ | ५५ | १६ | ५५ | १०३ | १३ | ३१ | ५४ | ८६ | १० | ५८२ |
| २ | गडक (The Rhino) | — | | — | — | — | — | — | — | — | — | — | — | १ | — | ५ | — | ६ |
| ३ | अश्व (The Horse) | ५० | १६ | १ | — | ४ | ३ | १ | ५२ | ८ | ६ | ४० | २० | [illegible] | १७ | ६५ | ८ | ३२६ |
| ४ | खर (The Ass) | ४ | १ | — | — | — | — | — | २ | — | १ | | २ | — | २ | १ | — | १८ |
| ५ | उष्ट्र (The Camel) | १ | — | — | — | — | — | — | — | — | — | ६ | १ | — | ११ | १ | — | २६ |
| ६ | धेनु (The Cow) | ४३ | १ | — | १ | — | — | — | १० | ५ | ६ | ३ | २ | २ | १० | १ | — | ८२ |
| ७ | वृषभ (The Bull) | ५ | ८ | १ | १ | — | १ | — | ६ | २ | २ | ५ | — | — | २ | १ | — | ३६ |
| ८ | महिष (The Buffalo) | १ | १ | — | १ | १ | — | — | १ | — | १ | [illegible] | २ | — | ६ | १२ | १ | ३० |
| ९ | अज (The Goat) | — | — | — | — | — | — | — | — | — | — | — | १ | १ | — | २ | — | ४ |
| १० | मेष (The Sheep) | — | १ | — | — | — | — | — | १ | १ | — | १ | १ | — | १ | — | — | ६ |
| ११ | मृग (The Deer) | ३१ | १४ | ५ | ६ | १८ | २ | ५ | ११ | ५ | १५ | ३६ | ६३ | १६ | ८२ | ८६ | ८ | ३५० |
| १२ | सिंह (The Lion) | ४४ | ७ | — | २ | ५ | १ | २ | १० | ६ | ६ | १८ | ५ | १० | ३३ | १२ | १८ | १८७ |
| १३ | व्याघ्र (The Tiger) | २ | १ | — | — | — | — | — | १ | २ | — | — | — | — | ५ | ५ | ५ | २१ |
| १४ | मार्जार (The Cat) | — | — | — | — | १ | २ | — | — | — | — | — | — | १ | १ | — | — | ५ |
| १५ | ऋक्ष (The Bear) | — | — | — | १ | — | — | — | १ | — | — | — | — | १ | २ | २ | — | ७ |
| १६ | तरक्षु (The Hyena) | — | — | — | — | — | — | — | १ | — | — | — | — | — | १ | — | — | २ |
| १७ | शृगाल (The Jackal) | ३ | २ | — | — | — | — | — | — | — | १ | १ | — | २ | ३ | २ | २ | १६ |

| क्र० सं० | पशु/पक्षी का नाम | कवि का नाम / काव्य का नाम: कालिदास — रघु० | कु० | मे० | ऋ० | शा० | मा० | वि० | अश्वघोष — बु० | सौ० | भारवि — कि० | माघ — शि० | श्रीहर्ष — न० | सुबन्धु — वा० | बाणभट्ट — ह० | का० | दण्डी — द० | योग |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| १८ | वृक (The Wolf) | – | – | – | – | – | – | – | – | – | २ | – | – | – | १ | १ | १ | ५ |
| १९ | श्वान The Dog) | – | २ | – | – | – | – | – | २ | – | – | १ | – | १ | ४ | ६ | १ | १७ |
| २० | शश (The Rabbit) | – | – | – | – | – | – | – | – | – | २ | १ | ५ | – | ६ | २ | – | १६ |
| २१ | सूकर (The Pig) | २ | १ | – | १ | १ | – | – | – | – | ३ | – | – | – | ३ | ४ | – | १५ |
| २२ | शाखामृग (The Monkey) | १ | – | – | १ | – | १ | – | २ | – | ३ | – | १ | – | ७ | [illegible] | – | २४ |
| | पक्षी [ The Bird ] | | | | | | | | | | | | | | | | | |
| २३ | मयूर (The Peacock) | ११ | १ | ५ | ६ | ३ | – | १० | २ | ३ | ८ | १३ | ९ | ५ | १८ | ३९ | १ | १३६ |
| २४ | चकोर (The Quail) | २ | – | – | – | – | – | – | – | – | १ | १ | ८ | २ | ४ | ४ | १ | २३ |
| २५ | हंस (The Swan) | ६ | ६ | ५ | १ | २२ | १ | १० | ३ | १ | ११ | १० | ८६ | ११ | ३९ | ५४ | २९ | २२६ |
| २६ | चक्रवाक (The Ruddygoose) | ५ | ६ | १ | – | २ | १ | २ | ५ | ४ | ३ | ३ | ११ | ५ | ११ | २३ | ४ | ९६ |
| २७ | बलाका (The Balaka) | १ | १ | ३ | १ | – | – | – | – | – | – | – | – | १ | – | १ | – | [illegible] |
| २८ | बक (The Heron) | – | – | – | – | – | – | – | – | – | – | १ | १ | – | – | १ | १ | ४ |
| २९ | क्रौंच (The Common Crane) | – | – | – | ३ | – | – | – | – | – | – | १ | – | १ | – | १ | – | ६ |
| ३० | सारस (The Sarus) | २ | – | १ | ३ | – | १ | – | – | – | – | १ | – | १ | – | १ | – | २४ |
| ३१ | कोकिल (The Indian Koel) | ५ | ६ | – | १० | ४ | २ | ६ | – | – | ३ | १ | – | ३ | २ | ६ | २ | १०५ |
| ३२ | चातक (The Cuckoo) | २ | २ | ४ | १ | १ | १ | १ | ४ | २ | – | ५ | २३ | ७ | ५ | १७ | ९ | २१ |
| ३३ | गरुड (The Eagle) | ५ | – | – | – | – | – | १ | – | – | – | १ | – | १ | ३ | ४ | – | १६ |

| क्र० सं० | पशु/पक्षी का नाम | कवि का नाम / काव्य का नाम | कालिदास | | | | | | अश्वघोष | | भारवि | माघ | श्रीहर्ष | सुबन्धु | बाणभट्ट | | दण्डी | योग |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | रघु० | कु० | मे० | ऋ० | शा० | मा० | वि० | बु० | सौ० | कि० | शि० | न० | वा० | ह० | का० | द० | |
| ३४ | गृध्र (The Valture) | ६ | १ | – | – | १ | १ | ३ | २ | – | ६ | ९ | ७ | १ | ५ | ८ | २ | १९ |
| ३५ | श्येन (The Falcon) | २ | २ | – | – | – | – | – | – | १ | – | – | १ | – | १ | २ | १ | १० |
| ३६ | कपोत (The Pigeon) | – | ७ | १ | – | – | १ | १ | – | २ | – | – | १ | – | १ | १ | १ | १७ |
| ३७ | हारीत (The Green pigeon) | १ | – | – | – | – | – | – | – | – | – | – | – | – | १ | ६ | – | ८ |
| ३८ | कुररी (The Tern) | १ | – | – | – | – | – | १ | १ | – | १ | – | – | – | १ | ३ | १ | ९ |
| ३९ | शुक The (Parrot) | २ | – | – | – | २ | – | २ | – | – | १ | १ | ६ | १ | ७ | २४ | १ | ४७ |
| ४० | उलूक (The Owl) | – | १ | – | – | – | – | – | – | – | – | २ | ४ | २ | ३ | २ | – | १४ |
| ४१ | कलविङ्क (The Sparrow) | – | – | – | – | – | – | – | – | – | – | – | – | १ | २ | – | – | ३ |
| ४२ | सारिका (The Myna) | – | – | – | – | – | – | – | १ | – | – | – | ३ | ३ | ४ | १५ | – | २६ |
| ४३ | काक (The Crow) | १ | – | १ | – | – | – | – | ३ | – | – | १ | ४ | ७ | ६ | ४ | ३ | ३० |
| ४४ | कुक्कुट (The Coock) | – | – | – | – | – | – | – | – | – | – | – | १ | ४ | ३ | ५ | ५ | १८ |
| ४५ | कङ्क (The Kanka) | १ | – | – | – | – | – | – | – | – | – | – | – | २ | – | – | – | ३ |
| ४६ | कारण्डव (The Coot) | – | – | | १ | – | – | १ | १ | – | – | – | – | – | – | १ | २ | ६ |
| ४७ | खञ्जन (The Wagtail) | – | – | – | – | – | – | – | – | – | – | – | ३ | ३ | – | – | – | ६ |

योग २,८७

# पशु–पक्षियो के वर्णन में—

## काव्यकारो की सफलता

प्रस्तुत काव्यकारो द्वारा वर्णित पशु पक्षियो के वर्णन में कितनी सत्यता है ? यह एक विचारणीय प्रश्न है इस बात को जानने से पूर्व कि काव्यकारो ने पशु-पक्षियो के वर्णन में कितनी सफलता प्राप्त की है यह जानना आवश्यक है कि वे वर्णन कैसे हैं

काव्यकारो के पशु पक्षी विषयक वर्णनो मे यह देखने को मिलता है कि उन्होंने जितने भी पशुओ के वर्णन किये हैं उनके रूप रङ्ग खानपान व आकार प्रकार मे कोई मत भेद नही है इसका कारण स्पष्ट है कि पशु पक्षियो मे उप परिवारो व उप वर्गों का नितान्त अभाव है उदाहरण के लिये मृग को ही लें मृग अनेक प्रकार के होते हैं जैसे—साम्भर, शरभ, कृष्णसार, रुरु इत्यादि यद्यपि इन पशुओ में नाम भेद व रग भेद है परन्तु इनके खानपान व आकार प्रकार में कोई विशेष विचारात्मक अन्तर नही हैं हा इसमे कोई शक नही कि संस्कृत काव्यकार इनके प्रकारों पर सम्यक विचार नही कर पाये हैं पशुओ के जितने भी वर्णन काव्यकारो ने किये हैं वे प्राय वैज्ञानिक सत्य हैं हां एक दो स्थानों पर ऐसी भूलें भी देखने में आती हैं जो अक्षम्य एवं आश्चर्यजनक हैं बाणभट्ट ने कादम्बरी में गज की पूछ की तुलना करते हुये लिखा है — महाकविभिर्भिग्नप्रलम्ब बाल-पल्लव-स्पृष्ट भूतल - (कादम्बरी० पृ० २८७) यहा गज की पूछ की समता पेड की लटकती हुयी उस शाखा से की है जो पृथ्वी को छूती है परन्तु हाथी की पूछ इतनी छोटी होती है कि वह पृथ्वी तल को कदापि नहीं छू सकती यह वर्णन भी ऐसे समय का है जिस समय राजप्रसादाङ्गण मे गज खडे थे एवं ऐसे पारखी एव अनुभवी काव्यकार का है जिसने अपने जीवन का एक लम्बा भाग भ्रमण एवं राजघरानों की सेवा में व्यतीत किया था यह वर्णन मूल कादम्बरी का भाग है जो स्वयं बाणभट्ट का लिखा हुआ है अत एक ऐसे विद्वान द्वारा इतनी बडी भूल किया जाना वास्तव में विस्मय कारक है इसी प्रकार घोडों की लार से अस्तबल का गीला हो जाना, हंस का क्षीर-नीर विवेकी होना चक्रवाक का नश विरही" होना, चातक द्वारा केवल वर्षा जल ग्रहण करना एव गिद्ध द्वारा मानवीय व्यवहार

करना—ये सब कल्पनायें सत्य से इतनी परे है कि उनको स्वीकार करना सम्भव नही अत सिद्ध है कि काव्यकारो ने पशु पक्षियो के वर्णन म कतिपय अविस्मरणीय भूलें की हैं जो अक्षम्य हैं दूसरी कमी जो काव्यकारो के वर्णन म देखन को मिलती है वह है कि—अन्धानुकरण या नक्ल हर कवि ने उन्ही पशु पक्षियो का बारम्बारी वर्णन किया है एव पुन पुन वे ही उपमायें दी है जो उनके पूर्ववर्ती काव्यकार दे गये हैं कालिदास द्वारा की गयी कल्पनायें व उपमायें हमे दण्डी तक के काव्यकारो की कृतियो मे सरलता से देखने का मिल जायेंगी तीसरी कमी हम जो देखने म आती है वह है स्वरूप भेद की पशुओ म तो स्वरूप भेद की बडी समस्या नही किन्तु पक्षियो मे स्वरूप भेद का आधिक्य है बक एव बलाका क्रौञ्च व सारस गिद्ध गरुड व श्येन, हस, कलहस व कारण्डव का स्वरूप भेद कहीं भी स्पष्ट नहीं है सामान्यत इन सभी पक्षियो का एक साथ नामोल्लेख मिलता है और पुन पुन मिलता है इनके स्वरूप भेद पर कोई प्रकाश नही डाला गया है अपितु यदा-कदा तो वर्णन भी इस प्रकार के किये गये हैं कि जहा यह भ्रम हो जाता है कि ये वर्णन कौन से पक्षी का है परन्तु ये भूलें उनके काव्यो म क्यो मिलती हैं, इसके अनेक कारण हैं

(१) पशु पक्षियो के जो भी वर्णन काव्यो म मिलते हैं वे प्रासगिक हैं आधिकारिक नही, अत काव्यकारो का विशिष्ट ध्यान इन पर नहीं गया

(२) काव्यकार जिस काल म वर्णन किये हैं उस समय म जीव विज्ञान इतना विकसित नही था एव पशु पक्षियो का वर्गभेद व परिवार भेद नही किया गया था जो भेद थे व स्थानीय थे वासवदत्ता मे नारिकेल जाति और बगला जाति के जिन भेदों का उल्लेख है वे भेद प्रान्तीय हैं, सर्वव्यापी या देशव्यापी नही अत अशुद्धिया होना स्वाभाविक है

(३) पक्षियो म इतनी अधिक जातिया (Species) हैं कि उन सबका ध्यान रखना एक प्रबुद्ध वैज्ञानिक के लिये भी कठिन है अत बेचारे कवि का क्या दोष जब एक पक्षी की ५००–६०० उपजातिया होती हैं आधुनिक वैज्ञानिक भी इन सबका स्पष्ट विभाजन करने म सफल नहीं है फिर परम्परावलम्बी साहित्यकार इनका अकना म अत्यन्त स्पष्ट कम हो सकता था

इन सभी कारणों के अतिरिक्त एक सबसे महत्वपूर्ण कारण यह है कि साहित्यकार ऐतिहासिक महाकाव्यकार व वैज्ञानिक-लेखक म बहुत अन्तर होता है जिसे हम द्वितीय अध्याय म स्पष्ट कर आये हैं इस अन्तर के कारण हम काव्यकारों से सदा सत्य की अपेक्षा नही कर सकते

काव्यकारों ने अपने वर्णनों में केवल भूलें ही की हों ऐसी बात नहीं है उन्होंने कुछ ऐसे भी वर्णन भी किये हैं जो वैज्ञानिक सत्य हैं इनका सबसे सुन्दर प्रमाण है—हाथी की जीभ का उल्टा होना'—जो वैज्ञानिक सत्य है एवं बाणभट्ट ने इसका उल्लेख किया है वानर का चचल होना, शुक द्वारा फलों को निरन्तर काट-काट कर डालना हाथियों व सूकरों का पंक्तिबद्ध होकर चलना इत्यादि अनेक ऐसे वर्णन हैं जो वैज्ञानिक स्तर पर सत्य हैं एवं जिनका काव्यकारों ने बहुत ही सुन्दर एवं प्रामाणिक वर्णन किया है

काव्यकारों की वैशम्पायन—शुक, कुम्भोदर–सिंह, कालिन्दी–सारिका जटायु–गिद्ध, नन्दी-वृषभ व इन्द्रायुधाश्व की कल्पना बहुत ही कार्यात्मक एवं दर्शनीय हैं कवियों ने पशु पक्षियों के जितने स्वाभाविक वर्णन प्रस्तुत काव्य-साहित्य में किये हैं उतने सुन्दर वर्णन विश्व के किसी भी साहित्य में उपलब्ध नहीं हैं उपमाओं में हम जितनी सुन्दर कल्पना मिलती है वह वास्तव में विद्वान् एवं अनुभवी लोगों की देन है पशु पक्षियों व मानव के सम्बन्धों को इन काव्यकारों ने बहुत ही सरल एवं भावात्मक प्रवृत्तियों से युक्त ढंग से प्रस्तुत किया है

हां, एक बात अवश्य है कि काव्यकारों ने अपने वर्णनों में कतिपय पशु पक्षियों के साथ पक्षपात कर दूसरों को हानि पहुँचायी है सूकर को सभी ने गन्दा एवं भद्दा पशु कहा है जबकि वह दुनिया के स्वच्छतम पशुओं में से एक है खर को घृणा की दृष्टि से देखा है एवं उल्लू को बुद्धिहीन कहा है, परन्तु ये सभी वर्णन सामाजिक पक्षपात के परिणाम होने से क्षम्य हैं हां यदि कोई काव्यकार पक्षपात से तनिक दूर हटकर सत्यता पर प्रकाश डालता तो उसका कार्य अभिनन्दनीय व स्तुत्य होता

इन सभी वर्णनों को सम्यक् रूप से विचार में लाने के बाद हम यही कहेंगे कि हमारे साहित्यकार किंवा काव्यकार वैज्ञानिक दृष्टि से पशु पक्षियों के वर्णन में कुछ पिछड़ गये हैं किन्तु साहित्यिक दृष्टि से वे सफल हैं—पूर्ण सफल

---

# आधुनिक युग मे पशु पक्षीयो का मानव जीवन से सम्बन्ध

आधुनिक युग म पशु पक्षियो का मानव जीवन म साथ गहरा सम्बन्ध देखने म आता है इनम सबसे प्रधान सम्बन्ध है भोजन का भूतल पर अनेक देश एस है जिनका सारा भोजन पशु-पक्षिया क मांस पर निभर करता है जिन पशु पक्षियो का मास खाया जाता है उनमे से कतिपय क नाम इस प्रकार हैं—गाय, अज, मेष, मृग, खरगोश, सूवर मोर, कबूतर, मुर्गा विश्व म शिकागो मास की सबसे बडी मण्डी है जहा स नित्य हजारा क्विटल माम का निर्यात होता है मांस के अतिरिक्त अण्डे खाने का भी आजकल काफी प्रचलन है अण्डा म मुर्गी क अण्ड अधिकता से खाये जाते हैं अण्ड क अलावा दूध पशुओ स प्राप्त हाने वाली सबस आवश्यक वस्तु है जिस पर सारा विश्व निभर है दूध से अनक प्रकार की खाद्य सामग्रियो का निर्माण हाता है यथा—मक्खन घी छाछ मावा, पनीर इत्यादि य सभी वस्तुयें मानव के दनिक जीवन की आवश्यकतायें बन गई हैं पशु-पक्षियो से अनेक एसी वस्तुयें भी प्राप्त होती है जो दवाइयो के रूप म हमारे काम आती हैं जसे लकवे म सफेद कबूतर का मास, पीलिया मे गधे की लीद का पानी, सप दश मे ऊट का पेशाब पान, फोड पर कबूतर की बीट, लीवर म गौ मूत्र पान इत्यादि-इत्यादि पशु पक्षियो से हमे अनेक उपयोगी वस्तुयें भी मिलती हैं जसे बाल, कस्तूरी हाथी दात, सरेस मोरपख इत्यादि-इत्यादि ऊटनी व भेड का दूध अनेक दवाइया के काम आता है इसके अलावा सभी पशुओ क चम पर सीग एव खुर अनेक सजावटो के काम आते हैं चमडे के हैंडबेग, जूते, बेल्ट हैट कोट, वाशर, सूटकेश इत्यादि आजकल सवत्र देखे जा सकते हैं पक्षिया से प्राप्त पखो से अनेक सजावट की वस्तुओं का निर्माण होता है

इनके अतिरिक्त मानव व पशु पक्षियो मे नौकर-मालिक का सम्बन्ध आज भी देखा जा सकता है सवारी के लिए गज अश्व ऊट, बल, बारहसिंगा, भैसा, श्वानादि का प्रयोग सामान्य है बोझ ढाने मे खर, उष्ट्र बल महिष व खच्चर

का विशेप प्रयोग होता है पक्षियो मे शुतुमुग भी बोझ ढोने के काम आता है पक्षियो म कबूतर सन्देश भेजने का साधन रहा है

पशु पक्षियो मनोरञ्जन म भी मानव का सवदा साथ देते रहे हैं घुडदौड व कुत्ता दौड का आजकल बहुत महत्व है गावा म ऊट दौड व रथदौड भी प्रत्यन्त मामा य है सकस व सिनमा मे अनेक पशु-पक्षियो के मनोरञ्जन काय देखे जा सकते हैं मुर्गों की लडाई व भालू बदर का नाच भी गावा मे देखने को मिलता है

इन विशपताम्रो के कारण मानव व पशु-पक्षी निकट आते जा रहे हैं आजकल विश्व के सभी शहरो म चिडियाघर देखे जा सकते हैं जिनमे देश विदेश के अनकानेक पशु पक्षियो का सग्रह किया जाता है साथ ही अजायबघरो में मसाले भर कर मृत पशु पक्षियो का सग्रह किया जाता है पशु-पक्षियो क पालन पर आधुनिक युग म विशेप ध्यान दिया जाता है एव उनकी रक्षा के प्रयत्न किये जाते हैं भारत मे भी अनेक पशु-पक्षिया को मारना कानूनी अपराध है आजकल कुत्ते क पालन का बडा प्रचलन है घर घर मे कुत्ते मुर्गे, खरगोश शुक, सारिका, बिल्ली इत्यादि का बडे प्रेम स पालन किया जाता है एव उनकी अनेक किस्मो का निर्माण किया जाता है मनोरञ्जन के अतिरिक्त दूध मास, व चमडे के लिए तो मानव पशु-पक्षिया को पालता ही है अनुसधान कार्यों के लिए भी आजकल अनेक पशु-पक्षियो का पालन किया जाता है इस प्रकार मानव व जीवो का आधुनिक युग म बडा गहरा एव नजदीकी सम्बन्ध है और यदि यो कहें कि पशु-पक्षियो के अभाव म मनुष्य का जीवन दूभर हो सकता है तो अत्युक्ति न होगी

## साहित्य में पशु पक्षी राष्ट्र की घरोहर—

साहित्य जगत म भी पशु पक्षी का बडा महत्व है विश्वपटल पर अनेक प्रकार के साहित्यो मे पशु पक्षी का वणन मिलता है एव पशु पक्षियो से सम्बन्धित अनेक साहित्यिक रचनाम्रो का निर्माण होता है एक एक पशु या पक्षी को लेकर भी पुस्तकें लिखी गई हैं सस्कृत-साहित्य का जहा तक प्रश्न है—सस्कृत-साहित्य मे पशु-पक्षी विपयक कतिपय ग्रथा के नाम इस प्रकार हैं —पञ्चतन्त्र, हसदूत, हितोपदेश काकिलदूत शुकसप्तति आदि

भारतीय साहित्य म हिन्दी साहित्य अपना विशिष्ट स्थान रखता है हिन्दी साहित्य म पशु-पक्षी विपयक अनेक साहित्यक वणन मिलते हैं हिन्दी कवियो में बिहारी पद्माकर, तुलसी सूरदास, कबीर, मैथिलीशरण इत्यादि की रचनाम्रों में पशु-पक्षिया से सम्बन्धित वर्णन काफी मिलत हैं

कतिपय उदाहरणों का अवलोकन कीजिये —

'वन बागन पिक बटपरन की बिरहिन मन नन,
कुहो, कुहो कहि कहि उठन करि-करि रात नैन ।

—बिहारी

• • • •

'ऊंची जाति पपीहरा, पियत न नीचो नीर,
कै जाचे घनस्याम सो, कै दुख सहै सरीर'

—तुलसी

• • • •

ऊंची चित सराहियत गिरह कबूतर लेन ।
दृग पुलकित, पुलकित बदन, तनु पुलकित कहि देन ।।

—बिहारी

१

• • • •

नाचो मयूर नाचो कपोत के जोड़े
नाचो कुरंग तुम लो उड़ान के तोड़े।
गाम्रो दिवि चातक, चटक भृङ्ग भय छोड़े
वदेही के वनवास वर्ष है थोड़े ।।

—मैथिलीशरण गुप्त

• • • •

सांच कहे तो मारि है, झूठे जग पतियाइ ।
य जग काली कूकरी जो छह तो खाइ ।।

—कबीर

• • • •

व्यथित होकर आतप से अति,
तृण नहीं चरते पशु सम्प्रति ।
हरिण, सिंह, मतङ्गज, शूकर,
तपित हैं फिरते वन भीतर ।।

—मैथिली

• • • •

देसर ऊँट वृषभ बहु जाती,
चले वस्तु भरि अगनित भाति ।

गज रथ तुरग दास अरु दासी
धेनु अलकत कामदुहा सी ॥
खञ्जन शुक कपोत मृग मीना,
मधुर निकर कोकिला प्रवीणा ।
चकल पास मनोज धनु हसा,
गज केसरि निज सुनत प्रशसा ॥'

—तुलसी

हिंदी साहित्य की भांति उर्दू-साहित्य भी पशु-पक्षियों के वर्णनों से युक्त हैं कतिपय उदाहरणों का अवलोकन कीजिये —

आलम को लुभाती हैं पियानो की सदाएँ
बुलबुल के तरानों म अब लय नहीं आती

अकबर

* * * *

तेरा हुस्न इस जहाँ म जो न होता पर तो अफगन
न ये फल दिल लुभाते, न य सब्जाजार होता ।
न वह मारी मारी फिरती, न यह बेकरार होता ॥

—बेदिल

* * * *

'सारे जहाँ से अच्छा
हिन्दोस्ताँ हमारा ।
हम बुलबुलें हैं इसकी
यह गुलस्तिा हमारा ॥

—इकबाल

* * * *

भारतीय लोकगीत साहित्य मे भी पशु-पक्षियो का वर्णन बहुतायत से विद्यमान हैं —

उड उड र म्हारा काला र कागला,
कद म्हारा पीऊजी घर आव ।
उडज्या रे काग, गिगन का वासी,
खबर तो ल्याव म्हारे राजन का ॥

—एक राजस्थानी लोकगीत

अर्थात्—अरे मेरे प्यारे काक ! तू उड जा और मेरे प्रियतम के घर आने का सदेश ला अरे गगन के वासी मेरे प्रिय काक ! तू आकाश का निवासी

है तू प्रिय के घर जाने के समाचार सुना

> हरांमुग, पाखरा रे जा माझ्या माहेरा
> कमानी न्हवाचे रे त्यारी बस जा।
> घरच्या धार्मिकार, सांगोशा मोरा जा,
> दाराना सांगा जा रे, न भना माहेरा ॥

—एक महाराष्ट्री लोकगीत

अर्थात्—हे पक्षी! तू मेरे सन्देश को सुन ले और इसे लिखकर तुम्हें मेरी मां के पास पहुंचाना है मां से कहना कि वह भैया को भेजकर मुझे शीघ्र बुला ले मेरे घर का ठीक से पहचान करके जाना

अंग्रेज-साहित्य में भी पक्षु-गीत जिनका काव्य-साहित्य भारी दिखता है अंग्रेज-साहित्य के कतिपय पक्षी-गीतों का रसास्वादन कीजिये —

> O BLITHE Newcomer ! I have heard
> I hear thee and rejoice,
> O Cuckoo I shall I call thee Bird
> Or but a wandering voice ?

—William Wordsworth

• • • •

> O hark O hear ! how thin and clear
> And thinner clearer farther going !
> O sweet and far from cliff and scar
> The horns of Elfland faintly blowing

—Alfred Tennyson

भारतीय साहित्य म अनेकानेक स्थल ऐसे हैं जिनम पशु-पक्षी के वणन की झलक मिलती है भारत में पशु विषयक ग्रन्थ अत्यन्त विरल हैं परन्तु पशु पक्षियों के बारे मे भारतीय साहित्यकार सजग हैं ऐसा समय आ सकता है कि किसी पक्षी मात्र को उददेश्य बनाकर काव्य की रचना हो पाश्चात्य साहित्य में पक्षियो पर आधारित अनेक कवितायें लिखी गई हैं

पशु-पक्षिया म राष्ट्र की शक्ति निहित हैं अत वे राष्ट्र की धरोहर है क्योंकि इनमे राष्ट्र की शक्ति छ पी है और इसी कारण किसी कवि ने कहा भी तो है —'गो धन गजधन वाजिधन अर्थात् गौ हाथी व घोडे धन हैं

भारतीय सरकार ने भी इसी कारण पशु-पक्षियो को उच्च स्थान दे रखा है हमारे देश म मोर को राष्ट्रीय पक्षी का सम्मान दिया गया है एव मोर को मारना कानूनी अपराध है सिंह भारत का राष्ट्रीय पशु है अशोक चक्र को राष्ट्रीय चिन्ह स्वीकार किया गया है जिनम ऊपर तीन सिंह एव नीचे वल एव अश्व का चित्र अकित है सरकार ने स्थान-स्थान पर वन-सरक्षण के साथ-साथ पशु-सरक्षण क भी प्रयास किये हैं पशु पक्षियों के अभाव मे मानव जीवन अधूरा है, सूना है अत यह सरक्षणीय है।

हे तू प्रिय के घर आने के समाचार सुना

> दणाणुन, पाखरा रे, जा माझ्या माहेरा
> कळवाशी स्वताते रे प्यारी बेत आ।
> परत्या घालोमार, सागोवा मोरा जा,
> दाखला सांरा जा रे, मे मना, माहेरा ॥
>
> —एक महाराष्ट्री लोकगीत

अर्थात्—हे पक्षी ! तू मेरे संदेश को सुन ले और इसे लेकर तुरन्त मेरी मां के पास पहुंचा दे। मां से कहना कि वह भैया को भेजकर मुझे शीघ्र बुला ले। तू मेरे घर की ठीक से पहचान करके आना।

आंग्ल साहित्य में भी पक्षी विषयक काव्य-साहित्य काफी मिलता है। आंग्ल-साहित्य के कतिपय पद्यों का रसास्वादन कीजिये —

'O BLITHE Newcomer ! I have heard
I hear thee and rejoice,
O Cuckoo ! shall I call thee Bird
Or but a wandering voice ?

—William Wordsworth

• • • •

'O hark, O hear ! how thin and clear,
And thinner clearer, farther going !
O sweet and far from cliff and scar
The horns of Elfland faintly blowing

—Alfred Tennyson

• • • •

When daisies pied and Violets blue
And lady smocks all silver-white
And Cuckoo buds of yellow hue
Do paint the meadows with delight,
The Cuckoo then on every tree
Mocks married men, for thus sings he, Cuckoo,
Cuckoo Cuckoo O Ward of fear
Unpleasing to a married ear !

—William Shakespeare

भारतीय साहित्य मे अनेकानेक स्थल एस हैं जिनमे पशु-पक्षी के वणन की झलक मिलती है भारत मे पशु विषयक ग्रथ अत्यन्त विरल हैं परन्तु पशु पक्षिया के बारे म भारतीय साहित्यकार सजग हैं ऐमा समय आ सकता है कि किसी पक्षी मात्र को उददश्य बनाकर काव्य की रचना हो पाश्चात्य साहित्य में पक्षिया पर आधारित अनेक कवितायें लिखी गई हैं

पशु-पक्षिया मे राष्ट्र की शक्ति निहित हैं अत वे राष्ट्र की धरोहर है क्योंकि इनम राष्ट्र की शक्ति छुपी है और इसी कारण किसी कवि ने कहा भी तो है —'गो धन गजधन वाजिधन' अर्थात् गो हाथी व घोडे धन हैं

भारतीय सरकार ने भी इसी कारण पशु-पक्षियों को उच्च स्थान दे रखा है हमारे देश म मोर को राष्ट्रीय पक्षी का सम्मान दिया गया है एव मोर को मारना कानूनी अपराध है सिंह भारत का राष्ट्रीय पशु है अशोक चक्र को राष्ट्रीय चिन्ह स्वीकार किया गया है जिनम ऊपर तीन सिंह एव नीचे बल एव अश्व का चित्र अकित है सरकार ने स्थान-स्थान पर वन-सरक्षण के साथ साथ पशु-सरक्षण क भी प्रयास किय हैं पशु पक्षियो के अभाव मे मानव जीवन अधूरा है, सूना है अत यह सरक्षणीय है

# वर्णानुक्रमानुसार सहायक-ग्रन्थ-सूचि

( Bibliography )

मूलग्रन्थ—


| | | | |
|---|---|---|---|
| 1 | अभिज्ञान शाकुन्तलम् | (कालिदास) | श्री राघवभट्ट |
| 2 | अभिज्ञान शाकुन्तलम् | (        ) | श्री गुरुप्रसाद |
| 3 | अभिज्ञान शाकुन्तलम् | | श्री सीताराम चतुर्वेदी |
| 4 | ऋतु संहारम् | | श्री सीताराम चतुर्वेदी |
| 5 | कादम्बरी | (बाणभट्ट) | श्री कृष्ण मोहन शास्त्री |
| 6 | किरातार्जुनीयम् | (भारवि) | प० शान्तिनारायण पाण्डेय |
| 7 | कुमार सम्भवम | (कालिदास) | डा० सूर्यकान्त |
| 8 | कुमार सम्भवम | | श्री सीताराम चतुर्वेदी |
| 9 | दशकुमार चरितम् | ( दण्डी ) | प० ताराचन्द्र भट्टाचार्य |
| 10 | नैषधीय चरितम | ( श्रीहर्ष ) | श्री हरिगोविन्द शास्त्री |
| 11 | बुद्ध चरितम भाग–1 | (अश्वघोष) | श्री सूर्यनारायण चौधरी |
| 12 | बुद्ध चरितम भाग–2 | | श्री रामचन्द्र दास शास्त्री |
| 13 | नैषधीय चरितम | ( श्री हर्ष ) | श्री हरिगोविन्द शास्त्री |
| 14 | मालविकाग्निमित्रम | (कालिदास) | आचार्य रामचन्द्र मिश्र |
| 15 | मालविकाग्निमित्रम | ,, | श्री सीताराम चतुर्वेदी |
| 16 | मेघदूतम | ,, | श्री सीताराम चतुर्वेदी |
| 17 | मेघदूतम् | ,, | श्री शेषराज शर्मा |
| 18 | रघुवंशम् | ,, | श्री एच० डी० वेलणकर |
| 19 | रघुवंशम् | ,, | श्री सीताराम चतुर्वेदी |
| 20 | वासवदत्ता | (सुबन्धु) | श्री शंकर देव शास्त्री |
| 21 | विक्रमोर्वशीयम् | (कालिदास) | श्री हरिदामोदर वेलणकर |
| 22 | विक्रमोर्वशीयम् | ,, | श्री सीताराम चतुर्वेदी |
| 23 | शिशुपालवधम | (माघ) | प० हरगोविन्द शास्त्री |
| 24 | सौन्दरनन्दम | (अश्वघोष) | श्री सूर्यनारायण चौधरी |
| 25 | हर्ष चरितम | (बाण भट्ट) | प० जगन्नाथ पाठक |

26 Abhijyana Sakuntala (Kalidasa) — Monier Williams
27 Abhijyana Sakuntlaa — S Roy
28 Budha Carita (Aswaghosa) — Co Well
29 Kadambri (Banabhata) — R D Karmarkar
30 Meghdoot (Kalidasa) — H H Wilson
31 Meghdoot — R D Karmarkar
32 Malvikagnimitra
33 Naishadhiyacarita (Shri Harsha) — K K Handiqui
34 Ritusambhara (Kalidasa) — R S Pandit
35 Raghuvamsam — H D Velankar
36 Shishupal Vadham (Magh) — S Roy
37 Vikramorvasbiya (Kalidasa) — R D Karmarkar
38 Vikramorvashiya — Kole
39 — H D Velankar

अन्य ग्रन्थ—

40 अमरकोष (अमर सिंह) — श्री पण्डित शिवदत्त
41 अथर्ववेदसंहिता — श्री श्रीराम शर्मा आचार्य
42 अलङ्कार शेखर — श्री अनन्त राम
43 एकावली — श्री विद्याधर
44 एतरेय ब्राह्मण — डा० मङ्गलदेव शास्त्री
45 एतरेय आरण्यक — डा० मङ्गलदेव शास्त्री
46 ऋग्वेद–संहिता — श्री श्री राम शर्मा
47 ऋग्वेद संहिता — सातवलकर
48 कालिदास के पक्षी — श्री हरिदत्तवेन्दालङ्कार
49 कालिदास ग्रन्थावली — श्री सीताराम चतुर्वेदी
50 कालिदास — श्री वासुदेव विष्णु मिराशी
51 कालिदास का भारत भाग–1 } — श्री भगवत शरण उपाध्याय
52 कालिदास का भारत भाग–2 }
53 कालिदास — डा० रमाशङ्कर तिवाडी
54 कालिदास एक अनुशीलन — प० देवदत्त शास्त्री
55 काव्य प्रकाश (मम्मट) — आचार्य रामचन्द्र मिश्र
56 काव्यमीमांसा (राजशेखर) — श्री मधुसूदन मिश्र
57 काव्यादर्श (दण्डी) — आचार्य रामचन्द्र मिश्र
58 काव्यानुशासन (हेमचन्द्र) — श्री रसिक लाल पारीक
59 काव्यानुशासन (द्वि० वाग्भट्ट) — श्री काशीनाथ पाण्डुरग
60 काव्यालङ्कार (भामह) — श्री देवेन्द्रनाथ शर्मा

| | | | |
|---|---|---|---|
| 61 | काव्यालङ्कार | (रुद्रट) | श्री दुर्गाप्रसाद व श्री वासुदेव सम्मत शास्त्री |
| 62 | काव्यालङ्कार सूत्र | (वामन) | आचार्य विश्वेश्वर |
| 63 | गउडवहो | | वाक्पतिराज (चौखम्बा) |
| 64 | गदरार वाए | | श्री सत्यपाल म म पापर |
| 65 | चन्द्रालोक | (जयदेव) | श्री नन्दकिशोर शर्मा |
| 66 | जीवजगत | | श्री सुरेशसिंह |
| 67 | जन्तुजगत | | श्री ब्रजेश बहादुर |
| 68 | जमनीय ब्राह्मण | | डा० रघुवीर एव डा० लोकेशचन्द्र |
| 69 | ढोला मारु रा दूहा | | श्री वल्लोम |
| 70 | तैत्तिरीय संहिता | | श्री सातवलेकर |
| 71 | ध्वन्यालोक | (आनन्दवर्धन) | आचार्य विश्वेश्वर |
| 72 | नाट्य शास्त्र | (भरतमुनि) | श्री बाबूलाल शुक्ल शास्त्री |
| 73 | नीतिशतक | (भर्तृहरि) | श्री विजय शंकर मिश्र |
| 74 | नैषध-परिशीलन | | प० चण्डिका प्रसाद शुक्ल |
| 75 | पंचतन्त्र | (विष्णु शर्मा) | श्री शिवमंगल द्विवेदी |
| 76 | प्रकृति और काव्य | | डा० रघुवंश |
| 77 | बृहद् पर्यायवाची कोश | | डा० रघुवीर |
| 78 | भारत के पक्षी | | श्री राजेश्वर प्रसाद |
| 79 | भारविकाव्य मे अर्थान्तरन्यास | | डा० उमेश चन्द रस्तोगी |
| 80 | भारतीय व्यवहार कोश भाग–1 | | श्री विश्वेश्वर नाथ दीक्षित |
| 81 | भारतीय व्यवहार कोश भाग–2 | | श्री विश्वेश्वर नाथ दीक्षित |
| 82 | भारतीय व्यवहार कोश भाग–3 | | श्री विश्वेश्वर नाथ दीक्षित |
| 83 | महाभारत (वेदव्यास) | | श्री एच० डी० वेलणकर |
| 84 | महाकवि माघ उनका जीवन तथा कृतियां | | डा० मनमोहन लाल जगन्नाथ शर्मा |
| 85 | महाभारत कोश | | डा० राम कुमार राय |
| 86 | मौगली गीतिका/विन गंगा के किनारे | | श्री एस० के० दत्त |
| 87 | मद-स्काउटिंग | | श्री एस० के० दत्त |
| 88 | रामचरित मानस (तुलसी) | | श्री ज्वाला प्रसाद मिश्र |
| 89 | वक्रोक्ति जीवितम् (कुन्तक) | | डा० नगेन्द्र |
| 90 | वाग्भटालङ्कार (वाग्भट्ट प्रथम) | | श्री मुरलीधर शर्मा |

| | | |
|---|---|---|
| 91 | वाल्मीकि रामायण (वाल्मीकि) | श्री रामतेजशास्त्री |
| 92 | वाल्मीकि रामायण कोश | डा० रामकुमार राय |
| 93 | वदिक कोश | डा० सूयकान्त |
| 94 | वदिक माइथोलोजी | डा० रामकुमार राय |
| 95 | शतपत ब्राह्मण | श्री चिन्ना स्वामी शास्त्री |
| 96 | शब्दकल्पद्रुम | राजा राधाकान्त देव बहादुर |
| 97 | शुक्ल यजुर्वेद संहिता | श्री राम शर्मा आचाय |
| 98 | शुकनासोपदेश | श्री शान्ति प्रसाद अग्रवाल |
| 99 | शुक्सप्तति | मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन |
| 100 | श्रीमदभागवत पुराण (वेदव्यास) | गीता प्रेस प्रकाशन |
| 101 | सरस्वती कण्ठाभरण (वेदव्यास) | श्री रामा स्वामी शास्त्री |
| 102 | सामवेद संहिता | श्री राम शर्मा आचाय |
| 103 | सस्कृत साहित्य का इतिहास | श्री वाचस्पति गरोला |
| 104 | सस्कृत साहित्य का इतिहास | श्री हंसराज अग्रवाल |
| 105 | सस्कृत साहित्य का इतिहास | प० बलदेव उपाध्याय |
| 106 | सस्कृत साहित्य का इतिहास भाग १ | सेठ कन्हैयालाल पोद्दार |
| 107 | सस्कृत साहित्य का इतिहास भाग २ | |
| 108 | सस्कृत साहित्य का इतिहास (कोष) | मगलदेव शास्त्री |
| 109 | सस्कृत साहित्य का सुबोध इतिहास | डा० स० क० गुप्त |
| 110 | सस्कृत साहित्य की रूपरेखा | श्री चन्द्रशेखर पाण्डेय |
| 111 | सस्कृत साहित्य प्रवेश | श्री गौरीशकर |
| 112 | सस्कृत आलोचना | प० बलदेव उपाध्याय |
| 113 | सस्कृत कवि चर्चा | प० बलदव उपाध्याय |
| 114 | हिन्दी साहित्य दपण | डा० सत्यव्रत सिंह |
| 115 | हिन्दी रस गगाधर | श्री बदरीनाथ व<br>श्री मदन मोहन |
| 116 | हिन्दी वक्रोक्ति जीवितम् | श्री राधेश्याम मिश्र |
| 117 | हिन्दी साहित्य कोश भाग 2 | ज्ञान मण्डल प्रकाशन |
| 118-125 | हिन्दी विश्व कोश भाग 1 से 8 | नागरी प्रचारिणी सभा प्रकाशन |
| | हितोपदेश (विष्णुशर्मा) | प० कन्हैया लाल |

English


127 A History of Indian Literature — Weber
128 A History of Indian Literature — Winternitz
129 A History of Sanskrit Literature — Vardachari
130 Animal Kingdom Part I
131 Animal Kingdom Part II — F Drimmer
132 Animal Kingdom Part III
133 Birds of Saurashtra — R S Dharam Kumar Singh ji
134 Ducks & their allies — Stuart Baker
135 Encyclopaedia Chambers — M D Law & M Vibart Dixon
136 Encyclopaedia Britannica — Harry S Ashmox
137 English Sanskrit Dictionary — V S Apte
138 Game birds of India Burma & Ceylon — S Baker
139 Goose in Indian literature & art — Vogel J Phillippe
140 History of Sanskrit Literature — A A Macdonell
141 History of Sanskrit Literature — A B Keith
142 Kalidasa his period personality and poetry — Ramaswami Shastri
143 Kalidasa his styles & his times — Sabnis
144 Kalidasa his poetry & mind — Chatterjee
145 Kalidasa his genious ideals and influence — Ramaswami Shastri
146 Kalidasa and Vikramaditya — S C De
147 Mahabharata — Kamla Subramaniam
148 Popular Hand Book of India birds Whistler
149 Small Game Spooting in Bengal(1899) Hume & Marshall
150 Sanskrit Literature — Dr Raghavan
151 The Story of Animal Life — Maurice Burton
152 The Book of Indian Birds — Salim Ali
153 The Birds — Roger Tory Peterson & The editor of LIFE
154 Vedic Index Part I
155 Vedic Index Part II — A A Macdonell & Keith
156 Vikrmaditya — Raibali Pandey (1954)
157 World Book Encyclopaedia (1960) J Morris Jones

# शोध–प्रवन्ध से सम्वन्धित प्रकाशित लेख

| | शीर्षक | पत्रिका | दिनांक |
|---|---|---|---|
| 1 | संस्कृत काव्यों में उपमित गज | विश्वम्भरा बीकानेर | दिसम्बर 66 |
| 2 | संस्कृत काव्यो मे सारिका | „ „ | सितम्बर 68 |
| 3 | कालिदास एवं कालिदासोत्तर काव्यो में हंस | „ „ | मार्च 69 |
| 4 | कालिदास एवं कालिदासोत्तर काव्यो से पत्रवाहक | „ | जून 69 |
| 5 | कालिदास एवं कालिदासोत्तर काव्यो में अश्व | „ „ | दिसम्बर 69 |
| 6 | संस्कृत काव्यो में गौ | शोध पत्रिका, उदयपुर | सितम्बर 67 |
| 7 | संस्कृत काव्यों मे कोकिल | „ „ | सितम्बर 68 |
| 8 | कालिदास एवं कालिदासोत्तर काव्यो में सारस | „ „ | मार्च 69 |
| 9 | महाकवि बाण भट्ट उनका समय काव्य व प्रकृति वर्णन | वीणा इंदौर | मार्च 69 |
| 10 | कालिदास उनका समय व काव्य | „ | जनवरी 68 |
| 11 | कालिदास एवं कालिदासोत्तर काव्यो मे मयूर | वरदा, बिसाऊ | जुलाई 69 |
| 12 | कालिदास एवं कालिदासोत्तर काव्यो में कमेलक | „ „ | जुलाई 70 |
| 13 | संस्कृत काव्यो में उपमित मयूर | गुरुकुल पत्रिका, जनवरी–फरवरी 1968 | |
| 14 | कालिदास एवं कालिदासोत्तर काव्यो मे कपोत | „ „ | नवम्बर–दिसम्बर 68 |
| 15 | संस्कृत काव्यो मे शुक | „ „ | अक्टूबर 69 |
| 16 | कालिदास एवं कालिदासोत्तर काव्यो में चक्रवाक | „ | जून जौलाई-अगस्त 1969 |
| 17 | पशु पक्षियो का मानव जीवन से सम्बन्ध | राष्ट्रदूत जयपुर | 13 10 68 |
| 18 | कालिदास कालिदासोत्तरवर्ती संस्कृत साहित्य में सिंह | अन्वेषणा, उदयपुर | 1/4 |
| 19 | प्रकृति के अनन्य उपासक कालिदास | नवभारत टाइम्स | 10 11 70 |

॥ इति शुभम् ॥